रसेन्द्रसारसंग्रह

(हिन्दी टीका सहित)

*****

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई

॥श्रीः॥

महामहोपाध्याय गोपालकृष्णभट्टसूरि विरचित-

रसेन्द्रसारसंग्रह

पटियालाराज्यस्थ पं. रामप्रसाद वैद्यरत्न कृत-

हिन्दी टीका सहित

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई

संस्करण : सितंबर २०१९, संवत् २०७६

मूल्य : ५०० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.



पटियालाराज्यान्तर्गतटकसालनिवासिपण्डितद्वारकादासा-
त्मजाऽऽयुर्वेदोद्धारकवैद्यपञ्चाननवैद्यरत्नराजवैद्य-
पण्डितरामप्रसादवैद्योपाध्यायः ।

The Hindi Commentary of Rasendrasar Sangrah, prepared by Pandit Ram Parshad Vaid is very interesting and useful and I think it is sure to prove a valuable contribution of the utmost importance to the Ayurvedic literature. It is not only an easy translation of the Rasendrasar Sangrah by Shri Gopal Krishna Bhut, but the Vaid has added many practical suggestions regarding the preparations and uses of different sorts of compositions of merecury and of the compositions of good many herbs and drugs. The special feature of the work is the addition of lucid notes on the different ways of treatment of obstinate deseases. I wish every success for this valuable work on which the Vaid has spent so much time and labour.

DIALIRAM.
Director of Public Instructions,
Patiala State.

PATIALA,
2nd January 14.

प्रस्तावना ।

॥ श्रीगुरवे नमः ॥

रसवैद्यो देववैद्यो मानुषो मूलकादिभिः ।
अधमः शस्त्रदाहाभ्यां सिद्धवैद्यस्तु मांत्रिकः ॥

संसारमें आयुर्वेद शास्त्रसे बढकर उभयलोककल्याणकारी दूसरा शास्त्र नहीं है । इसके द्वारा मनुष्य सहज ही धर्मादि चतुर्विध पुरुषार्थका साधन कर सकता है । और इस शास्त्रका जाननेवाला तो साधारण अवस्थामें रहते हुए भी एक चक्रवर्ती राजासे बढकर दान कर सकता है और किसी अधिक परिश्रमके विनाही धर्म, मान और यशको प्राप्त कर लेता है । परंतु आयुर्वेद शास्त्रका जाननेवाला होना चाहिये । आयुर्वेद शास्त्रकी अवस्था यद्यपि इस समय कई कारणोंसे अच्छी नहीं है । इसका समयाधीन वह आदरभी नहीं रहा । एवं इस विद्याके सर्वांगज्ञाता भी बहुत कम हैं परंतु फिर भी यह शास्त्र संसारका असीम उपकार कर रहा है, इसका पहला उपदेश सदाचार है, सदाचारके बिगडनेसे ही मनुष्यका आरोग्य बिगडता है । वर्तमान समयमें सदाचारकी अव्यवस्थासे ही मनुष्योंकी दुरवस्था है,सदाचारके बिगडनेसे ही आलसी, रोगी, बलवीर्य-पराक्रमहीन और लक्ष्मीहीन हो रहे हैं । इस दुरवस्थासे बचानेके लिये आयुर्वेदका सबसे बडा अंग चिकित्सा है.उस चिकित्सा शास्त्रमें रस चिकित्सा, वनौषधि चिकित्सा, शस्त्रदाहादि चिकित्सा और मंत्रचिकित्सा इन भेदोंसे चार प्रकारकी चिकित्सा है। इनमें मंत्रचिकित्सा तो अब लुप्तप्रायसी है इसके ज्ञाताओंको सिद्धवैद्य कहते थे । शस्त्रद्वारा (सर्जरी) चिकिसा करना, तथा अग्निदाह, क्षारदाह, जलौका, तुंबी आदिसे जो चिकित्सा की जाती है इसको शल्यतंत्र और शालाक्य तंत्र कहते हैं इसके जाननेवालोंको कायचिकित्सावालोंने अधम माना है, जडी बूटियोंसे जो चिकित्सा की जाती है इसको मानुषी चिकित्सा कहते हैं और रसों द्वारा जो चिकित्सा की जाय उसे दैवी चिकित्सा कहते हैं ।

" अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसंगतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्यो रसोऽधिकः " ॥

रसकी मात्रा (खुराक) बहुत थोडी होती है, इसके सेवनमें अरुचि भी नहीं होती और शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त होजाती है इसलिये सब औषधियोंमें रस श्रेष्ठ माना जाता है। परंतु रसक्रियामें निपुणता होनेपर ही यह शास्त्र लाभदायक हो सकता है। यादि विधिपूर्वक रस धात्वादि शोधन मारण किये हुए हों तो एक तो वह जितने पुराने होते जायँ उतने ही गुणकारी होते जाते हैं और योगवाही होनेसे एक रससे ही संपूर्ण रोग दूर हो सकते हैं इसलिये यह शास्त्र परमहितकारी है।

ऐसी कथा सुननेमें आती है कि, जब महादेवके गणों द्वारा काटा हुआ दक्षका शिर अश्विनीकुमारोंने जोड दिया तो आयुर्वेद शास्त्रकी विचित्रता देख अश्विनीकुमारोंकी बडी प्रशंसा होने लगी। इसे देख भैरव ब्रह्माके पास गये और उनसे आयुर्वेद शास्त्रके पढनेकी प्रार्थना की। ब्रह्माने कहा तुम तामसी स्वभावके जन हो इसलिये आयुर्वेदके अधिकारी नहीं हो, तुमको आयुर्वेद नहीं सिखाया जायगा। यह सुन रोषमें आ भैरवने त्रिशूलसे ब्रह्माका मस्तक काट दिया, तदनन्तर अश्विनीकुमारोंने वह भी जोड दिया यह देख भैरव दुःखित हो जंगलमें लकडियें एकत्रित कर जलकर मरनेको तैयार हुए। तब महादेवजीने इन्हें सन्तोष देकर यह रसचिकित्सा सुनाई और कहा कि यह सबसे अधिक आदर पायेगी तबसे यह चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ उत्पन्न या प्रगट हुई।

जैसे धन्वंतरि, आत्रेय, सुश्रुत, चरक आदि वनौषधि चिकित्साके विद्वान् हुए वैसे ही भैरव, नागार्जुन, सोमदेव, स्वच्छन्दभैरव, सिद्धनाथ आदि रसचिकित्साके विद्वान् हुए हैं। इनके बनाये "रसचिकित्सा" के अनेक ग्रंथ हैं।

उन अनेक रसचिकित्साके ग्रंथोंमेंसे बडे परिश्रमसे श्रीगोपालकृष्ण भट्टने रसोंका संग्रह कर यह "रसेन्द्रसार संग्रह" नामक ग्रंथ बनाया। इसमें तीन खण्ड हैं-प्रथम खंडमें रस, उपरस, धातु, उपधातु, रत्न और विषादिकोंका शोधन मारण बहुत उत्तम रीतिसे लिखा है। दूसरे खण्डमें ज्वरादि संपूर्ण रोगोंकी चिकित्सा है और तीसरे खण्डमें आयु, बल और वीर्यवर्द्धक उत्तम २ योग हैं। इस प्रकार यह रसेन्द्रसारसंग्रह नामक ग्रंथ तीन खण्डोंमें समाप्त हुआ है। ग्रंथके ऊपर श्रीहृदयनाथ कविरत्न कृत संस्कृत संदर्भ भी है। इतना सब होनेपर भी इस ग्रंथसे विद्वानोंको ही लाभ पहुँच सकता था। केवल भाषामात्र जाननेवालोंके लिये भाषानुवादके विना कुछ उपाय ही न था ऐसा देख परमोदारचरित "श्रीवेंकटेश्वर" प्रेसके मालिक सेठ खेमराजजीने यह पुस्तक सरल हिन्दी अनुवादके लिये मेरे पास भेजा, मैंने अपनी मतिगतिके अनुसार इस ग्रंथकी भाषाटीका करनेके अतिरिक्त इसमें पुटविधान और मानविधि भी लगा दी है।

यह जो कुछ और जैसा तैसा बना है श्रीमान् सेठ खेमराजजीके करकमलोंमें ही सर्वाधिकार सहित समर्पित करता हूं, इसके अनुवादमें यदि कहीं लेखका दोष रहा हो तो प्रेसके शास्त्री महाशय छपते समय शोधन करनेकी कृपा करेंगे। यदि विषयमें भ्रष्टता हुई हो तो भिषग्वर कृपापूर्वक शोधन कर मुझे भी सूचित करेंगे जिससे अग्रिमावृत्ति छपनेके समय वह दोष निकाल दिया जाय॥

आपका विनीत सेवक-

वैद्यरत्न रामप्रसाद, राजवैद्य

पटियाला स्टेट.

|| श्रीः ||

समर्पणम् ।

संसारसंपातनिपातितानां मोहप्रमादेन विमोहितानाम् ।
दुःखार्णवप्लावितजीवितानां त्वमेव नस्तत्परमावलंबनम् ॥

प्रभो ! दयालो ! शरणागतवत्सल ! वह संसारमें कौनसा पदार्थ है जिसे अपना समझ आपके चरणकमलोंमें समर्पण करनेका साहस करूं ? नाथ ! समर्पण करना तो अलग रहा यहां तो अवस्था ही और है, संसारके संपातोंसे बार बार पातित होनेपर मोहरूपी उन्मादसे ज्ञानशून्य अवस्था इस जीवनको दुःख समुद्रकी डुबकियें खाते देख समर्पणकी किसे सूझ सकती है । जगदाधार ! अपने बचावकी इच्छासे या आपके चरणोंका आश्रय लेनेकी इच्छासे कोई महात्मा अपने मनको आपकी शरणमें भेजनेका प्रयत्न करे यह बात अलग है किन्तु समर्पणकी इच्छासे कौन महापुरुष है जो आपकी शरण जाय ।

ऐसा प्रायः सब लोग कहते हैं कि जिसे आपका यथार्थ ज्ञान है वह संसारके सब झंझट पर लात मार अनन्य प्रेमके मार्ग जाकर जिस वस्तुको वह अपना माना हुआ हो उसे आपके चरणोंमें समर्पण कर देता है ? परन्तु नाथ ! आपका ज्ञान और आपका प्रेम प्राप्त किसे हो सकता है यहां तो और प्रकारके ही प्रेम देखनेमें आते हैं । कोई अपने पुत्र कलत्रादिकमें मोहित रहनेको प्रेम कहते हैं, कोई किसीके स्वरूपपर मस्त हो जानेको ही प्रेम माने हुए हैं, कोई स्वार्थवश किसीकी सेवा करनेको प्रेम कहते हैं एवं कोई बडी लम्बी चौडी पूजापाठ या माला तिलकको प्रेम माने हुए हैं, अब नये ढंगकी व्याख्यानबाजी भी एक प्रेमका अंग मानी जाने लगी परंतु क्या प्रभो ! इन सम्पातोंका नाम प्रेम है ? दयालो ! आपका प्रेम किसको प्राप्त हो सकता है ? प्राप्त हो भी कैसे, उसका अधिकारी ही कौन है, नाथ ! वह ज्ञान और वह प्रेम तो उसे ही मिलता है जिसे आप स्वयंही अपने दयालु नामको सार्थक करनेके लिये अपना लें। अहो नाथ ! जिसे आप अपना लें वह धन्य है, उसके चरणरजसे यह वसुंधरा भी धन्य है, प्रभो ! समर्पण भी वही कर सकता है

जिसे वह निर्दोष प्रेम प्राप्त हो। दयालो ! मै क्या समर्पण करूं मेरा तो किसी वस्तुपर अधिकारही नहीं, यहां तो अपना मन भी अपने वश नहीं, वश तो तब हो जो अपना हो यह तो कुछ विचित्र चक्र है इसका पारावार आपही जानते होंगे अथवा कोई आपका ही जन जानता होगा। हूं तो मैं भी आपका परंतु मुझमें न तो यथार्थ आपका होजानेका ज्ञान ही है, न मुझसे वह परिश्रम ही हो सका। तो नाथ ! अब क्या करूं प्रयत्न तो आपसे विमुख होनेका कर रहा हूं, इच्छा है आपके प्रेमकी। यह तो बडा ही टेढा चक्र है अब कलम भी रुकती है ! प्रभो ! स्वयं अपनानेकी कृपा कीजिये यह तो जो है आपसे छिपाही नहीं, दिन रात्रिके २४ घण्टे होते हैं ३६ कामोंकी उलझन गलेमें डालनेमें सुख समझता हूं फिर आपके मार्ग जानेकी इच्छा करता हूं ऐसे चक्रमें बताइये सिवाय सच्ची अथवा झूठी रीतिसे आपके शरण जानेके और मेरा कौन आश्रय हो सकता है। तो क्या मैं इस अंटसंट अनुवाद (टीका) को समर्पण करनेके लिये आपका अवलंबन चाहता हूं। नहीं नाथ ! नहीं. समर्पण तो यह अपने इस चंचल चित्तको करने आया है इसका समर्पण विना आपकी कृपा नहीं हो सकती। यदि हो सकती है तो स्वीकार कीजिये, यह आपका जन प्रार्थना करता है इसके चित्तको संसारके झंझटोंसे हटा अपनी शरणमें लीजिये ॥

हृदय सदा यादवतः पापाटव्या दुरासदायादवतः ।
अरिसमुदायादवतस्त्रिजगन्मा गाः स्मरेण दायादवतः ॥

आपका-

रामप्रसाद.

वर्तमान तोलसे आयुर्वैदिक तोलका मिलान।

३ राई	का	१ सरसों.
३ सरसों	,,	१ यव.
३ यव	,,	१ गुंजा. (रत्ती)
८ रत्ती	,,	१ मासा.
३ मासे	,,	१ टंक (शाण)
२ शाण	,,	१ कोल. (६ मासा)
२ कोल	,,	१ कर्ष. (तोला)
२ कर्ष	,,	१ अर्धपल.
४ कर्ष	,,	१ पल. (४ तोला), बिल्व, मुष्टि.
२ पल	,,	१ प्रसृति.
२ प्रसृति	,,	१ अंजलि (१६ तोले), कुडव.
२ अंजलि	,,	१ मानिका. (३२ तोला)
२ मानिका	,,	१ प्रस्थ. (६४ तोला)
४ प्रस्थ	,,	१ आढक. (४ सेर)
१ तुला	,,	८० तोलाके सेरसे ५ सेर
४ आढक	,,	१ द्रोण. (१६ सेर.)
२ द्रोण	,,	१ शूर्प. (३२ सेर)
२ शूर्प	,,	१ द्रोणी (६४ सेर)
४ द्रोणी	,,	१ खारी. (२५६ सेर)
१ भार	,,	२००० पल (१२५ सेर)

कोई पांच तोलेका १ पल मानकर २० तोलेका कुडव (१ पाव पक्का) ४ कुडवोंका १ प्रस्थ (८० तोलेका सेर) लेते हैं। इसी प्रकार ४ सेर पक्केका १ आढक १६ सेर पक्केका द्रोण मानते हैं। पुराने जमानके कच्चे तोलसे पल ८ तोलेका लेते हैं।

रसेन्द्रसारसंग्रह-विषयानुक्रमणिका ।

इति विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

रसेन्द्रसारसंग्रह ।

भाषाटीकासहित ।

मङ्गलाचरण ।

रसेन्द्रमिव निःशेष-जरा-व्याधि-विनाशनम् ।
प्रणमामि गुरु भक्त्या शङ्करं योगसाधनम् ॥ १ ॥

टीकाकारोक्त मङ्गल ।

प्रणम्य श्रीशिवं भक्त्या यत्र तत्र शिवप्रदम् ।
करोम्यहं नृवाण्यां वै रसेन्द्रसारसंग्रहम् ॥ १ ॥
क्व चास्ति रससंसिद्धिः क्व चायुर्वेदसागरः ।
क्व वै रामप्रसादोऽहं भिषक्कीर्त्यभिलाषुकः ॥ २ ॥
यथा तथा गमिष्यामि मन्थानं गुरुदर्शितम् ।
चक्षुर्युक्तैः सहाऽन्धोपि सुमार्गे गच्छाति ध्रुवम् ॥ ३ ॥

दोहा—सर्वत्र हि कल्याणप्रद, गिरिजा सहित महेश ।
करि प्रणाम उस देवको, सगरे टरत कलेश ॥ १ ॥
रससंग्रह इस ग्रंथको, हिन्दीमें अनुवाद ।
यथा तथा कछु करत हौं, जडमति रामप्रसाद ॥ २ ॥
कहँ सिद्धी रसराजकी, अरु आयुर्वेद अपार ।
कहँ चाहत यश महतको, रामप्रसाद सुधार ॥ ३ ॥
अथवा गुरुदर्शितपथा, गमिहौं हौं मतिमन्द ।
शुभ मग सहजाहि जात है, नेत्रवान सँग अन्ध ॥ ४ ॥

जिस प्रकार संस्कारविशेषसे शुद्ध, बद्ध और मृत अर्थात् भस्म किये गये पारदके यथाविधि सेवनसे शरीरस्थ जरा (बुढापा) और व्याधियोंका निश्शेष (समूल) नाश होता है, उसी प्रकार आध्यात्मिक जरा व्याधियोंके नाश करनेवाले योगसाधन (योगगम्य) जगद्गुरु शंकर अर्थात् समस्त संसारका कल्याण करनेवाले महादेवको मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥

नत्वा गुरुपदद्वन्द्वं दृष्ट्वा तन्त्राण्यनेकशः ।
श्रिया गोपालकृष्णेन क्रियते रससंग्रहः ॥ २ ॥

अपने गुरुजीके दोनों चरणोंको प्रणाम करके अनेक तन्त्रोंको देखकर मैं श्रीगोपालकृष्णभट्ट इस रसेन्द्रसारसंग्रह नामक ग्रन्थको बनाता हूं ॥ २ ॥

सिद्धयोगाश्च ये केचित् कृतिसाध्या भवन्ति हि ।
एकीकृत्य तु ते सर्वे लिख्यन्ते यत्नतो मया ॥ ३ ॥

जो सिद्ध अर्थात् प्रत्यक्ष फल देनेवाले योग मनुष्योंसे बन सकते हैं या मनुष्य जिन सिद्ध योगोंको बना सकते हैं उनको अनेक तंत्रोंसे यत्नपूर्वक इकट्ठे करके मैं इस ग्रन्थमें लिखता हूं ॥ ३ ॥

रसकी प्रधानता ।

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः ॥ ४ ॥

पारदकी बहुत थोड़ी मात्रा (खुराक) होती है, और उस अल्प मात्रासे ही बहुत गुण होजाता है, एवं इसके सेवनमें अरुचिभी नहीं होती तथा शीघ्रही आरोग्यता (तंदुरुस्ती) प्राप्त होती है, इस लिये सम्पूर्ण औषधिमात्रमें पारद सबसे श्रेष्ठ कहा है ॥ ४ ॥

साध्येषु भेषजं सर्वमीरितं तत्त्ववेदिना ।
असाध्येष्वपि दातव्यो रसोऽतः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ५ ॥

आयुर्वेदके ज्ञाताओंने संपूर्ण औषधियें साध्य रोगोंके लियेही कही हैं । परंतु पारद असाध्य रोगोंकोभी दूर करता है इस लिये यह सब ओषधियोंसे श्रेष्ठ माना है ॥ ५ ॥

हतो हन्ति जरां व्याधिं मूर्च्छितो व्याधिघातकः ।
बद्धः खेचरतां धत्ते कोऽन्यः सूतात्कृपाकरः ॥ ६ ॥

पारेकी भस्म–बुढापा और सम्पूर्ण वलीपलित आदि रोगोंको दूर करती है । मूर्छित पारद (रससिंदूर, मकरध्वज आदि) संपूर्ण व्याधियोंको नष्ट करता है । और " जलौका बद्ध " या " खेचरी गुटिका" हो जानेपर आकाशमें गमन करनेकी शक्ति देता है। अत एव पारदसे बढकर और कौन ऐसी कृपा करनेवाला हो सकता है ॥ ६ ॥

रसके पर्यायवाचक शब्द ।

रसेन्द्रः पारदः सूतः सूतराजश्च सूतकः ।
शिवतेजो रसः सप्त नामान्येवं रसस्य तु ॥ ७ ॥

रसेंद्र, पारद, सूत, सूतराज, सूतक, शिवतेज, रस ये सात नाम पारदके हैं ॥ ७ ॥

शिवबीजो रसः सूतः पारदश्च रसेन्द्रकः ।
एतानि रसनामानि तथान्यानि यथा शिवे ॥ ८ ॥

अथवा शिवबीज, रस, सूत, पारद, रसेंद्र और जितने नाम शिवके हैं वह सब पारदके जानने ॥ ८ ॥

उत्तम पारदकी परीक्षा ।

अन्तः सुनीलो बहिरुज्ज्वलो यो
मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः ।
शस्तोऽथ धूम्रः परिपाण्डुरश्च
चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धौ ॥ ९ ॥

जो पारद भीतरसे नीलवर्ण हो, बाहरसे उज्ज्वल वर्ण और मध्या-

ह्नके सूर्यकी समान प्रकाशवाला हो वह पारद रसकर्ममें उत्तम माना गया है । जो पारद धूम्रवर्ण हो या सर्वतः पाण्डुवर्ण हो अथवा चित्रित वर्णवाला हो वह रसकर्मके योग्य नहीं होता है ॥ ९ ॥

पारदमें स्वाभाविक दोष ।

नागो वङ्गो मलो वह्निश्चाञ्चल्यञ्च विषं गिरिः ।
असह्याग्निर्महादोषा निसर्गाः पारदे स्थिताः ॥ १० ॥
व्रणं कुष्ठं तथा जाड्यं दाहं वीर्यस्य नाशनम् ।
मरणं जडतां स्फोटं कुर्वन्त्येते क्रमान्नृणाम् ॥ ११ ॥

नाग (सीसा) वंग (कलई), मल, वह्नि, चांचल्य, विष, गिरि और असह्याग्नि यह आठ महादोष पारदमें स्वभावसे स्थित रहते हैं । यदि इन दोषोंसे युक्त पारदको भक्षण किया जाय तो यह क्रमसे व्रण, कुष्ठ, बुद्धिकी जडता, दाह, वीर्यका नाश, मृत्यु, शरीरका जकड जाना और शरीरमें फोडे होना इन आठ प्रकारकी महाव्याधियोंको करता है ॥ १० ॥ ११ ॥

शोधनकी आवश्यकता ।

तस्माद्रसस्य संशुद्धिं विदध्याद्भिषजां वरः ।
शुद्धोऽयममृतः साक्षाद्दोषयुक्तो रसो विषम् ॥ १२ ॥

इस लिये वैद्यको चाहिये पहिले क्रमसे रस (पारद) की शुद्धिको करे अर्थात् उपरोक्त सम्पूर्ण दोषोंको निकालकर पारदको शुद्ध करले क्योंकि शुद्ध किया हुआ पारद साक्षात् अमृतके समान गुणकारी होता है । और अशुद्ध पारद विषके समान शरीरको कर डालता है ॥ १२ ॥

शुद्धाशुद्धके गुणदोष ।

दोषहीनो यदा सूतस्तदा मृत्युजरापहः ।
शुद्धोऽयममृतं साक्षाद्दोषयुक्तो रसो विषम् ॥ १३ ॥

जैसे कहा है–जब यह पारद दोषरहित होजाता है तो जरा और मृत्युके हरनेवाला होता है । शुद्ध पारद साक्षात् अमृत ही हो जाता है । परन्तु दोषयुक्त पारद साक्षात विष समझना चाहिये ॥ १३ ॥

रसशोधनप्रकार ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि पारदस्य विशोधनम् ॥
रसो ग्राह्यः सुनक्षत्रे पलानां शतमात्रकम् ॥ १४ ॥
पञ्चाशत्पञ्चविंशद्वा दश पञ्चैकमेव वा ।
पलार्द्धीनं न कर्त्तव्यं रससंस्कारमुत्तमम् ॥ १५ ॥

अब हम पारद शोधनकी विधिको कहते हैं–प्रथम किसी शुभ नक्षत्र मुहूर्तमें १०० सौ पल पारद लेवे अथवा पचास ५० पल लेवे या २५ पल लेवे, अथवा १० पल या ५ पल अथवा १ पल लेवे । १ पलसे कम पारदका संस्कार नहीं करना चाहिये ॥१४॥१५॥

शतं पञ्चाशतं वापि पञ्चविंशद्दशैव च ।
पञ्चैकं वा पलञ्चैव पलार्द्धं कर्षमेव वा ॥ १६ ॥
कर्षान्न्यूनो न कर्तव्यो रससंस्कार उत्तमः ।
प्रयोगेषु च सर्वेषु यथालाभं प्रकल्पयेत् ॥ १७ ॥

किसीके मतमें–सौ १०० पल, या ५० पल, अथवा २५ पल, या १० पल, वा ५ पल, या १ पल या आधा पल, अथवा १ कर्ष पारद लेकर संस्कार करे, एक कर्षसे कम पारदका उत्तम संस्कार होही नहीं सकता. इसलिये बहुत थोडे पारदका संस्कार आरंभ न करे । जितना अधिक मिलसके उतना लेकर सब प्रकारके शोधन प्रयोगोंको करे । (ग्रंथांतरमें लिखा है, पारदकी शुद्धि दो प्रकारकी होती है । एक रसायनके लिये, दूसरी व्याधिनाशनार्थ । जो व्याधि हरनेके लिये शुद्धि है वह रसायनमें काम नहीं आसकती । परन्तु रसायन कर्मकी रोगनाशक होसकती है) ॥ १६ ॥ १७ ॥

शुभेऽह्नि विष्णुं परिचिन्त्य कुर्य्यात्
सम्यक्कुमारीवटुकार्च्चनं च ।
सुलोहपाषाणसमुद्भवेऽस्मिन्
दृढे च वेदांगुलिगर्भमात्रे ॥ १८ ॥
सुतप्तखल्ले निजमन्त्रयुक्तां
विधाय रक्षां स्थिरसारबुद्धिः ।
अनन्यचित्तः शिवभक्तियुक्तः
समाचरेत्कर्म रसस्य तज्ज्ञः ॥ १९ ॥

शुभ दिन मुहूर्तमें विष्णु नारायणका स्मरण करके विधिवत् कुमारी और बटुकका पूजन करके चार अंगुल गहरा किसी उत्तम लोह या पत्थरका उत्तम खल्व लेकर उसमें पारद डालकर "अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते ऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः" इस मन्त्रको जपता हुआ शिवभक्तियुक्त हो स्थिर और टिकी हुई बुद्धिसे पारदकी रक्षा करता हुआ तप्त खल्वमें पारदका मर्दन करे, परन्तु खल्वमें इतना पारद डाले जितना डालनेसे खल्वका चार चार अंगुल किनारा चारों ओर ऊपरसे खाली रहे, ऐसा करनेसे पारद मर्दन भी अच्छा होता है और बाहर भी नहीं गिरता ॥ १८ ॥ १९ ॥

तप्त खल्व विधान ।

अजाशकृत्तुषाग्निं च भूगर्ते त्रितयं क्षिपेत् ।
तस्योपरि स्थितं खल्लं तप्तखल्लमिति स्मृतम् ॥२०॥

पृथ्वीमें एक गढा खोदकर उसमें धानोंके तुष बकरीकी मेंगनी और अग्नि इन तीनोंको डालके उसके ऊपर खल्वको रक्खे इस खल्वमें पारदका मर्दन होता है, इसका नाम "तप्तखल्व" है ॥ २० ॥

रक्षामन्त्र या अघोरमन्त्र।

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च।
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते ऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥ २१॥

रसनिगड।

स्नुह्यर्कसम्भवं क्षीरं ब्रह्मबीजञ्च गुग्गुलुः।
सैन्धवं द्विगुणं मर्द्य निगडोऽयं महोत्तमः॥ २२॥

थूहरका दूध, आकका दूध, ढाकके बीज, गूगल, सेंधानमक इन सब मिली हुई औषधियोंको पारेसे दो गुणी लेकर पारेमें मिलाकर खरल करे यह योग तप्तखल्वमें पारद मर्दन करनेका परम उत्तम निगड कहा है॥ २२॥

पारदकी साधारणशुद्धि।

षोडशांशैर्भिषक् चूर्णैरेकत्र मर्दयेद्रसम्।
प्रत्येकं प्रत्यहं दत्त्वा सप्तवारं विमर्दयेत्॥ २३॥

आगे कही हुई औषधियोंमेंसे प्रत्येक औषधिका चूर्ण पारेसे सोलहवाँ भाग मिलाकर एक दिनमें मर्दन करे इसी प्रकार प्रत्येक औषधिके चूर्णसे सात २ वार मर्दन करे॥ २३॥

विशेष शुद्धि (दोष हरण)।

सोर्णैर्निशेष्टका–धूम–जम्बीरा–ऽम्बुभिरादिनम्।
मर्दितः काञ्जिकैर्धौतो नागदोषं रसस्त्यजेत्॥ २४॥
विशालाङ्कोठचूर्णेन वंगदोषं विमुञ्चति।
राजवृक्षो मलं हन्ति चित्रको वह्निदूषणम्॥ २५॥
चाञ्चल्यं कृष्णधूस्तूरः त्रिफला विषनाशिनी।
कटुत्रयं गिरिं हन्ति असह्याग्निं त्रिकण्टकः॥ २६॥
प्रतिदोषं कलांशेन तत्तच्चूर्णं सकन्यकम्।

उद्धृत्योष्णारनालेन मृत्पात्रे क्षालयेत्सुधीः ।
एवं संशोधितः सूतः सप्तकंचुकवर्जितः ॥ २७ ॥

ऊन (भेडके बाल), हलदी, ईंटका चूर्ण, गृहधूम, जंबीरीका रस, घीकुमारीका रस इन सबमें प्रत्येकको पारेसे सोलहवां भाग लेकर पारदमें मिलां एक दिन (सात दिनतक ऐसा वृद्धोपदेश है) खरल करे फिर गरम कांजीसे माटीके पात्रमें धोडाले इसी प्रकार सात दिन-तक खरल करनेसे पारा नाग दोषको त्याग देता है १ ॥ ऐसे ही इन्द्रायणकी जड और अंकोठ (ढेरा वृक्ष) के चूर्णको पारेसे सोलहवां भाग लेकर घीकुमारके रसमें रगड कर गर्म कांजीसे धोडाले तो वंग-दोषको त्याग देता है २ ॥ ऐसेही पारेको अमलतासके गूदेमें सात दिन मर्दन कर गर्म कांजीसे धोता रहे तो पारेका मलदोष दूर होता है ३ ॥ इसी प्रकार चीतेकी जडकी छालके चूर्णमें मर्दन करनेसे वह्निदोष दूर होता है ४ ॥ काले धतूरेके रसमें या बीजोंके चूर्णमें उप-रोक्त विधिसे पारेका मर्दन करनेसे पारेका चांचल्थ दोष दूर होता है ५ ॥ त्रिफलेके चूर्णमें उपरोक्त विधिसे रगडे तो पारेका विषदोष नष्ट होता है ६ ॥ ऐसेही त्रिकुटेके चूर्णमें मर्दन करनेसे पारेका गिरि दोष दूर होता है ७ ॥ एवं गोखरूके चूर्णमें मर्दन करनेसे पारेका असह्याग्नि दोष दूर होता है ८ ॥ हरेक दोषके दूरकरनेके लिये उस २ द्रव्यके सोलहवें भाग चूर्णमें घीकुमारका रस डालकर उसमें पारेको मर्दन करे फिर मिट्टीके पात्रमें डाल राईकी गर्म की हुई कांजीसे धोडाले । इस प्रकार शोधन किया हुआ पारा सात कंचुकी रहित हा जाता है ॥ २४-२७ ॥

अन्य प्रकारसे शोधन ।

श्रीखण्डं देवकाष्ठञ्च काकजंघा-जया-द्रवैः ।
कर्कटी-मूषली-कन्या-द्रवं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
दिनैकं पातयेत्पश्चात्तं शुद्धं विनियोजयेत् ॥ २८ ॥

श्वेत चन्दन, देवदारु, काकजंघा, जया (जयन्ती या भांग) का रस, कर्कटी, (कन्दाल डोडा) मूसली (काली मूसली और घीकुमारका रस इन सब द्रव्योंमें पारेको एक दिन मर्दन करके ऊर्ध्व पातनयंत्रमें उडाले फिर निकाल कर कांजीसे धोकर सब कार्यमें इस पारेको लेवे यह शुद्ध पारद है ॥ २८ ॥

कुमार्या च निशाचूर्णैर्दिनं सूतं विमर्दयेत् ।
पातयेत्पातनायन्त्रे सम्यक् शुद्धो भवेद्रसः ॥ २९ ॥

अथवा–हलदीके चूर्ण और घीकुमारके रसमें पारेको खरल करके ऊर्ध्व पातन (डमरु) यंत्रद्वारा उडा लेवे तो यह पारद शुद्ध होजा-यगा इसको सब औषधियोंमें डाले ॥ २९ ॥

रसस्य द्वादशांशेन गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्यामं पाच्यं पातनयन्त्रके ।
पुनर्मर्द्यं पुनः पाच्यं सप्तवारं विधानतः ॥ ३० ॥

अथवा–पारेमें पारेसे बारहवें भाग शुद्ध आमलासार गंधक मिलाकर जंबीरी नींबूके रसमें एक पहर मर्दन करे फिर ऊर्ध्वपातन यंत्र (डमरुयंत्र) द्वारा पारेको उडाले फिर इस पारेमें बारहवां भाग शुद्ध गंधक और मिलाकर जंबीरीके रसमें मर्दन कर ऊर्ध्वपातन यंत्रमें उडावे ऐसे ७ वार उडानेसे पारा शुद्ध होजाता है ॥ ३० ॥

जयन्त्या वर्द्धमानस्य चार्द्रकस्य रसेन च ।
वायस्याश्चानुपूर्व्येण मर्दनं रसशोधनम् ॥ ३१ ॥
एषां प्रत्येकशस्तावन्मर्दयेत्स्वरसेन च ।
यावच्च शुष्कतां याति सप्तवारं क्रमेण च ॥ ३२ ॥
उद्धृत्योष्णारनालेन मृद्भाण्डे क्षालयेत्सुधीः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तः सप्तकंचुकवर्जितः ।
जायते शुद्धसूतोऽयं युज्यते सर्वकर्मसु ॥ ३३ ॥

अथवा–जयन्ती, एरण्ड, अदरख और काकमाची (मकोय) इन चारोंके स्वरसमें क्रमपूर्वक एक एकके स्वरसमें सात सात वार मर्दन कर सुखाता जावे और सूखनेपर मट्टीके पात्रमें डालकर राईकी गर्म की हुई कांजीसे धो डाले ऐसे ही जयंती आदि चारोंके स्वरसमें पृथक् पृथक् मर्दन कर कांजीसे धो डाले तो पारा शुद्ध और सर्व दोष रहित सप्तकंचुकी वर्जित होजाता है। यह पारा सब प्रयोगोंमें काममें लाने योग्य होजाता है ॥ ३१-३३ ॥

निशेष्टकाधूमरजोऽम्लपिष्टो
विकंचुकः स्याद्धि ततश्च सोर्णः ।
वरा-ऽऽरनाला-ऽनल-कन्यकाभिः
सत्र्यूपणाभिर्मृदितस्तु सूतः ॥ ३४ ॥

अथवा–हलदी, ईंटका चूर्ण, गृहधूम और अम्लवर्ग इसमें पारेको मर्दन कर सुखावे, कांजीसे धो डाले फिर इसमें ऊन, त्रिफलेका चूर्ण, त्रिकुटेका चूर्ण, चित्रक, घीकुमार और कांजी मिलाकर मर्दन करे, सूखनेपर गर्म की हुई कांजीसे धोकर पारद निकाल ले तो पारद सप्तकंचुकी रहित और शुद्ध होजाता है ॥ ३४ ॥

दिनैकं मर्दयेत्सूतं कुमारीसम्भवैर्द्रवैः ।
तथा चित्रकजैः क्वाथैर्मर्दयेदेकवासरम् ।
काकमाचीरसैः सार्द्धं दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ ३५ ॥

अथवा–पारेको घीकुमारके रसमें एक दिन खरल करे फिर सुखाकर गर्म की हुई कांजीसे धो डाले। ऐसे ही एक दिन चित्रकके रसमें खरल करे। और इसी प्रकार काकमाची (मकोय) के रसमें खरल करे फिर मट्टीके पात्रमें डालकर गर्म कांजीसे धो डाले तो पारद शुद्ध होजाता है ॥ ३५ ॥

रसोनस्वरसैः स्रुतो नागवल्लीदलोत्थितैः ।
त्रिफलायास्तथा क्वाथै रसो मर्द्यः प्रयत्नतः ॥३६॥
ततस्तेभ्यः पृथक् कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तं योजयेद्रसकर्मसु ॥ ३७ ॥

अथवा–पारेको रसोन (लहसुन) के स्वरसमें खरल करे फिर नागरवेलके पानके रसमें खरल करे, तदनंतर त्रिफलेके काथमें यत्नपूर्वक खरल करे । फिर इनसे पारेको अलग कर कांजीसे धो डाले तो पारा सर्व दोषरहित और सब काममें लाने योग्य होजाता है ॥३६॥ ३७ ॥

अथोर्ध्वपातनसंस्कार ।

भागास्त्रयो रसस्यार्कभागमेकं विमर्दयेत् ।
जंबीरद्रवयोगेन यावदायाति पिण्डताम् ॥ ३८ ॥
तत्पिण्डं तलभाण्डस्थमूर्ध्वभाण्डे जलं क्षिपेत् ।
कृत्वालवालं केनापि ततः सूतं समुद्धरेत् ॥
ऊर्ध्वपातनमित्युक्तं भिषग्भिः सूतशोधने ॥ ३९ ॥

पारा ३ भाग, शुद्ध ताम्रके छोटे बारीक पत्र १ भाग इन दोनोंको जंबीरी नींबूके रसमें तबतक खरल करे जबतक पारे और तांबेका पिंडसा न बन जावे । जब पिण्डसा बन जाय तो उसको एक मट्टीके घट (चाटीके) अन्दर टिकियासी बनाकर रख दे, दूसरा उतना ही बडा घट लेकर उस पात्रके मुखपर अधोमुख रखकर दोनों घटोंका मुख गजनी (मुलतानी) मट्टी और कपडेसे विधिवत् संधान कर देवे फिर इसको चूल्हेपर चढाकर नीचे क्रमसे अग्नि जलावे । ऊपरके अधोमुख घटके ऊपर चिकनी मट्टीसे घेरासा बनाकर उसमें शीतल जलसे भिगोकर कपडा रखता रहे जिससे अधोमुख घटका तलभाग (थला) गरम न होने पावे इसको दो पहरकी अग्नि देकर फिर शीतल होनेपर उतार कर

ऊपरके घटमें उडकर लगे हुए पारदको निकाल ले। इसको वैद्योंने उर्ध्वपातन यंत्र (डमरुयन्त्र) कहा है । यह पारेके शोधनमें ऊर्ध्वपातन संस्कार है ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अधःपातनसंस्कार ।

नवनीताह्वयं सूतं घृष्ट्वा जम्भाम्भसा दिनम् ।
वानरी-शिग्रु-शिखिभिः सैन्धवाऽऽसुरिसंयुतैः॥४०॥
नष्टपिष्टं रसं कृत्वा लेपयेदूर्द्धभाण्डके ।
ऊर्ध्वभाण्डोदरं लिप्त्वाऽधोभाण्डं जलसंयुतम् ॥४१॥
सन्धिलेपं द्वयोः कृत्वा तद्यन्त्रं भुवि पूरयेत् ।
उपरिष्टात्पुटे दत्ते जले पतति पारदः ।
अधःपातनमित्युक्तं सिद्धाद्यैः सूतकर्मणि ॥ ४२ ॥

शुद्ध आमलासार गंधक और पारेको एक दिन जम्बीरीरसमें खरल कर कजली बना ले, इस कजलीमें कौंचके बीज, सहँजनेके बीज, अपामार्ग (औंगा, चिरचिटा)के बीज, सेंधानमक और राई मिलाकर जम्बीरीके रसमें घोटे । जब सब मिलकर पीठीसी बन जावे तो इस पीठीको ऊपरके घटमें लेप करदे, नीचेके पात्रमें पानी भरकर ऊपरका लेपवाला पात्र पानीवाले पात्रके मुखपर अधोमुख रखकर दोनोंके मुखको कपडमिट्टीसे बंद करदे फिर पानीवाले पात्रको मुखपर्यंत पृथ्वीमें गाड दे, ऊपरवाले अधोमुख पात्रके सब ओर आरने उपले लगा कर अग्नि देवे तो सब पारा नीचे पानीमें चला जावेगा। पारेके संस्कारोंमें सिद्धादिकोंने इसको अधःपातन संस्कार कहा है ॥ ४०-४२ ॥

तिर्य्यक्पातनसंस्कार ।

घटे रसं विनिक्षिप्य सजलं घटमन्यकम् ।
तिर्यङ्मुखं द्वयोः कृत्वा तन्मुखं रोधयेत्सुधीः ॥४३॥

रसाधो ज्वालयेदग्निं यावत्सूतो जलं विशेत् ।
तिर्यक्पातनमित्युक्तं सिद्धैर्नागार्जुनादिभिः ॥ ४४ ॥

एक बडे अच्छे घडेमें पारा डाल दे और दूसरे वैसेही घडेमें पानी डाले फिर दोनों घटोंको तिरछे करके विधिवत् दोनोंके मुख जोड देवे। फिर पारेवाले घटके नीचे अग्नि जलावे तो पारा उडकर पानीमें चला जायगा । इस पारदके संस्कारको नागार्जुन आदि सिद्धोंने तिर्यक्-पातन संस्कार कहा है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

बोधनसंस्कार ।

एवं कदर्थितः सूतः षण्ढत्वमधिगच्छति ।
तन्मुक्तयेऽस्य क्रियते बोधनं कथ्यते हि तत् ॥ ४५ ॥

इस प्रकार मर्दन और पातन आदि करनेसे कंचुकी आदि दोष तो दूर हो जाते हैं परंतु पारेमें षण्ढत्व (नपुंसकता) आजाती है । उस षण्ढत्वके दूर करनेको हम बोधन संस्कार कहते हैं ॥ ४५ ॥

विश्वामित्रकपाले वा काचकूप्यामथापि वा ।
सूतं विनिक्षिप्य जलं तत्र तन्मज्जनावधि ॥ ४६ ॥
पूरयेत्त्रिदिनं भूम्यां गजहस्तप्रमाणतः ।
अनेन सूतराजोऽयं षण्ढभावं विमुञ्चति ॥ ४७ ॥

नारियलमें या काचकी शीशीमें पारा डालकर उसमें इतना पानी डाले जिसमें पारा डूबजावे फिर इसका मुख बंद करके डेढगज गहरे गढेमें दबादे चौथे दिन निकाल ले तो पारेका षण्ढत्व दूर होजाता है। कोई इस पारेको नारिकेल या शीशीमें डालकर इसमें नमकका पानी डाल पृथ्वीमें गाडे ऐसा मानते हैं । कहीं " सूतं विनिक्षिप्य जलं " इस पाठकी जगह " सृष्टचंबुजं विनिक्षिप्य " ऐसा पाठ लिखकर सोलह वर्षकी स्त्रीका मासिक रज डालना ऐसा मानते हैं ॥४६॥४७॥

हिंगुलसे पारा निकालनेकी विधि ।

अथवा हिंगुलात्सूतं ग्राहयेत्तन्निगद्यते ।
जम्बीरनिम्बुनीरेण मर्दितो हिंगुलो दिनम् ॥ ४८ ॥
ऊर्ध्वपातनयन्त्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः ।
कंचुकैर्नागवङ्गाद्यैर्निर्मुक्तो रसकर्मणि ।
विना कर्म्माष्टकेनैव सूतोऽयं सर्वकर्मकृत् ॥ ४९ ॥

जहांपर संस्कारशुद्ध पारद न मिल सके तो सिंगरफसे निकाला हुआ पारा लेना चाहिये सो सिंगरफसे पारा निकालनेकी विधि कहते हैं– सिंगरफकों एक दिन नींबूके रसमें मर्दन करके ऊर्ध्वपातन यंत्रद्वारा पारा निकाल ले । यह पारा मलरहित सप्तकंचुकी और नाग वंगादि दोष रहित होता है यह हिंगुलसे निकाला हुआ पारा अष्ट संस्कारके विनाही सब कर्ममें लेने योग्य होता है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

पारदके अष्ट संस्कार ।

स्वेदनं मर्दनञ्चैव मूर्च्छनोत्थापनं तथा ।
पातनं बोधनञ्चैव नियामनमतः परम् ।
दीपनञ्चेति संस्काराः सूतस्याष्टौ प्रकीर्तिताः ॥ ५० ॥

स्वेदन, मर्द्दन, मूर्च्छन, उत्थापन, पातन, बोधन, नियामन और दीपन यह पारेके आठ संस्कार कथन किये हैं । वह इस प्रकार है–

(१) त्रिफला, त्रिकुटा, चित्रक, घीकुमार और कांजी इन सबको एक घडेमें डालकर चूलहेपर रक्खे, इस घडेमें किसी अच्छे गाढे वस्त्रको चौलड (चार तह) करके उसमें पारेको बांधकर दोलायंत्रके विधानसे लटकावे नीचे आग जलावे इस प्रकार घडेके कांजीवाले पानीमें तीन दिन पकानेको स्वेदन संस्कार कहते हैं । अथवा त्रिकुटा, नमक, राई, मूलीके बीज, त्रिफला, अदरख, महावला, नागवला, चौलाई, पुनर्नवा, मेढासिंगी, चित्रक और नौसादर इनको धान्याम्ल (धान्योंकी कांजी) में रगडकर एक गाढे वस्त्रपर एक अंगुल मोटा

लेप करे उसमें पारा बांधकर धान्याम्लमें तीन दिन दोलायंत्रमें पकावे यह स्वेदन संस्कार है ॥

(२) घरका धूम, ईंटका चूर्ण, कालाजीरा, जली हुई ऊन, गुड, सेंधानमक और राई यह पारेसे सोलहवें सोलहवें भाग लेकर सबका चूर्णकर पारेमें मिला कांजी डालकर तीन दिन रगडे इसको मर्दन संस्कार कहते हैं ॥

(३) त्रिफलेका चूर्ण घीकुमार और चित्रक इन तीनोंमें खरल करके सूखनेपर कांजीसे धोडाले इस प्रकार सात वार इन्हीं द्रव्योंमें रगडनेको मूर्च्छन संस्कार कहते हैं ॥ अथवा पहले जो सप्तकंचुकी हरण विधि कह आये हैं उसको मूर्च्छन संस्कार कहते हैं ॥

(४) घीकुमारके रसमें चौथाई भाग हलदीका चूर्ण मिलाकर घोटकर डमरुयंत्रमें उडाले इसको उत्थापन संस्कार कहते हैं। अथवा नींबूके रसमें खरल कर धूपमें सुखाकर पारा निकाल ले बाकी रहे पारेको उडाकर निकालले यह उत्थापन संस्कार है ॥

(५) ऊर्ध्वपातन और तिर्यक्पातन करनेको पातन संस्कार कहते हैं ॥

(६) ४६। ४७ के श्लोकमें जो षण्ढत्वनाशन विधि कही है उसको बोधन संस्कार कहते हैं ॥

(७) नाकुलीकंद, चिंचिका (इमली या रत्तक), वांझककोडेका कंद, भांगरा, नागरमोथे और धतूरेके पत्रोंका स्वरस इनमें तीन दिन रगडनेसे पारा स्थिर होजाता है इसको नियामन संस्कार कहते हैं ॥

(८) कसीस, पांचों लवण, राई, मिर्च, सुहांजनेके बीज और सुहागा इन सबका चूर्ण धान्याम्लजलमें घोलकर इस पानीमें दोलायंत्रद्वारा पारेको तीन दिन पकानेसे पारेका दीपन संस्कार होता है॥

यद्यपि पारेके १८ संस्कार होते हैं जो बृहद् रसग्रंथोंमें लिखे हैं। यहांपर केवल ८ संस्कार लिखदिये हैं, अठारह संस्कार यहां ग्रंथ बढ-

नेके भयसे नहीं लिखे और इस ग्रंथकारने केवल पारेके संक्षेपसे ४ संस्कार लिखे हैं जैसे-शोधन, मूर्च्छन, बंधन और मारण सो यथाक्रम ग्रंथकारने लिखे हैं ॥ ९० ॥

सिंगरफसे पारा निकालनेमें अन्यमत ।

दरदं तण्डुलस्थूलं कृत्वा मृत्पात्रके त्रिदिनम् ।
भाव्यं जंबीररसैश्चांगेर्य्या वा रसैर्बहुधा ॥ ९१ ॥
ततश्च जंबीरवारिणा चांगेर्या रसेन वा परिप्लुतम् ।
कृत्वा स्थालीमध्ये निधाय तदुपरि कठिनीघृष्टमुत्तानम् ॥
चारु शरावं तत्र त्रिंशद्वारं जलं देयम् ।
उष्णे देयं तथैव तदूर्ध्वपातनेन निर्मलः शिवजः ॥ ९३ ॥

सिंगरफके छोटे छोटे चावलोंके बराबर टुकडे कर उनमें नींबूका रस डालके सुखावे अथवा चांगेरी (चौपतिया शाक) के रसकी अनेक (सात) भावना देवे फिर मट्टीके बडे पात्रमें डालकर उसमें इतना नींबूका रस और चांगेरीका रस डाले जिसमें सिंगरफका सब चूरा डूब जावे फिर उस पात्रके मुखपर खडियासे लिपा हुआ एक तौल्ला (बडाभारी शराव) सीधा रखकर मिट्टी और कपडेसे खूब संधिलेप करदे इस पात्रको चूल्हेपर रख नीचे नीचे तीन प्रहर अग्नि जलावे और ऊपरवाले पात्रमें जब जल गरम हो तो निकालकर शीतल जल डाले ऐसे तीस बार जल बदले जिससे ऊपरका पात्र गरम न होने पावे । तीन पहरके अनंतर आग निकालकर बुझादे जब यह यन्त्र सर्वांग शीतल हो जाय तो ऊपरके पात्रमें लगे शुद्ध पारेको खडिया सहित निकाल ले, फिर कपड छानकर कांजी और पानीसे धोकर साफकर ले यह शुद्ध पारद है ॥ ९१-९३ ॥

पारिभद्ररसैः पेष्यं हिंगुलं याममात्रकम् ।
जम्बीराणां रसैर्वाथ पचेत्पातनयन्त्रके ॥ ९४ ॥

तं सूतं योजयेद्योगे सप्तकचुंकवर्जितम् ।
संशुद्धिमन्तरेणापि शुद्धोऽयं रसकर्मणि ॥ ५५ ॥

अथवा-पारिभद्र (पंडयारा या नीम) के रसमें सिंगरफको एक प्रहर खरल करे अथवा जंचीरी नींबूके रसमें खरल करे फिर डमरूयंत्रमें या उपरोक्त पातनयन्त्रमें डाल पूर्ववत् पारा निकाल ले तो यह पारा सप्त कंचुकीरहित होता है और विना ही आठ संस्कारोंके शुद्ध माना जाता है यह सब रसोंमें डालना चाहिये ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

मूर्च्छनविधि ।

गन्धकेन रसं प्राज्ञः सुदृढं मर्दयेद्भिषक् ।
कज्जलाभो यदा सूतो विहाय घनचापलम् ॥ ५६ ॥
दृश्यतेऽसौ तदा ज्ञेयो मूर्च्छितो रसकोविदैः ।
असौ रोगचयं हन्यादनुपानस्य योगतः ॥५७॥

पारे और गंधकको सम भाग लेकर खरलमें तबतक मर्दन करे जबतक उसकी घनता (गाढता) और चपलता दूर होकर सुर्मेके समान कज्जली न होजाय । इस कज्जलीको मूर्च्छित पारा कहते हैं । इस कज्जलीको अनुमान विशेषसे विधिवत् सेवन करावे तो यह अनेक रोगोंके समूहको दूर करे ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

पारदमारण ।

द्विपलं शुद्धसूतस्य सूतार्धं गन्धकं तथा ।
कन्यानीरेण संमर्द्य दिनमेकं निरन्तरम् ॥
रुद्ध्वा तद्भूधरे यन्त्रे दिनैकं मारयेत्पुटे ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा दो पल, शुद्ध गंधक एक पल इन दोनोंको घीकुमारके रसमें एक दिन (बराबर २४ घंटे) मर्दन करके भूधर यंत्रमें रख एक दिनकी पुट दे तो इस पारेकी भस्म होजायगी (यह मूर्च्छित पारद है विना विधि खानेसे अवगुण करता है) ॥ ५८ ॥

अन्यप्रकारसे मारणविधि ।

भुजङ्गवल्लीनीरेण मर्दयेत्पारदं दृढम् ।
कर्कटीकन्दमूषायां संपुटस्थं पुटेद्गजे ॥
भस्म तद्योगवाहि स्यात्सर्वकर्मसु योजयेत् ॥ ५९ ॥

नागवल्ली (पान) के रसमें पारेको खूब दृढ मर्दन करे । फिर इसको कर्कटीकंद (बांझककौडेकी जड या कंचन लताकी जड)की मूषा बना उसमें इस पारेको डाल दूसरी मूषासे बंद कर विधिवत् संधान करे उसके ऊपर कपडमिट्टी कर धूपमें सुखाले फिर इसको गजपुटमें पुट देवे तो पारेकी भस्म होजायगी । यह योगवाही भस्म सर्व कार्योंमें लेनी चाहिये ॥ ५९ ॥

श्वेतांकोठजटानीरैर्मर्द्यः सूतो दिनत्रयम् ।
पुटेत्तु चान्धमूषायां सूतो भस्मत्वमाप्नुयात् ॥ ६० ॥

श्वेत अंकोठ ढेराकी जडके रसमें पारेको तीन दिन खरल कर फिर अंधमूषामें रखकर पुट देवे तो पारेकी भस्म हो जाती है ॥ ६० ॥

देवदाली हंसपादी यमचिञ्चा पुनर्नवा ।
एभिः सूतो विघृष्टव्यो पुटनान्म्रियते ध्रुवम् ॥ ६१ ॥

अथवा–देवदाली (वंदाल डोडा), हंसपदी, यमचिंचा, (बृहद इमली) पुनर्नवा इन सब औषधियोंके साथ पारेको मर्दन कर पुट देनेसे पारेकी भस्म होजाती है ॥ ६१ ॥

रससिन्दूर ।

भागो रसस्य त्रय एव भागा गन्धस्य माषः पवनाशनस्य । संमर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे तां कज्जलीं काचघटे निदध्यात् ॥ ६२ ॥ संरुध्य मृत्कर्पटकै-

घटीं तां मुखे सचूर्णां खटिकाञ्च दत्त्वा । क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा तां वालुकायन्त्रगतां ततः स्यात् ॥ ६३ ॥ बन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु । निजानुपानैर्मरणं जराञ्च हन्त्यस्य वल्लः क्रमसेवनेन ॥ ६४ ॥

एक पल पारा, तीन पल गंधक और एक मासा शीसा इन सब औषधियोंको उत्तम खरलमें खूब घोटे, फिर उस कज्जलीको आतशी शीशीमें डाल ऊपर सात कपड़मिट्टी करे फिर उस शीशीको वालुकायंत्रमें मंद, मध्य, तीव्र अग्नि देवे एक पहर शीशीका मुख खुला रहने दे जब गंधकका धूम निकल लेवे तब उस शीशीके मुखपर खड़िया मिट्टीका या गुड़ चूनेका डाट लगाकर मुख बंद करदेवे (कोई लोहेकी सींख शीशीमें डालकर देख लेते हैं जब शीशीके गलेमें लगा हुवा द्रव्य सींखसे लगने लगे तो मुख बंद करते हैं) फिर २४ पहर अग्नि देनेके अनंतर स्वांग शीतल होनेपर शीशी तोड़कर बीचमें दुपहरियाके फूल समान लाल वर्णके शीशीमें चिपटे हुवे पारदको निकालले इसको संपूर्ण रोगोंमें रोगविशेषोंके अनुपानोंसे देवे तो यह संपूर्ण रोगोंको नष्ट करता है और इसको ३ रत्ती सेवन नित्य करनेसे जरा मृत्यु भी दूर होते हैं ॥ ६२–६४ ॥

[मेरा अनुभव—मैं कवचीयन्त्र बनाते समय शीशीपर कपड़ा और मिट्टीको न लपेट, केवल खड़िया, मनुष्यके शिरके बाल और रूईको खूब कूटपीस चढा देताहूं, यह कवच इतना दृढ होता है कि चाहे कांचकी शीशी तेज आंचसे पिघल जावे, परन्तु यह मिट्टी कभी नहीं टूटती ॥ अनुवादक.]

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रं तु गन्धकम् ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधांकुरवारिभिः ॥६५॥

भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरच्य कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥६६॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान् ॥६७॥

अन्य प्रकार–शुद्ध पारा ४ तोले, शुद्ध गंधक ४ तोले इन दोनोंको विधिवत् खरल कर कजली बनावे फिर इसमें वटवृक्षके अंकुरोंके रसकी तीन भावना देवे । सूखनेपर अग्निसहनशीला शीशीमें भरकर उस शीशीपर सात वार कपड़मिट्टी करके सुखाले फिर वालुका यंत्रमें रखकर चार पहरकी मंदाग्नि देवे तो प्रातःकालके सूर्य समान वर्णवाला रससिंदूर होजाता है । इसको अनुपान विशेषसे प्रयोग करे तो अनेक रोगोंको दूर करता है (इसमें मन्द-मध्य-तीक्ष्ण क्रमसे कमसे कम बारह पहरतक तो आंच अवश्य दी जानी चाहिये । थोड़ीमें पाक असंभव है) ॥ ६५–६७ ॥

पृथक् समंसमं कृत्वा पारदं गन्धकं तथा ।
नवसारं धूमसारं स्फटिकं याममात्रकम् ॥ ६८ ॥
निम्बूरसेन संमर्द्य काचकूप्यां निवेशयेत् ।
मुखे पाषाणखटिकां दत्त्वा मुद्रां प्रलेपयेत् ॥ ६९ ॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैः पृथक् संशोध्य वेष्टयेत् ।
सच्छिद्रायां मृदः स्थाल्यां कूपिकां तां निवेशयेत् ७०
पूरयेत्सिकतापूरैरागलं मतिमान् भिषक् ।
निवेश्य चुल्ल्यां दहनं मन्दं मध्यं खरं क्रमात् ॥ ७१ ॥
प्रज्वाल्य द्वादशं यामं स्वांगशीतं समुद्धरेत् ।

स्फोटयित्वा तु मुक्ताभमूर्द्ध्वलग्नं वलिं त्यजेत्।
अधःस्थं रससिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ७२ ॥

अन्य प्रकार–पारा, गंधक, नौसादर, गृहधूम, फिटकिरी इन सबको चार चार तोला अलग २ लेकर नींबूके रसमें एक पहर मर्दन करके आतशी शीशीमें भरकर शीशीका मुख ईंट या पत्थरके डाटसे बंद कर सात कपड़मिट्टी चढ़ाकर सुखाले फिर एक बड़ी चाटी (मिट्टीका पात्र) ले उसके तल भागमें छिद्र कर उस छेदपर शीशी रखकर पात्रको गलपर्यंत वालु (रेत) से भरदे (इसको वालुका यंत्र कहतें हैं) इस यंत्रको चूल्हे पर चढ़ाकर क्रमसे मंद, मध्य और तीक्ष्ण अग्नि देवे ऐसे बारह (१२) पहर अग्नि देनेके अनंतर आग बुझा दे। स्वांग शीतल होनेपर शीशीको फोड़ कर उसमेंसे मोतीके समान चमकदार शीशीमें लगे हुए पारेको निकाल ले और स्याही तथा पीले वर्णके गंधकको जो ऊपर नलीमें लगा हो अलग निकाल लेवे, शीशीके पेटमें लगे हुए रससिंदूरको लेकर सब रोगोंमें प्रयोग करे ॥ ६८–७२ ॥

रसकपूरकी विधि।

टंकणं मधु लाक्षा च ऊर्णागुञ्जायुतो रसः।
मर्दितो भृङ्गजद्रावैर्दिनं सम्पुटमागतम् ॥ ७३ ॥
ध्मातो भस्मत्वमाप्नोति शुद्धकर्पूरसन्निभम् ॥ ७४ ॥

सुहागा, मधु (शहद), लाख, भेडकी ऊन, सफेद घुंघुची (श्वेतगुंजा) और पारा इन सबको भांगरेके रसमें खरलकर एक हांडीमें बंद करके कोयलोंकी तीन या चार पहर आंच देवे और धोंकनीसे मंद २ धोंकता रहे तो शुद्ध कपूरके समान भस्म होकर ऊपरकी ओर उड़कर लग जायगी, इसको रसकपूर कहते हैं (यह भी मूर्च्छित है भस्म नहीं, इसको उपदंशादि रोगोंमें प्रयोग करना चाहिये) ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

श्वेतभस्म (रसकपूरकी दूसरी विधि । सुधानिधि रस) ।

पिष्टं पांशुपटुप्रगाढममलं वज्र्यम्बुना नैकशः,
सूतं धातुगतं खटीकवलितं तं सम्पुटे रोधयेत् ।
अन्तःस्थं लवणस्य तस्य च तले प्रज्वाल्य वह्निं दृढं
घस्रं ग्राह्यमथेन्दुकुन्दधवलं भस्मोपरिस्थं शनैः ॥
तद्वल्लद्वितयं लवङ्गसहितं प्रातः प्रयुक्तं भजे-
दूर्ध्वं रेचयति द्वियाममसकृत्पेयं जलं शीतलम् ७५

पांसुनमक और शुद्ध पारा इन दोनोंको थोहरके दूधमें अनेक वार घोटे जब पारा और नमक थोहरके दूधमें मिलजावे तो इसको एक लोहेके पात्रमें डाल उस पात्रको खड़िया मिट्टीसे बंद कर संपुट करे फिर एक बडे मिट्टीके पात्रमें सेंधानमक भरकर उस नमकके मध्यमें यह लोहेका संपुट टिका दे, ऊपरसे नमक डालकर संपुटको नमकके मध्यमें छिपा दे फिर इस नमकवाले मिट्टीके पात्रको चूल्हेपर रख इसके नीचे तीक्ष्ण अग्नि जलावे, ४ पहरकी आंच देनेके अनंतर इसको स्वांग शीतल होने दे । फिर संपुटके ऊपरके भागमें लगे हुए सफेद पदार्थको युक्तिसे निकालले यह पारेकी सफेदभस्म है इसको छः रत्ती लेकर २॥ मासे लौंगोंके चूर्णमें मिला प्रातःकाल खिलावे तो दोपहरके बाद दस्त होंगे। इसके ऊपर शितल जल पिलाना चाहिये। इसीको रसमंजरीमें रसकपूर और रसचंद्रिकामें भस्म लिखा है (यह रक्तगत विष और गर तथा उपदंशादि विकारोंमें प्रयोग करना चाहिये) इस ग्रंथमें इसीको सुधानिधि रस कहा है ॥ ७५ ॥

सर्वाङ्गसुदर रस (पीतभस्म)

मर्दयेद्रसगन्धौ च हस्तिशुण्डीद्रवैर्दृढम् ।
भूधात्रिकारसैर्वापि पर्यन्तं दिनसप्ततः ॥ ७६ ॥

विघृष्य वालुकायन्त्रे मूषायां सन्निवेशयेत् ।
दिनमेकं ददेदग्निं मन्दंमन्दं निशावधि ॥ ७७ ॥
एवं निष्पद्यते पीतः शीतः सूतस्तु गृह्यते ।
पर्णखण्डेन तद्गुञ्जां भक्षयेत् श्रूयतां मम ॥ ७८ ॥
क्षुद्बोधं कुरुते पूर्वमुदराणि विनाशयेत् ।
ज्वराणां नाशनः श्रेष्ठस्तद्वच्छ्रीसुखकारकः ॥ ७९ ॥
हृदयोत्साहजननः स्वरूपतनयप्रदः ।
बलप्रदः सदा देहे जरानाशनतत्परः ॥ ८० ॥
अंगभंगादिकं दोषं सर्वं नाशयति क्षणात् ।
एतस्मान्नापरः सूतो रसात्सर्वाङ्गसुन्दरात् ॥ ८१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक दोनों समान भाग लेकर हस्तिशुण्डीके रसमें और भुईआमलेके रसमें सात २ दिन मर्दन करे, फिर मूषामें संपुट कर एक बालूकी भरी हांडीमें धरे एक दिन रात्रि मंद मंद अग्नि देवे इस प्रकार करनेसे पारा पीत वर्णका होजायगा । यह पीत-भस्म १ रत्ती पानमें रख खानेसे क्षुधाकी वृद्धि होती है एवं जठर रोगका नाश होता है तथा ज्वर नष्ट होता है सुन्दर कान्ति होय एवं चित्त प्रसन्न रहे सुन्दर पुत्रोत्पादन करे, बल बढ़े, वृद्धावस्था जाय, थोड़ेही दिनोंमें अंगभंग आदि दोष नष्ट होते हैं । इस सर्वांगसुंदर रसके समान श्रेष्ठ और औषधि नहीं है ॥ ७६-८१ ॥

धान्याभ्रकं रसं तुल्यं मारयेन्मारकद्रवैः ।
दिनैकं तेन कल्केन वस्त्रं लिप्त्वा तु वर्त्तिकाम्॥८२॥
विलिप्य तैलैर्वर्त्तिं तामेरण्डोत्थैः पुनः पुनः ।
प्रज्वाल्य घृतभाण्डे तद् गृह्णीयात् पतितञ्च यत्॥८३॥

कृष्णभस्म ।

कृष्णभस्म भवेत्तच्च पुनर्म्मर्द्यं नियामकैः ।
दिनैकं पातयेद्यन्त्रे कन्दुकाख्ये न संशयः ।
मृतः सूतो भवेत्सत्यं तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ ८४ ॥

धान्याभ्रक और पारद दोनों समान भाग ले आगे कही हुई मारक औषधियोंके रसमें एक दिन मर्दन करे फिर इस कल्कको कपड़े-पर लेपन कर बत्ती बनाले उस बत्तीको एरंडके तेलमें भिगोकर जलावै उसमेंसे जो तेलकी बूंदें गिरें उनको चीनीके पात्र वा घृतके चिकने पात्रमें ग्रहण करे, जो नीचे बैठजाय उस कृष्णवर्ण भस्मको नियामक औषधियोंके रसमें एक दिन मर्दन करे फिर कंदुक यंत्रमें पातन करले तो यह उत्तम कृष्णभस्म होजायगी इसको अनुपान भेदसे अनेक रोगोंमें प्रयोग करे ॥ ८२-८४ ॥

चतुर्विध भस्मकी उत्तरोत्तर श्रेष्ठता ।

श्वेतं पीतं तथा रक्तं कृष्णञ्चेति चतुर्विधम् ।
लक्षणं भस्म सूतानां श्रेष्ठं स्यादुत्तरोत्तरम् ॥ ८५ ॥

पारेकी भस्म ४ प्रकारकी होती है-श्वेत, पीत, रक्त, कृष्ण इन चारों प्रकारकी पारदकी भस्ममें उत्तरोत्तर गुण अधिक जानने । यथा श्वेत भस्मकी अपेक्षा पीत भस्म श्रेष्ठ है और पीतभस्मकी अपेक्षा रक्त भस्म श्रेष्ठ है एवं रक्तभस्मकी अपेक्षा कृष्ण भस्मको श्रेष्ठ कहा है॥८५॥

मूषाके बनानेकी श्रेष्ठ विधि ।

द्वौ भागौ तुषदग्धस्य चैका वल्मीकमृत्तिका ।
लौहकिट्टस्य भागैकं श्वेतपाषाणभागिकम् ॥८६॥
नरकेशं समं पश्च च्छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
याममात्रं दृढं पश्चात्तेन मूषां प्रकल्पयेत् ॥ ८७ ॥
शोषयित्वा तु संलिप्य तत्कल्कैः सन्निरोधयेत् ।
वज्रमूषेयमाख्याता सम्यक् पारदसाधिका ॥८८॥

दो भाग तुषोंकी भस्म, एक भाग बम्बीकी मिट्टी और एक भाग लोहाकेट्ट, एक भाग श्वेत पत्थरका चूर्ण और एक भाग मनुष्यके केश (बाल) ये पांचों चीजें लेकर इनको बकरीके दूधमें एक पहर भर खूब घोटे फिर मूषा बनाकर धूपमें सुखा लेवे जब सूख जावे फिर उसीके कल्कसे लेप कर बंद कर देवे इसको वज्रमूषा कहते हैं। इसमें भली प्रकार पारेका संस्कार होता है ॥ ८६-८८ ॥

नियामक गण।

सर्पाक्षी वन्यकर्कोटी कंचुकी यमचिंचिका।
शतावरी शंखपुष्पी शरपुंखा पुनर्नवा ॥ ८९ ॥
मण्डूकपर्णी मत्स्याक्षी ब्रह्मदण्डी शिखंडिनी।
अनन्ता काकजंघा च काकमाची कपोतिका ॥९०॥
विष्णुक्रांता सहचरा सहदेवी महाबला।
बला नागबला मूर्वा चक्रमर्दः करञ्जकः ॥ ९१ ॥
पाठा तामलकी नीली जालिनी पद्मचारिणी।
घण्टा त्रिकण्टगोजिह्वा कोकिलाक्षघनध्वनिः ॥९२॥
आखुपर्णी क्षीरिणी च त्रिपुषी मेषशृङ्गिका ॥
कृष्णवर्णा च तुलसी सिंहिका गिरिकर्णिका।
एता नियामकौषध्यः पुष्पमूलदलान्विताः ॥९३॥

नाकुलीकंद, वांझककौडा, कंचुकी (शिरीषवृक्ष), यमचिंचा (बृहद इमली), शतावर, शंखाहुली, सरफोंका, पुनर्नवा (साँठी), मंडूकपर्णी (ब्राह्मी), मत्स्याक्षी, ब्रह्मदण्डी, शिखंडिनी (पीले वर्णकी जूही), शारिवा, काकजंघा, मकोह, कपोतिका (नलिका), विष्णुक्रान्ता (कोयल), सहचरा (पीयावासा), सहदेवी, महाबला, बला, नागबला (खरैटीके भेद), मूर्वा, चक्रमर्द (पनवाड़), लताकरंज, पाटला, पाठा, भूमि आमला, नीलनी, जालनी (कड़वी-

तोरी), पञ्चचारिणी (गेंदा), घंटा (कठपाडर), गोखरू, गोजिह्वा (गोजियाघास), तालमखाना, चौलाई, मूसाकन्नी, क्षीरिणी दूधली), त्रिपुषी (खीरा), मेढासिंगी, काली तुलसी, श्वेत तुलसी, सिंहिका (बड़ी कटेली), श्वेत अपराजिता, यह सब पुष्प; मूल और पत्रयुक्त द्रव्य नियामक कहे हैं इनमें मर्दन करनेसे पारा स्थिर होजाता है ॥ ८९-९३ ॥

मारक गण ।

घनवचाचित्रकगोक्षुरकटुतुम्बीदंतिकाजाति ।
सर्पाक्षी शरपुंखा कन्या चांडालिनीकन्दम् ॥ ९४ ॥
विषमुष्टिवज्रवल्ल्यौ लज्जा देवदाली लाक्षा ।
सहदेवी नीपकणा निर्गुण्डी चक्रं लांगलिका ॥ ९५ ॥
माणार्कचन्द्ररेखा रविभक्ता काकमाचिका चार्कः ।
विष्णुक्रांता वायसतुण्डी वज्रो बला शुण्ठी चैव ॥९६॥
कोषातकी जयन्ती वाराही हस्तिशुण्डिका रम्भा ।
मत्स्याक्षी यमचिञ्चा हरिद्रे द्वे पुनर्नवाद्वितयम् ॥९७॥
धुस्तूरः काकजङ्घा शतावरी कंचुकी चैव वन्ध्या ।
तिलभेकपर्णीके दूर्वा मूर्वा हरीतकी तुलसी ॥९८॥
गोकण्टकाखुपर्ण्यौ कर्कटीकन्दवर्गलता च ।
मूसली हिंगु गुडूची शिग्रुगिरिकर्णिका महाराष्ट्री ॥९९॥
मार्कवसैन्धवसरणी सोमलता श्वेतसर्षपासनञ्च ।
हंसपदीव्याघ्रपदीकिंशुकभल्लातकेन्द्रवारुणिका ॥१००॥
सर्वञ्चार्द्धांशं वा अष्टादशाधिका वापि द्रव्यम् ।
रसमारणमूर्च्छादौ च युक्तिज्ञैर्विधिवदुपयोज्यम् ॥१०१॥

नागरमोथे, वच, चित्रक, गोखरू, कड़वीतूंबी, दंती, चमेली, नाकुलीकंद, सरफोंका, घीकुमार, चाण्डालनीकंद, विषमुष्टी (कुचला), वज्रवल्ली (हडफोड़ी), लाजवन्ती, वंदाल डोडा, लाख, सहदेवी, नीप (कदंब), पीपल, संभालू, चक्रमर्द (पनवाड़), लांगलीकंद, मानकंद, आक, चंद्ररेखा (बावची), रविभक्ता (हुलहुल), काकमाची, श्वेतार्क, विष्णुक्रांता (कोयल), कौवाठोड़ी, वज्री (थोहर), बला, सोंठ, कडवी तोरी, जयंती, वाराहीकंद, हाथीशुण्डी, केलाकंद, मत्स्याक्षी, यमचिंचा, हलदी, दारुहलदी, लाल पुनर्नवा, श्वेतपुनर्नवा, धतूरा, काकजंघा, शतावर, कंचुकी, वांझककोड़ेकी जड़, तिलपर्णी, मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), दूर्वा, मूर्वा, हरड़, तुलसी, गोखरू, मूषकपर्णी, कर्कटीकंद, वर्गलता (पाठा), मूसली, हींग, गिलोय, सुहांजना, गिरिकर्णिका (अपराजिता), महाराष्ट्री (जलपिप्पली), मार्कव (भांगरा), सेंधानमक, सरणी (प्रसारणी, पसरन), सोमलता, पीली सर्सों, असन (विजयसार), हंसपदी, व्याघ्रपदी, कंटाई, केशु, भिलावे और इंद्रायण यह मारक वर्ग है । इन सब औषधियोंका चूर्ण पारेसे आधा भाग मिलाकर या इनमेंसे जो मिलसके उनअठारह द्रव्योंका चूर्ण पारेसे आधा भाग ले अथवा प्रत्येक द्रव्यका अठारहवां भाग चूर्ण लेकर पारदको मारण, मूर्छन आदि करनेके लिये प्रयोग करे ॥ ९४-१०१ ॥

अम्लवर्ग ।

अम्लवेतसजम्बीरलुम्बाम्लचणकाम्लकाः ।
नागरङ्गं तिन्तिडी च चिञ्चापत्रञ्च निम्बुकम् ॥१०२॥
चाङ्गेरी दाडिमश्चैव करमर्द तथैव च ।
एष चाम्लगणः प्रोक्तो वेतसाम्लसमायुतः ॥१०३॥

अम्लवेत, जम्बीरी, बिजौरा, चणेका खार, नारंगी, तिन्तिडीक, इमलीके पत्ते, निंबू, चांगेरी (चुका) दाड़िम (खट्टा अनार), और कमरख यह अम्लवर्ग कहा है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

लवणवर्ग ।

लवणानि च कथ्यन्ते सामुद्रं सैन्धवं विडम् ।
सौवर्च्चलं रोमकञ्च चुल्लिका लवणं तथा ॥१०४॥

समुद्रनमक, सैंधवनमक, विडनमक, सौवर्चलनमक, रोमकनमक, चुल्लिकनमक यह लवणवर्ग कहा है ॥ १०४ ॥

मूत्रवर्ग ।

मूत्राणि हस्तिकरभमहिषीखरवाजिनाम् ।
गोजावीनां स्त्रियां पुंसां मूत्रवर्ग उदाहृतः ॥ १०५ ॥

हस्तिमूत्र, उष्ट्रमूत्र,महिषीमूत्र,गर्दभमूत्र, अश्वमूत्र, गोमूत्र,बकरीका मूत्र, भेड़का मूत्र, स्त्रीमूत्र, पुरुषमूत्र यह मूत्रवर्ग कहा है ॥ १०५ ॥

द्रावकवर्ग ।

गुञ्जांटङ्कणमध्वाज्यगुडा द्रावकपञ्चकाः ।

सफेद गुंजा (घुंघुची), सुहागा, शहत, घृत, गुड़ ये पांच द्रव्य द्रावक हैं। इनको पञ्चद्रावक कहते हैं ।

पित्तवर्ग ।

पित्तं पञ्चविधं मत्स्यगवाश्वरुरुबर्हिजम् ॥ १०६ ॥

पित्तभी पांच प्रकारका होता है—मछलीका, गौका, घोड़ेका, हिरनका और मोरका इनको पित्तपंचक कहते हैं ॥ १०६ ॥

क्षारवर्ग ।

स्वर्जिका टङ्कणं चैव यवक्षार उदाहृतः ॥ १०७ ॥

सज्जीखार, सुहागाखार, यवक्षार इनको क्षारवर्ग कहते हैं ॥१०७॥

रससेवनविधि ।

प्रातरेव पुरतो विरेचनं तद्दिनोपवसनं विधाय च ।
तत्परेऽहनिचपथ्यसेवनंतत्परेऽहनिरसेंद्रसेवनम् १०८

प्रथम विधिवत् विरेचन कराकर शुद्ध देह होनेपर विरेचनांतमें पेयादि विधि सेवन कर मनुष्य स्वस्थ होजाय। तदनंतर जब रस सेवन करना चाहे तो प्रथम प्रातःकाल उठकर ईश्वरका स्मरण करे और उस दिन उपवास करे फिर दूसरे दिन मुद्गयूषादि पथ्यका सेवन करे। फिर तीसरे दिन प्रातःकालसे पारेका सेवन करे ॥ १०८ ॥

रससेवनका फल।

बुद्धिस्मृतिप्रभाकान्तिबलञ्चैव रसस्तथा।
वर्द्धन्ते सर्व एवैते रससेवाविधौ नृणाम् ॥ १०९ ॥

विधिवत् पारेके सेवनसे बुद्धि, स्मृति, प्रभा, शरीरकी कांति, बल और शरीरमें शुद्ध रस इन सबकी वृद्धि होती है ॥ १०९ ॥

रससेवनमें पथ्य।

हितं मुद्गाम्बु दुग्धाज्यं शाल्यन्नं च विशेषतः।
शाकं पौनर्नवं वास्तु मेघनादञ्च यूथिकाम् ॥
लवणं मागधीं मुस्तं पद्मसूलानि भक्षयेत् ॥११०॥

रससेवन करनेवालेको मूंगका यूष, दूध, घृत, शाली चावल यह सब विशेषरूपसे पथ्य हैं। और पुनर्नवा, बाथू, चौलाई, जूहीका शाक यह शाक। लोनियाशाक, हरी पीपलका शाक, डीलेनागमोथेका शाक और भिसोंका शाक यह सब पथ्य हैं ॥ ११० ॥

अनुपानं तु दातव्यं ज्ञात्वा रोगादिकं भिषक्।१११।

वैद्य रोगीके रोगको देखकर उसमें जो हितकारक हो उस अनुपानसे पारेका सेवन करावे ॥ १११ ॥

रससेवनमें कुपथ्य।

कूष्माण्डं कर्कटीं चैव कलिंगं कारवेल्लकम्।
कुसुम्भिका च कर्कोटी कलम्बी काकमाचिका।
ककाराष्टकमेतद्धि वर्जयेद्रसभक्षकः ॥ ११२ ॥

कूष्माण्ड (काशीफल, लालकद्दू) ककड़ी, कलिंग (तरबूज), करेला, कसुम्भेका शाक, ककोड़ा, कलंबी शाक, काकमाची (मकोह) का शाक. यह आठ ककारवाले द्रव्य रससेवन करनेवालेको वर्ज देने चाहिये ॥ ११२ ॥

इति रसशोधनविधिः ॥

अथ उपरस ।

गन्धकं वज्रवैक्रान्तं वज्राभ्रं तालकं शिला ।
खर्परं शिखितुण्डञ्च विमलं हेममाक्षिकम् ॥११३॥
काशीशं कान्तपाषाणं वराटाञ्जनहिंगुलम् ।
गैरिकं शङ्खभूनागं टङ्कणञ्च शिलाजतु ।
एते चोपरसाः प्रोक्ताः शोध्या मार्या विधानतः ११४

गंधक, हीरा, वैक्रांतमणि, वज्राभ्रक, हरिताल, मनसिल, खपरिया, नीलाथोथा, रूपामक्खी, सोनामक्खी, हीराकसीस, कांतपाषाण (चुंवक पत्थर), बराट(कौड़ियां), सुरमा, सिंगरफ, गेरू, शंख, भूनाग (केंचुए), सुहागा और शिलाजीत यह सब उपरस कहे हैं इनको विधिपूर्वक शोधन और मारण करना चाहिये ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

अथ गंधकप्रकरण ।

श्वेतद्वीपे पुरा देव्याः क्रीडन्त्याः प्रसृतं रजः ।
क्षीरार्णवे तु स्नातायाः दुकूलं रजसान्वितम् ॥११५॥
धौतं तत्सलिले तस्मिन्गन्धको गन्धवत्स्मृतः ॥
चतुर्धा गन्धकः प्रोक्तो रक्तः पीतोऽसितःसितः ११६॥
रक्तो हेमक्रियासूक्तः पीतश्चैव रसायने ।
व्रणादिलेपने श्वेतः श्रेष्ठः कृष्णः सुदुर्लभः॥११७॥

अब पहिले गंधककी उत्पत्ति और शोधनको कहते हैं–एक समय श्वेतद्वीपमें खेलती हुई पार्वतीका मासिक रज प्रवृत्त हुआ तदनन्तर उस रजयुक्त वस्त्र सहित पार्वतीने क्षीरसमुद्रमें स्नान किया उस समय वस्त्रके धोनेसे जो रज जलमें गिरा उसका गंधयुक्त जो पदार्थ बना उसको गंधक कहागया (यहांपर ज्वालामुखी पर्वतसे निकली हुई गंधकयुक्त ज्वाला द्वारा निकला हुवा द्राव प्रतीत होता है)। वह गंधक चार प्रकारका होता है। जैसे--लाल, पीला, काला, सफेद, इनमें लाल वर्णका गंधक सोना बनानेमें काम आता है, पीला गंधक रसायन कर्ममें लिया जाता है। सफेद गंधक व्रणादिकोंपर लेप करनेमें हितकारक है। कृष्ण वर्णका गंधक सबमें श्रेष्ठ होता है इसका मिलना अति दुर्लभ है ॥ ११६--११७ ॥

अशुद्ध गंधकके दोष।

अशुद्धगन्धः कुरुते तु तापं कुष्ठं भ्रमं पित्तरुज करोति। रूपं बलं वीर्य्यसुखं निहन्ति तस्मात् सुशुद्धो विनियोजनीयः ॥ ११८ ॥

अशुद्ध गंधकके सेवन करनेसे ताप, कुष्ठ, भ्रम और पित्तके रोग उत्पन्न होते हैं एवं रूप, बल, वीर्य और सुखका नाश होता है इसलिये गंधकको शुद्ध करकेही प्रयोग करना चाहिये ॥ ११८ ॥

गंधकके पर्यायवाचक शब्द।

गन्धको गन्धपाषाणः शुकपुच्छः सुगन्धकः।
सौगन्धिकः शुल्बारिपुः पामारिर्नवनीतकः ॥११९॥

गंधक, गंधपाषाण, शुकपुच्छ, सुगंधक, सौगंधक, शुल्बारिपु, पामारि और नवनीतक यह गंधकके नाम हैं ॥ ११९ ॥

गंधकशोधन विधि।

साज्यं भाण्डे पयः क्षिप्त्वा मुखं वस्त्रेण बन्धयेत्।
तत्पृष्ठे गन्धकं क्षिप्त्वा शरावेण पिधापयेत् ॥१२०॥
भाण्डं निःक्षिप्य भूम्यां तदूर्द्ध्वे देयं पुटं लघु।
ततः क्षीरे द्रुतं गन्धं शुद्धं योगेषु योजयेत् ॥१२१॥

एक पात्रमें घृत और दूध डालकर उसके मुखपर साफ कपडा बांध देवे उस कपडेपर गंधक डालकर गंधकके ऊपर औंधा करके एक शराव ढक देवे और मिट्टीसे संधी लेप कर देवे । फिर इस पात्रको मुखपर्यंत जमीनमें गाड देवे केवल शराव मात्र ऊपर दीखता रहना चाहिये इस शरावके ऊपर एरने उपलोंकी लघु पुट देवे तो सब गंधक पिघलकर दूधमें चली जायगी यह शुद्ध गंधक सब कार्योंमें प्रयुक्त करे ॥ १२० ॥ १२१ ॥

लोहपात्रे विनिःक्षिप्य घृतमग्नौ प्रतापयेत् ।
तप्ते घृते तत्समानं क्षिपेद्गन्धकजं रजः ॥१२२॥
विद्रुतं गन्धकं दृष्ट्वा दुग्धमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
एवं गन्धकशुद्धिः स्यात्सर्वरोगेषु योजयेत् ॥१२३॥

एक लोहेके पात्रमें घी डालकर अग्निपर गरम करे फिर उस पात्रमें गंधकका चूर्ण डाल दे जब घीमें गंधक पिघल जावे तो उसको घी सहित उठाकर दूधमें डाल देवे (दूधके पात्रके मुखपर बारीक वस्त्र रखना चाहिये जिसमें छनकर निर्दोष गंधक दूधमें गिरे) जब शीतल होजाय तो गंधकको दूधसे निकालकर कपडेसे पोंछ लेवे । यह शुद्ध गंधक सब कार्योंमें प्रयुक्त करे । यदि ऐसे दो तीन वार करे तो अधिक गुण आजाता है ॥ १२२ ॥ १२३ ॥

शुद्ध गंधकके गुण ।

शुद्धगन्धो हरेद्रोगान्कुष्ठमृत्युजरादिकान् ।
अग्निकारी महानुष्णो वीर्यवृद्धिं करोति च ॥१२४॥

शुद्ध किया हुआ गंधक रसायन है तथा कुष्ठ, मृत्यु और जरादिदोषोंके हरनेवाला है एवं अग्निको दीपन करनेवाला अतिगरम और वीर्यकी वृद्धि करनेवाला है ॥ १२४ ॥

गन्धश्चातिरसायनः सुमधुरः पाके कटूष्णान्वितः,
कण्डूकुष्ठविसर्पदर्पदलनो दीप्तानलः पाचनः ।

आमोन्मन्थनशोधनो विषहरः सूतेन्द्रवीर्यप्रदः,
गौरीपुष्पभवस्तथाक्रिमिहरःस्वर्णाधिकं वीर्यकृत्१२५॥

गंधक–अत्यंत रसायन, मधुर, पाकमें कडुआ और गरम है तथा खाज, कुष्ठ, विसर्प और मदको नष्ट करता है । एवं अग्निको दीप्त करनेवाला, पाचन, आमदोषनाशक, मलशोधक, विषनाशक, पारेको बलके देनेवाला, पार्वतीके पुष्पसे उत्पन्न हुआ व क्रिमियोंको हरनेवाला और सुवर्णके वीर्यको बढानेवाला या सुवर्णसे भी अधिक वीर्य्य देनेवाला होता है । यह शुद्ध गंधकके गुण हैं ॥ १२५ ॥

वज्र (हीरा) शोधनप्रकरणम् ।

अशुद्ध हीरेके दोष ।

पार्श्वपीडां पाण्डुरोगं हृल्लासं दाहसन्ततिम् ।
रोगानीकं गुरुत्वञ्च धत्ते वज्रमशोधितम् ॥१२६ ॥

अशुद्ध हीरा–पार्श्वपीडा, पांडुरोग, हृल्लास, अत्यंतदाह, शरीरमें अनेक रोगों और भारीपन को उत्पन्न करता है ॥ १२६ ॥

वज्रशोधन ।

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचितम् ।
सप्ताहं कोद्रवक्काथे कौलत्थे विमलं भवेत् ॥१२७॥

व्याघ्रीकंदमें हीरेको रखकर कपड़ेमें बांध दोलायंत्रद्वारा कोदोके और कुलथीके क्काथमें सात दिन पकावे तो हीरा शुद्ध हो जाता है१२७

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचितम् ।
अहोरात्रात्समुद्धृत्य हयमूत्रेण सेचयेत ।
वज्रीक्षीरेण वा सिञ्चेत्कुलिशं विमलं भवेत्॥१२८॥

अथवा–व्याघ्रीकन्द (कटेलीकी जड़के पिंड) में हीरेको रखकर एक दिन रात दोलायंत्र द्वारा कोद्रव या कुलथीके क्काथमें पकाकर घोडेके मूत्रसे अथवा थोहरके दूधसे सेचन करे तो हीरा शुद्ध होजाताहै॥१२८॥

वज्रमारण ।

त्रिवर्षारूढकार्पासमूलमादाय पेषयेत् ।
त्रिवर्षनागवल्ल्यास्तु निजद्रावैः प्रपेषयेत् ॥१२९॥
तद्गोलके क्षिपेद्वज्रं रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
एवं सप्तपुटेनैव म्रियते कुलिशं ध्रुवम् ॥ १३० ॥

तीन वर्षसे एक स्थानमें उत्पन्न हुई कपासकी जड़को लेकर तीन वर्षसे उत्पन्न हुई नागरबेलके रसमें खरल कर गोला बनावे उसमें हीरेको रखकर संपुट करे इस संपुटको गजपुटमें फूंक दे ऐसे ७ पुट देनेसे हीरेकी भस्म होजाती है ॥ १२९ ॥ १३० ॥

कांस्यपात्रे तु भेकस्य मूत्रे वज्रं तु निक्षिपेत् ।
त्रिःसप्तकृत्वः सन्तप्तं वज्रमेवं मृतं भवेत् ॥१३१॥

अन्य प्रकार—कांसीके पात्रमें मेढकका मूत्र डालकर उसमें हीरा तपा तपाकर २१ वार बुझावे तो हीरेकी भस्म होजाती है ॥ १३१ ॥

त्रिःसप्तकृत्वः सन्तप्तं खरमूत्रेण सेचयेत् ।
मुद्गरैस्तालकं पिष्ट्वा तद्गोले कुलिशं क्षिपेत् ॥१३२॥
प्रध्मातं वाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण तु ।
भस्मीभवति तद्वज्रं वज्रवत्कुरुते तनुम् ॥१३३॥
आयुष्यं सौख्यजननं बलरूपप्रदं तथा ।
रोगघ्नं मृत्युहरणं वज्रभस्म भवत्यलम् ॥ १३४ ॥

अन्य प्रकार—हीरेको २१वार अग्निमें तपा तपा कर गधेके मूत्रसे सेचन करे । फिर हरितालको पीसकर इस हरितालके गोलेमें हीरेका संपुट कर कोयलोंकी अग्निमें धोंकनीसे धमाकर लाल बनादे फिर इसे घोडके मूत्रसे सेचन करे ऐसे २१ वार धमा २ कर घोड़के मूत्रसे सींचे (बुझावे) तो हीरेकी भस्म हो जाती है । इस हीरेकी भस्मके सेवनसे

मनुष्यका शरीर वज्रके समान दृढ और नीरोग हो जाता है । हीरेकी भस्म-आयुवर्द्धक, सुखकारक, बलदायक, सुंदरताकारक, रोगनाशक और मृत्युकोभी हरनेवाली है अधिकतो क्या कहना है ॥ १३२-१३४॥

इति हीराभस्मगुण समाप्त ।

अथ वैक्रांतप्रकरण ।

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं ध्मातं तद्धयमूत्रके ।
हिमं तद्भस्म संयोज्यं वज्रस्थाने विचक्षणैः ॥१३५॥

वैक्रांत मणिको भी हीरेके समानही शोधन करना चाहिये और उसी प्रकार २१ वार तपा तपा कर घोड़के मूत्रमें बुझानेसे वैक्रांत मणिकी भस्म होजाती है । बुद्धिमानोंको चाहिये जहां हीरेकी भस्म न मिल सके वहाँ वैक्रांतकी भस्मका प्रयोग करे ॥ १३५ ॥

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं मारणञ्चैव तस्य तत् ।
हयमूत्रेण तत्सेच्यं तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा ॥ १३६ ॥
ततश्चोत्तरवारुण्याः पञ्चांगे गोलकं क्षिपेत् ।
रुद्ध्वा मूषापुटे पाच्यमुद्धृत्य गोलकं पुनः ॥१३७॥
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पचेदेवं यावत्तद्भस्मतां व्रजेत् ।
भस्मीभूतञ्च वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत् ॥१३८॥

अन्य प्रकार-वैक्रांतका शोधन मारण सब हीरेके समान ही जानना । अथवा वैक्रांतको २१ वार गरम करके घोड़के मूत्रमें बुझावे फिर इंद्रायणके पञ्चाङ्गको पीसकर गोला बनावे इस गोलेमें वैक्रांतको रख संपुटकर मूषा पुटमें पकावे फिर निकालकर उसी प्रकार इन्द्रायणके गोलेमें संपुट कर मूषा पुटमें पकावे जबतक भस्म न हो तबतक इसी प्रकार मूषापुटमें (कोयलोंकी अग्निमें रख) पकाता रहे । भस्म होनेपर इस वैक्रांतभस्मका हीरेकी भस्मके अभावमें प्रयोग करे ॥१३६-१३८॥

इति वैक्रांत मारण ।

अथ अभ्रकप्रकरण ।

अभ्रकं गिरिजाबीजममलं गगनाह्वयम् ।
तत्र कृष्णाभ्रके वज्रं पीतात्मनि तु ग्राहिकम् ॥
सितात्मके तारकं स्याद्भीरुकं रक्तके वरम् ॥१३९ ॥

अभ्रक, गिरिजाबीज, अमल, गगन, गगनाह्वय (भोडल) यह सब अभ्रकके नाम हैं (और भी आकाशके वाचक शब्द अभ्रकके पर्याय जानने)। वह अभ्रक–काला, पीला, सफेद और लाल इन भेदोंसे चार प्रकारका होता है। इनमें काले वर्णके अभ्रकोंमें वज्राभ्रक श्रेष्ठ होता है। पीले अभ्रकोंमें ग्राहिक, सफेदमें तारक और लाल वर्णके अभ्रकोंमें भीरुक नामक अभ्रक श्रेष्ठ होता है ॥ १३९ ॥

वज्राभ्रकके लक्षण ।

सुप्रशस्तं कठोराङ्गं गुरु कज्जलसन्निभम् ॥ १४० ॥
यन्न शब्दायते वह्नौ नैवोच्छूनं भवेदपि ।
सदाकरसमुद्भूतं वज्रेति प्रथितं घनम् ॥ १४१ ॥

जो अभ्रक–स्वच्छ, कठोरांग, भारी, कज्जलके समान वर्णवाला हो और अग्निमें डालकर धमानेसे शब्द न करै, फूत्कार न करे, सुन्दर आकारवाला (कोई ऐसा कहते हैं कि सदाकरका अर्थ अच्छे स्थानसे पैदा होनेवाला) हो वैसा ही रहे फूले नहीं विकृत न हो उसको वज्राभ्रक कहते हैं ॥ १४० ॥ १४१ ॥

पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रञ्चेति चतुर्विधम् ।
ध्मातमभ्रं दलचयं पिनाकं विसृजत्यलम् ॥१४२॥
फूत्कारं भुजगः कुर्याद्दर्दुरं भेकशब्दवत् ।
चतुर्थञ्च वरं ज्ञेयं न वह्नौ विकृतिं व्रजेत् ॥ १४३ ॥

काला अभ्रक–पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र इन भेदोंसे चार प्रकारका होता है। इनमें अग्निमें रखकर ध्मायमान करनेसे जिसके

पत्र खुलकर चट २ गिरें उसको पिनाक अभ्रक कहते हैं, जो आगमें रखनेसे सांपके समान फुंकारे उसको नागाभ्रक कहते हैं। जो अभ्रक आगमें रखकर धमानेसे मेंढकके समान टर्र २ शब्द करे उसको दर्दुर कहते हैं। वज्राभ्रक अग्निमें रखकर धमानेसे न कोई शब्द करता है न उसमें कोई विकृति होती है यह सबमें श्रेष्ठ होता है ॥ १४२॥१४३॥

पिनाकादि अभ्रकोंके अवगुण।

कुष्ठप्रदं पिनाकं स्याद्दर्दुरं मरणप्रदम्।
नागं देहगतं नित्यं व्याधिं कुर्याद्भगन्दरम् ॥१४४॥

पिनाक अभ्रकके खानेसे कुष्ठ रोग होता है। दर्दुराभ्रक मृत्यु-कारक है। नागाभ्रक शरीरमें प्रवेश कर भगंदर रोगको उत्पन्न करता है ॥ १४४ ॥

वज्राभ्रकके गुण।

रसे रसायने चैव योज्यं वज्राभ्रकं प्रिये।
तस्माद्वज्राभ्रकं ग्राह्यं व्याधिवार्द्धक्यमृत्युजित्॥१४५

महादेव पार्वतीजीसे कहते हैं-प्रिये! रसकर्ममें और रसायन कर्ममें वज्राभ्रक ही लेना चाहिये, क्योंकि वज्राभ्रक रोगनाशक, बुढापेको हरनेवाला और मृत्युको भी जीतनेवाला है इसलिये संपूर्ण औषधिकर्ममें वज्राभ्रक ही लेना चाहिये ॥ १४५ ॥

अशुद्ध अभ्रकके दोष।

अशुद्धाभ्रं निहन्त्यायुर्वर्द्धयेन्मारुतं कफम्।
आहत्याच्छादयेद्गात्रं मंदाग्निक्रिमिवर्धनम् ॥१४६॥

विना शोधन किया अभ्रक आयुको नष्ट करता है और वायुको बढाता है, कफको मूर्छन कर शरीरको जकड देता है। एवं मंदाग्नि-कारक और कृमिवर्द्धक होता है ॥ १४६ ॥

अभ्रकके शोधनकी विधि ।

पादांशं शालिसंयुक्तमभ्रकं कम्बलोदरे ।
त्रिरात्रं स्थापयेन्नीरे तत्क्लिन्नं मर्दयेद्दृढम् ॥ १४७ ॥
कम्बलाद्गलितं श्लक्ष्णं वालुकारहितं च यत् ।
तद्धान्याभ्रमिति प्रोक्तमभ्रमारणसिद्धये ॥१४८॥

स्वच्छ वज्राभ्रक १ पाव, शालिधान्य १ सेर इन दोनोंको कंबलके टुकडेमें बांधकर जल (कांजी) में भिगो देवे तीसरे दिन निकालकर किसी बडी परातमें उस कंबलकी पोटलीको मसले जिससे सब अभ्रक बारीक होकर कंबलसे बाहर छनकर निकल आवे, उस स्वच्छ बारीक अभ्रकको ले लेवे इसमेंसे कोई कंकडी आदि अन्य वस्तु पहिलेही निकाल देना चाहिये । इसे धान्याभ्रक कहते हैं यही मारण आदि सब कर्मोंमें लेना चाहिये ॥ १४७ ॥ १४८ ॥

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रक्षीरकाञ्जिकसेचितम् ।
भस्त्राग्नौ सप्तधा व्योम तप्तं तप्तं विशुद्ध्यति॥१४९॥

अन्य प्रकार–वज्राभ्रकको कोयलोंकी तीक्ष्णाग्निमें धोंकनीसे धमाकर लाल होनेपर त्रिफलेके क्वाथसे बुझावे ऐसे ही सात २ वार गरम करके त्रिफलेके क्वाथ, गोमूत्र, दूध और कांजीसे बुझावे तो अभ्रक शुद्ध होजाता है ॥ १४९ ॥

अथवा बदरीक्वाथे ध्मातमभ्रं विनिःक्षिपेत् ।
मर्दितं पाणिना शुष्कं धान्याभ्रादतिरिच्यते१५०॥

तीसरा प्रकार–अथवा अभ्रकको तीक्ष्णाग्निमें तपा २ कर बेरीके क्वाथमें बुझावे फिर सुखाकर हाथोंसे मलकर बारीक करले यह अभ्रक शुद्ध होता है और धान्याभ्रकसे भी अच्छा होता है ॥ १५० ॥

अगस्त्यपुष्पतोयेन पिष्टं शूरणकन्दगम्।
गोष्ठभूमिगतं मासं जायते रससन्निभम् ॥ १५१ ॥

अन्य विधि—अभ्रकको अगस्त्यपुष्पों (बकपुष्पों) के रसमें रगड़कर जिमीकंदके बीचमें भरकर जिमीकंदके टुकड़ेसे बंदकर गौओंके रहनेके स्थानमें पृथ्वीमें गाड़देवे, एक महीनेके अनंतर निकाले तो यह अभ्रक शुद्ध और रसके समान गुणकारी होजायगा। इसको मारणादि कर्ममें लेवे ॥ १५१ ॥

इति अभ्रक शोधन समाप्त।

अभ्रकमारणविधि।

वज्राभ्रकं समादाय निक्षिप्य स्थालिकोदरे।
रम्भादिक्षारतोयेन पचेद्गोमयवह्निना ॥१५२॥
यावत्सिन्दूरसंकाशं न भवेत्स्थालिकाबहिः।
सेचनीयं ततः क्षीरैस्ततः सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ॥१५३॥

शुद्ध वज्राभ्रकको आगे कहे हुए केले आदिके खार (खारके पानी) में खूब घोटकर एक मिट्टीके पात्रमें डाले इस पात्रको गोबरी (उपलों) की आगमें रख तबतक तीक्ष्ण आंच देता रहे जबतक अभ्रकवाले पात्रका वर्ण अग्निके तापसे सिंदूरके समान लाल न होजाय फिर अग्निसे निकाल दूधसे बुझाकर चूर्ण करे (निश्चंद्र होने पर्यन्त ऐसा ही करे) तो अभ्रककी भस्म होजाती है ॥ १५२ ॥ १५३ ॥

धान्याभ्रकं समादाय मुस्तक्काथैः पुटत्रयम्।
तद्वत्पुनर्नवानीरैः कासमर्दरसैस्तथा ॥ १५४ ॥

नागवल्लीरसैः सूर्यक्षीरैर्देयं पृथक् पृथक् ।
दिनं दिनं मर्दयित्वा क्वाथैर्वटजटोद्भवैः ॥ १५५ ॥
दत्त्वा पुटत्रयं पश्चात्त्रिः पुटेन्मुसलीजलैः ।
त्रिर्गोक्षुरकषायेण त्रिः पुटेद्वानरीरसैः ॥ १५६ ॥
मोचाकन्दरसैः पाच्यं त्रिरात्रं कोकिलाक्षजैः ।
रसैः पुटेल्लोध्रकैस्तु क्षीरादेकपुटं पुनः ॥ १५७ ॥
दध्ना घृतेन मधुना स्वच्छया सितया तथा ।
एकमेकं पुटं दद्यादभ्रस्यैव मृतिर्भवेत् ॥१५८॥
सर्वरोगहरं व्योम जायते योगवाहिकम् ।
कामिनीमददर्पघ्नं शस्त पुंस्त्वोपघातिनाम् ।
वृष्यमायुष्करं शुक्रवृद्धिसंतानकारकम् ॥१५९॥

दूसरी विधि—धान्याभ्रकको लेकर नागरमोथेके क्वाथमें खरल कर टिकिया बनावे फिर संपुटकर गजपुटमें फूकदे स्वांगशीतल होनेपर फिर नागरमोथेके क्वाथमें खरल करके गजपुट दे। ऐसे तीन पुटें देवे। फिर इसी प्रकार पुनर्नवाका रस, कसोंदीका रस, पानका रस, आकका दूध, वटकी जटाका क्वाथ, काली मुसलीका क्वाथ, गोखरूका क्वाथ, कौंचका रस, मोचाकंदका रस, तालमखानेका रस और पठानीलोधका क्वाथ इनमेंसे प्रत्येककी अलग २ तीन २ पुटें देवे। फिर गायके दूधकी एक पुट देवे (कहीं "क्षीरादष्टपुटेन्मुहुः" ऐसा पाठ है, जिसमें गोदूधकी आठ पुटें दे) फिर दही, घी, शहद और मिश्री इनकी अलग२ एक एक पुट देवे तो अभ्रककी उत्तम भस्म होजायगी। यह भस्म संपूर्ण रोगोंको हरनेवाली और योगवाही होजाती है। तथा स्त्रियोंके मदको हरण करे, नपुसंकताको दूर करे, शरीरको पुष्ट करे और आयुको बढावे एवं वीर्यवर्द्धक और संतानकारक है ॥ १५४-१५९॥

मारक गण (१२ मारण)।

तण्डुलीयक-बृहती-नागवल्ली पिण्डतगरपुनर्नवा-
हिलमोचिकामण्डूकपर्णी। तिक्ताखुपर्णिकामद-
नार्कांवपिलक्षसुतमातृकाभिः ॥ १६० ॥

चौलाई, कटेली, नागरवेल (पान), सिल्हक, तगर, पुनर्नवा, हुलहुल, मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), कुटकी, मूषकपर्णी (दंती), मैनफल, आक और शतावर यह १२ द्रव्य अभ्रकको मारनेवाले हैं (शुद्ध अभ्रकको अलग २ इनके रसमें रगड़कर गजपुटमें फूंक देनेसे भस्म होजाता है) ॥ १६० ॥

चौथी विधि।

रम्भादिनाभ्रं लवणेन पिष्ट्वा चक्रीकृतं तद्दलमध्य-
वर्ति। दग्धेन्धनेषु व्यजनानिलेन स्नुह्यर्कमूला-
म्बुपुटेन सिद्धम् ॥ १६१ ॥

रंभादिगणके रसमें अथवा केलाखार, सज्जीखार, चनाखार और नमक इनके जलोंमें शुद्ध अभ्रकको खूब घोटकर टिकिया बनाले इन टिकियोंको केलेके पत्रोंमें रख पंखेकी पवनसे चैतन्यकी हुई कोयलोंकी अग्निमें फूंके। फिर निकालकर थोहरके दूधमें घोटकर टिकिया बना संपुट करे और गजपुटमें फूंकदे। ऐसेही आकके दूधमें घोटकर टिकिया बना संपुट कर गजपुटमें फूंके तो अभ्रककी भस्म होजाती है ॥१६१॥

पांचवीं विधि।

धान्याभ्रकस्य भागैकं भागौ द्वौ टङ्कणस्य च।
पिष्ट्वा तदन्धमूषायां रुद्ध्वा तीव्राग्निना पचेत् ॥ १६२ ॥
स्वभावशीतलं चूर्णं सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६३ ॥

धान्याभ्रक एक भाग, सुहागा दो भाग इन दोनोंको इकट्ठेही घोट-कर अंधमूषामें बंदकर कोयलेकी तीव्र अग्निमें फूंक दे (अथवा गज-

पुटमें फूंकदे) जब स्वांगशीतल होजाय तो निकालकर पीसले(निश्चन्द्र भस्म न हो तो फिर इसी प्रकार फूंके) निश्चन्द्र होनेपर इस भस्मका सब योगोंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ १६२ ॥ १६३ ॥

छठी विधि १० पुटी भस्म ।

धान्याभ्रकं दृढं मर्द्यमर्कक्षीरैर्दिनावधि ।
वेष्टयेदर्कपत्रेण चक्राकारं तु कारयेत् ॥ १६४ ॥
कुञ्जराख्ये पुटे दग्ध्वा सप्तवारान् पुनः पुनः ।
ततो वटजटाक्काथैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६५ ॥

धान्याभ्रकको २४ घंटे आकके दूधमें खूब रगडे फिर गोल गोल टिकिया बनाकर आकके पत्रोंमें लपेट संपुट करे और गजपुटमें फूंक दे शीतल होनेपर निकालकर फिर आकके दूधमें उसी प्रकार रगड कर टिकिया बना गजपुटमें फूंके । ऐसे सात पुट आकके दूधकी देवे तदनंतर तीन पुट बड़की जटाके क्काथकी देवे तो अवश्य अभ्रककी उत्तम भस्म हो जायगी; इसका संपूर्ण योगोंमें प्रयोग करे ॥ १६४ ॥ १६५ ॥

सातवीं विधि । १०० पुटी भस्म ।

दुग्धत्रयं कुमार्यम्बुगङ्गापत्रं नृमूत्रकम् ।
वटशुंगमजारक्तमेभिरभ्रं विमर्दयेत् ॥ १६६ ॥
शतधापुटितं भस्म जायते पद्मरागवत् ।
निश्चन्द्रकं भवेद्व्योम शुद्धदेहे रसायनम् ॥ १६७ ॥

आकका दूध, बड़का दूध, थोहरका दूध, घीकुमारका रस, गंगापत्री (गंगतितिरी घास), मनुष्यका मूत्र, बड़के अंकुर, बकरीका रक्त इनमें पृथक् २ रगड कर टिकिया बना गजपुटमें फूंक दे ऐसे सौ १०० बार पुटें देनेसे अभ्रककी उत्तम लाल वर्णकी भस्म

बन जाती है। यह निश्चन्द्र अभ्रक भस्म शुद्ध शरीरवाला मनुष्य सेवन करे तो रसायन है ॥ १६६ ॥ १६७ ॥

अभ्रक भस्मके गुण।

निश्चन्द्रमारितं व्योम रूपवीर्यं दृढं तनुम्।
कुरुते नाशयेन्मृत्युं जरारोगकदंबकम् ॥ १६८ ॥

निश्चंद्र शुद्ध अभ्रक भस्म मनुष्य सेवन करे तो आयुकी वृद्धि हो, रूप और वीर्य बढे शरीर दृढ होजाय, निश्चन्द्र अभ्रक भस्म जरा और मृत्यु तथा रोगोंके समूहको नष्ट करती है ॥ १६८ ॥

इति अभ्रकमारण।

हरिताल (हडताल) प्रकरण।

हरितालके पर्याय।

हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम्।
पिञ्जकं रोमहरणं तालकं पीतमित्यपि ॥ १६९ ॥

हरिताल, ताल, आल, माल, शैलूषभूषण, पिञ्जक, रोमहरण, तालक और पीत (ताल, मनोज्ञ, पीतक, पिंग, कांचनक, हरिबीज, पीत, चित्रांग, वंशपत्रक, गौरीललित) यह हरितालके पर्यायवाचक शब्द (नाम) हैं ॥ १६९ ॥

हरितालके भेद।

तालकं पटलं पिण्डं द्विधा तत्राद्यमुत्तमम् ॥ १७० ॥

हरिताल दो प्रकारकी होती है, एक पटल (वर्की), दूसरी पिण्ड, इनमें पटल अर्थात् वर्की हरिताल उत्तम होती है ॥ १७० ॥

अशुद्ध हरितालके दोष।

अशुद्धतालमायुर्घ्नं कफमारुतमेहकृत्।
तापस्फोटाङ्गसङ्कोचान् कुरुते तेन शोधयेत् ॥ १७१ ॥

अशुद्ध हरिताल आयुका नाश करती है, कफ वायु और प्रमेहको उत्पन्न करती है। एवं ताप, फोडे और अंगोंका संकोच करती है इसलिये हरितालका शोधन कर लेना चाहिये ॥ १७१ ॥

हरितालशोधन विधि।

शुद्धं स्यात्तालकं स्विन्नं कूष्माण्डसलिले ततः।
चूर्णोदके पृथक् तैले तस्मिन् पूते न दोषकृत् ॥१७२॥

हरितालको लेकर वस्त्रमें पोटली बांध दोलायंत्रद्वारा पेठेके रसमें १ प्रहर स्वेदन करे फिर चूनेके पानीमें इसी प्रकार स्वेदन करे एवं तिलोंके तेलमें मंद अग्निसे १ प्रहर स्वेदन करे तो हरिताल शुद्ध होजाती है और कोई दोष नहीं करती ॥ १७२ ॥

शोधनेकी दूसरी विधि।

तालकं कणशः कृत्वा दशांशेन च टङ्कणम्।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैः क्षाल्यं काञ्जिकैः क्षालयेत्पुनः ॥१७३॥
वस्त्रे चतुर्गुणे बद्ध्वा दोलायन्त्रे दिनं पचेत्।
तच्चूर्णं आरनालेन दिनं कूष्माण्डजे रसैः।
वेद्यं वा शाल्मलीतोयैस्तालकं शुद्धिमाप्नुयात् ॥१७४॥

हरितालको दश भाग ले सुहागेका चूर्ण एक भाग मिलावे इन दोनोंको नींबूके रसमें खूब धोवे, फिर कांजीमें धोवे फिर हरितालका चूर्ण कर इसकी चौतहे वस्त्रमें पोटली बांध दोलायन्त्रद्वारा कांजीमें १२ घंटे स्वेदन करे । फिर पेठेके रसमें इसी प्रकार १२ घंटे दोलायन्त्रमें स्वेदन करे अथवा सेमलके रस (क्वाथ) में १२ घंटे स्वेदन करे तो हरिताल शुद्ध होजाती है ॥ १७३ ॥ १७४ ॥

तीसरी विधि।

तालकं पोटलीं बद्ध्वा सचूर्णे काञ्जिके पचेत्।
दोलयन्त्रेण यामैकं ततः कूष्माण्डजे रसे ॥१७५॥

तिलतैले पचेद्यामं यामं तत्रैफले जले ।
दोलायन्त्रे चतुर्यामं पाच्यं शुद्ध्यति तालकम् ॥१७६॥

हरितालको एक पोटलीमें बांध सीपीके चूनेयुक्त कांजीमें दोलायंत्र-द्वारा एक प्रहर पकावे, फिर पेठेके रसमें एक प्रहर पकावे। एवं तिलोंके तेलमें और त्रिफलेके क्काथमें एक एक प्रहर पकावे इस प्रकार इन चारों द्रव्योंमें चार प्रहर अर्थात् प्रत्येक द्रव्यमें एक एक प्रहर पकानेसे हरिताल शुद्ध होजाती है॥ १७५ ॥ १७६ ॥ इति हरितालशोधनविधि॥

१ हरितालमारण विधि ।

तालकं कणशः कृत्वा सुशुद्धं हण्डिकान्तरे ।
चूर्णोदकेन सम्पिष्टमपामार्गजटोद्भवैः ॥ १७७ ॥
क्षारोदकैश्च संपिष्टमूर्ध्वाधो यावशूकजम् ।
चूर्णं दत्त्वा निरुध्याथ कूष्माण्डैश्च प्रपूरयेत् ॥१७८॥
मुनर्मुखं निरुध्याथ चतुर्यामं क्रमाग्निना ।
पचेदेवं हि तच्चूर्णं कुष्ठादौ परियोजयेत् ॥१७९॥

विशुद्ध हरितालके टुकडोंको चूनेके पानीमें घोटना, सूखनेपर उसे फिर अपामार्ग (ओंगा वा चिरचिटा) के मूलकाष्ठसे बनाये गये क्षारसे मिले हुए पानीमें मर्दन करना । फिर इस पिष्टीका एक गोल चक्राकार चपटा पिण्ड बना उत्तम हांडीमें रखना, हरितालके ऊपर और नीचे शुद्ध यवक्षारका चूर्ण बिछा एक शरावसे हांडीके मध्य स्थित हरतालको ढांककर उत्तम रीतिसे बन्द करना, बदरी पल्लवकल्क आदिसे संधिरोध करना अन्यथा उड़ जानेका भय है। इसके अनन्तर कूष्माण्ड (पेठा वा कोहला) के खण्डोंसे उस हांडीको पूर्ण कर देना और हांडीके मुखको शरावसे ढक्कर कपड़मिट्टी कर सुखा लेना और चार प्रहर तक मन्द, मध्य एवं तीक्ष्ण अग्निका आंच देना । इससे हरताल

हांडीके मध्य स्थित शरावपर जो लगेगा इस शरावसंलग्न कुन्द पुष्पके समान प्रकाशमान श्वेत चूर्णको युक्तिसे लेना, यही श्वेतवर्ण हरिताल भस्म है । इसे कुष्ठादि महाव्याधियोंमें प्रयुक्त करना चाहिये ॥ १७७-१७९॥

२ प्रकारान्तरसे मारण ।

पलमेकं शुद्धतालं कुमारीरसमर्दितम् ।
शरावसम्पुटे रुद्धा यामद्वादशकं पचेत् ॥ १८० ॥
स्वाङ्गशीतं समादाय तालकं तु मृतं भवेत् ।
गलत्कुष्ठं हरेच्चैतत्तालकं स्यान्मृतं यदा ॥ १८१ ॥

एक पल शुद्ध हरतालको घीकारके रसमें घोट पीस शराव सम्पुटमें बन्दकर बारह प्रहर अग्निमें पकावे, स्वांगशीतल होजानेपर निकाले । जब हरताल भलीभांति मारा जाय तो यह गलत्कुष्ठको नष्ट करता है ॥ १८० ॥ १८१ ॥

३ अन्य मारणविधि ।

अम्लरोलीजलैर्भाव्यं तालं द्वादशयामकम् ।
तथैव निम्बुनीरेण ततश्चूर्णोदकेन च ॥ १८२ ॥
प्रक्षाल्य शालमलीक्षारैर्द्विगुणैः खातमध्यगम् ।
विधाय कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ १८३॥
द्वादशप्रहरं पक्त्वा स्वाङ्गशीतञ्च चूर्णयेत् ।
खादयेद्रक्तिकामेकां कुष्ठश्लीपदशान्तये ॥ १८४ ॥

शुद्ध हरितालको चांगेरीके रसमें १२ प्रहर भावना देवे फिर नींबूके रसमें १२ प्रहर भावना देवे तदनंतर चूनेके पानीमें १२ प्रहर भावना देवे फिर इसको पानीसे धोकर सुखा ले। नदनंतर एक आतशी शीशीमें हरितालसे दूना सींवल (सेमल) का खार ले आधा हरितालके नीचे आधा ऊपर डाल दो सरावों में बंदकर कपडमिट्टी करके सुखाले, फिर

इस संपुटको वालुकायंत्रमें रख १२ प्रहर अग्नि दे स्वांगशीतल होनेपर निकालकर चूर्ण करले। इसकी एक रत्ती मात्रा खोनेसे कुष्ठ और श्लीपद दूर होते हैं ॥ १८२-१८४ ॥

मरे हुए हरतालकी परीक्षा।

तालं मृतं तदा ज्ञेयं वह्निस्थं धूमवर्जितम्।
सधूमं न मृतं प्राहुर्वृद्धवैद्या इति स्थितिः ॥१८५॥

हरिताल भस्मको धधकते हुए अंगारेपर डालना, यदि उसमेंसे धूम न निकले तो मरा हुआ जानो, नहीं तो कच्चा रहा, ऐसा वृद्ध वैद्य कहते हैं ॥ १८५ ॥

हरितालके गुण।

हरितालं कटु स्निग्धं कषायञ्च विसर्पनुत्।
तालकं हरते रोगान् कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ॥
संशुद्धं कान्तिवीर्यौजः कुरुते मृत्युनाशनम् ॥१८६॥

हरिताल-कटु स्निग्ध और कषैली है। एवं विसर्पनाशक, संपूर्ण रोगोंको हरनेवाली, कुष्ठ, ज्वर और मृत्युको नाश करनेवाली है। भले प्रकार शोधन मारण की हुई हरिताल कांतिजनक, वीर्यप्रद, ओजवर्धक और मृत्युको भी नष्ट करती है ॥ १८६ ॥

माणिक रस।

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत्।
सप्तधा वा त्रिधा वापि दध्ना चाम्लेन वा पुनः ॥१८७॥
शोषयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥१८८॥

बदरीपल्लवोत्थेन कल्केन लेपयेद्भिषक् ।
अरुणाभमधःपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ १८९ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं भवेद्ध्रुवम् ।
तद्रक्तिद्वितयं खादेद् घृतभ्रामरमर्दितम् ॥ १९० ॥
संपूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं गलितं यच्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १९१ ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्च्चिकाम् ।
नासाऽऽस्यसम्भवान् रोगान् क्षतान् हन्ति सुदारुणान्
पुण्डरीकञ्च चर्माख्यं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ १९२॥

उत्तम वर्की हरिताल लेकर उसको पेठेके रसकी भावना देकर सुखाले फिर भावना देवे फिर सुखाले ऐसे ७ भावना पेठेके रसकी, सात या तीन भावना दहीकी और सात या तीन भावना कांजी या नीम्बूके रसकी देवे प्रत्येक भावना देकर सुखाता जावे । फिर सुखाकर चावलोंकी बराबर छोटे छोटे टुकड़े कर दो शरावोंमें रख बेरीके पत्रोंके कल्कसे सन्धी लेप करे (ऊपर एक वस्त्र और गाजनी मिट्टीका लेप करे) फिर इसके नीचे बेरीकी लकड़ीकी आंच देवे जब नीचेका शराव अग्निके तापसे लाल होजाय तो आग निकालदे स्वांगशीतल होनेपर माणिकके समान बनी हुई हरितालको निकाल ले । फिर महादेवका पूजनकर इस माणिक रसको १ रत्ती या २ रत्ती ले घी और शहदमें मिलाकर खावे तो कुष्ठरोग दूर होता है एवं फूटा हुआ कुष्ठ, गलितकुष्ठ, वातरक्त, भगंदर, नाड़ीव्रण, व्रण, दुष्ट उपदंश, विचर्चिका, नासारोग, मुखरोग, दारुण क्षत, पुण्डरीक कुष्ठ, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ यह सब दूर होते हैं । शरावमें सम्पुट करते समय अभ्रकके पत्रोंमें हरिताल बंद करना चाहिये॥ १८७-१९२

इति माणिकरस विधि ।

मनशिलके पर्याय ।

मनःशिला च नेपाली शिलाह्वा नागजिह्विका ।
मनोह्वा कुनटी गौणी करञ्जी करवीरिका ॥१९३॥

मनःशिला, नेपाली, शिलाह्वा, नागजिह्विका, मनोह्वा, कुनटी, गौणी, करञ्जी और करवीरिका यह मनसिलके नाम हैं (मनसिल लाल वर्णका पत्थरसा होता है, मनसल मनासिल इन नामोंसे प्रसिद्ध है) ॥१९३॥

उत्तम मनसिल ।

मनोह्वा त्वोड्रपुष्पाभा शस्यते सर्वकर्मसु ॥ १९४ ॥

मनसिल गुडहलके फूलके समान लाल वर्णवाला उत्तम होता है, वही सब कामोंमें लेना चाहिये ॥ १९४ ॥

अशुद्ध मनासिलके दोष ।

मनःशिला मन्दबलं च नूनं करोति जन्तोः शुभ-
पाकहीना । मलन्तु बद्धं कुरुते च नूनं सशर्करं
कृच्छ्रगदं करोति ॥ १९५ ॥

अशुद्ध मनासिल मनुष्यके बलको नष्ट करता है, मलको बद्ध, (कबजी) करता है, एवं शर्करा और मूत्रकृच्छ्र रोगको उत्पन्न करता है ॥ १९५ ॥

अश्मरीमूत्रहृद्रोगमशुद्धा कुरुते शिला ।
मन्दाग्निं मलदुष्टिं च शुद्धा सर्वरुजापहा ॥१९६॥

अशुद्ध मनसिल अश्मरी (पथरी) मूत्रकृच्छ्र हृद्रोग मंदाग्नि और मलको दूषित करता है और शुद्ध मनसिल संपूर्ण रोगोंको नाश करता है ॥ १९६ ॥

मनशिलशोधनविधि ।

जयन्तीभृङ्गराजोत्थै रक्तागस्त्यरसैः शिला ।

दोलायन्त्रे दिनं पाच्या यामं छागस्य मूत्रके ।
क्षालयेदारनालेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ १९७ ॥

जयंतीका रस या भांगरेका रस अथवा लाल फूलके अगस्तियेका रस लेकर उसमें दोलायंत्रकी विधिसे एक दिन स्वेदन करे । अथवा बकरेके मूत्रमें दोलायन्त्रकी विधिसे एक प्रहर पकावे फिर निकालकर कांजीसे धो डाले तो मनसिल शुद्ध होजाता है, इसका सब रोगोंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ १९७ ॥

मातुलुङ्गरसैः पिष्टा जयानीरैर्मनःशिला ।
शृङ्गवेररसैर्वापि विशुध्यति मनःशिला ।
अगस्त्यपत्रतोयेन भाविता सप्तवासरम् ॥ १९८ ॥

मनसिलको बिजौरेके रसमें और जयंतीके रसमें (तीन २ दिन) घोटता रहे । अथवा अदरखके रसमें (सात दिन) घोटे तो मनशिल शुद्ध होजाता है. अथवा अगस्त्यके फूलोंके रसमें सात भावना देवे तो मनशिल शुद्ध होता है ॥ १९८ ॥

मनशिलके गुण ।

कटुः स्निग्धा शिला तिक्ता कफघ्नी लेखनी सरा ।
भूतावेशभयं हन्ति कासश्वासहरा शुभा ॥ १९९ ॥

शुद्ध मनशिल--चरपरा, चिकना और कडवा है एवं कफनाशक, लेखन, दस्तावर, भूतावेशके भयको दूर करनेवाला, खांसीनाशक, श्वासरोगको हरनेवाला और शुभ है ॥ १९९ ॥

खपरिया शोधनविधि ।

पुष्पाणां रक्तपीतानां रसैः पिष्ट्वा च भावयेत् ।
नरमूत्रैश्च गोमूत्रैर्यवाम्लैश्च ससैन्धवैः ॥
सप्ताहं त्रिदिनं वापि पश्चाच्छुद्ध्यति खर्परः ॥२००॥

खपरियेको लाल और पीले वर्णके फूलोंके रसमें पीसकर भावना देवे,अथवा मनुष्यके मूत्रमें, गोमूत्रमें और सेंधानमक डाली हुई जवोंकी कांजीमें दोलायंत्रद्वारा सात २ दिन अथवा तीन २ दिन पकावे (या इनमेंसे किसी एकमें ७ दिन दोलायंत्रमें पकावे) फिर निकालकर गर्म पानीसे धो डाले तो खपरिया शुद्ध होजाता है ॥ २०० ॥

खर्परः परिसन्तप्तः सप्तवारान्निमज्जितः ।
निम्बुबीजरसे चान्तर्निर्मलत्वमवाप्नुयात् ॥ १ ॥

खपरियेको कोयलोंकी अग्निमें तपा तपा कर बिजौरे नींबूके रसमें सात वार बुझावे तो खपरिया शुद्ध होजाता है ॥ १ ॥

खपरियामारण ।

खर्परं पारदेनैव वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
चूर्णयित्वा दिनं यावच्छोभनं भस्म जायते ॥ २ ॥

शुद्ध खपरियाको अग्निपर गरम कर उसमें पारा मिला खरलमें डाल खूब घोटे फिर शीशीमें डाल कपड़मिट्टी कर सुखाले. इस शीशीको वालुकायन्त्रमें रख आठ प्रहर (या १२ प्रहर) की अग्नि दे, शीतल होनेपर निकाल ले तो उत्तम भस्म होजायगी ॥ २ ॥

खर्परं लोहपात्रस्थं चूल्ह्यां दत्त्वा विपाचयेत् ।
गलिते सैन्धवं चूर्णं दत्त्वा दत्त्वा विमर्दयेत् ॥
भूयः पलाशदण्डेन यावद्भस्मीभवेत्तु तत् ॥ ३ ॥

खपरियेको लोहपात्र (कड़ाही) में रख चूलहेपर चढ़ावे नीचे बेरीकी लकडीकी अग्नि जलावे, जब खपरिया गल जावे तो उसमें सैन्धव नमकका चूर्ण वार २ डालकर पलाशके डंडेसे तबतक रगड़ता रहे जबतक खर्परकी भस्म न होजावे ॥ ३ ॥

खपरियेके गुण ।

नेत्ररोगहरः क्लेदी क्षयहा खर्परो गुरुः ॥ ४ ॥

खपरिया नेत्ररोगनाशक, छेदी, क्षयरोगनाशक और भारी है ॥ ४ ॥

इति खर्परविधान ।

तुत्थ (नीलाथोथे) के नाम ।

तुत्थकं तु शिखिग्रीवं हेमसारं मयूरकम् ॥ ५ ॥

तुत्थ (तुत्थक, तूतिया, सस्यक) शिखिग्रीव, हेमसार, (ताम्रोपधातु) और मयूरक यह नीलाथोथेके नाम हैं ॥ ५ ॥

तूतियाशोधनमारण ।

विष्ठया मर्दयेत्तुत्थं मार्जारककपोतयोः ।
दशांशं टंकणं दत्त्वा पाच्यं मृदुपुटे ततः ।
पुटं दद्यात्पटुक्षौद्रैः किल तुत्थविशुद्धये ॥ ६ ॥

तूतियेको बिल्ली और कबूतरकी विष्ठामें खरल करके तूतियेसे दशवां भाग सुहागा मिलाकर शराव संपुटमें रख कपड़मिट्टीकर सुखा ले फिर जंगली उपलोंकी हलकीसी पुट देवे । फिर निकाल कर चतुर्थांश नमक और किंचित् शहदके साथ घोटकर हलकी पुट देवे (कोई " पुटं दध्ना पुटं क्षौद्रैः " दहीमें एक पुट शहदमें एक पुट देवे ऐसा लिखते हैं) तो तूतिया अवश्य शुद्ध होजाता है ॥ ६ ॥

ओतोर्विष्ठासमं तुत्थं सक्षौद्रं टंकणांघ्रियुक् ।
त्रिधा संपुटितं शुद्धं वान्तिभ्रान्तिविवर्जितम् ॥ ७ ॥

दूसरी विधि–नीलेथोथेके समानभाग बिल्लीकी विष्ठा और शहदमें चतुर्थांश सुहागा मिलाकर खरल करे और शराव संपुटकर मृदुपुटकी आंच देवे, इसप्रकार तीन पुटें देनेसे वमन और भ्रांति दोषसे रहित शुद्ध तुत्थ भस्म तैयार होजाता है ॥ ७ ॥

---

१ तुत्थ (तूतिया) तांबेका उपधातु है । खपरिया–जिस्तका उपधातु है, खपरियाके अभावमें जिस्तकी भस्म लेवे ।

गन्धकेन समं तुत्थं तुत्थार्द्धेनार्द्धयामकम् ।
वान्तिभ्रान्ती यदा न स्तस्तदा सिद्धिं विनिर्दिशेत्८॥

तीसरी विधि—नीलेथोथेसे आधा भाग गंधक मिला दोनोंको आधा प्रहर (नींबूके रसमें) मर्दन करे फिर संपुटमें रख कपडामिट्टी कर सुखा ले इस संपुटको लघुपुटमें फूंक दे फिर आधा भाग गंधक मिला आधा प्रहर रगडकर पूर्ववत् संपुट बना लघुपुटमें फूंके ऐसे तीन पुट देवे तो वान्ति और भ्रांति आदि दोष रहित शुद्ध तुत्थ होजावेगा ॥ ८ ॥

तुत्थं सकटुकक्षारं कषायं विशदं लघु ।
लेखनं भेदि चक्षुष्यं कण्डूक्रिमिविषापहम् ॥ ९ ॥

तूतिया—कटु, क्षार, कषाय रसवाला है तथा विशद, हलका, लेखन, भेदी और नेत्ररोगनाशक है, एवं कण्डुनाशक, क्रिमियोंको हरनेवाला और विषको दूर करनेवाला है ॥ ९ ॥

विमल शोधन ।

मूत्रारनालतैलेषु गोदुग्धे कदलीरसे ।
कौलत्थे कोद्रवक्काथे माक्षिकं विमलं तथा ॥ २१० ॥
मुहुः शूरणकन्दस्थं स्वेदयेद्रवर्णिनि ॥ ११ ॥
क्षाराम्ललवणैश्चैव तैलसर्पिःसमन्वितम् ।
पुटत्रयं प्रदातव्यं ततस्तु शोधितं भवेत ॥ १२ ॥

विमल (रूपामक्खी) या सोनामक्खीको जिमीकंदमें रखकर गोमूत्र, कांजी, तिलतैल, गोदुग्ध, केलेका रस, कुलथीका काढ़ा और कोदोंका काढ़ा इनमें दोलायंत्र द्वारा बार २ अलग २ स्वेदन करे तो रूपामाक्षिक और स्वर्णमाक्षिक शुद्ध होजायेंगे । अथवा सुहागा, बिजौरेका रस, सेंधानमक, तिलतैल और घृत मिलाकर मर्दन करे फिर लघुपुटमें फूंकदे इस प्रकार सुहागा आदिमें तीन बार खरलकर तीन पुट

देवे तो विमल (रूपामक्खी) और सोनामक्खी शुद्ध होजाते हैं (कोई इसीको विमलभस्म मानते हैं) ॥ २१०–२१२ ॥

जम्बीरस्य रसैः स्विन्नं मेषशृङ्गीरसैस्तथा ।
रम्भातोयेन वा पाच्यं घस्रं विमलशुद्धये ॥ १३ ॥

अन्यप्रकारसे शोधन–जम्बीरी नींबूके रसमें और मेढासिंगीके रसमें एवं केलाकंदके रसमें दोलायंत्रद्वारा एक दिन स्वेदन करे तो विमल (रूपामक्खी) शुद्ध होजाता है ॥ १३ ॥

सोनामक्खीके नाम ।

माक्षिके धातुमाक्षीकं तप्तस्तापिसमुद्भवम् ।
गारुडो माक्षिकः पक्षी बृहद्वर्ण इति स्मृतः ॥ १४ ॥

धातुमाक्षिक, तप्त, तापिसमुद्भव, गारुड, माक्षिक, पक्षी और बृहद्वर्ण यह सोनामक्खीके नाम हैं ॥ १४ ॥

उत्तम सुवर्णमक्खी ।

भंगे सुवर्णसंकाशो मनाक्कृष्णच्छविर्बहिः ।
बृहद्वर्ण इति ख्यातो माक्षिकः श्रेष्ठ उच्यते ॥ १५ ॥

जो सोनामक्खी तोड़नेसे भीतरसे सुवर्णके समान वर्णवाली हो और ऊपरसे किंचित् कृष्णवर्ण हो उस सोनामक्खीको बृहद्वर्ण कहते हैं, यह माक्षिक औषधिकर्ममें श्रेष्ठ कही है ॥ १५ ॥

अशुद्ध सोनामक्खीके दोष ।

मंदाग्निं बलहानिं च व्रणं विष्टम्भगात्ररुक् ।
कुरुते माक्षिको मृत्युमशुद्धो नात्र संशयः ॥ १६ ॥

विना शुद्ध सोनामक्खी मंदाग्निकारक, बलनाशक, व्रणकारक, विष्टम्भ (कबजी) करनेवाली और अंगोंमें पीड़ा करनेवाली है एवं मृत्युको भी करनेवाली है इसमें सन्देह नहीं ॥ १६ ॥

सोनामक्खी शोधन।

स्वर्णमाक्षिकचूर्णन्तु वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत्।
कालमारिषशालिञ्च क्काथे दोलाविधानतः।
तदधः पतितं शस्तमेवं शुद्ध्यति माक्षिकम्॥ १७॥

सोनामक्खीको कूटकर एक वस्त्रमें पोटली बांधे इस पोटलीको डोरेमें बांध दोलायंत्रविधिसे कालमारिष (मरसा शाक, कञ्चटशाक जलके किनारे होनेवाली जलचौलाई) के स्वरस और शालिशाक (शांतिशाक) के क्काथमें पकावे पकते २ इस पोटलीमेंसे छनकर जो बारीक २ सोनामक्खी पात्रमें गिर जायगी वही शुद्ध सोनामक्खी जाननी, यह सब काममें लेने योग्य श्रेष्ठ है॥ १७॥

माक्षिकस्य त्रयो भागा भागैकं सैन्धवस्य च।
मातुलुङ्गद्रवैर्वाथ जम्बीरोत्थद्रवैः पचेत्॥१८॥
लोहपात्रे पचेत्तावल्लोहदर्व्या च चालयेत्।
भासवर्णमयो यावत्तावच्छुद्ध्यति माक्षिकम्॥१९॥

सोनामक्खी तीन भाग और सेंधानमक एक भाग इन दोनोंको पीसकर लोहेकी कडाहीमें डाल चूल्हेपर चढ़ावे नीचे अग्नि जलावे और कड़ाहीमें बिजौरे निंबूका रस या जम्भीरी निंबूका रस डालता जावे तथा कड़छीसे सोनामक्खीको चलाता रहे जब कड़ाही और सोनामक्खी लालवर्ण होजाय तो अग्नि बुझा दे, शीतल होनेपर सोनामक्खीको निकाल ले यह शुद्ध माक्षिक जानना॥ १८॥ १९॥

माक्षिकभस्मविधि।

माक्षिकस्य चतुर्थांशं गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत्।
उरुबूकस्य तैलेन ततः कुर्याच्च चक्रिकाम्॥२२०॥
शरावसंपुटे कृत्वा पुटेद्गजपुटेन तु।
सिन्दूराभं भवेद्भस्म माक्षिकस्य न संशयः॥ २१॥

सोनामक्खी ४ भाग, शुद्ध गंधक एक भाग इन दोनोंको खरल करे फिर एरण्डका तेल मिलाकर गोल२टिकिया बनाले, इन टिकियाओंको शरावसंपुटमें बंद कर कपड़मिट्टी कर सुखा ले फिर गजपुटमें रख फूंकदे स्वांगशीतल होनेपर निकाले तो निःसन्देह सिंदूरके समान लाल वर्णकी उत्तम भस्म बन जायेगी ॥ २२० ॥ २१ ॥

सोनामक्खीके गुण ।

माक्षिकं तिक्तमधुरं मेहार्शःक्रिमिकुष्ठनुत् ।
कफपित्तहरं बल्यं योगवाहि रसायनम् ॥ २२ ॥

सोनामक्खी–कडवी, मीठी तथा प्रमेह, अर्श, क्रिमि और कुष्ठ को नाश करती है । कफनाशक, पित्तनाशक, बलवर्द्धक, योगवाही और रसायन है ॥ २२ ॥

अथ काशीसशोधन ।

काशीशे धातुकाशीशं खेचरं दन्तरञ्जनम् ।
सकृद्भृङ्गाम्बुना स्विन्नं काशीशं निर्मलं भवेत् ॥ २३ ॥

काशीश, धातुकाशीश, खेचर, दन्तरञ्जन, (कासीस हीराकसीस) यह काशीसके पर्याय (नाम) हैं । (काशीस दो प्रकारका होता है- एक धातुकाशीस, दूसरा पुष्पकाशीस. इनमें धातुकाशीस हरे या लाल अथवा पीलेसे वर्णका होता है और पुष्पकाशीस सफेद वर्णका होता है) काशीसको भांगरेके रसमें एक बार स्वेदन करनेसे ही शुद्ध होजाता है ॥ २३ ॥

काशीसके गुण ।

कांशीशं निर्मलं स्निग्धं चित्तनेत्ररुजापहम् ।
पित्तापस्मारशमनं रसवद्गुणकारकम् ॥ २४ ॥

काशीस–निर्मल है, स्निग्ध है, चित्तविकारनाशक, नेत्ररोगहर, पित्तनाशक, अपस्मारको शमन करनेवाला और पारेके समान गुणकारी है ॥ २४ ॥

कान्तपाषाणके पर्याय।

राजपट्टं महापट्टं शिखिग्रीवं विराटकम् ॥

राजपट्ट, महापट्ट, शिखिग्रीव और विंराटक यह कान्तपाषाणके नाम हैं ॥

कांतपाषाणका शोधन।

चूर्णितं कान्तपाषाणं महिषीक्षीरसंयुतम्।
विपचेदायसे पात्रे गोघृतेन समन्वितम् ॥ २५ ॥
लवणे च तथा क्षारे शोभाञ्जनरसे क्षिपेत।
अम्लवर्गस्य तोयेन दिनं घर्मे विभावयेत् ॥ २६ ॥
तथैव दोलिकायन्त्रे दिवसं पाचयेत्सुधीः।
कांतपाषाणशुद्धौ तु रसकर्म समाचरेत् ॥ २७ ॥

कांतपाषाणको कूटकर भैंसके दूध और गोघृतमें दोलायन्त्र विधिसे लोहेके पात्रमें पकावे फिर नमक जौखार और सुहांजनेके रस (क्राथ) में स्वेदन करे। तदनन्तर अम्लवर्गके पानीमें एक दिन भिगोकर धूपमें रक्खे, फिर दोलायन्त्र द्वारा अम्लवर्गमें एक दिन पकानेसे कांतपाषाण शुद्ध और रसकर्मके योग्य हो जायेगा ॥ २५–२७ ॥ इति कांत-पाषाण शोधन ॥

कौड़ीके भेद।

पीताभा ग्रन्थिला पृष्ठे दीर्घवृन्दा वराटिका।
सार्द्धनिष्कभरा श्रेष्ठा निष्कभारा च मध्यमा॥२८॥
पादोननिष्कभारा च कनिष्ठा परिकीर्तिता।
रसवैद्यविनिर्दिष्टा सा वराटकसंज्ञिका ॥ २९ ॥

जो कौड़ी पीले वर्णकी पीठपरसे गांठदारसी लंबी और गोल हो तोलमें डेढ़ टंक (६ मासे) हो वह रसवैद्योंने श्रेष्ठ वराटिका कही

है । जो कौड़ी तोलमें एक टंककी हो वह मध्यम है । जो पौनटंक (३ मासे) तोलमें हो वह कौड़ी कनिष्ठा कही है । इसको वराटक भी कहते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

कौड़ियोंका शोधन ।

वराटी काञ्जिके स्विन्ना यामाच्छुद्धिमवाप्नुयात् ॥ २३० ॥

कौड़ियोंको कांजीमें दोलायंत्र द्वारा एक प्रहर स्वेदन करे तो शुद्ध होजाती है ॥ २३० ॥

कौड़योंकी भस्मविधि ।

भूगर्त्ते च समे शुद्धे पोटलीं स्थापयेत्सुधीः ।
तुषेण पूरयेत्तस्याः किञ्चिन्मध्यं भिषग्वरः ॥ ३१ ॥
वराटपूरितां मूषां तन्मध्ये विनिवेशयेत् ।
करीषाग्निं ततो दद्यात्पालिकायन्त्रमुत्तमम् ।
अनेन म्रियते नूनं वराटं सर्वरोगजित् ॥ ३२ ॥

कौड़ियोंका कपड़ेमें पोटली बांध पृथ्वीमें गढा खोदकर उस गढेको स्वच्छ बना उसमें जंगली उपले और तुष भर बीचमें कौड़ियोंबाली पोटली सरावमें रखकर गजपुट विधानसे फूंक दे । अथवा (" चषकं वर्तुलं लौहं विनताग्रोर्ध्वदण्डकम् । एतद्धि पालिकायंत्रं वह्निजारणहेतवे ॥ १ ॥ " एक लोहेका प्यालासा गोल बनाकर उसमें ऊपरसे मुड़ी हुई एक लंबी डंडी लगावे जैसे माटमेंसे तेल निकालनेके लिये दुकानदार पली रखते हैं ऐसा बनावे इसको पालिकायंत्र कहते हैं इसमें कौडियें और तुष भरकर उपलोंकी आगमें फूंके तो कौडियोंकी भस्म होजायगी) यह भस्म संपूर्ण रोगोंको जीतनेवाली उत्तम है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

वराटिकाभस्मके गुण ।

परिणामादिशूलघ्नी क्षयहा ग्रहणीहरा ।
कटूष्णा दीपनी वृष्या तिक्ता वातकफापहा ॥ ३३ ॥

वराटिकाभस्म परिणामशूल आदि संपूर्ण शूलोंका नाश करती है तथा क्षयरोगनाशक, ग्रहणीरोगको हरनेवाली, कटु, उष्ण, दीपनी, वृष्य, तिक्त और वातकफनाशक है ॥ ३३ ॥

नीलांजन शोधन ।

नीलाञ्जनं चूर्णयित्वा जम्बीरद्रवभावितम् ।
दिनैकमातपे शुद्धं भवेत्कार्येषु योजयेत् ॥ ३४ ॥

सुरमेंको चूर्णकर नींबूके रसमें एक दिन भावना देकर धूपमें सुखा ले तो सुरमा शुद्ध होजाता है इसको जिस कार्यमें लेना हो उसमें प्रयोग करे ॥ ३४ ॥

अथ हिंगुलप्रकरण ।

सिंगरफके पर्याय ।

हिंगुलो हिंगुलुर्यातिर्दरदः शुकतुण्डकः ।
रसगन्धकसम्भूतो हिङ्गुलो दैत्यरक्तकः ॥ ३५ ॥

हिंगुल, हिंगुलु, याति, दरद, शुकतुण्ड, रसगंधकसम्भूत, हिङ्गुल, दैत्यरक्तक (रसगर्भ, कपिशीर्षक, मनोहर) यह सिंगरफके नाम हैं ॥ ३५ ॥

हिंगुलशोधनविधि ।

अम्लवर्गद्रवैः पिष्टा दरदो माहिषेण च ।
दुग्धेन सप्तधा पिष्टः शुष्कीभूतो विशुद्धयति ॥३६॥

सिंगरफको अम्लवर्गके रसमें पीस २ कर सात भावना देवे और भैंसके दूधमें सात भावना देकर सुखा लेनेसे सिंगरफ शुद्ध होजाता है ३६॥

मेषीदुग्धेन दरदमम्लवर्गैर्विभावितम् ।
सप्तवारं प्रयत्नेन शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥ ३७ ॥

दूसरी विधि—सिंगरफको भेडके दूधमें सात भावना देकर सुखा ले फिर नींबू आदि अम्ल वर्गके रसमें सात भावना देकर सुखा ले तो सिंरगफ निश्चय ही शुद्ध होजाता है ॥ ३७ ॥

दरदं दोलिकायन्त्रे पक्कं जंबीरजैर्द्रवैः ।
सप्तवारमजामूत्रैर्भावितं शुद्धिमेति हि ॥ ३८ ॥

तीसरी विधि—सिंगरफके टुकडोंको कपडेमें बांध दोलायंत्रद्वारा जंबीरीके रसमें एक दिन पकावे फिर निकालकर बकरीके मूत्रमें सात भावना देवे (रगडकर सुखावे) तो शुद्धताको प्राप्त हो निर्दोष होजाता है ॥ ३८ ॥

आर्द्रकैर्लकुचद्रावैः सप्तधा भावितो यदि ।
हिंगुलः शुद्धतां याति निर्दोषो जायते खलु ॥ ३९ ॥

चौथी विधि—सिंगरफको अदरखके रसमें और लकुच (बडहर) के रसमें सात भावना देनेंसे शुद्धताको प्राप्त हो निश्चय ही निर्दोष होजाता है ॥ ३९ ॥

हिंगुलके लक्षण और गुण ।

बिम्ब्याभं हिंगुलं दिव्यं रसगन्धकसम्भवम् ।
मेहकुष्ठहरं रुच्यं बल्यं मेधाग्निवर्धनम् ॥ २४० ॥

जो हिंगुल (सिंगरफ) बिम्बी (कंदूरी) फलके समान लालवर्णवाला होता है वह दिव्य गुणोंवाला है, पारे गंधकके संयोगसे उत्पन्न होता है । यह प्रमेहनाशक, कुष्ठको हरनेवाला, रुचिकारक, बलवर्धक, मेधाजनक और जठराग्निको दीपन करनेवाला है ॥ २४० ॥

शिलाजीतके नाम ।

शिलाजतुनि शैलेयमद्यं गिरिजमश्मजम् ।
धातुजं चाश्मजतुकं शैलजं चाश्मसम्भवम् ॥ ४१ ॥

शिलाजतु, शैलेय, अद्रय; गिरिज, अश्मज, धातुज, अश्मजतु, शैलज और अश्मसंभव यह नाम शिलाजीतके हैं ॥ ४१ ॥

शिलाजीतका शोधन।

गोदुग्धे त्रिफलाभृङ्गद्रवैः पिष्टं शिलाजतु।
दिनैकं लौहजे पात्रे शुद्धिमायात्यसंशयम् ॥ ४२ ॥

शिलाजीतको कूटकर लोहेकी कडाहीमें डाल उसमें गोदुग्ध, त्रिफलेका काथ और भांगरेका रस डालकर एक दिन रक्खा रहने दे फिर अग्निपर उबाल देकर तीक्ष्ण धूपमें रख दे, इसके ऊपर जो मलाईके समान गाढ़ा २ पदार्थ हो उसको उतारकर (गर्देसे बचाकर) सुखा ले तो शिलाजीत निःसन्देह उत्तम शुद्ध हो जायगी ॥ ४२ ॥

शिलाजीतके गुण।

शिलाजतु भवेत्तिक्तं कटुकञ्च रसायनम्।
क्षयशोथोदरार्शांसि हंति वस्तिरुजां जयेत् ॥४३॥

शिलाजीत–रसमें तिक्त और कटु है। गुणमें रसायन (सर्वरोगनाशक आयुर्वर्द्धक) तथा क्षयरोग, शोथरोग, उदररोग, बवासीर इन सबको नष्ट करनेवाली है एवं मूत्राशयके प्रमेह कृच्छ्रादि संपूर्ण रोगोंको जीतनेवाली है ॥ ४३ ॥

सौवीरादिकोंकी साधारण शुद्धि।

सौवीरं टंकणं शंखं कंकुष्ठं गैरिकं तथा।
एते वराटवच्छोध्या भवेयुर्दोषवर्जिताः ॥ ४४ ॥

सुरमा, सुहागा, शंख, कंकुष्ठ (मुरदासिंगके समान पदार्थ), गरू इनमेंसे जिसको शुद्ध करना हो उसको कांजीमें स्वेदन कर ले तो शुद्ध होजाता है ॥ ४४ ॥

---

१ कोई कंकुष्ठको मुर्दासिंग मानते हैं, रसरत्नसमुच्चयकारने दोनाको भिन्न भिन्न पदार्थ माना है। वर्णमें कंकुष्ठ और मुर्दासिंग पीलेसे होते हैं, कंकुष्ठ वंगका मल होता है।

कंकुष्ठं गैरिकं शंखं काशीशं टंकणं तथा ।
नीलाञ्जनं शुक्तिभेदा खुल्वका सवराटका ॥ ४५ ॥
जम्बीरवारिणा स्विन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा ।
शुद्धिमायान्त्यमी योज्या भिषग्भिर्योगसिद्धये॥४६॥

कंकुष्ठ, गेरू, शंख, काशीस, सुहागा, सुरमा, सब प्रकारकी सिप्पिएँ (सींप), खुल्वक (नख गंधद्रव्य) और कौडिएं यह सब जम्बीरी नींबूके रसमें स्वेदन कर गरम पानीसे धो देनेसे शुद्ध होजाते हैं। इनमेंसे जिस पदार्थको शुद्ध करना हो जंबीरीके रसमें दोलायन्त्रद्वारा स्वेदन कर गरम पानीसे धोवे तो शुद्ध होजाता है। फिर जिस कर्ममें प्रयोग करना हो करे ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

टकण (सुहागे) के नाम ।

टंकणं क्रामणष्टंकः सम्यक्क्षारश्च पाचनः ।
शुभगो मालतीजातो द्रवी लोहविशुद्धिदः ॥४७॥

टंकण, क्रामण, टंक, सम्यक्क्षार, पाचन, शुभग, मालतीजात, द्रावक, लोहशुद्धिकारक यह सुहागेके नाम हैं ॥ ४७ ॥

सुहागेका शोधन ।

आदौ टंकणमादाय काञ्जिकाम्ले विनिःक्षिपेत् ।
एकरात्रात् समुद्धृत्य शोषयेद्वै चिरातपे ॥ ४८ ॥
नरमूत्रगतं टंकं गवां मूत्रगतं तथा ।
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य जम्बीराम्बुगतं ततः ॥ ४९ ॥
जम्बीराम्लात्समुद्धृत्य नारिकेलस्य पात्रके ।
मरीचचूर्णसंयुक्तं क्षालयेच्छीतलाम्बुना ॥
टङ्कणं वह्नियोगेन सूत्फुल्लं शुद्धतां व्रजेत् ॥ २५० ॥

प्रथम सुहागेको लेकर खट्टी कांजीमें डाल दे फिर एक दिन रातके अनंतर निकालकर छायामें सुखा ले। फिर मनुष्यके मूत्रमें एक दिन डुबा रक्खे, एक दिन गोमूत्रमें डुबाकर रक्खे फिर सायंकाल गोमूत्रमेंसे निकालकर जंबीरी नींबूके रसमें रक्खे। फिर निकालकर नारियलके पात्रमें डाल उसमें काली मिरचका चूर्ण मिला शीतल जलसे धो डाले तो सुहागा शुद्ध होजाता है। (कोई अग्निपर फुला लेने मात्रसे सुहागेको शुद्ध मानते हैं, कोई जंबीरी नींबूके रसमें एक दिनरात भावना देनेसे सुहागा शुद्ध होता है ऐसा मानते हैं) ॥ ४८--२५० ॥

सुहागेके गुण।

एवं टङ्कं समादाय सर्वरोगेषु योजयेत्।
टंकणोऽग्निकरो रूक्षः कफघ्नो रेचनो लघुः ॥ ५१ ॥

इस प्रकार शोधन किया हुआ सुहागा सब जगह प्रयुक्त करना चाहिये। यह शुद्ध टंकण जठराग्निको चैतन्यं करता है, रूक्ष है, कफनाशक है, रेचन है और हलका है (एवं ज्वर, शूल, वायु, विष इनको नष्ट करता है और सुवर्ण तथा चांदीको शोधन करनेवाला है) ॥ ५१ ॥

शंखका शोधन और मारण।

अन्धमूषागतं शङ्खं पलमेकं विचक्षणः।
माषार्द्धटङ्कणैर्मिश्रं दण्डयन्त्रेण मारयेत् ॥ ५२ ॥

(शंखके टुकड़े कर दोलायंत्रद्वारा एक प्रहर कांजीमें पकावे तो शंख शुद्ध होजाता है) शंख ४ तोला, सुहागा ४ रत्ती इन दोनोंको अंधमूषामें रख कोयलोंकी तीक्ष्ण अग्निमें फूंक देवे, शीतल होनेपर डंडे या पत्थर आदिसे पीसकर रक्खे यह शंखभस्म होगई ॥ ५२ ॥

शंखके गुण।

शङ्खः सर्वरुजां हन्ति विशेषादुदरामयम्।
शूलाम्लपित्तविष्टम्भमेहहृद्वह्निदीपनः ॥ ५३ ॥

शंख संपूर्ण रोगोंको हरनेवाला है, विशेषतासे उदर रोगोंको दूर करता है तथा शूल, अम्लपित्त, विष्टम्भ और प्रमेह इनको हरनेंवाला है एवं दीपन है (इसकी भस्मका ही प्रयोग करना चाहिये। परंतु नेत्रके फोला आदि रोगोंमें कच्चा शंख ही रगडकर डाला जाता है) ॥५३॥

इति उपरसशोधन समाप्त ।

अथ स्वर्णादिधातुशोधनमारण ।

सोना आदि ८ धातुओंकी साधारण शुद्धि ।

हेमादि लोहकिट्टान्तं शोधनं मारणं शृणु ।
तैले तक्रे गवां मूत्रे काञ्जिकेऽथ कुलत्थके ॥५४॥
तप्ततप्तानि सिञ्चेत तत्तद्द्रावे च सप्तधा ।
एवं स्वर्णादिलोहानि शुद्धिमायान्त्यसंशयः ॥५५॥

सुवर्णसे लेकर लोह किट्ट (मण्डूर) पर्यंत सब धातुओंका शोधन और मारण सुनो—सुवर्णादि धातुओंमेंसे जिसका शोधन करना हो उसको अग्निमें तपा २ कर तेल, तक्र (मट्ठा), गोमूत्र, कांजी और कुलथीका क्वाथ इन हरेक द्रव्यमें सात सात वार बुझावे । इस प्रकार इन पांचों ही द्रव्योंसे सात सात वार बुझानेसे सुवर्ण आदि सब धातु निश्चय ही शुद्ध होजाती हैं ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

अशुद्ध सुवर्णका दोष ।

सौख्यं वीर्यं बलं हन्ति नानारोगं करोति च ।
अशुद्धममृतं स्वर्णं तस्माच्छुद्धं तु मारयेत् ॥५६॥

अशुद्ध सुवर्ण—सौख्य, वीर्य, बल इन सबको हनन करता है तथा अनेक प्रकारके रोगोंको उत्पन्न करता है इसलिये अशुद्ध सुवर्णकी भस्म नहीं करनी चाहिये । " अशुद्धममृतं " इस पुस्तकमें ऐसा पाठ है इसका यह अर्थ है कि अशोधित सुवर्ण और मारणमें अधमरा

सुवर्ण उपरोक्त दोषोंको करता है । अन्य पुस्तकोंमें "अशुद्धं नामृतं" ऐसा पाठ है, उसका यह अर्थ है कि अशुभ स्वर्ण अमृतके समान गुणकारी नहीं है परन्तु यहां "अशुद्धं वै मृतं स्वर्णं" ऐसा पाठ चाहिये जिसका यह अर्थ हो सकता है कि विना शोधन किये मारा हुआ सुवर्ण सौख्य बल वीर्यादि नाशक होता है इसलिये प्रथम सुवर्णका शोधन कर फिर भस्म करे ॥ ५६ ॥

सुवर्णशोधन ।

मृत्तिकामातुलुङ्गाम्लैर्भावितं पञ्चवासरम् ।
मृद्भस्मलवणाद्धेम शोधयेत्पुटयेत्ततः ॥ ५७ ॥

आगे कही पंच मृत्तिकाके चूर्णमें बिजौरे नींबूका रस डालकर इसमें सुवर्णके पत्रोंको पांच दिन भिगोये रक्खे फिर निकाल कर पीली मिट्टी या गेरू और सेंधानमक तथा उपलोंकी भस्म इन तीनोंको पीसकर स्वर्ण पत्रोंपर लेप कर इन पत्रोंको जंगली उपलोंकी अग्निमें रख पुट देवे, इस प्रकार तीन पुट देनेसे सुवर्ण शुद्ध होजाता है ॥५७॥

पंच मृत्तिका ।

वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेष्टका पटु ।
इत्येता मृत्तिकाः पञ्च जम्बीरैरारनालकैः ॥ ५८ ॥
पिष्ट्वा लेप्यं स्वर्णपत्रं पुटेन तु विशुध्यति ।
धारयेत्स्वर्णपत्राणि त्रिदिनं पञ्चमृत्तिकाम् ॥ ५९ ॥

बंबीकी मिट्टी, गृहधूम, गेरू, ईंट और लवण यह मृत्तिकापंचक (पंच मृत्तिका) कही है । (कोई इनमें गृहधूमकी जगह एरने उपलोंकी भस्म मानते हैं) इस पंच मृत्तिकाको बहुत बारीक पीस कर जंबीरीका रस या कांजी मिलाकर सुवर्णके पत्रोंपर लेप करे फिर इन पत्रोंको लघु पुटमें फूंके, इस प्रकार पंच मृत्तिकाका लेपकर तीन पुटोंके देनेसे सुवर्ण शुद्ध होजाता है ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

सुवर्णभस्मकी विधि ।

माक्षिकं नागचूर्णञ्च पिष्टमर्करसेन च ।
हेमपत्रं पुटेनैव म्रियते क्षणमात्रतः ॥ २६० ॥

सुवर्णके शुद्ध पत्रोंपर सोनामक्खी और शीसे (सिक्के) को आकके दूधमें रगड़कर लेप करे फिर इनको अन्धमूषामें रख पुटमें फूंक दे तो सोनेकी भस्म होजायगी ॥ २६० ॥

सुशुद्धं पारदं दत्त्वा कुर्याद्यत्नेन पीठिकाम् ।
दत्त्वोर्ध्वाधो नागचूर्णं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥ ६१ ॥

दूसरी विधि–शुद्ध बारीक स्वर्णपत्रोंमें (दोगुणा) शुद्ध पारा मिलाकर दोनोंको रगड़कर पीठीसी बना ले, इसको वज्रमूषाओंके संपुटमें रख नीचे ऊपर सिक्केका चूर्ण देकर संपुटको बंदकर पुट देनेसे सुवर्णकी एक ही पुटमें भस्म होजाती है ॥ ६१ ॥

गलितस्य सुवर्णस्य षोडशांशेन सीसकम् ।
योजयित्वा समुद्धृत्य निम्बुनीरेण मर्दयेत् ॥ ६२ ॥
गोलं कृत्वा गन्धचूर्णं समं दद्यात् तथोपरि ।
शरावसंपुटे कृत्वा पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः ।
एवं मुनिपुटैर्हेम नोत्थानं लभते पुनः ॥ ६३ ॥

तीसरी विधि–सुवर्णको मूषा (कठाली) में रख कोयलोंकी तीक्ष्ण अग्नि देकर गलावे जब सुवर्ण पिघल जावे तो सुवर्णसे सोलहवां भाग सिक्का मिलाकर दोनोंको उत्तम खल्वमें डाल नींबूके रससे मर्दन करे (तीन दिन) रगड़कर गोला बनावे इस गोलेके नीचे ऊपर सुवर्णके बराबर शुद्ध गंधकका चूर्ण देकर शरावसंपुट करे, संपुटको धूपमें सुखाकर तीस जंगली उपलोंकी अग्निमें पुट देवे (किसी पुस्तकमें " घनो -

पलैः" पाठ है जिसका अर्थ घरकी बनी हुई कठोर भारी सूखी गोबरी है) इस प्रकार सात पुट देनेसे सुवर्णकी निरुत्थ भस्म हो जाती है ६२ ॥ ६३

शुद्धसूतसमं स्वर्णं खल्वे कृत्वा तु गोलकम् ।
ऊर्ध्वाधो गन्धकं दत्त्वा सर्वतुल्यं निरुध्य च ॥ ६४ ॥
त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात्पुटान्येवं चतुर्दश ।
निरुत्थं जायते भस्म गन्धो देयः पुनः पुनः ॥ ६५ ॥

चौथी विधि-शुद्ध सुवर्णके बारीक २ पत्र बनाकर उसमें बराबरका शुद्ध पारा मिलावे दोनोंको खरलकर एकजीव होनेपर गोला बना ले, इस गोलेके ऊपर नीचे बराबरकी शुद्ध गंधकका चूर्ण डाल शरावसंपुट करे इस संपुटको तीस जंगली उपलोंमें रख पुट देवे ऐसे १४ पुटें देनेसे सुवर्णकी निरुत्थ भस्म हो जाती है । इसमें प्रत्येक पुटमें पूर्ववत् गंधकका चूर्ण डालते रहना चाहिये ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

सुवर्णके गुण ।

कषायं तिक्तमधुरं सुवर्णं गुरु लेखनम् ।
हृद्यं रसायनं बल्यं चक्षुष्यं कान्तिदं शुचिः ॥ ६६ ॥
आयुर्मेधावयःस्थैर्यवाग्विशुद्धिस्मृतिप्रदम् ।
क्षयोन्मादगदानाञ्च कुष्ठानां नाशनं परम् ॥ ६७ ॥

सुवर्ण-कषाय, तिक्त, मधुर, भारी, लेखन, हृद्य, रसायन, बलकारक, नेत्रोंको हितकारी, कांतिदायक, पवित्र, आयुवर्धक, मेधाजनक, वयस्थापक, वाणीको शुद्ध करनेवाला, स्मृतिदायक तथा क्षय, उन्माद और कुष्ठ आदि रोगोंको नष्ट करनेवाला है ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

इति सुवर्ण शोधन मारण ।

चांदीका शोधन-मारण ।

उत्तम (तार) चांदीके लक्षण ।

दग्धोत्तीर्णं सुशीतं यन्निर्मलं कुन्दसन्निभम् ।
गुरु स्निग्धं कुमारञ्च तारमुत्तममिष्यते ॥ ६८ ॥

जो चांदी अग्निमें तपाकर लाल होनेपर निकालकर ठंढी की जानेसे उत्तम सफेद वर्ण रहे, भारी हो, चिकनी हो और नरम हो उसे उत्तम चांदी जाननी ॥ ६८ ॥

अशुद्ध चान्दी (रौप्य) के दोष ।

आयुः शुक्रं बलं हन्ति रोगसङ्घ करोति च ।
अशुद्धं चामृतं तारं शुद्धं ग्राह्यमतो बुधैः ॥६९॥

अशुद्ध और मारणमें कच्ची रही हुई चान्दी आयु, शुक्र और बल को नष्ट करती है एवं रोगोंके समूहको पैदा करती है इसलिये बुद्धिमानोंको शुद्ध चान्दी लेना ही सब कर्मोंमें श्रेष्ठ है ॥ ६९ ॥

चान्दीका शोधन ।

नागेन क्षारराजेन द्रावितं शुद्धिमृच्छति ।
रजतं दोषनिर्मुक्तं किं वा क्षाराम्लपाचितम् ॥२७०॥

सिक्का और सुहागा मिलाकर चान्दीको तीक्ष्णाग्निमें रखकर पिघलावे तो सिक्का चांदीका दोष लेकर उड जायगा और चान्दी निर्दोष शुद्ध हो जायगी। अथवा चान्दीके पात्रोंको तपा तपा कर सुहागा मिले खटाईके बीचमें बार २ बुझानेसे भी चान्दी शुद्ध हो जाती है ॥ २७० ॥

चान्दीके मारनेकी विधि ।

माक्षिकं गन्धकञ्चैवमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ।
तेन लिप्तं रूप्यपत्रं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥ ७१ ॥

सोनामक्खी और गंधकको आकके दूधमें रगड कर चान्दीके पत्रोंपर लेप कर शराव संपुटमें रख पुट देनेसे चान्दीकी भस्म हो जाती है ॥ ७१ ॥

कण्टवेध्यं तारपत्रं दिद्याद्द्विगुणहिङ्गुलम् ।
पातयन्त्रे रसो ग्राह्यो रजतं मृतमुच्यते ॥ ७२ ॥

दूसरी विधि–शुद्ध चान्दीके कंटकवेधी बारीक पत्र लेकर उनमें दोगुना सिंगरफ डालकर (नींबूके रसमें) खूब रगडे जब एकजीव हो जाये तो डमरुयंत्रमें रख ४ प्रहरकी अग्नि देवे तो सिंगरफका पारा उडकर ऊपरके पात्रमें लग जायेगा । नीचेके पात्रमें चांदीकी भस्म होजायेगी (उसको अलग निकाल ले) ऊपरके पात्रमेंसे पारा अलग निकाल ले ॥ ७२ ॥

तालं गन्धं रौप्यपत्रं मर्दयेन्निम्बुकद्रवैः ।
त्रिपुटैश्च भवेद्भस्म योज्यमेतद्रसादिषु ॥ ७३ ॥

तीसरी विधि–हरिताल, गंधक और चांदीके बारीक पत्र इन तीनोंको खरलमें डाल नींबूके रससे खूब रगडे फिर शरावसंपुट करके लघुपुटमें फूंक दे, इस प्रकार तीन पुटें देनेसे चांदीकी भस्म होजायेगी। यह रस आदिकोंमें सर्वत्र प्रयुक्त करना चाहिये ॥ ७३ ॥

तारपत्रं चतुर्भागं भागैकं शुद्धतालकम् ।
मर्द्यं जम्बीरजैर्द्रावैस्तारपत्राणि लेपयेत् ॥ ७४ ॥
रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्यं पञ्चविंशद्वनोपलैः ।
म्रियते नात्र सन्देहो गन्धो देयः पुनः पुनः ॥ ७५ ॥

चौथी विधि–एक तोला शुद्ध वर्की हरितालको जंबीरी नींबूके रसमें रगडकर चार तोला चांदीके पत्रोंपर लेप कर शरावसंपुटमें रख नीचे ऊपर गंधकका चूर्ण डाल बंद करे, इस संपुटको २५ जंगली उपलोंकी

आग्निमें पुट दे, ऐसे तीन पुट देनेसे निःसंदेह चांदीकी भस्म हो जाती है इसमें हरेक वार गंधक नीचे ऊपर संपुटमें डाल देना चाहिये॥७४॥७५॥

चांदीके गुण ।

शीतं कषायं मधुरमम्लं वातप्रकोपजित् ।
दीपनं बलकृत्स्निग्धं गुल्माजीर्णविनाशनम् ।
आयुष्यं दीर्घरोगघ्नं रजतं लेखनं स्मृतम् ॥ ७६ ॥

शुद्ध चांदी (भस्म) शीतल, कषैली, मधुर, अम्ल, वातप्रकोपको जीतनेवाली, दीपन, बलकारक, स्निग्ध, गुल्मनाशक, अजीर्णको दूर करनेवाली, आयुवर्धक, लेखन और दीर्घ रोगोंको दूर करनेवाली है॥७६॥

इति रौप्य मारण ।

अशुद्ध तांबेके दोष ।

न विषं विषमित्याहुस्ताम्रञ्च विषमुच्यते ।
एकदोषो विषे त्वष्टौ दोषास्ताम्रे प्रकीर्तिताः ॥ ७७॥
भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च उत्क्लेदः शोषवान्तयः ।
अरुचिश्चित्तसन्तापः एते दोषा विषोपमाः ॥
तस्माद्विशुद्धं ताम्रं हि ग्राह्यं रोगोपशान्तये ॥७८॥

विष इतना अवगुण नहीं करता किंतु तांबा विषसे भी अधिक हानिकारक है । क्योंकि विषमें केवल एक ही दोष है; ताम्रमें आठ दोष कहे हैं । अशुद्ध तांबेमें यह आठ दोष होते हैं जैसे—भ्रम, मूर्च्छा, विदाह, उत्क्लेद, शोष, वांति, अरुचि और चित्तको संतापित करना । इसलिये तांबेको शुद्ध करके ही रोगशांतिके लिये ग्रहण करना चाहिये ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

ताम्रके शोधनकी विधि ।

पटुना रविदुग्धेन ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।
अग्नौ सन्ताप्य निर्गुण्डीरसे सिञ्चेत्पुनः पुनः ॥७९॥

लवणको आकके दूधमें रगड़कर तांबेके पत्रोंपर लेप करे, फिर इन पत्रोंको अग्निमें तपाकर संभालूके रसमें बार बार बुझाता रहे (ऐसे २१ बार बुझानेसे तांबा शुद्ध होजाता है) ॥ ७९ ॥

गोमूत्रेण पचेद्यामं ताम्रपत्रं दृढाग्निना ।
शुद्धचते नात्र सन्देहो मारणश्चात्र कथ्यते ॥ ८० ॥

अन्य प्रकार–तांबेके पत्रोंको गोमूत्रमें डालकर तीक्ष्णाग्निसे एक प्रहर पकावे तो तांबा अवश्य शुद्ध होजाता है। अब आगे मारणकी विधिको कहते हैं ॥ ८० ॥

तांबाके मारणकी विधि ।

सूतमेकं द्विधा गन्धं यामं मर्द्यं तु कन्यया ।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं लिप्त्वा स्थाल्यां निधापयेत् ।
सम्यक्शूरणजैः सार्द्धं पार्श्वे भस्म निधापयेत् ।
चतुर्यामं पचेच्चुल्ल्यां पात्रपृष्ठे सगोमये ।
जलं पुनः पुनर्देयं स्वाङ्गशीतं विमर्दयेत् ।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ८३ ॥

शुद्ध पारा दो तोले, शुद्ध गंधक चार तोले और शुद्ध तांबेके पत्र छः तोले लेवे। प्रथम पारे और गंधकको एक प्रहर रगडकर घीकुमारका रस मिला फिर रगड़े तदनंतर इसको ताम्रपत्रोंपर लेप करे । इनको एक हांडीमें रख (ऊपर एक छोटीसी शरावीसे ढक दे फिर इस शरावीके ऊपर) जिमीकंदकी भस्म हांडीमें भर दे ऊपरसे शराव देकर गोबरसे संधी लेप करे और शरावके ऊपरले भागपर दो अंगुल मोटा गोबर चढ़ा दे, फिर इस हांडीको चूल्हेपर चढ़ा चार प्रहरकी तीक्ष्ण अग्नि देवे, हांडीके मुखपर गोबरपर पानीका पोचा देता रहे जिससे गोबर सूखकर तिड़ न जावे, चार प्रहरके बाद अग्नि बुझा दे, स्वांगशीतल होनेपर युक्तिसे निकाल ले ताम्रपत्रोंकी भस्म हो जायेगी। इसे पीसकर सब रोगोंमें प्रयुक्त करना चाहिये ॥ ८१-८३ ॥

जम्ब्वम्भसा सैन्धवसंयुतेन सगन्धकं स्थापय शुल्वपत्रम् । पक्वायमानं पुटयेत्सुयुक्त्या वातादिकं यावदुपैति शांतिम् ॥ ८४ ॥

दूसरी विधि—सेंधानमक ४ तोले गंधक ४ तोले इन दोनोंको जामुनके रसमें खरल कर तांबेके बारीक पत्रोंपर लेप करे, इन पत्रोंको एक चौड़े मुखकी हांडीमें रख इन पत्रोंको पतलीसी शरावीसे ढक्कर सन्धी लेप करे । फिर इस हांडीको वालुरेतसे भर चूल्हे पर चढ़ा बारह घंटेकी तीक्ष्ण अग्नि जलावे फिर स्वांगशीतल होनेपर युक्तिपूर्वक निकालकर पंचगव्य (घृत, दूध, दही, गोमूत्र, गोबरका रस) में रगड़कर शरावसंपुटमें रख तीन पुटें दे तो वमनादि दुर्गुण रहित उत्तम भस्म होजायेगी ॥ ८४ ॥

शुद्धं ताम्रदलं विमर्द्य पटुना क्षारेण जम्बीरजै-
र्नीरैर्घस्रमिदं स्नुगर्कपयसा लिप्तं धमेत्सप्तधा ।
निर्गुण्ड्यंबुहिमं रसेन्द्रकलितं दुग्धाज्यगन्धेनतत्
तुल्येनाथ मृतं भवेत्सपुटितं पञ्चामृतेन त्रिधा८५॥
वांतिभ्रांतिविवर्जितं क्षयरुजाकुष्ठानि पाण्ड्वामयं,
शूलं मेहगुदांकुरानिलगदानुक्तानुपानैर्जयेत् ।
गुञ्जामात्रमिदं ततो द्विगुणितं तच्छुद्धकायेन चेत्,
भुक्तं स्थौल्यजरापमृत्युशमनं पथ्याशिनावत्सरात्॥

तीसरी विधि—शुद्ध ताम्र पत्रोंमें सेंधानमक और सुहागा मिलाकर जम्बीरीके रसमें एक दिन मर्दन करे फिर इन पत्रोंपर थोहरका दूध लेप कर अग्निमें तपा संभालूके रसमें बुझावे, ऐसे सात वार थोहरके दूधसे लेप करके बुझावे और सात वार आकका दूध लेप कर अग्निमें तपा संभालूके रसमें बुझावे । इस प्रकार बुझानेसे संभालूके

रसमें तांबेके बारीक २ पत्र गेरूके चूर्ण समान वर्णवाले नीचे बैठ जायँगे, ठंढा होनेपर संभालूका रस ऊपरसे युक्तिपूर्वक नितार कर गेर दे, नीचेसे तांबेका चूरा लेकर उस चूरेके बराबर पारा गंधक मिला खरल करे इसमें दूध और घी डालकर पीठीसी बना ले फिर शराव-संपुटमें रख गजपुटमें फूंक दे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर पञ्चामृत (दूध, दही, शहद, घी, मिश्री) में रगड तीन पुटें देवे तो वांति, भ्रांति आदि दोषरहित उत्तम भस्म हो जायगी। इस भस्मको एक रत्ती प्रमाण उचित अनुपानसे सेवन करावे तो क्षयरोग, सब प्रकारके कुष्ठ, पाण्डुरोग, शूल, प्रमेह, बवासीर और वातरोग यह सब रोग नष्ट होते हैं। यदि शुद्ध कायावाला मनुष्य दो रत्ती प्रमाण एक वर्ष पर्यंत नित्य सेवन करे और पथ्य भोजन करता रहे तो भेदरोग, बुढ़ापा और अकालमृत्यु भी नष्ट हो जाते हैं॥ ८५॥ ८६॥

तांबेके गुण।

ताम्रमुष्णं गरहरं यकृत्प्लीहोदरापहम्।
क्रिमिशूलामवातघ्नं ग्रहण्यर्शोऽम्लपित्तजित्॥ ८७॥

शुद्ध ताम्रभस्म–उष्ण है, गरनाशक, यकृत्रोग, प्लीहरोग, उदररोग, क्रिमिरोग, शूल, आमवात, ग्रहणीरोग, अर्शरोग और अम्लपित्त इन सब रोगोंको दूर करती है॥ ८७॥

इति ताम्र मारण।

पित्तल और कांसीका मारण व शोधन।

पित्तलञ्च तथा कांस्यं ताम्रवन्मारयेत्पृथक्।
ताम्रवच्छोधनं तेषां ताम्रवद्गुणकारकम्॥८८॥

पित्तल या कांसी इनमेंसे जिसकी भस्म करना हो उसको तांबेके समान शोधन और तांबेकी भस्मके समान ही इनकी भस्म हो सकती है, एवं तांबेके समान ही यह दोनों गुणकारी हैं॥ ८८॥

इति पित्तल कांस्य मारण।

नागा (सिक्का) वंग (कली) शोधन ।

नागवङ्गे च गलिते रविदुग्धेन सेचिते ।
त्रिवाराच्छुद्धिमायांतः सच्छिद्रे हण्डिकांतरे॥ ८९ ॥

एक हाण्डीमें आकका दूध डालकर उस हाण्डीके मुखपर छिद्रयुक्त शराव ढक दे, फिर नाग या वंग जो शोधन करना हो उसको पिघलाकर उस छिद्रवाले शरावमें डाले जिससे यह पिघला हुआ धातु छिद्रद्वारा हाण्डीमें गिरकर आकके दूधमें डूब जावे, इस प्रकार तीन बार पिघला २ कर बुझानेसे नाग और वंग शुद्ध हो जाते हैं ॥ ८९ ॥

वङ्गं चूर्णोदके स्विन्नं यामार्द्धेन विशुद्ध्यति॥२९०॥

अन्य प्रकार—वंग (कली) के बारीक बारीक पत्रोंको छोटे छोटे बना पोटली बांध दोलायंत्रद्वारा चूनेके पानीमें चार घडी पकावे तो वंग शुद्ध हो जाती है ॥ २९० ॥

इति नाग—वंग—शोधन ।

नाग (सिक्का) मारण ।

भुजंगममगस्त्यं च पिष्ट्वा पत्रं प्रलेपयेत् ।
तत्र संविद्रुते नागे वासापामार्गसंभवम् ॥ ९१ ॥
क्षारं विमिश्रयेत्तत्र चतुर्थांशं गुरूक्तितः ।
प्रहरं पाचयेच्चुल्ल्यां वासादर्व्या च चालयेत् ॥९२॥
तत उद्धृत्य तच्चूर्णं वासानीरेण मर्दयेत् ।
एवं सप्तपुटैर्नागं सिन्दूरं जायते ध्रुवम् ॥ ९३ ॥

सीसे (सिक्के) के बारीक पत्रोंपर अगस्तिये वृक्षके फूलों (और नागरवेलके पत्रों) को रगडकर लेप करे, फिर इन पत्रोंको मट्टीके तौले (कटाहका पात्र) में डाल चूल्हे पर चढ़ा नीचे अग्निको जलावे, जब सीसा पिघल जाये तो वांसे और अपामार्गका क्षार सीसेके तोलसे चौथा भाग ले थोडा थोडा बुरकाता जाये और वांसा (अडूसे) की

मोटी लकड़ीसे रगड़ता रहे, इस प्रकार एक प्रहर मर्दन करे तो यह भस्माकार होजायेगा। फिर इसको वांसेके पत्रोंके रसमें रगड़कर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें फूंके, इस प्रकार सात पुट देनेसे सिंदूरके समान वर्णवाली उत्तम नाग (सीसा) की भस्म होजायगी ॥ ९१-९३ ॥

त्रिभिः कुम्भपुटैर्नागो वासारसविमर्दितः।
सशिलो भस्मतामेति तद्रजः सर्वमेहजित् ॥ ९४ ॥

दूसरी विधि—सिक्केमें मनसिल मिलाकर वांसेका रस डाल खूब रगडे पीठीसी बन जानेपर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें फूंके, इस प्रकार तीन पुट देनेसे उत्तम भस्म होजायगी। यह भस्म संपूर्ण प्रमेहोंको जीतती है ॥ ९४ ॥

नाग भस्मके गुण।

दशनाबलं धत्ते वीर्यायुःकांतिवर्द्धनम्।
मेहान् हंति हतं नागं सेव्यं वंगं च तद्गुणम् ॥९५॥

यह नागभस्म मनुष्योंके शरीरमें दश हाथीके समान बल देनेवाली है तथा वीर्य, आयु और कांतिको बढ़ाती है एवं संपूर्ण प्रमेहोंको नष्ट करती है। वंगभस्म भी विधिवत् सेवन की जाय तो इन्हीं गुणोंको करती है ॥ ९५ ॥

तारस्य रंजनो नागो वातपित्तकफापहः।
ग्रहणीकुष्ठगुल्मार्शः शोषव्रणविषापहः ॥ ९६ ॥

शुद्ध सीसाभस्म चांदीको रञ्जन करती (रंग देती) है; वात, पित्त और कफको दूर करती है; एवं ग्रहणी, कुष्ठ, गुल्म, अर्श, शोष और विषके विकारको दूर करती है ॥ ९६ ॥ इति नागमारण विधि ॥

वंगभस्म विधि।

वङ्गं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन संपुटेत्।
शुष्काश्वत्थभवैर्वल्कैः सप्तधा भस्मतां नयेत् ॥९७॥

शुद्ध वंग और शुद्ध हरितालको आकके दूधमें रगडे (पहिले वंगको पिघला उसमें आधा भाग पारा डाल उतारकर खरलमें डाले फिर हरिताल मिला रगडे) इसकी चौडीसी टिकिया बना इसको अश्वत्थ (पीपलवृक्ष) के सूखे छिलकोंके चूर्णमें रख कपडमिट्टी कर पुटमें फूंक दे, इस प्रकार सात पुटें दे तो उत्तम वंगभस्म हो जायेगी। (कोई ऐसा अर्थ करते हैं कि हरितालको आकके दूधमें रगडकर वंगके कंटकवेधी पत्रोंपर लेपकर पीपलके छिलकोंसे सात वार लपेट पुट देवे तो एक पुटमें ही भस्म हो जायगी । परंतु यह असंगत है, क्योंकि सूखे अश्वत्थ छिलकोंसे सप्तधा वेष्टित कैसे हो सकता है ? किंतु ऐसा आम लोग करते हैं कि वंगके छोटे २ पत्र कर अश्वत्थके छिलकोंके चूर्णपर चावलसे जमाकर ऊपरसे और अश्वत्थके छिलकोंका चूर्ण डाल नीचे ऊपर उपले लगा आग लगा देते हैं तो शीतल होनेपर खीलोंके समान फूले हुए भस्मके टुकडे मिलेंगे । परंतु इससे उपरोक्त सात-पुटी भस्म गुणमें उत्तम होती है) ॥ ९७ ॥

विशुद्धवंगपत्राणि द्रावयेद्दण्डिकान्तरे ।
अपामार्गोद्भवं चूर्णं तत्तुल्यं तत्र मेलयेत् ॥ ९८ ॥
स्थूलाग्रया लोहदर्व्या शनैस्तदभिमर्दयेत् ।
यावद्भस्मत्वमाप्नोति तावन्मर्द्यन्तु पूर्ववत् ॥ ९९ ॥
ततस्त्वेकीकृतं चूर्णं कृत्वा चांगारवर्जितम् ।
नूतनेन शरावेण रोधयेच्च भिषग्वरः ।
पश्चात्तीव्राग्निना पक्कं वंगभस्म भवेद् ध्रुवम् ॥२००॥

दूसरी विधि—शुद्ध वंगको एक तौलेमें डाल चूल्हेपर चढ़ावे नीचे अग्नि जलावे जब पिघल जावे तो इसमें वंगके बराबर अपामार्गका चूर्ण बुर्का २ कर एक बडे मुखकी लोहेकी कडछीसे धीरे २ रगडता रहे जबतक वंगकी उस पात्रमें ही भस्म न होजाये तबतक थोडा थोडा अपामार्गका चूर्ण मिला रगडता ही रहे। जब भस्माकार बन जाय तो

इसमेंसे अंगारी आदि निकाल इस भस्मको उसी तौलेमें एकत्र कर ऊपरसे औंधा शराव रख भस्मको ढक दे नीचे तीव्र अग्नि जलावे । अथवा इसको उतार शीतल होनेपर पानी डालकर अपामार्गकी भस्मको धोकर अलग कर दे और नीचेसे स्वच्छ वंगभस्म लेकर धूपमें सुखा इसमें आकका दूध मिला नवीन दो शरावोंमें बंद कर तीक्ष्णाग्निसे पकावे तो वंगकी भस्म हो जायगी ॥ ९८-३०० ॥

वङ्गं खर्परके कृत्वा चुल्यां संस्थापयेत्सुधीः ।
द्रवीभूते पुनस्तस्मिंश्चूर्णान्येतानि दापयेत् ॥ १ ॥
प्रथमं रजनीचूर्णं द्वितीये च यमानिका ।
तृतीये जीरकश्चैव ततश्चिञ्चात्वगुद्भवम् ॥ २ ॥
अश्वत्थवल्कलोत्थञ्च चूर्णं तत्र विनिःक्षिपेत् ।
एवं विधानतो वङ्गं म्रियते नात्र संशयः ॥ ३ ॥

तीसरी विधि-वंगको मृत्कपाल (तौले) में डाल चूल्हे पर चढावे जब वंग पिघल जावे तो इसमें नीचे लिखे द्रव्योंके चूर्णोंका प्रक्षेप करे। पहिले तो बराबरका हलदीका चूर्ण डाले जब हलदीका चूर्ण डाले कुछ देरके बाद इमली वृक्षके छिलकेका चूर्ण डाले तदनंतर पीपलवृक्षके छिलकेका चूर्ण डाले नीचे (चार प्रहरकी) तीक्ष्ण अग्नि दे तो वंग भस्म हो जायेगी (कोई इस भस्मको स्वच्छ कर हरिताल और घीकुमारका गूदा मिला संपुटकर फिर गजपुटमें फूंकते हैं तो अति उत्तम होजाती है) ॥ १-३ ॥

वंगभस्मके गुण ।

वङ्गं तिक्ताम्लकं रूक्षं किञ्चिद्वातप्रकोपनम् ।
मेदःश्लेष्मामयघ्नञ्च क्रिमिघ्नं मेहनाशनम् ॥ ४ ॥

वंगभस्म-तिक्त है, अम्ल है, रूक्ष है, किंचित् वातकारक है । एवं मेदरोगनाश, कफरोगनाश, क्रिमिघ्न और प्रमेहोंको जीतनेवाली है ॥४॥

लोहशोधन विधि ।

तप्तानि सर्वलोहानि कदलीमूलवारिणि ।
सप्तधा त्वभिषिक्तानि शुद्धिमायान्त्यनुत्तमाम् ॥५॥

लोहेके पत्र बनाकर तीक्ष्ण अग्निमें तपाकर लाल होनेपर केलाकंदके रसमें बुझावे, ऐसे तपा तपा कर सात वार बुझानेसे सब प्रकारके लोहे अनुपम (जिसकी बराबर और शुद्धि नहीं ऐसे) शुद्ध होजाते हैं ॥५॥

त्रिफलाष्टगुणे तोये त्रिफला षोडशं पलम् ।
तत्क्काथे पादशेषे तु लोहस्य पलपञ्चकम् ॥ ६ ॥
कृत्वा च तप्तपत्राणि सप्तवारं निषेचयेत् ।
एवं प्रलीयते दोषो गिरिजे लोहसम्भवः ॥ ७ ॥

दूसरी विधि—सोलह सोलह पल त्रिफला लेकर उसमें आठ आठ गुना पानी डालकर पकावे, जब चौथा भाग शेष रहे तो उतारकर छान ले इस क्वाथमें पांच पल लोहपत्रोंको तपा तपा कर सात वार बुझावे तो खानसे उत्पन्न होनेका सब दोष दूर होकर लोहा शुद्ध हो जाता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

लोहमारणविधि ।

भानुपाकात्तथा स्थालीपाकाच्च पुटपाकतः ।
निरुत्थो जायते लोहो यथोक्तफलदो भवेत् ॥ ८ ॥

आगे लिखे भानुपाक, स्थालीपाक और पुटपाक करनेसे लोहकी निरुत्थ भस्म होजाती है, यह भस्म उत्तम फलके देनेवाली होती है ॥८॥

भानुपाकविधि ।

लौहे दृषदि लोहञ्च मुद्गरेण हतं मुहुः ।
कृत्वा तु गलितं शुद्धं जलेन त्रैफलेन च ॥ ९ ॥
क्षालयेद्बहुशः पश्चात्कृत्वा द्रव्यान्तरं पृथक् ।
शोषितं भानुभिर्भानोर्भानुपाके प्रयोजयेत् ॥ १० ॥

त्रिफलेके क्वाथमें पूर्वोक्त विधानसे शुद्ध किये हुए कान्तलोहको लोहेके हमामदस्तेमें कूटकर चूर्ण बनावे। (त्रिफलेके क्वाथमें बार बार लाल करके बुझानेसे लोहा कूटकर चूर्ण बनाने योग्य होजाता है) इस चूर्णको वस्त्रमें छान ले फिर त्रिफलेके क्वाथमें बार बार धोकर स्वच्छ कर सूर्यकी तीक्ष्ण धूपमें सुखा लेवे। (तदनन्तर आगे लिखे लोहमारक गणकी औषधियोंके रसमें भिगोकर धूपमें सुखावे) ॥ ३०९ ॥ ३१० ॥

क्षालने भानुपाके तु लोहतुल्यं फलत्रिकम् ।
जलं द्विगुणितं दत्त्वा चतुर्भागावशेषयेत् ॥ ११ ॥
एवमुक्तं फलक्काथं जलं दत्त्वा पुनः पुनः ।
शोषयेत्सूर्यतेजोभिर्निरन्तरमहस्त्रयम् ॥ १२ ॥
अथवा तत्र तत्काथे दत्त्वा दत्त्वा भिषग्वरः ।
सप्तसप्तविधैरेव सप्तवारान् विशोषयेत् ॥ १३ ॥

भानुपाकमें लोहेके बराबर त्रिफला लेकर उस त्रिफलेको दोगुणे जलमें पकावे, जब चौथा भाग जल रहे तो उतारकर छान ले। यह क्वाथ बार बार लोहचूर्णमें डालकर सूर्यकी तेज धूपमें निरन्तर तीन दिन-तक सुखावे। अथवा त्रिफला या आगे कहे " लोहमारक गणकी" औषधियोंका पृथक् पृथक् सात सात वार सातवां सातवां भाग क्वाथ या स्वरस डालकर सुखाता रहे और त्रिफलेके जलसे धोता रहे, इस-प्रकार तेज धूपमें सुखानेकों 'भानुपाक' कहते हैं ॥ ११-१३ ॥

स्थालीपाकविधि ।

इत्थमादित्यपाकान्ते स्थाल्यां पाकमुपाचरेत् ।
स्थालीपाके फलं ग्राह्यमयसस्त्रिगुणीकृतम् ॥ १४ ॥
तस्य षोडशिकं तोयमष्टभागावशेषितम् ।
मृदुमध्यकठोराणामन्येषामयसा समम् ॥ १५ ॥

क्वथनीयं समादाय चतुरष्टौ च षोडशम् ।
गुणानां स्थाप्यते तोयं शेषयेदयसा समम् ॥ १६ ॥
स्वरसस्यापि लोहेन स्थालीपाके समानता ।
स्थाल्यां क्वाथादिकं दत्त्वा यथाविधि विनिर्मितम् ।
पाकेन क्षीयते यस्मात्स्थालीपाक इति स्मृतः॥१७॥

इस प्रकार भानुपाक करनेके अनन्तर स्थालीपाक करना चाहिये, स्थालीपाकमें त्रिफला लोहेसे तीन गुणा लेकर सोलह गुने पानीमें पकावे आठवां भाग बाकी रहे तो उतारकर छान ले, यह क्वाथ स्थालीपाकमें प्रयुक्त करे, यह त्रिफलेके क्वाथका परिमाण है । त्रिफलेके सिवाय और सब प्रकारके द्रव्य लोहेके बराबरही लेने चाहिये परन्तु त्रिफला तीनगुणा ही लेकर क्वाथ करे । (यह स्थालीपाकके क्वाथका परिमाण है) और जो मृदुद्रव्यका क्वाथ डालना हो तो लोहके बराबर (भृंगराज आदि) मृदुद्रव्य लेकर चारगुने जलमें पकावे । यदि पलाश आदि द्रव्य हो तो आठगुने जलमें पकावे । हरड आदि कठोर पदार्थको सोलह गुने जलमें पकावे । जब उसी द्रव्यके बराबर जल रहे तो उतार कर छान ले । यह क्वाथ ऊपर कहे लोहचूर्णमें डालकर किसी पात्रमें चूल्हेपर चढ़ा नीचे अग्नि जलावे और जिस द्रव्यका स्वरस इसमें डालना हो वह भी लोहेके बराबर डालना चाहिये । इस प्रकार स्थाली (पात्र) में क्वाथ या स्वरस डालकर अग्निद्वारा पकाकर रस सुखानेको स्थालीपाक कहते हैं, क्योंकि स्थालीद्वारा ही पकाया जाता है इसलिये इसका नाम स्थालीपाक' है ॥ १४--१७ ॥

स्थालीपाकमें डालनेके द्रव्य ।

हस्तिकर्णपलाशस्य मूलं च शतमूलिका ।
भृङ्गराजाख्यराजानामेषां निजरसैः सह ॥ १८ ॥
मिलित्वा वा विधातव्यं स्थालीपाके फलादनु ।
यथा दोषौषधेनापि स्थालीपाको विधीयते ॥ १९॥

स्थालीपाकमें पहिले त्रिफलेका क्वाथ डालकर पकावे उस क्वाथके सूखनेपर हस्तिकर्ण, पलाशकी जड़का रस, जिमीकन्दका रस, शतावरका रस, भांगरेका रस और जामुनके फलोंका रस, अमलतासका रस क्रमपूर्वक डालकर सुखावे। अथवा जिस दोषकी शांतिके लिये लोहभस्म सेवन करना हो उस दोषको नाश करनेवाले द्रव्यके स्वरसमेंभी स्थालीपाक करना हितकारक है ॥ १८ ॥ १९ ॥

पुटपाकविधि।

स्थालीपाके सुसंपक्कं प्रक्षाल्य स्वच्छवारिणा।
शुष्कं संचूर्ण्य यत्नेन पुटपाके प्रयोजयेत् ॥
पुटाद्दोषविनाशः स्यात्पुटादेव गुणोदयः ॥ ३२० ॥
म्रियते च पुटाल्लोहः पुटं तस्मात् समाचरेत्।
यथा यथा प्रदीयन्ते पुटाः सुबहुशो यदि ॥ २१ ॥
तथा तथा प्रकुर्वन्ति गुणानेव सहस्रशः।
पुटपाकेन पक्कन्तु शस्यते रसकर्मसु ॥ २२ ॥

स्थालीपाकमें पके हुए लोहको स्वच्छ जलसे धोकर ऊपर नितरे हुए जलको फेंक दे और लोहको सुखाकर बारीक चूर्ण करे। (फिर इस चूर्णमें आगे लिखे मारकद्रव्योंका रस डालकर रगड़े सूखनेपर संपुटमें रख पुटमें फूंक दे) इस प्रकार पुट देनेसे लोहके सब दोष दूर होजाते हैं और बहुतसे गुण इससे प्रगट होजाते हैं एवं पुट देनेसेही लोहकी उत्तम भस्म होती है। जैसे२ लोहको बहुतसी पुटें दी जावें वैसे २ ही लोह सहस्रोंगुणोंके करनेवाला होता जाता है। पुटपाकसे भस्म हुआ लोहाही रसकर्म और रसायनकर्ममें प्रशंसनीय होता है ॥ ३२०-२२ ॥

पुटोंकी संख्या।

दशादिशतपर्यन्तो गदे पुटविधिर्मतः।

शतादिस्तु सहस्रान्तः पुटो देयो रसायने ॥
वाजीकर्मणि विज्ञेयो दशादिशतपंचकः ॥ २३ ॥

रोगनाशके लिये लोहभस्म बनाना हो तो दशसे सौ तक पुटें देनी चाहिये। दश पुटसे कम अग्निसे बनाया लोह उत्तम गुणकारी नहीं होता । रसायन कर्ममें सौ पुटसे सहस्र पुटतक दिया हुआ लोहभस्म अच्छा होता है। वाजीकर्ममें (स्त्रीगमनकी शक्ति बढ़ानेको) दशसे पांचसौतक पुट दिया हुआ गुणकारी होता है ॥ २३ ॥

सामान्य पुटोंका नियम।

तावदेव पुटेल्लोहं यावच्चूर्णीकृतं जले ।
निस्तरंगे लघुत्वेन समुत्तरति हंसवत् ॥ २४ ॥

लोहको तबतक पुटें देकर चूर्ण करता जाय जबतक वह भस्म बनकर स्वच्छ टिके हुए जलपर हंसके समान तैरने न लगे, जब जलपर तैरते हुए लोहकी भस्ममेंसे जलमें कोई सूक्ष्म कण भी डूबता हुआ दिखाई न दे तो लोहको भस्म हुआ जानना ॥ २४ ॥

पुटपाकमें औषधियोंका प्रयोग।

पुटपाकौषधस्यापि क्काथो वा स्वरसोऽपिवा ।
वक्ष्यमाणप्रमाणेन कर्त्तव्यो भिषजां वरैः ॥२५॥

पुटपाकमें आगें कहे हुए द्रव्योंमेंसे जिसका स्वरस या क्काथ डालना हो वह आगे कहे विधानसे डालकर श्रेष्ठ वैद्य विधिवत् पुटें देवे ॥ २५॥

रसाभावे तु सर्वेषां क्काथो ग्राह्यो मनीषिभिः ।
अभावे स्वरसस्यापि क्काथ एव फलत्रिकात् ॥२६॥

जिस द्रव्यका स्वरस न मिल सके उसका क्वाथ बनाकर डाले, यदि त्रिफलेका स्वरस न मिले तो वैद्यको उचित है कि त्रिफलेका भी क्काथ ही डाले ॥ २६ ॥

त्रिफलादिगण।

त्रिफलात्रिवृतादन्तीकटुकीतालमूलिकाः।
वृद्धदारकवृश्चीरवृषपत्रकचित्रकाः ॥ २७ ॥
शृंगवेरविडङ्गौ च भृंगभल्लातकौषधम्।
दाडिमस्य च पत्राणि शतपत्री पुनर्नवा ॥ २८ ॥
कुठेरकामकौ कन्दः तन्त्रीभेकस्य पर्णिका।
हस्तिकर्णः पलाशश्च कुलिशः केशराजकः ॥ २९ ॥
माणः खण्डितकर्णश्च गोजिह्वालोहमारकः।
गिरिशान्तनकः प्रोक्तस्त्रिफलादिरयं गणः ॥ ३० ॥
सामान्यपुटपाकार्थमेतानिच्छन्ति सूरयः ॥ ३१ ॥

त्रिफला, निशोथ, दंती, कुटकी, तालमूली (मुसली), विधायरा, श्वेतपुनर्नवा, अडूसा, पत्रज, चित्रक, अदरख, वायविडंग, भांगरा, भिलावे, सोंठ, दाडिमके पत्र, शतावरी, लालपुनर्नवा, कुठेर (तुलसी), सुपारीकी जड, जिमीकंद, तंत्री (गिलोय), मण्डूकपर्णी, हस्तिकर्ण-पालाश, (बड़ेपत्तेका ढाक), हडसंहारी, भांगरा, मानकंद, खंडितकर्ण, (सकरकंदके समान कंद), गोजियाघास और अपराजिता यह लोह-मारकगण हैं, इसीको त्रिफलादिगण भी कहते हैं। सामान्यतासे सर्व-रोग नाशार्थ लोहपुटपाक करनेके लिये इस मारणगणको बुद्धिमान् वैद्योंने श्रेष्ठ माना है ॥ २७-३१ ॥

वातनाशक एरंडादिगण।

विशेषपुटपाकाय गणानन्याञ्छृणूदितान्।
एरण्डशारिवाद्राक्षाशिरीषाश्च प्रसारणी ॥ ३२ ॥

---

१ कोई ' वृषपत्रक ' शब्दको इकट्ठा लेकर छागलांत्री नामक वनौषधी अर्थ करते हैं। यदि वृषपत्रकका छागलांत्री अर्थ करे तो लोहमारकका शांतिशाक अर्थ कर लेना चाहिये।

माषमुद्गाख्यपर्णिन्यौ विदारीकन्दकेतकी ।
एरण्डादिगणो ह्येष सर्ववातविकारनुत् ॥ ३३ ॥

अब वातादि दोष विशेषपर पुटपाकके लिये कहे हुए इन गणोंको श्रवण करो । एरण्डकी जड, शारिवा, द्राक्षा, शिरीष, प्रसारणी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, विदारीकंद और केतकी यह एरण्डादि गण संपूर्ण वातविकारोंको नष्ट करता है । (यदि वातविकार शांतिके लिये लोहभस्म करना हो तो इस एरण्डादि गणसे पुट देना चाहिये) ॥ ३२–३३ ॥

किरातादि गण ।

किरातममृतानिम्बकुस्तुम्बुरुशतावरी ।
पटोलं चन्दनं पद्मं शाल्मल्यौदुम्बुरी जटा ।
पैत्तिकामयहन्ताऽयं किरातादिगणो मतः ॥ ३४ ॥

चिरायता, गिलोय, नीम, धानियाँ, शतावर, पटोल, चंदन, पद्म, सेमलकी जड और गूलरंकी जड यह किरातादि गण पित्तविकारोंको नष्ट करनेमें श्रेष्ठ है ।(इसलिये पित्तरोग दूर करनेको इसकी पुटें देना चाहिये) ॥ ३४ ॥

शृंगवेरादि गण ।

शृङ्गवेरस्य मूलानि निर्गुण्डीकौटजं फलम् ।
करञ्जद्वितयं मूर्वा शोभाञ्जनशिरीषकौ ॥ ३५ ॥
वरुणश्चार्कपर्णञ्च पटोलं कण्टकारिका ।
शृङ्गवेरादिको ह्येष गणः श्लेष्मगदापहः ॥ ३६ ॥

अदरख, संभालू, इंद्रजौ, करंज,पूतिकरंज, मूर्वा, सुहांजना, शिरीष, वरुणवृक्ष, आकके पत्र, पटोलपत्र और कटेली यह शृंगवेरादि गण कफके विकारोंको दूर करता है ।(कफके रोग दूर करनेकी लिये लोहमें इसकी पुटें ऐनी चाहिये) ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

गोक्षुरादि गण ।

गोक्षुरक्षुरकौ व्याघ्री सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा ।
गोक्षुरादिरिति प्रोक्तो वातश्लेष्महरो गणः ॥ ३७ ॥

गोखरू, तालमखाना, कटेली, माषपर्णी, पृष्ठपर्णी और शालपर्णी यह गोक्षुरादि गण वात और कफको हरनेवाला है ॥ ३७ ॥

पटोलादि गण ।

पटोलपत्रकोशीरकाशमर्दापराजिताः ।
लोध्रेन्दीवरकह्लारवाराही कान्तया सह ॥
पटोलादिरिति ज्ञेयः पित्तश्लेष्मगदापहः ॥ ३८ ॥

पटोलपत्र, खस, कसौंदी, अपराजिता, लोध्र, नीलोफर, कमल, वाराही (गेंठी) और नागरमोथे यह पटोलादि गण पित्त और कफको नाश करता है ॥ ३८ ॥

किंशुकादि गण ।

किंशुकः काश्मरी विश्वमग्निमन्थस्त्रिकण्टकः ॥
श्योनाकःशालपर्णी च सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा॥३९॥
पाटला कण्टकारी च बृहती बिल्वमेव च ।
किंशुकादिगणो ह्येष दोषत्रयहरो मतः ॥३४०॥

टेसू (ढाकके फूल), काश्मरी (कुम्भेर) सोंठ, अग्निमंथ, गोखरू, सोनापाठा, शालपर्णी, माषपर्णी, पृष्ठपर्णी, काकोली,पाटला,कटेली,बडी कटेली और बेल यह किंशुकादि गण त्रिदोषनाशक कहा है॥३९॥३४०॥

शतावरी आदि गण ।

शतावरी बला धात्री गुडूची कृष्णदारकम् ।
वानरी भृङ्गराजाख्यविदारीगोक्षुरक्षुरैः ॥
वाजिगन्धाकणायुक्तैर्वाजीकर्मसु शस्यते ॥ ४१ ॥

शतावरी, बला, आमले, गिलोय, विधायरा, कौंचके बीज, भांगरा, विदारीकंद, गोखरू,तालमखाना,असगंध और पीपल,यह शतावर्य्यादि

गण वाजीकरणमें श्रेष्ठ है । (यदि नपुंसकता दूर करने या कामशक्ति बढ़ानेको लोह भस्म करना हो तो इस गणसे पुटें दे) ॥ ४१ ॥

विदारीकंदादि गण ।

विदारीकन्दपिण्डाह्वभृङ्गराजशतावरी ।
क्षीरकञ्चुकभल्लातामृतकाचित्रकैस्तथा ॥ ४२ ॥
करिकर्णपलाशैश्च मूसलीमधुकैरपि ।
मुण्डिरीकेशराजैश्च पुटो देयो रसायने ॥ ४३ ॥

विदारीकंद, पिण्डाह्व (शिलारस), भांगरा, शतावरी, क्षीरकञ्चुकी, भिलावे, गिलोय, चित्रक, बड़ेपत्रका ढाक, मुसली, मुलैठी, गोरखमुण्डी और केशराज इसको विदारीकंदादि गण कहते हैं । रसायनार्थ इन द्रव्योंसे पुट देना चाहिये ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

सामान्ये च विशेषे च पुटे यद्यत्प्रकीर्तितम् ।
मिलितैरेकशो वा तैर्यथेष्टं पुटयेत्ततः ।
पुटपाके फलादीनामयसा ग्रहणं समम् ॥ ४४ ॥

ऊपर कहे सामान्य (त्रिफलादि) गणकी या विशेष एरण्डादि गणकी जिस जिसकी पुट देनी हो उस गणकी सब औषधियोंको इकट्ठाकर वा अलग अलग लेकर जैसा उचित हो वैसे द्रव्योंका स्वरस या क्वाथ लोहचूर्णके बराबर डालकर खरल कर सुखा ले, फिर संपुटमें रख कपडमिट्टीसे संधान कर पुटमें फूंक दे, पुटपाकमें त्रिफलादि जो द्रव्य मिलाने हों लोहचूर्णके समान मिलाने चाहिये ॥ ४४ ॥

पुटपाकविधान ।

हस्तमात्रमिते गर्ते करीषेणार्द्धपूरिते ।
अथवा तुषकाष्ठाभ्यां पूरितेऽर्द्धे निधापयेत् ॥ ४५ ॥
लोहमग्निं ततो दत्त्वा तथैवोर्द्ध्वं प्रपूरयेत् ।

दिवा वा यदि वा रात्रौ विधिनानेन पाचकः ।
चतुर्भिः प्रहरैरेवं पुटपाकेन मारयेत् ॥ ४६ ॥

एक हाथका गहरा, चौड़ा, गोल गढा खोदे; उसमें आधे भागतक एरने उपले अथवा तुष और काष्ठ भर दे फिर लोहेके चूर्णका संपुट रख अग्नि गेरे और ऊपरले आधे भागको भी पूर्ववत् उपलोंसे या काष्ठादिसे भर दे । इसप्रकार रात्रिको अथवा दिनमें पुट देवे, चार प्रहरतक इसी तरह रहने दे फिर स्वांग शीतल होनेपर निकाल ले । (संपुट खोलकर बीचमेंसे लोह निकाल जिस द्रव्यकी पुट देनी हो उसके रसमें रगड़कर सुखा ले फिर इसी प्रकार पुट दे) ॥४५॥४६॥

पुटमें दोष ।

पुटपाके क्षणादूर्ध्वं स्थितो भवति भस्मसात् ।
अधस्तादपकृष्टस्तु मन्दो भवति वीर्यतः ॥ ४७ ॥
कुण्डस्थो भस्मनाच्छन्न आकृष्टव्यः सुशीतलः ।
समाकृष्टस्य तप्तस्य गुणहानिः प्रजायते ॥ ४८ ॥

यदि पुटको पहले ही भरकर ऊपर संपुट रक्खे तो संपुटमें जो द्रव्य हो उसकी शीघ्र ही निस्सारभस्म होजाती है (या द्रव्य उड जाता है) और पुटमें नीचे ही संपुटको रख देनेसे मन्द वीर्य हो जाता है इसलिये संपुटको पुटके मध्यमें रखना चाहिये । जब पुट स्वांग शीतल होजाये तो निकाल ले गरमको न निकाले, गरम निकालनेसे गुण नष्ट होजाता है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अन्य प्रकारसे लोह मारण ।

शुद्धस्य सूतराजस्य भागो भागद्वयं बलेः ।
द्वयोः समं लोहचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ ४९ ॥
यामद्वयं ततो गोलं स्थापयेत्ताम्रभाजने ।
आच्छाद्यैरण्डजैः पत्रैरुष्णो यामद्वयाद्भवेत्॥ ५० ॥

त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं तत्ततो मर्दयेद्दृढम् ।
रजस्तद्वस्त्रगलितं नीरे तरति हंसवत् ॥
तीक्ष्णं मुण्डं कान्तंलोहं निरुत्थं जायते मृतम्॥५१॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध आमलासार गंधक दो भाग इन दोनोंके बराबर उपरोक्त विधिसे शुद्ध किया लोह चूर्ण ले, पहिले पारे गंधकको रगड़कर कजली करे फिर इसमें लोहचूर्ण मिला घीकुमारके रसमें दो पहर रगड़कर गोला बनावे इस गोलेको तांबेके पात्रमें रख दो पहरकी अग्नि देवे (इस पात्रको चूल्हेपर चढ़ा कर नीचे दो पहर तीक्ष्ण अग्नि जलावे । कोई इसको पुटमें फूकना मानते हैं परन्तु मूलपाठसे पुटमें फूकनेका अर्थ नहीं निकलता, कोई कोई पुरुष तीक्ष्ण धूपमें दो पहर रखना ऐसा अर्थ करते हैं. हमारी रायमें दो पहरकी अग्नि देना ठीक है अथवा दो पहर घीकुमारमें रगड़कर पुट देना भी ठीक है) फिर शीतल होनेपर पात्रमेंसे लोहचूर्णके गोलेको निकाल एरंडके पत्रोंसे लपेट धान्योंकी राशिमें तीन दिन पर्यन्त दबाये रक्खे चौथे दिन निकालकर खरलमें डाल बारीक चूर्ण करे और वस्त्रद्वारा छानकर पानीपर तैरावे (जबतक पानीपर तैरनेवाली उत्तम भस्म न बने तब-तक इसी विधानसे पारे गंधकके संयोगसे गोला बनाकर दो प्रहरकी अग्नि या पुट दे धान्यके ढेरमें दबाकर चूर्ण करता रहे, जब हंसके समान तैरनेवाली होजाय तो शुद्ध भस्म जाने) इस प्रकार तीक्ष्णलोह वा मुण्डलोह, या कांतलोह इनमेंसे कोई भी लोह हो उसकी उत्तम निरुत्थ भस्म होजाती है ॥ ४९-५१ ॥

द्वादशांशेन दरदं तीक्ष्णचूर्णस्य मेलयेत् ।
कन्यानीरेण संमर्द्य यामयुग्मञ्च संपुटेत् ।
एवं सप्तपुटे मृत्युं लोहचूर्णमवाप्नुयात् ॥ ५२ ॥

अन्य प्रकार-शुद्ध लोहचूर्णमें बारहवां भाग सिंगरफ मिलाकर दो पहर तक घीकुमारके रसमें खूब रगड़े फिर संपुटमें रख पुटमें फूक दे इसप्रकार सात पुटें देनेसे लोहेकी उत्तम भस्म होजाती है ॥ ५२ ॥

निरुत्थ भस्मकी परीक्षा।

सर्वमेतन्मृतं लोहं पक्तव्यं मित्रपञ्चकैः।
यद्येवं स्यान्निरुत्थश्च सेव्यं रक्तिचतुष्टयम् ॥ ९३ ॥

सब प्रकारके मृत लोहोंको मित्रपंचकमें मिलाकर कोयलोंकी अग्निमें तपावे यदि इस प्रकार तीक्ष्णाग्नि देनेसे भस्म जैसी डाली थी वैसाही रहे तो निरुत्थ भस्म जाने, निरुत्थ भस्म हो तो इसको चार रत्ती मात्रा तक सेवन कर सकते हैं (यदि वही धातु जी जावे तो उसे न खावे फिर पूर्ववत् पुटें देवे जब निरुत्थ हो जाये तो सेवन करे) ९३॥

मित्रपंचक।

मधु सर्पिस्तथा गुञ्जा टंकणं गुग्गुलुस्तथा।
मित्रपञ्चकमेतत्तु गदितं धातुमेलने ॥ ९४ ॥

शहद, घी, रत्तकें, सुहागा और गुग्गुल इन पांच द्रव्योंको मित्रपञ्चक कहते हैं, इस मित्रपञ्चकमें मिलाकर धमानेसे जो धातु फूंकनेमें कच्ची रहगई हो वह जी उठती है अर्थात् फिर वैसी ही बन जाती है ॥ ९४ ॥

अन्य प्रकारसे परीक्षा।

गोघृतं गन्धकं लोहं तप्तखल्ले विमर्दयेत्।
दिनैकं कन्यकाद्रावे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥
इत्येवं सर्वलोहानां कर्त्तव्यं स्यान्निरुत्थितम् ॥९५॥

गोघृत, गंधक और लोहभस्म इनको घीकुमारके रससे तप्त खल्वमें एक दिन मर्दन कर संपुटमें रख गजपुटमें फूंक दे। शीतल होनेपर निकाले यदि निरुत्थ भस्म हो तो सेवन करे। इस प्रकार सब प्रकारके लोहोंकी परीक्षा करनी चाहिये ॥ ९५ ॥

घृतमधुगुञ्जाटंकणैःसमं लोहभस्म मर्दयेच्च विचक्षणः।
धमेद्वह्नौ पुनर्लोहं तदा योज्यं रसायने ॥ ९६ ॥

अन्य मत–घी, शहद, रत्तकें और सुहागा इनकी बराबर लोहभस्म डालकर मर्दन करे फिर मूषामें या संपुटमें रख कोयलोंकी अग्निमें धौंकनीसे धमावे यदि भस्म निरुत्थ रहे तो रसायनकर्ममें आयुवृद्धिके लिये प्रयोग करे ॥ ५६ ॥

लोहभस्मके गुण ।

कृष्णायःशोथशूलार्शःक्रिमिपाण्डुत्वशोषनुत् ।
वयस्यं गुरु चक्षुष्यं सर्वमेदोऽनिलापहम् ॥५७॥
आयुःप्रदाता बलवीर्यकर्त्ता रोगापहर्त्ता मदनस्य
कर्त्ता । अयःसमानं नहि किञ्चिदस्ति रसायनं
श्रेष्ठतमं नराणाम् ॥ ५८ ॥

लोहभस्म–सूजन, शूल, अर्श, क्रिमिरोग, पाण्डुरोग और शोष रोगको नष्ट करनेवाली है तथा अवस्थास्थापक, भारी, नेत्रोंको हितकारी, सब प्रकारके मेदरोग और वातरोगोंको दूर करती है । एवं आयुको देनेवाली, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, रोगनाशक और कामशक्तिवर्द्धक है, मनुष्योंके लिये लोहभस्मके समान और कोई भी रसायन उत्तम नहीं है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

लोहसेवनमें कुपथ्य ।

कूष्माण्डं तिलतैलञ्च रसोनं राजिकं तथा ।
मद्यमम्लरसञ्चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥ ५९ ॥

पेठा, तिलतेल, लहसुन, राई, मद्य और खट्टे रसवाले पदार्थ इन सबको लोहभस्मको खानेवाला मनुष्य त्याग देवे ॥ ५९ ॥

जातिभेदसे लोहके गुणोंमें न्यूनाधिकता ।

सामान्याद्द्विगुणं क्रौञ्चं कालिङ्गोऽष्टगुणस्ततः ।
कलेः शतगुणं भद्रं भद्राद्वज्रं सहस्रधा ॥ ३६० ॥

वज्राच्छतगुणं पाण्डि निरङ्गं दशभिर्गुणैः।
ततः कोटिसहस्रैर्वा कान्तलोहं महागुणम् ॥ ६१ ॥

सामान्य लोहसे क्रौञ्चलोह गुणमें दोगुणा अधिक गुणकारी है। क्रौंचसे कालिंगलोह आठगुणा गुण करता है। कालिंगेसे भद्रलोह सौगुणा गुणकारी है। भद्रसे वज्रलोह सहस्रगुणा, वज्रसे पाण्डच लोह सौगुणा गुणमें अधिक है. एवं पाण्डच लोहसे दशगुणा निरंग और निरंगसे भी सहस्रों करोडों गुणा अधिक गुणकारी कांतलोह होता है इसलिये कांतलोह सब लोहोंमें महागुणकारी होता है ॥३६०॥६१॥

इति लोह मारण।

मण्डूर शोधन।

ये गुणा मारिते मुण्डे ते गुणा मुण्डकिट्टके।
तस्मात्सर्वत्र मण्डूरं रोगशान्त्यै प्रयोजयेत् ॥ ६२ ॥

जो गुण मारे हुए लोहमें होते हैं वही गुण लोहकिट्टमें भी होते हैं। इसलिये लोहभस्मके अभावमें लोहकिट्ट (मण्डूरकी) भस्मका संपूर्ण रोगोंकी शांतिके लिये प्रयोग करना चाहिये ॥ ६२ ॥

मण्डूरके गुण।

शतोर्ध्वमुत्तमं किट्टं मध्यश्चाशीतिवार्षिकम्।
अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम् ॥ ६३ ॥

यदि १०० सौ वर्षका पुराना मण्डूर हो तो गुणमें उत्तम होता है। ८० अस्सी वर्षका पुराना मण्डूर मध्यम होता है और साठ ६० वर्षका पुराना अधम होता है, यदि साठ वर्षसे कम पुराना मण्डूर हो तो वह विषके समान जानना, इसलिये अत्यंत पुराना मण्डूर लेकर मारना चाहिये ॥ ६३ ॥

मण्डूर मारण ।

दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु गोमूत्रनिर्वापितमष्ट-वारान् । विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥ ६४ ॥

लोहकिट्टको बहेडेकी लकड़ियोंकी अग्निमें तपा २ कर गोमूत्रमें बुझावे, इस प्रकार आठ बार बुझानेसे मण्डूर मर जाता है, इसको पीसकर शहदके साथ चाटनेसे कुम्भकामला और पाण्डुरोग दूर होते हैं ॥ ६४ ॥

गुणाधिक्य ।

किट्टाद्दशगुणं मुण्डं मुण्डात्तीक्ष्णं शताधिकम् ।
तीक्ष्णाल्लक्षगुणं कान्तं भक्षणात्कुरुते गुणम् ॥ ६५ ॥

मण्डूरसे मुण्डूरलोहभस्म दशगुणा गुण करती है । मुण्डलोहसे तीक्ष्ण लोहभस्म सौगुणा अधिक गुण करती है । एवं कांतभस्मके खानेसे तीक्ष्ण लोहभस्मसे लक्षगुणा अधिक गुण होता है ॥ ६५ ॥

इति किट्ट शोधनविधि ।

सुवर्णादि धातुओंके साधारण मारक द्रव्य ।

नागैः सुवर्णं रजतञ्च ताप्यैर्गन्धेन ताम्रं शिलया च नागम् । तालेन वङ्गं त्रिविधञ्च लोहं नारीपयो हन्ति च हिङ्गुलेन ॥ ६६ ॥

नाग (सिक्का) के संयोगसे पुटें देनेसे सुवर्णकी भस्म होजाती है । सोनामक्खीसे चांदीकी भस्म होजाती है । गंधकके संग पुटें देनेसे ताम्बेकी भस्म होजाती है । मनसिलके साथ पुटें देनेसे सिक्केकी भस्म होजाती है, एवं हरितालसे बंगकी भस्म होजाती है और सिंगरफ तथा स्त्रीका दूध मिलाकर पुटें देनेसे सब प्रकारके लोहोंकी भस्म होजाती है । (इन द्रव्योंमें रगड रगड कर पुटोंमें फूंकनेसे भस्म होजाती है) ॥ ६६ ॥

इति स्वर्णादि धातु शोधन मारण ।

मणियुक्तादिरत्नशोधन मारण ।

स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे जयन्त्याः स्वरसेन च ।
मणिमुक्ताप्रवालानि यामैकेन च शोधयेत् ॥ ६७ ॥

मणियाँ, मोती और मूंगे इनमेंसे जिसको शुद्ध करना हो उसे वस्त्रमें पोटली बांधकर जयंतीके स्वरसमें एक प्रहर दोलायंत्रकी विधिसे पकावे तो मणि, मुक्ता और प्रवाल शुद्ध होजाते हैं ॥ ६७ ॥

मोतियोंका मारण ।

मुक्ताफलानि शुद्धानि खल्वे पिष्ट्वा पुटेल्लघु ।
एवं भस्मत्वमाप्नोति वज्रकं काञ्जियोगतः ॥ ६८ ॥

शुद्ध मोती लेकर खरलमें पीसकर लघुपुटमें फूंक दे तो मोतियोंकी भस्म होजाती है । यदि वज्रकी भस्म करनी हो तो कांजीके संयोगसे करे अर्थात् वज्रको शुद्ध करके तपा तपा कर कांजीमें बुझावे, फिर कांजीमें पीसकर पुट देनेसे वज्र (हीरा) की भस्म होजाती है ॥६८॥

अन्य प्रकारसे रत्नमारण ।

कुमार्या तण्डुलीयेन तुल्येन च निषेचयेत् ।
प्रत्येकं सप्तवारांश्च तप्ततप्तानि कृत्स्नशः ॥ ६९ ॥
मौक्तिकानि प्रवालानि तथा रत्नान्यशेषतः ।
क्षणाद्विविधवर्णानि म्रियन्ते नात्र संशयः ॥३७०॥

मोती, मूंगा या अन्य सब प्रकारके रत्न तीक्ष्णाग्निमें तपा २ कर समभाग घीकुमारके रस तथा चौलाईके रसमें सात २ वार बुझानेसे अवश्य मर जाते हैं । (जिस रत्नकी भस्म करनी हो उसको अग्निमें लाल कर बराबरके घीकुमारके रससे बुझावे, ऐसे सात वार घीकुमारके रससे और सात वार चौलाईके रससे बुझावे तो मोती आदि सब रत्नोंकी भस्म होजाती है) ॥ ६९ ॥ ३७० ॥

प्रवालमारण।

स्त्रीदुग्धेन प्रवालञ्च भावयित्वा तु हण्डिके।
मध्येऽपि तक्रसहितं स्थापयेत्तां निरोधयेत्।
चूल्ह्यामग्निप्रतापेन म्रियते प्रहरद्वये॥ ७१॥

प्रवाल (मूंगे) को स्त्रीके दूधमें भिगोकर सुखा ले फिर एक हांडीमें नीचे ऊपर तक (मठा) डालकर बीचमें मूंगा रख हांडीका मुख बंद करके चूल्हेपर चढ़ा नीचे दो पहरकी तीक्ष्णाग्नि देवे तो मूंगोंकी भस्म होजाती है॥ ७१॥

सब रत्न और मणियोंका शोधन।

कुलत्थस्य पलशतं वारिद्रोणेन पाचयेत्।
तस्मिन्पादावशेषे च क्वाथेऽष्टौ मणयः शिलाः॥७२॥
आतपे त्रिदिनं शोध्याः क्वाथसिक्ताः पुनः पुनः।
शुद्ध्यन्ते सर्वरत्नानि मणयश्च न संशयः॥ ७३॥

सौ पल कुलथीको एक द्रोण पानीमें पकावे चौथा भाग शेष रहनेपर उतारकर छान ले, इस क्वाथसे मणि मुक्ता आदिको बार २ सेचन कर तीन दिन धूपमें रक्खे तो श्वेत, रक्त, नीलादि मणियाँ मोती आदि रत्न और मनशिल यह सब शुद्ध हो जाते हैं इसमें संशय नहीं। तात्पर्य यह हुआ कि, जिस रत्नको शोधन करना हो उसको पात्रमें डाल धूपमें रक्खे और बार २ कुलथीके क्वाथसे सींचता रहे, इस प्रकार तीन दिन धूपमें रखनेसे रत्न अवश्य शुद्ध होजायगा॥७२-७३॥

इति मुक्तादि शोधन मारण।

विषका शोधन मारण।

कृत्वा चणकसंस्थानं गोमूत्रैर्भावयेत्त्र्यहम्।
समटङ्कणसंपिष्टं मृतमित्युच्यते विषम्॥ ७४॥

सिंगियाविष (तेलिया मिट्टी या बच्छनाग) लेकर उसके चणेके समान छोटे २ टुकडे करे, इनको तीन दिन गोमूत्रमें भिगोकर रक्खे चाथे दिन निकाल कर समभाग सुहागा डालकर पीस ले, जब सूख जाये तो सिंगिये विषको मरा हुआ (या शुद्ध) जानना, यह औषधियोंमें मिलाने योग्य शुद्ध विष होजाता है ॥ ७४ ॥

अन्यप्रकारसे विषशोधन।

अथवा त्रैफले क्वाथे विषं शुद्ध्यति पाचितम्।
दोलायां त्रिफलाक्वाथे छागीक्षीरे च पाचितम्॥७५॥

त्रिफलेके क्वाथमें दोलायन्त्र द्वारा चार पहर पकानेसे भी विष शुद्ध होजाता है। अथवा बकरीके दूधमें दोलायन्त्र द्वारा चार पहर पकावे तो विष शुद्ध होजाता है ॥ ७५ ॥

गोमूत्रपूर्णपात्रे च दोलायन्त्रे विषं पचेत्।
दशतोलकमानेन चादौ वैद्यो दिवानिशम् ॥ ७६ ॥

अथवा दश तोला विषके छोटे २ ठुकडे कर पोटलीमें बांध गोमूत्रसे भरे पात्रमें एक दिन रात दोलायन्त्रकी विधिसे पकावे, फिर निकाल गर्म जलसे धोकर सुखा ले तो विष शुद्ध होजाता है ॥ ७६ ॥

विषभागाँश्चणकवत्स्थूलान्कृत्वा तु भाजने।
तत्र गोमूत्रकं दत्त्वा प्रत्यहं नित्यनूतनम् ॥ ७७ ॥
शोषयेत्त्रिदिनादूर्ध्वं धृत्वा तीव्रातपे ततः।
प्रयोगेषु प्रयुञ्जीत भागमानेन तद्विधम् ॥ ७८ ॥

अथवा विषको चनेके समान छोटा छोटा करके मट्टीके पात्रमें रक्खे इसमें गोमूत्र डाल दे और एक दिन रक्खा रहने दे, दूसरे दिन पहला गोमूत्र निकालकर फेंक दे और नवीन (ताजा) गोमूत्र उसमें

डाल दे, इसप्रकार तीन दिन करे फिर निकालकर तीव्र धूपमें सुखा ले। इसप्रकार शोधन किया विष जिस योगमें जितना डालना लिखा हो उतना डाले ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ इति विष शोधन ॥

सात उपविष ।

अर्कसेहुण्डधत्तूरलाङ्गलीकरवीरकाः ।
गुञ्जाहिफेनावित्येताः सप्तोपविषजातयः ॥ ७९ ॥

आक, थोहर, धतूरा, लांगलीकंद, कनेर, गुंजा (रत्तक) और अफीम यह सात उपविषोंकी जातियां हैं ॥ ७९ ॥

उपविष शोधन ।

धत्तूरस्य च यद्बीजमन्यच्चोपविषं च यत् ।
तच्छोध्यं दोलिकायन्त्रे क्षीरपूर्णेऽथ पात्रके ॥३८०

धतूरेके बीज या अन्य उपविष जो शोधन करना हो उसको पोटलीमें बांध दुग्धयुक्त पात्रमें लटका दोलायन्त्रविधिसे पकावे तो शुद्ध होजाते हैं ॥ ३८० ॥

जमालगोटेका शोधन ।

निस्तुषं जयपालश्च द्विधा कृत्वा विचक्षणः ।
एतद्बीजस्य मध्यन्तु पत्रवत्परिवर्जयेत् ॥ ८१ ॥
अष्टमांशेन चूर्णेन टङ्कणस्य च मेलयेत् ।
त्रिरात्रं गोमये क्षिप्त्वा पाच्यं दुग्धेन संप्लुतम् ।
एवं वै शुद्धिमायाति जैपालममृतोपमम् ॥ ८२ ॥

जमालगोटेके छिलके दूर कर उनकी गिरीकी दो दो दालसी काट-कर अन्दरसे सफेद पत्ती (जीभी) दूर कर दे, फिर इनमें आठवां भाग सुहागा मिलाकर पोटली बांध गायके गोबरमें डुबोकर रक्खे तीन दिनके बाद निकाल कर गरम पानीसे धो डाले, फिर पोटलीमें

बांध दोलायन्त्रविधिसे गोदूधमें पकावे फिर निकाल करके खरलमें बारीक रगडे (फिर इस कल्कको मट्टीके ठीकरों या शरावोंपर लेप-कर धूपमें सुखावे जिससे सब चिकनाई शराव शोषण कर ले फिर शरावोंपरसे उतार ले) यह जमालगोटे शुद्ध और अमृतके समान गुण कारी होते हैं । जिस योगमें जमालगोटे डालने हों यह डालने चाहिये ॥ ३८१ ॥ ३८२ ॥ इति जैपाल शुद्धि ॥

अन्य मतसे जैपालादि बीजोंका शोधन ।

मूलक्काथैः कुमार्याश्च जैपालबीजशोधनम् ।
इन्द्रवारुणिकाक्काथै राजवृक्षस्य बीजकम् ॥ ८३ ॥
समूलोत्तरवारुण्या धुस्तूरबीजशोधनम् ।
धात्रीफलरसेनैव पलाशबीजशोधनम् ॥ ८४ ॥

जमालगोटोंकी पत्ती निकाल पोटलीमें बांध घीकुमारकी जड़के क्वाथमें पकावे तो शुद्ध होजाते हैं । अमलतासके बीज इन्द्रायणके क्वाथमें शुद्ध होजाते हैं । ऐसे ही जडसहित इंद्रायणके काथमें धतू-रेके बीज शुद्ध होजाते हैं । आमलेके रसकी भावना देनेसे ढाकके बीज शुद्ध होजाते हैं ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

थोहरके दूधका शोधन ।

चिञ्चापत्ररसे कर्षे वस्त्रपूते पलद्वयम् ।
स्नुहीक्षीरं रौद्रयन्त्रे भावयेद्यततः सुधीः ।
द्रवे शुष्के समुत्तार्य सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ ८५ ॥

इमलीके पत्रोंका स्वरस वस्त्रसे छना हुआ एक तोला, थोहरका दूध दश तोला इन दोनोंको मिट्टीके कपालमें डाल अग्निपर चढ़ावे जब थोहरके दूधका पतलापन दूर होकर दूध सूख जावे तो उतार ले । यह दूध शुद्ध और विरेचक योगमें डालने योग्य होजाता है ॥ ८५ ॥

जलौका (जोंक) शोधनविधि ।

चिरन्तनां जलौकान्तु ताम्रपात्रेषु रक्षयेत् ।
चतुर्माषं निशाचूर्णं जलाष्टकपले क्षिपेत् ॥ ८६ ॥
तस्मिन् क्षिपेज्जलौका च सा योज्या रक्तमोक्षणे८७

पुरानी जोंकोंको लेकर एक तांबेके पात्रमें रक्खो उस पात्रमें चार मासे हलदीका चूर्ण और आठ पल जल डाल देवे इस पानीमें डाली हुई जोंकोंके मुखसे लार बहने लगती हैं । जब लारें निकल चुकें तो इन जोंकोंको साफकर रक्त निकालनेके लिये लगाना चाहिये (विशेष वर्णन सुश्रुतसंहिताके तेरहवें अध्यायमें देखो) ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

त्याज्य जलौका ।

रोमपृष्ठा च कपिला रक्तरेखा च दुर्बला ।
वर्जनीया विशेषेण भिषजा कीर्तिमिच्छता ॥ ८८ ॥

यशकी इच्छावाले वैद्यको चाहिये कि रोमोंवाली जोंकें, कपिल वर्णकी जोंकें, लाल लाल रेखावाली जोंकें और दुर्बल या रोगयुक्त, विषैली जोंकें कभी न लगावे ॥ ८८ ॥ इति जलौकाविधि ॥

विधायरेके बीजोंका शोधन ।

बीजमादौ समादाय रौद्रयन्त्रे विशोषयेत् ।
ईषत्सैन्धवयुक्तेन द्रवेण यत्नतः सुधीः ॥
अपामार्गस्य वा तोयैर्वार्द्धक्यबीजशोधनम् ॥ ८९ ॥

विधायरेके बीज लेकर उनमें सेंधानमकका थोड़ासा पानी डाल मिट्टीके कपालमें अग्निपर मंद अग्निसे पकावे, पानी सूखनेपर बीजोंको उतार ले यह शुद्ध जानने । अथवा अपामार्गके क्वाथमें पकानेसे भी विधायरेके बीज शुद्ध होजाते हैं ॥ ८९ ॥

वृद्धदारकबीजन्तु पक्कं दोलाकृतं पचेत् ।
दुग्धपूर्णेषु पत्रेषु ततः शुद्धयति निश्चितम् ॥ ९० ॥

अथवा विधायरेके बीजोंको पोटलीमें बांध दूधसे भरे मिट्टीके पात्रमें लटका दोलायन्त्रकी विधिसे पकावे तो एक प्रहरमें विधायरेके बीज शुद्ध होजाते हैं ॥ ९० ॥

अन्य बीजोंके शोधन ।

अपामार्गकषायेण निम्बुबीजं विशोधयेत् ।
शिग्रुकार्पासबीजानि अपामार्गस्य बीजकम् ॥ ९१ ॥
घर्म्मेण शोधनं तेषां न दद्यात्सैन्धवं ततः ।
तिक्ता कोषातकी दन्ती पटोली चेन्द्रवारुणी ।
कटुतुम्बी देवदाली काकतुण्डी च शोधयेत् ॥९२॥

अपामार्गके काथमें स्वेदन करनेसे नींबूके बीज शुद्ध होजाते हैं । सुहाजनेके बीज, कपासके बीज और अपामार्गके बीज इनको प्रातःकाल लेकर धूपमें सुखाना ही इनका शोधन है। इनमें नमकका पानी डालकर शोधन करनेकी आवश्यकता नहीं । कुटकी, कड़वी तोरी, दन्ती (जमालगोटेकी जड़), पटोलकी जड़, इन्द्रायण, कड़वी तुम्बी, देवदाली (बंदालडोडा) और काकतुण्डी इनको धूपमें सुखानेसे ही शुद्ध जानना अर्थात् इनको उचित ऋतुमें प्रातःकाल लाकर धूपमें सुखाकर रक्खे जिस योगमें डालना हो डालकर प्रयोग करे ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

धात्रीफलरसेनैव महाकालस्य शोधनम् ।
करञ्जयुग्मयोर्बीजं भृंगराजेन शोधयेत् ॥ ९३ ॥

महाकाल (कालादाना) आमलोंके रसकी भावना देनेसे शुद्ध होजाता है । दोनों प्रकारके करंजुएके बीजोंकी गिरीको भांगरेके रसमें भावना देनेसे करंजबीज शुद्ध होजाते हैं ॥ ९३ ॥

गुंजादिबीजशोधन ।

गुञ्जादिसर्वबीजानां नरमूत्रैः पटुं विना ।
नारिकेलाम्बुना शोध्यं बिल्वं भल्लातकोद्भवम् ॥९४॥

रत्तक आदि विषैले बीज नमकके विना ही मनुष्यके मूत्रमें भावना देनेसे शुद्ध होजाते हैं । नारिकेलके जलमें बेलके बीज और भिलावेके बीजोंको शोधन करना चाहिये ॥ ९४ ॥

गुग्गुलशोधन ।

गुडूचीत्रिफलाक्काथे क्षीरे चैव विशेषतः ।
पक्त्वा च खण्डशः शुद्धं गृह्णीयान्मृदुगुग्गुलुम् ३९९॥

इति श्रीगोपालकृष्णसूरिविरचिते रसेन्द्रसारसंग्रहे
पूर्वखण्डः समाप्तः ।

उत्तम नवीन गुग्गुलके छोटे २ टुकड़े कर गिलोयके क्काथमें, त्रिफलेके क्काथमें और गोदुग्धमें पकानेसे गुग्गुल शुद्ध होजाती है । (प्रथम गुग्गुलको टुकड़े २ कर गिलोय या त्रिफलेके क्काथमें भिगोदे, दूसरे दिन उबाल ले जब क्काथमें गूगल घुल जावे तो वस्त्रमें छान ले बाकी रहे गूगलको फिर क्काथमें पकाकर छान ले, कंकड़ तिनका आदि दूर फेंककर कड़ाहीमें क्वाथको खोयेके समान गाढ़ा कर पिण्डसा बननेपर गुग्गुलको शुद्ध जाने यह गुग्गुल सब औषधि-प्रयोगमें काम लेवे) ॥ ३९९ ॥ इति गुग्गुलु शोधन ॥

दोहा–रस धातु मणि आदिको, शोधन मारण भेद ॥
इहि विधि जानहिं जे भिषक्, हरहिं जगत्को खेद ॥
होहिं चतुर रसकर्ममें, पढ भाषा अनुवाद ॥
प्रथम खण्ड पूरित भयो, तिलकित रामप्रसाद ॥

इति श्रीपटियालाराज्यस्थवैद्यरत्न रामप्रसादराजवैद्यवैद्योपाध्यायकृत-
भाषाटीकायां पूर्वखण्डः समाप्तः ।

अथोत्तरखण्डः ।

क्षीराब्धेरुत्थितं देवं पीतवस्त्रं चतुर्भुजम् ।
वन्दे धन्वन्तरिं भक्त्या नानागदनिषूदनम् ॥ १ ॥

जो क्षीर समुद्रके मथनेके समय पीत वस्त्रोंको धारण किये हुए चतुर्भुज भगवान् प्रगट हुए और जो नाना रोगोंके नाश करनेवाले देव हैं उन धन्वन्तरि भगवान्को मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥

प्रायशो वपुषः शुद्धिं कृत्वा देयं तदौषधम् ।
अतः पूर्वं चिकित्सायां रेचकौषधमुच्यते ॥ २ ॥

प्रायः संपूर्ण रोगोंमें शरीरको शुद्ध करके तदनंतर औषधि देना चाहिये । इसलिये संपूर्ण औषधियोंसे पहले रेचनी औषधियोंको कथन करते हैं ॥ २ ॥

इच्छाभेदी रस ।

तुल्यं टङ्कणपारदं समरिचं तुल्यांशकं गन्धकं
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत् ।
गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्
यावन्नोष्णजलं पिबेदपि वरं पथ्यञ्च दध्योदनम् ३॥

शुद्ध सुहागा, शुद्ध पारा, कालीमिर्च और शुद्ध गंधक यह सब एक एक भाग लेवे । सोंठ दो भाग, शुद्ध जमालगोटा ९ भाग इन सबको खरल करके शीशीमें रक्खे इसमेंसे एक रत्ती प्रमाण प्रातःकाल खाकर ऊपरसे शीतल जल पीवे तो उत्तम रीतिसे रेचन (दस्त) होजाता है । जबतक गरम जल न पीवे तबतक रेचन होता रहता है । ठीक रेचन हो लेनेके अनंतर दहीभातका पथ्य खिलावे ॥ ३ ॥

जैपालाष्टौ द्विको गन्धस्त्रिशुण्ठी मरिचं द्विकम्।
एकः सूतः सोहागैका गुञ्जामात्रा वटी कृता ॥ ४ ॥
शूलव्याधिप्रभृतयः कुष्ठैकादशपित्तजाः।
भगन्दरादिहृद्रोगाः सर्वे नश्यन्ति भक्षणात् ॥ ५ ॥

अन्य इच्छाभेदी—जमालगोटेका चूर्ण ८ भाग, गंधक दो भाग, सोंठ तीन भाग, कालीमिर्च २ भाग, पारा १ भाग और सुहागा १ भाग इन सब पदार्थोंको एकत्र कर जलके साथ मर्दन करके एक एक रत्तीकी गोली बनालेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे अच्छे प्रकारसे विरेचन होकर शरीर शुद्ध होजाता है तथा शूलादि रोग, कुष्ठ, ग्यारह प्रकारके पित्तरोग, भगंदर और हृद्रोगादि समस्त रोग तत्काल नष्ट होजाते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

गदमुरारि इच्छाभेदी।

रसवलिगगनार्कं शुद्धतालं विषञ्च
त्रिफलत्रिकटुमेतट्टङ्कणं भृङ्गमेभिः।
सममिह जयपालोद्भूतचूर्णं विमर्द्य
द्विनिशमनिशमेतद्भृङ्गराजोत्थवारि ॥ ६ ॥
भवति गदमुरारिः स्वेच्छया भेदकोऽयं
हरति सकलरोगान्सन्निपातानशेषान्।
इह हि भवति पथ्यं मत्स्यमांसादि सर्वं
घृतविलुलितमस्मिन्भोजनं भूरि देयम् ॥ ७ ॥

पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, हरितालभस्म, विष, त्रिफला, त्रिकुटा, सुहागा और दालचीनी यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और जमालगोटेका चूर्ण सब औषधियोंकी बराबर लेवे; इन सबको एकत्र करके भांगरेके रसमें दो दिनतक निरंतर मर्दन करके

एक एक रत्तीकी गोलियां बना लेवे । इसको गदमुरारि इच्छाभेदी रस कहते हैं। इस औषधिके सेवंन करनेसे इच्छानुसार विरेचन होजाता है। तथा सन्निपातादि समस्त रोग नष्ट होजाते हैं, इसपर विरेचन होजानेके पश्चात् दहीभात पथ्य दे और रोगीको मत्स्य मांसादि सर्व पदार्थ घृतमें भूनकरके भोजनके लिये दे सकते हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥

रुक्मिश रस ।

अभयाचूर्णमादाय नूतनैर्जयपालकैः ।
पञ्चमांशेन मिलितैः स्नुहीदुग्धेन मर्दिताः ॥ ८ ॥
गुडिकास्तस्य कर्तव्या वर्तुलाश्चणकप्रभाः ।
(एकैकस्यास्य टङ्कस्य रेचनैश्च रसैस्तदा ॥ ९ ॥)

प्रथम उत्तम हरड़ोंका चूर्ण करके फिर उसमें पंचमांश नवीन जमालगोटेका चूर्ण मिलाकर थूहरके दूधमें अच्छे प्रकारसे मर्दन करके चनेकी बराबर गोली बांधे, इस रसको एक टंक तक रेचनरसोंके अनुपानसे दे सकते हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

रुक्मिशो न च दाहः स्यान्न च मूर्च्छाभ्रमः क्लमः ।
वेगतः सारयेदेषा विशेषादामनाशिनी ॥ १० ॥
निरूहेन तथा नैव तथा बिन्दुघृतेन च ।
त्रिवृता न तथा रेच्या यथा स्याद्गुडिकोत्तमा ॥ ११ ॥

इस रुक्मिश रसके सेवन करनेसे दाह, मूर्छा, भ्रम, क्लम इत्यादि कोई भी उपद्रव न होकर वेगपूर्वक दस्त होजाते हैं तथा आमदोष नष्ट होजाता है। जिस प्रकार सुखपूर्वक इस औषधिके सेवन करनेसे विरेचन होजाता है इस प्रकार निरूहण (बस्तिकर्म), बिन्दुघृत तथा निशोथके चूर्ण आदि किसीसे विरेचन नहीं होता ॥ १० ॥ ११ ॥

अतिशुद्धं भवेदेवमतिप्रबलमुत्तमम् ।
अतिरूपमतिप्रौढमत्यायुष्करमुत्तमम् ॥ १२ ॥

विष्टम्भे गुडिका देया चोदरे दारुणामये ।
अधोदेशेषु सर्वेषु गदेषु च महौषधिः ।
दीयते क्षीयते सामः कामकायविवर्द्धनः ॥ १२ ॥

इस रुक्मिश रसके सेवन करनेसे शरीर शुद्ध होजाता है तथा सुंदर और दृढ़ होजाता है । एवं अत्यन्त बलवान् होता है । यौवन स्थिर रहता है और आयुकी वृद्धि होती है । विष्टम्भाजीर्ण, कठिन उदरामय, अधोगत सर्व प्रकारके रोग और गुह्यद्वारोद्भव रोगादिकोंकी यह उत्तम औषधि है । इसके सेवन करनेसे आमदोष नष्ट होकर काम और शरीरकी शोभाकी वृद्धि होती है ॥ १२ ॥ १३ ॥

इच्छाभेदी गुटिका ।

पारदं गन्धकं कुर्यात्सौभाग्यं पिप्पलीसमम् ।
समानि जयपालानि क्रियन्ते रेचनाय च ।
शीतेन रेचयेत्सम्यगुष्णेनैव प्रशाम्यति ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सुहागा और पीपल यह सब समान भाग और सबकी बराबर शुद्ध जमालगोटे लेवे, इन सबको एकत्र खरल करके चनेकी बराबर गोलियाँ बना लेवे, एक गोली शीतल जलके साथ सेवन करे। इसपर शीतल जलादिक शीतल क्रिया करनेसे दस्त होते हैं और उष्णजल पान आदि उष्णक्रिया करनेसे दस्त बंद हो जाते हैं। इसको 'इच्छाभेदी गुटिका' कहते हैं ॥ १४ ॥

दूसरा इच्छाभेदी रस ।

शुण्ठीमरीचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम् ।
जैपालास्त्रिगुणाः प्रोक्ताः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥१५॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात्सितया सह दापयेत् ।
यावन्तश्चिल्लुकाः पीतास्तावद्वारान्विरेचयेत् ।
तक्रौदनं खादितव्यमिच्छाभेदी यथेच्छया ॥१६॥

सोंठ, मिरच, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण तीन भाग इन सबको एकत्र मिलाकर जलमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोलियां बनालेवे, इसमेंसे एक गोली लेकर मिश्रीके साथ सेवन करे और ऊपरसे शीतल जल पीवे, इसपर जितने जलके घूट पान करेगा उतनी बार दस्त होंगे, जब अच्छे प्रकारसे दस्त होचुकें तो यथेच्छ तक्रके साथ भात खाना चाहिये (इसको इच्छाभेदी रस कहते हैं) ॥ १५॥१६॥

पुष्परेचनी गुटिका।

देवदाली स्वर्णपुष्पं गुडेन वटकीकृतम्।
गुदमध्ये प्रदेयैषा पातयेच्च महागदम् ॥ १७ ॥
अधश्च साममायाति पुनः सा दीयते गुदे।
प्रक्षाल्य वारिणा चैषा वारंवारं प्रयच्छति ॥ १८ ॥
अनेन क्रमयोगेन मलमामं विरेचनम्।
जायते सकलं देहं शुद्धवर्णं निरामयम् ॥ १९ ॥

बंदाल और अमलतासके गुद्देको बराबर लेकर दुगुने गुडमें मर्दन करके वर्ती बनावे एक वर्तीको गुदामें प्रवेश करे, इससे अनेक प्रकारके दुःसाध्य रोग पतित होकर अच्छे प्रकारसे दस्त होजाते हैं। जबतक आमदोष अच्छे प्रकारसे न निकल जाये तबतक बराबर वर्ती रखे। एक वर्तीको निकालकर जलसे गुह्यद्वारको धोकर फिर दूसरी बर्ती प्रवेश करनी चाहिये इस प्रकार करनेसे आम और मल विरेचनद्वारा निकलकर शरीर शुद्ध और निरोग हो जाता है ॥ १७-१९ ॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस।

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च विषञ्च जयपालकम्।
कटुत्रयञ्च त्रिफला टङ्कणञ्च समांशकम् ॥ २० ॥

अस्य मात्रा प्रयोक्तव्या गुञ्जात्रयसमा ततः ।
सर्वेषु ज्वररोगेषु सामवाते विशेषतः ॥ २१ ॥
नाशयेच्छ्वासकासञ्च अग्निमान्द्यं विशेषतः ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष, शुद्ध जमालगोटे, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला और सुहागा इन सब औषधियोंका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र खरल करके तीन २ रत्तीकी गोली बना लेवे (एक गोलीकी मात्रा है) सर्व प्रकारके ज्वर और आमवातमें यह औषधि विशेष करके हितकारी है तथा श्वास, खांसी और मन्दाग्निको नष्ट करता है । यह सर्वाङ्गसुन्दर रस पूर्वकालमें ब्रह्माजीने स्वयं निर्माण किया था ॥ २०–२२ ॥

अविरेचनीय रोगी ।

बालवृद्धकृशक्षीणपीनसार्त्तभयार्द्दिताः ।
रूक्षशोषतृक्षायुक्ता गर्भिणी च नवज्वरी ॥ २३ ॥
अधो गच्छति यस्यासृक् सूतिकातङ्कपीडिता ।
नैते विरेकयोग्याः स्युरन्येषाञ्च बलाबलम् ॥ २४ ॥
नवज्वरे च ये योगा भेदकाः परिकीर्तिताः ।
ते तथैव प्रयोक्तव्या वीक्ष्य देहमलादिकम् ॥ २५ ॥

अब विरेचनके अयोग्य रोगियोंको कहते हैं—बालक, वृद्ध, कृश, क्षीण, पीनसरोगी, भयातुर, रूक्ष, शोष और तृषासे पीडित, गर्भवती स्त्री, नवीन ज्वरवाला, अधोगत रक्तपित्त रोगी और सूतिका रोगवाली स्त्री इन सबको विरेचन नहीं देना चाहिये । इनके अतिरिक्त अन्यान्य रोगोंमें रोगीका बलाबल विचारकर विरेचन देना चाहिये । नवीनज्वरमें जो भेदक योग कहे हैं वही योग देवे और दोष दूष्यादि

विचार करही इन विरेचन योगोंका जैसे उचित हो वैसे प्रयोग करना चाहिये ॥ २३-२५ ॥ इति विरेकाधिकारः ॥

अथ ज्वरचिकित्सा।

नवज्वरांकुश रस।

क्रमेण वृद्धाान्नसगन्धहिंगुलान्नैकुम्भबीजान्यथ दन्तिवारिणा। पिष्ट्वास्य गुञ्जाभिनवज्वरापहा जलेन चार्द्रासितया प्रयोजिता ॥ १ ॥

ज्वर संपूर्ण रोगोंमें प्रधान है अतएव प्रथम ज्वरकी चिकित्सा कहते हैं—पारा १ भाग, गंधक २ भाग, सिंगरफ ३ भाग और जमालगोटे ४ भाग इन सबको विधिपूर्वक रगड़ करके दन्तीके क्वाथकी सात वार भावना देवे और फिर एक एक रत्तीकी गोली बनालेवे एक गोली मिश्रीके शर्बतके साथ सेवन करे, इसके सेवन करनेसे दस्त होकर नवीन ज्वर नष्ट होजाता है। इसको नवज्वरांकुश रस कहते हैं (जहांपर किसी भी योगमें पारा और गंधक हो वह पहले कज्जली करके ही मिलाना चाहिये) ॥ १ ॥

हिंगुलेश्वर रस।

तुल्यांशं मर्दयेत्खल्ले पिप्पली हिंगुलं विषम्।
द्विगुञ्जा मधुना देया वातज्वरनिवृत्तये ॥ २ ॥

पीपल, सिंगरफ और विष यह तीनों औषधि समान भाग लेकर खरलमें अच्छे प्रकारसे मर्दन करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे इसको शहदके साथ खाये इससे वातज्वर नष्ट होजाता है इसको हिंगुलेश्वर रस कहते हैं ॥ २ ॥

ज्वरधूमकेतु।

भवेत्समं सूतसमुद्रफेनहिंगूलगन्धं परिमर्द्य यत्नात्।
नवज्वरे वल्लमितं त्रिघस्रमार्द्राम्बुनायं ज्वरधूमकेतुः३

पारा, समुद्रफेन, सिंगरफ और गंधक यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसमें तीन दिन तक खरल करे और फिर तीन तीन रत्तीकी गोली बना लेवे इसको "ज्वरधूमकेतु" रस कहते हैं। इसका अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे नवीन ज्वर नष्ट होजाता है ॥ ३ ॥

मृत्युञ्जय रस ।

विषस्यैकं तथा भागं मरिचं पिप्पली कणा ।
गन्धकस्य तथा भागं भागं स्याट्टङ्कणस्य च ॥ ४ ॥
सर्वत्र समभागं स्याद्धिंगुलन्तु द्विभागिकम् ।
चूर्णयेत्खल्लमध्ये तु मुद्गमानां वटीश्चरेत् ॥ ५ ॥
जम्बीरस्य रसेनात्र कार्यं हिंगुलशोधनम् ।
रसश्चेत्समभागं स्याद्धिंगुलं नेष्यते तदा ॥ ६ ॥
गोमूत्रशोधितश्चात्र विषं सौरविशोधितम् ।
मृत्युरूपं ज्वरं हन्ति मृत्युञ्जयरसः स्मृतः ॥ ७ ॥
मृत्युर्विनिर्जितो यस्मात्तेन मृत्युञ्जयो रसः ।
अव्यक्तः सिद्धिदः शुद्धो रोगघ्नः कीर्त्तिवर्द्धनः ॥ ८ ॥
यशःप्रदः शिवः साक्षान्मृत्युञ्जयरसः स्मृतः ।
मधुना लेहनं प्रोक्तं सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ ९ ॥

विष, मरिच, पीपल, गंधक और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, सिंगरफ दो भाग इन सबको एकत्र जलमें खरल करके मूँगकी बराबर गोली बना लेवे इसमें सिंगरफ जम्बीरी नींबूके रसमें शुद्ध करके लेना चाहिये और जो इसमें सिंगरफ नहीं डालना होय तो शुद्ध पारा एक भाग डालना चाहिये इसमें विष गोमूत्रमें भावना देकर धूपमें सुखाकर ग्रहण करना चाहिये। यह औषधि मृत्युरूप ज्वरको हरण करती है इस कारण इसको मृत्युञ्जय रस कहते हैं। यह औषधि

अव्यक्त अर्थात् अनिर्वचनीय शक्ति, सब प्रकारकी सिद्धिको देनेवाला परम शुद्ध रोगनाशक कीर्तिवर्द्धक और यशप्रद है। इस मृत्युञ्जय रसको साक्षात् शिवजीने कहा है, इसको शहतके साथ चाटनेसे सब प्रकारके ज्वर निवृत्त होते हैं ॥ ४–९ ॥

दध्युदकानुपानेन वातज्वरनिबर्हणः।
आर्द्रकस्य रसैः पानं दारुणे सान्निपातिके ॥ १० ॥
जम्बीरद्रवयोगेन अजीर्णज्वरनाशनः।
अजाजी गुडसंयुक्ता विषमज्वरनाशिनी ॥ ११ ॥

दहीके तोडके साथ सेवन करनेसे वातज्वर नष्ट होता है। अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे दारुण सान्निपातिक ज्वर नष्ट होता है। जम्भीरी नींबूके रसके साथ सेवन करनेसे अजीर्ण और ज्वर नष्ट होते हैं। काला जीरा और गुड़ मिलाकर खानेसे विषमज्वर नष्ट होता है ॥ १० ॥ ११ ॥

तीव्रज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णं वटिचतुष्टयम् ॥ १२ ॥
स्त्रीबालवृद्धक्षीणेषु अर्द्धमात्रा प्रकीर्तिता।
अतिवृद्धे च क्षीणे च शिशौ चाल्पवयस्यपि ॥१३॥
तुर्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्था सारनिश्चिता।
नवज्वरे महाघोरे यामैकान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ १४ ॥
मध्यज्वरं तथाजीर्णं त्रिरात्रान्नाशयेद्ध्रुवम्।
सप्ताहात्सन्निपातोत्थंज्वराजीर्णकसंज्ञकम् ॥ १५ ॥

युवा पुरुषको अत्यन्त तीव्र घोरतर ज्वर उत्पन्न होनेपर पूर्ण मात्रा अर्थात् चार गोली देनी चाहिये। स्त्री, बालक, वृद्ध और क्षीण मनुष्यको अर्धमात्रा अर्थात् दो गोली देनी चाहिये। अत्यंत वृद्ध,

अत्यंत क्षीण और बहुत थोड़ी उमरके बालकको चौथाई अर्थात् एक गोली देनी चाहिये । इसके सेवन करनेसे एक प्रहरमें अत्यंत घोरतर नवीन ज्वर, तीनरात्रिमें मध्यम ज्वर और अजीर्ण ज्वर, एवं एक सप्ताहमें सान्निपातिक ज्वर नष्ट होजाता है ॥ १२–१५ ॥

जया वटी ।

विषं त्रिकटुकं मुस्तं हरिद्रा निम्बपत्रकम् ।
विडंगमष्टमं चूर्णं छागमूत्रैः समं समम् ॥
चणकाभा वटी कार्या स्याज्जया योगवाहिका १६॥

विष, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, हलदी, नीमके पत्ते और वायविडंग यह आठ औषधि समान भाग लेकर बकरीके मूत्रमें अच्छे प्रकारसे खरल करके चनेकी बराबर गोली बना लेवे, इसको जयावटी कहते हैं । यह योगवाही है अर्थात् प्रत्येक अनुपानके साथ पृथक् पृथक् गुणोंको करती है ॥ १६ ॥

जयन्ती वटी ।

विषं पाठाश्वगन्धा च वचा तालीशपत्रकम् ।
मरिचं पिप्पली निम्बमजामूत्रेण तुल्यकम् ॥ १७ ॥
वटिका पूर्ववत्कार्या जयन्ती योगवाहिका ॥ १८ ॥

विष, पाढ, असगंध, वच, तालीशपत्र, कालीमिरच, पीपल और नीम इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बकरीके मूत्रमें पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे इसको जयन्ती वटी कहते हैं । यह भी जयाके समान योगवाही है ॥ १७ ॥ १८ ॥

जयाजयंती वटीके पथ्य और अनुपान ।

जयन्ती च जया वाथ क्षीरैः पित्तज्वरापहा ।
मुद्गामलकयूषेण पथ्यं देयं घृतं विना ॥ १९ ॥

जयन्ती वा जया वाथ सक्षौद्रमरिचान्विता।
सन्निपातज्वरं हन्ति रसश्चानन्दभैरवः ॥२०॥

जया अथवा जयंती वटीको दूधके साथ सेवन करनेसे पित्तज्वर नष्ट होता है और जया अथवा जयंती वटीके सेवन करनेवाला घृतके विना आमले और मूंगकी यूष पथ्य सेवन करे, जयावटी अथवा जयंतीवटीको शहत और काली मिरचोंके चूर्णके साथ सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है। अथवा आनंदभैरव रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है ॥ १९ ॥ २० ॥

जयन्ती वा जया वाथ विषमज्वरनुद्घृतैः।
सर्वज्वरं मधुव्योषैर्गवां मूत्रेण शीतकम् ॥ २१ ॥
चन्दनस्य कषायेण रक्तपित्तज्वरापहा।
जयन्ती वा जया वाथ माक्षिकेण च कासजित् ॥२२॥

जयावटी अथवा जयन्ती वटीको घृतके साथ सेवन करनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है। जया अथवा जयन्ती वटीको शहत और त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारका ज्वर नष्ट होता है। जया अथवा जयन्ती वटीको गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे शीतज्वर नष्ट होता है। जया अथवा जयन्ती वटीको लाल चंदनके क्वाथके साथ सेवन करनेसे रक्तपित्त ज्वर नष्ट होता है। जया अथवा जयन्ती वटीको शहतके साथ सेवन करनेसे खांसी दूर होती है ॥ २१॥ २२ ॥

जयन्ती वा जया क्षीरैः पाण्डुशोथविनाशिनी।
जयन्ती वा जया वाथ तण्डुलोदकपानतः ॥२३॥
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं मूत्रकृच्छ्रन्तु दारुणम्।
जयन्तीं वा जयां वाथ गोमूत्रेण युतां पिबेत् ॥२४॥
हन्त्याशु काकणं कुष्ठं सुलेपेन च तद् द्रुतम्।
द्विनिष्कं केतकीमूलं पिष्ट्वा तोयेन पाययेत् ॥२५॥

जयन्ती वा जया वाथ मेहं हन्ति सुराह्वयम् ।
जयन्ती वा जया वाथ मधुना मेहजिद्भवेत् ॥२६॥

जयावटी अथवा जयन्तीवटीको दूधके साथ सेवन करनेसे पाण्डुरोग और सूजन नष्ट होती है । जयावटी अथवा जयन्तीवटीको चावलोंके जलके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारकी अश्मरी और दारुण मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होता है । जयावटी अथवा जयन्तीवटीको गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे और गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे काकणकुष्ठ और गलितकुष्ठ नष्ट होता है । जयावटी अथवा जयन्तीवटीको आठ मासे केतकीकी जड़के साथ जलमें पीसकर सेवन करनेसे सुरामेह नष्ट होता है । जयन्ती अथवा जयावटीको शहतके साथ सेवन करनेसे प्रमेह रोग नष्ट होता है ॥ २३–२६ ॥

लोध्रमुस्ताभयातुल्यं कट्फलञ्च जलैः सह ।
क्वाथयित्वा पिबेच्चानु मधुना सर्वमेहजित् ॥ २७ ॥
जयन्ती वा जया वाथ गुडैः कोष्णजलैः पिबेत् ।
त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं रसो वानन्दभैरवः ॥ २८ ॥

जयन्ती अथवा जया वटीको लोध, नागरमोथा, हरड़ और कायफलके क्वाथमें शहत मिलाकर सेवन करनेसे सव प्रकारका प्रमेह रोग नष्ट होता है । जयन्ती अथवा जयावटिकाको गुड और मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषजनित गुल्मरोग नष्ट होता है । अथवा आनन्दभैरव रसके सेवन करनेसे गुल्मरोग नष्ट होता है ॥ २७॥ २८ ॥

जयन्ती वा जया हन्ति शुण्ठ्या सर्वं भगन्दरम् ।
जयन्ती वा जया वाथ तक्रेण ग्रहणीप्रणुत् ॥ २९ ॥
जयन्ती वा जया वाथ रसश्चानन्दभैरवः ।
रक्तपित्ते त्रिदोषोत्थे शीततोयेन पाययेत् ॥ ३० ॥

जयन्ती वा जया वाथ भृङ्गद्रावैर्निशान्ध्यनुत्।
जयन्ती वा जया वाथ घृष्ट्वा स्तन्येन चाञ्जयेत्।
स्रावणं सर्वदोषोत्थं मांसवृद्धिञ्च नाशयेत् ॥ ३१ ॥

जयंती अथवा जयावटीको सोंठके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके भगन्दररोग नष्ट होते हैं। जयंती अथवा जयावटीको तक्रके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है। जयंती अथवा जयावटी एवं आनंद-भैरव रस शीतल जलके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषजनित रक्तपित्त रोग शमन होता है। जयंती अथवा जयावटीको भांगरेके रसके साथ सेवन करनेसे रात्र्यन्ध रोग दूर होता है। जयंती अथवा जयावटीको स्त्रीके दूधमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे स्राव होकर सम्पूर्ण नेत्ररोग और नेत्रगत मांसकी वृद्धि दूर होती है ॥ २९-३१ ॥

भस्मेश्वर चूर्ण।

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम्।
निष्कत्रयञ्च मरिचं विषनिष्कञ्च चूर्णयेत् ॥ ३२ ॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तनः।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु ॥ ३३ ॥

अरने उपलोंकी भस्म (राख) चार तोले, कालीमिरचका चूर्ण नौ ९ मासे, शुद्ध विष ३ मासे इन सबको उत्तम रीतिसे खरल करके चूर्ण बना लेवे, इसमेंसे पांच रत्तीभर अदरखके रसके साथ भक्षण करे। यह भस्मेश्वर रस घोर सन्निपातज्वरको नष्ट करता है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

स्वच्छन्दभैरव रस।

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादिनवज्वरहरं परम् ॥ ३४ ॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः।
इक्षुं द्राक्षां सिताञ्चापि दधि पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ ३५ ॥

तांबेकी भस्म और शुद्ध विष समान भाग लेकर धतूरेके रसमें सौ बार भावना देवे । फिर आधी आधी रत्तीकी गोली बना लेवे, एक गोली अदरखके रसके साथ और सेंधानमकके साथ सेवन करनेसे नवीन ज्वर, सन्निपातज्वर इत्यादि सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेवाले मनुष्यको ईख (गन्ना) दाख मिश्री और दही इनका पथ्य देना चाहिये ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

ज्वरमुरारि रस ।

हिंगुलञ्च विषं व्योषं टंकणं नागराऽभया ।
जयपालसमायुक्तं सद्योज्वरविनाशनम् ॥ ३६ ॥

हिंगुल (सिंगरफ), विष, त्रिकुटा, सुहागा, सोंठ और हरड यह प्रत्येक औषधि समान भाग ले इनका चूर्ण कर इस चूर्णकी बराबर जमालगोटेका चूर्ण लेवे, सबको एकत्रकर चनेकी बारबर गोली बना लेवे इसके सेवन करनेसे ज्वर तत्काल नष्ट होजाता है ॥ ३६ ॥

नवज्वरेभांकुश ।

सगन्धटंकं रसतालकञ्च विमर्दयेद्भावयेन्मीनपित्तैः ।
दिनद्वयं वल्लमितं प्रदद्याद्वृन्ताकतक्रौदनमेव पथ्यम् ।
नवज्वरेभांकुशनामधेयःक्षणेन घर्मोद्गममातनोति ३७

गंधक, सुहागा, पारा और हरिताल यह सब औषधि समान भाग लेकर दो दिनतक बराबर मछलीके पित्तेकी भावना देवे और मछलीके पित्तेमें खरल करे । फिर तीन तीन रत्तीकी गोली बना लेवे, इसको नवज्वरेभांकुश रस कहते हैं । इसके सेवन करनेसे तत्काल पसीना आकर सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं । इसके सेवन करनेवालेको बैंगनकी भाजी और तक्रके साथ भात देना पथ्य है ॥ ३७ ॥

त्रैलोक्यडुम्बर रस ।

सूतार्कगन्धचपलाजयपालतिक्ता पथ्या । त्रिवृच्च विष-

तिन्दुकजं समांशम् । संमर्द्य वज्रिपयसा मधुना द्विगुञ्जस्त्रैलोक्यडुम्बररसोऽभिनवज्वरघ्नः ॥ ३८ ॥

पारा, ताम्रभस्म, गंधक, पीपल, कुटकी, शुद्ध जमालगोटे, हरड़का छिलका, दक्षिणी निशोथ और कुचला इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर थोहरके दूधमें घोटकर दो दो रत्तीकी गोलियें बनावे; इसकी एक गोलीको शहतके साथ खानेसे तीक्ष्ण विरेचन होकर नवीन ज्वर दूर होता है। इसको त्रैलोक्यडुम्बर रस कहते हैं ॥ ३८ ॥

प्रतापमार्तण्ड रस।

विषहिंगुलजैपालटंकणं क्रमवर्द्धितम् ।
रसः प्रतापमार्त्तण्डः सद्योज्वरविनाशनः ॥ ३९ ॥

तेलिया विष १ भाग, सिंगरफ २ भाग, शुद्ध जमालगोटे ३ भाग, सुहागा ४ भाग इन सबको खरल कर जलके योगसे एक एक रत्तीकी गोली बनावे; यह प्रतापमार्तण्ड रस सब प्रकारके नवीन ज्वरोंको नष्ट करता है ॥ ३९ ॥

तरुणज्वरारि रस।

जैपालगन्धं विषपारदञ्च तुल्यं कुमारीस्वरसेन पिष्टम् । अस्य द्विगुञ्जा हि सितोदकेन ख्यातो रसोऽयं तरुणज्वरारिः ॥ ४० ॥ दातव्य एषोऽहनि पञ्चमे वा षष्ठेऽथवा सप्तम एव वापि । जाते विरेके विजितो ज्वरः स्यात्पटोलमुद्गाम्बुनिषेवणेन ॥ ४१ ॥

शुद्ध जमालगोटे, गंधक, विष और पारा इन सबको सम भाग लेकर घीकुमारके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोलियें बनावे; इसको तरुणज्वरारि रस कहते हैं। इसकी एक गोली खाकर ऊपरसे मिश्रीका शर्बत पीवे तो तरुणज्वर नष्ट होजाता है । इस रसको

ज्वरके चढ़नेसे पांचवें अथवा छठे या सातवें दिन खिलाना चाहिये। इसके खानेसे उत्तम विरेचन होकर ज्वर नष्ट होजाता है। इसके ऊपर परवल और मूंगका यूष देना पथ्य है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

गदमुरारि रस।

रसवलिशिललोहव्योषताम्राणि तुल्यान्यथ सदरदनागं भागमेतत्प्रदिष्टम्। भवति गदमुरारिश्चास्य गुञ्जाद्वयं वै क्षपयति दिवसेन प्रौढमामज्वराख्यम्॥४२

शुद्ध पारा, गंधक, शुद्ध मनसिल, लोहभस्म, त्रिकुटा, ताम्रभस्म, सिंगरफ और नागभस्म इन सबको विधिवत् खरल करके दो दो रत्तीकी गोलियां बनावे। इसके सेवनसे एक दिनमें ही सब प्रकारके नवीन और पुराने ज्वर नष्ट होते हैं। इस रसको गदमुरारि रस कहते हैं ॥ ४२ ॥

विद्याधर रस।

रसो गन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीटंकणवरा-
त्रिवृद्दन्तीहेमद्युमणिविषमेतत्सममिदम्।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः
ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥४३॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगुदकीलोद्भवरुजः।
मरुच्छूलाजीर्णं प्रबलमथ सामं क्रिमिगदं
विबद्धं प्लीहानं प्रबलमपि विद्याधररसः ॥ ४४ ॥

पारा, गंधक, ताम्रभस्म, त्रिकुटा, कुटकी, सुहागा, त्रिफला, निशोथ, दंती, धतूरेके बीज, आककी जड़का छिलका और सिंगिया विष यह सब समान भाग लेवे शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर लेवे; इन सबको एकत्र कर पहिले दन्तीके क्काथमें खरल करे फिर थोहरके

दूधमें खरल कर दो दो रत्तीकी गोलियें बनावे । इसके सेवनसे बलवान् तरुणज्वर, पाण्डुरोग, गुल्म, ग्रहणीरोग, बवासीर, वातजशूल, बढ़ा हुआ आमाजीर्ण, क्रिमिरोग, मलबद्धता और प्लीहारोग यह सब नष्ट होते हैं । इसको विद्याधर रस कहते हैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अमृतमञ्जरी रस ।

हिंगुलं मरिचं टङ्कं पिप्पली विषमेव च ।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दितम् ॥ ४५ ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि देयञ्च सान्निपातिके ।
कासश्वासौ जयत्याशु सर्वज्वरविनाशनः ॥ ४६ ॥

सिंगरफ, काली मिरच, सुहागा, पीपल, विष और जावित्री यह औषधि समान लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करे । इस औषधिमेंसे दो रत्ती अथवा तीन रत्ती प्रमाण लेकर सान्निपातिक रोगमें प्रयोग करे । यह अमृतमंजरी रस खांसी, श्वास और सब प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

महाज्वरांकुश रस ।

सूतं गन्धं विषं तुल्यं धूर्त्तबीजं त्रिभिः समम् ।
चतुर्णां द्विगुणं व्योमचूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम् ॥ ४७ ॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम् ।
महाज्वरांकुशो नाम ज्वराष्टकनिषूदनः ॥ ४८ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम् ।
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सर्वं न संशयः ॥ ४९ ॥

पारा, गन्धक और विष यह प्रत्येक औषधि एक भाग धतूरेके बीज तीन भाग और एकत्र मिली हुई त्रिकुटेकी औषधियोंका चूर्ण बारह भाग लेवे, इन सबको एकत्र करके खरल करे और दो दो

रत्तीकी गोलियां बना लेवे । इसको महाज्वरांकुश रस कहते हैं, इसके जम्भीरी नींबूकी मज्जा और अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे आठ प्रकारके ज्वर तथा ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक और चातुर्थिक विषमज्वर तथा सन्निपातज्वर नष्ट होते हैं ॥ ४७–४९ ॥

ज्वरकेशरिका ।

शुद्धसूतं विषं व्योषं गंधं त्रिफलमेव च ।
जयपालं समं कुर्याद् भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ॥ ५० ॥
वटिकां गुञ्जमात्रान्तु कृत्वा वैद्यः प्रयत्नतः ।
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रशस्यते ॥ ५१ ॥
नारिकेलाम्बुना वापि सर्वज्वरविनाशिनी ।
नारिकेलजलं शस्तं कर्षत्रयं पिबेदनु ॥ ५२ ॥

शुद्धपारा, विष, त्रिकुटा, गन्धक, त्रिफला और शुद्ध जमालगोटे यह सब औषधि समान भाग लेकर भांगरेके रसमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोलियां बना लेवे । बालकोंको यदि यह रस देना हो तो सरसोंकी बराबर गोली बनावे । इस औषधिको तीन तोले नारियलके जलके साथ पान करे तो सब प्रकारका ज्वर नष्ट होता है ॥ ५०–५२

सितया च समं पीत्वा पित्तज्वरविनाशिनी ।
मरिचेन च पीता सा सन्निपातज्वरं जयेत् ॥ ५३ ॥
पिप्पलीजीरकाभ्यां तु दाहज्वरविनाशिनी ।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥ ५४ ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च श्वयथुञ्च सुदारुणम् ।
शूलाजीर्णं तथा गुल्मं कुष्ठाष्टादश पित्तजान् ।
ज्वरकेशरिका ख्याता तरुणज्वरनाशिनी ॥ ५५ ॥

इसको मिश्रीके साथ सेवन करे तो पित्तज्वर नष्ट हो । काली मिरचोंके चूर्णके साथ सेवन करे तो सन्निपातज्वर नष्ट हो । पीपल और जीरेके चूर्णके साथ सेवन करे तो तरुणज्वर, दाहज्वर, विषमज्वर, भूतोत्थज्वर, प्लीहा, मंदाग्नि, अजीर्ण, शोथ, शूल, गुल्म, अठारह प्रकारके कुष्ठ, सम्पूर्ण पित्तजनित रोग नष्ट होते हैं. इसे ज्वरकेशरिका कहते हैं ॥ ९३-९५ ॥

नवज्वरेभसिंह ।

शुद्धसूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रञ्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पलीं विश्वां समभागं विचूर्णयेत् ॥९६॥
अर्द्धभागं विषं दद्यान्मर्दयेद्द्वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेरानुपानेन दद्याद् गुञ्जाद्वयं भिषक् ॥ ९७ ॥
नवज्वरे महाघोरे वातसंग्रहणीगदे ।
नवज्वरेभसिंहोऽयं सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ ९८ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, मिरच, पीपल और सोंठ यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और विष आधा भाग लेवे । इन सबको एकत्र करके दो दिन खरल करे फिर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिको अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे प्रबल नवज्वर, वातरोग, संग्रहणी इत्यादि सब प्रकारके रोग नष्ट होते हैं । इसको नवज्वरेभसिंह कहते हैं ॥ ९६-९८ ॥

उदकमञ्जरीरस (निरामज्वरपर)

सूतो गन्धष्टङ्कणः सोषणः स्यादेतैस्तुल्या शर्करा मत्स्यपित्तैः । भूयो भूयो भावयेत्तत् त्रिरात्रं वल्लो देयः शृंगवेरस्य वारा ॥९९॥ सम्यक् तापे वारिभक्तं

सतक्रं वृन्ताकाढ्यं पथ्यमेव प्रदिष्टम् । अङ्गे रोगं हन्ति सामं प्रभावात्पित्ताधिक्ये मूर्ध्नि वारिप्रयोगः ६०

पारा, गंधक, सुहागा और कालीमिरच यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे । और विष (किसीके मतसे मिश्री) चार भाग लेवे । इन सबको एकत्र करके रोहू मछलीके पित्तमें अच्छे प्रकारसे खरल करके तीन दिन वारंवार भावना देवे । अधिक संताप उत्पन्न हो तो अदरखके रसके साथ इस औषधिको तीन रत्ती प्रमाण तीन दिन सेवन करे । रोगीको तक्रके साथ ठंढा भात भोजन करावे तथा बैंगनका शाक पथ्य देवे । पित्तकी विशेष प्रबलता हो तो रोगीके मस्तक पर जलकी धारा देवे । (अथवा बर्फकी थैली मस्तक पर लगावे) इस औषधिका सेवन करनेसे साम और निराम ज्वर नष्ट होता है । इसको उदकमञ्जरी रस कहते हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥

चन्द्रशेखर रस ।

अत्र शर्करास्थाने मनःशिलायां चन्द्रशेखरो भवति ६१

इस उदकमञ्जरी रसमें विष (किसीके मतसे मिश्री) के स्थानमें शुद्ध मनसिल मिलानेसे चन्द्रशेखर रस हो जाता है । यह रस अनुपान विशेषसे पूर्वोक्त समस्त गुणोंको करता है ॥ ६१ ॥

पञ्चवक्त्र रस ।

रसो गन्धष्टंकणः सोषणोऽयं फणी पिप्पलीत्येष धूस्तूरपिष्टः । जयेत्सन्निपात द्विगुञ्जानुपानं भवेदर्कमूलाम्बुसव्योषचूर्णम् ॥ ६२ ॥

पारा, गंधक, सुहागा, कालीमिरच, शीसाभस्म और पीपल यह सब औषधियें समान भाग लेकर धतूरेके रसमें अच्छी प्रकारके खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिको आककी जड़के रसके साथ और त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे सन्निपातज्वर नष्ट होता है । इसको पञ्चवक्त्र रस कहते हैं ॥ ६२ ॥

पर्पटीरस।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गरसेन च।
मृतं ताम्रं लोहभस्म पादांशेन तयोः क्षिपेत् ॥६३॥
लोहपात्रे च विपचेच्चालयेल्लोहचाटुना।
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयोपरि संस्थिते ॥ ६४ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग इन दोनोंको एकत्र भांगरेके रसमें खरल करे फिर इसमें पारे और गंधकसे चौथाई भाग तांबेकी भस्म और लोहभस्म मिलाकर उत्तम विधिसे खरल करे फिर लोहेके करछेसे चलाकर लोहेके पात्रमें पकावे। जब देखे कि यह औषधि अच्छी प्रकारसे गल गई तब गोबरके ऊपर केलेका पत्ता रखकर उस पर इस औषधिको डाल देवे और ऊपरसे एक केलेका पत्ता ढक देवे और ऊपरसे गोबरसे दबा देवे। इस प्रकार करनेसे पर्पटी तैय्यार होजाती है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

पश्चात्संचूर्णयेत्खल्ले निर्गुंडचा भावयेद्दिनम्।
जयन्ती त्रिफला कन्या वामाभार्ङ्गीकटुत्रिकैः॥६५॥
भृङ्गाग्निमूलमुण्डीभिर्भावयेद्दिनसप्तकम्।
अङ्गारैः स्वेदयेत्किञ्चित्पर्पटाख्यो महारसः ॥ ६६ ॥
चतुर्गुञ्जामितं भक्ष्यं सम्यक् श्लेष्मज्वरं जयेत्।
पथ्याशुण्ठ्यमृताक्वाथमनुपानं प्रयोजयेत् ॥ ६७ ॥

इस पर्पटीको खरलमें पीसकर सम्हालूके रसमें एक दिन भावना देवे। फिर जयन्ती, त्रिफला, घीकुमार, अडूसा, भारंगी, त्रिकुटा, भांगरा, चित्रककी जड़ और गोरखमुंडी इन सब औषधियोंके क्वाथ और रसमें सात दिन भावना देकर प्रज्वलित अंगारोंपर किंचित् तप्त करे। इसको पर्पटी रस कहते हैं. इसमेंसे चार रत्ती प्रमाण हरड,

सोंठ और गिलोयके क्काथके साथ सेवन करनेसे कफज्वर सर्वथा नष्ट होजाता है ॥ ६५–६७ ॥

वातपित्तान्तक रस ।

मृतसूताभ्रमुस्तार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टीद्राक्षामृतारसैः ॥ ६८ ॥
धात्रीशतावरीद्रावैर्द्रवैः क्षीरविदारिजैः ।
दिनंदिनं विभाव्याथ सिताक्षौद्रयुता वटी ॥ ६९ ॥
माषमात्रं निहन्त्याशु वातपित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहं तृषां भ्रमं शोषं वातपित्तान्तको रसः ॥
सिताक्षीरं पिबेच्चानु यष्टीक्काथसितायुतम् ॥ ७० ॥

पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, नागरमोथा, तांबेकी भस्म, लोहेकी भस्म, शुद्ध सोनामाखीभस्म, हरितालकी भस्म और शुद्ध गंधक यह सब औषधियें समान भाग लेकर अच्छे प्रकारसे खरल करे फिर मुलैठी, दाख, गिलोय, आमले, सतावर और दूधविदारी इन सब औषधियोंके क्काथ और रसमें एक एक दिन भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिको शर्करा और शहतके साथ सेवन करनेसे वातपित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा, भ्रम और शोष आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिको सेवन करके मिश्री मिला दूध मिश्री मिला मुलैठीका क्काथ पान करे । इसको वातपित्तान्तक रस कहते हैं ॥ ६८–७० ॥

विश्वेश्वर रस ।

मृतसूतार्कतीक्ष्णञ्च तालं गन्धञ्च कट्फलम् ।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्ङ्गी पथ्या च बालकम् ७१॥
धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्थद्रवैर्दिनम् ।
मर्द्यं माषं लिहेत्क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ ७२ ॥

रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च ।
काकमाचीरसं चानु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥७३॥

पारेकी भस्म, तांबेकी भस्म, लोहेकी भस्म, शुद्ध हरितालभस्म, शुद्ध गंधक, कायफल, मेढाशिंगी, वच, सोंठ, भारंगी, हरड़, सुगंधवाला और धनिया यह सब औषधि समान भाग लेकर पित्तपापड़ेके क्वाथमें अच्छे प्रकार खरल करके एक दिन भावना देवे । फिर एक एक मासेकी गोली बना लेवे । नित्य प्रति एक गोली शहतके साथ सेवन करनेसे कफज्वर, पित्तज्वर और मदात्ययरोग नष्ट होता है। इस औषधिका सेवन करके मकोयके रसको सेंधानमकके साथ पान करे । इसको विश्वेश्वर रस कहते हैं । इसको स्वयं नागार्जुनसिद्धने कहा है ॥ ७१-७३ ॥

शीतारि रस ।

पारदं गन्धकं शुद्धं टङ्कणञ्च समं समम् ।
पारदाद् द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥ ७४ ॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्मशर्करापि च ।
प्रत्येकं सूतकं तुल्यं जम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ॥ ७५ ॥
द्विगुञ्जस्तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः ।
रसः शीतारिनामायं शीतज्वरहरः परः ॥ ७६ ॥

पारा, गंधक और सुहागा यह सब औषधि समान भाग लेवे; शुद्ध जमालगोटे दो भाग लेवे तथा सेंधानमक, कालीमिरच, इमलीकी छालकी भस्म और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिकी एक एक गोली गरम जलके साथ पान करनेसे वातश्लेष्मज्वर और शीतज्वर नष्ट होता है । इसका नाम शीतारि रस है ॥ ७४-७६ ॥

चिन्तामणि रस ।

रसविषगन्धकटंकणताम्रयवक्षारकव्योषम् ।
तालकफलत्रयञ्च क्षौद्रैः खलु शतं वारान् ॥ ७७ ॥
संमर्द्य रक्तिकामितवटिकाः कार्या भिषग्भिः प्राज्ञैः ।
शुण्ठीपिष्टेन सममेकां द्वे वाथवा तिस्रःसंप्राश्याः ७८

पारा, विष, गन्धक, सुहागा, तांबेकी भस्म, जवाखार, त्रिकुटा, हरिताल और त्रिफला यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर शहतमें अच्छे प्रकारसे १०० सौ वार खरल करके विद्वान् वैद्य एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । रोगीके दोषोंके बलाबलको विचार कर एक अथवा दो या तीन गोली सोंठके समभाग चूर्णमें मिलाकर देवे ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

नारिकेलजलमनुपेयं सेवयेत्सैन्धवं जीरं तक्रं पथ्यं प्रयोक्तव्यम् । प्रशमयति सन्निपातज्वरं तथा जीर्णज्वरं विविधञ्च ॥ ७९ ॥ प्लीहानं चाध्मानकं कासं श्वासं वह्निमान्द्यञ्च । चिन्तामणी रसोऽयं किल स्वयं भैरवेन निर्दिष्टः ॥ ८० ॥

और ऊपरसे नारियलका जल पान करे । इस पर सेंधानम और जीरेका चूर्ण मिलाकर तक्रका पथ्य करे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे सन्निपातज्वर, अनेक प्रकारका जीर्णज्वर, प्लीहा, आध्मान, खाँसी, श्वास और मंदाग्नि आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं । यह चिन्तामणि रस स्वयं भैरवने निर्माण किया है ॥ ७९ ॥ ८० ॥

रसं गन्धं विषं लोहं धूर्त्तबीजन्तु तत्समम् ।
द्वौ भागौ ताम्रवह्निं च व्योषचूर्णञ्च तत्समम् ॥८१॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम् ।
अस्यानुपानेन वटी ज्वरे देया प्रयत्नतः ॥ ८२ ॥

गुञ्जाद्वयं वटीं खादेत्सद्योज्वरं व्यपोहति।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्॥८३॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थिकविपर्ययम्।
असाध्यञ्चापि साध्यञ्च ज्वरञ्चैवातिदुस्तरम् ॥ ८४॥
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णे च आध्मानेऽनिलसम्भवे।
अतिसारे छर्दिते च अरोचकनिपीडिते ॥ ८५ ॥
ज्वरान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा।
चिन्तामणिरसो नाम सर्वज्वरं व्यपोहति ॥ ८६ ॥

अन्यमत–पारा १ भाग, गंधक १ भाग, विष १ भाग, लोहभस्म १ भाग, धतूरेके बीज ४ भाग, तांबेकी भस्म २ भाग, चीतेकी जड़ २ भाग और त्रिकुटेका चूर्ण २ भाग लेवे, इन सबको एकत्र करके जम्भीरीनींबूकी मज्जा (गुद्दा) और अदरखके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। प्रति दिन एक गोली उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे शीघ्र ही ज्वर नष्ट हो जाता है। इस औषधिके सेवनसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक और इनके विपर्यय ज्वर एवं साध्य और असाध्य, अत्यंत दुस्तरज्वर, मंदाग्नि, अजीर्ण, आध्मान, अतीसार, वमन और अरुचि विनष्ट होती हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे सूर्योदयसे अंधकार नाश होनेके समान सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं। इसको चिंतामणि रस कहते हैं ॥ ८१–८६ ॥

अथ सान्निपातज्वर पर।

कुलवधू।

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं मृतं नागं मनःशिला।
तुत्थकं तस्य तुल्यांशं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ८७ ॥

द्रवैश्चोत्तरवारुण्याश्चणमात्रा वटी कृता ।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्यमात्रेण दारुणम् ।
एषा कुलवधूर्नाम जले घृष्ट्वा प्रयोजयेत् ॥ ८८ ॥

अब सन्निपातज्वरकी चिकित्सा कहते हैं–शुद्ध पारा, तांबेकी भस्म, सीसेकी भस्म, शुद्ध मैनशिल और शुद्ध तूतिया यह सब औषधि समान भाग लेकर इन्द्रायनकी जड़के रसमें एक दिन खरल करके चनेकी बराबर गोली बना लेवे । एक गोलीको जलमें घिसकर नास देवे । इससे घोरतर सन्निपातज्वर नष्ट होता है ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

जयमंगल रस ।

भस्मसूताभ्रकं तारं मुण्डतीक्ष्णालमाक्षिकम् ।
वह्निटंकणकत्र्योषं समं संमर्दयेद्दिनम् ॥ ८९ ॥
पाठानिर्गुण्डिकायष्टीबिल्वमूलकषायकैः ।
ततो मूषागतं रुद्ध्वा विपचेद्भूधरे पुटे ॥ ९० ॥
माषैकं दशमूलस्य कषायेण प्रयोजयेत् ।
अञ्जनेनाथवा नस्यात्सन्निपातं जयेद् ध्रुवम् ॥९१॥

पारद भस्म या रससिन्दूर, अभ्रककी भस्म, चांदीकी भस्म, मुण्डलोह भस्म, तीक्ष्णलोह भस्म, हरिताल भस्म, सोनामाखी भस्म, चित्रककी जड़, सुहागा और त्रिकुटा यह सब औषधि समान भाग लेकर पाढ, सम्हालू, मुलैठी और बेलकी जड़के क्काथमें एक दिन खरल करके सुखा लेवे । फिर मूषामें बंद करके भूधर यन्त्रमें पुटपाककी विधिसे पकावे । इसमेंसे एक मासे परिमाण औषधि लेकर दशमूलके क्काथसे सेवन करे । अथवा अंजन अथवा नस्यमें प्रयोग करनेसे सन्निपातज्वर नष्ट होता है ॥ ८९–९१ ॥

नस्य भैरव ।

मृतसूतार्कतीक्ष्णाग्निं टंकणं खर्परं समम् ।

सव्योषमर्कदुग्धेन दिनं संमर्दयेद्दृढम् ।
अर्कक्षीरयुतं नस्यं सन्निपातहरं परम् ॥ ९२ ॥

पारद भस्म या रससिन्दूर, तांबेकी भस्म, तीक्ष्णलोह भस्म, चीतेकी जड़, सुहागा, खपरिया और त्रिकुटा यह सब औषधि समान भाग लेकर आकके दूधमें एक दिन खरल करके गोली बनावे। फिर इन गोलियोंको आकके दूधमें भावना देकर नस्य ग्रहण करे तो सन्निपातज्वर नष्ट होता है ॥ ९२ ॥

अंजन भैरव।

सूततीक्ष्णकणागन्धमेकांशं जयपालकम् ।
सर्वैस्त्रिगुणितं जम्बुवारिणा च सुपेषितम् ॥
नेत्राञ्जनेन हन्त्याशु सर्वोपद्रवमुद्धतम् ॥ ९३ ॥

पारा, तीक्ष्णलोह भस्म, पीपल और गंधक यह सब औषधि एक एक भाग और जमालगोटे सबसे तिगुने लेवे, इन सबको एकत्र करके जामुनके रसमें खरल करके नेत्रोंमें आंजनेसे सन्निपातज्वर और अत्यंत वृद्धिको प्राप्त हुए सन्निपातके उपद्रव दूर होते हैं ॥ ९३ ॥

गन्धेशं लशुनाम्भोभिर्मर्दयेद्यामममात्रकम् ।
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिबोधकृत् ।
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्राप्रलापकान् ॥ ९४ ॥

गंधक १ भाग और पारा १ भाग इन दोनोकों एकत्र खरल करके कज्जली बनावे। फिर लहसुनके रसमें एक प्रहर खरल करे। फिर इसको लहसुनके रसमें मिलाकर नस्य देनेसे संज्ञा रहित सन्निपात रोगी भी संज्ञाको प्राप्त होता है। काली मिर्चोंके साथ इस औषधिकी नस्य देनेसे तन्द्रा और प्रलाप दूर होते हैं। इसे अंजनरस कहते हैं॥९४

बाह्लीकं रसकं तुल्यं कर्पूरं मृतशुल्वकम् ।
कासमर्दरसैर्मर्द्यं दिनार्द्धं वटकीकृतम् ।
अञ्जनं ज्वरदाहघ्नं सर्वदोषसमुद्भवम् ॥ ९५ ॥

द्वितीय अंजनरस—हींग, खपरिया, कपूर और ताम्रभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर कसौंदीके रसमें दो प्रहर मर्दन करके गोली बना लेवे। इस औषधिको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे त्रिदोषोत्पन्न ज्वर और दाह नष्ट होता है। यह दूसरा अंजन रस है ॥ ९५ ॥

त्रैलोक्यसुन्दर रस ।

रसगन्धकयोर्माषौ प्रत्येकं कज्जलीकृतौ ।
शक्रञ्च मुसलीञ्चैव धूस्तूरं केशराजकम् ॥ ९६ ॥
देवदाली जयन्ती च तथा मण्डूकपर्णिका ।
एषां पत्ररसैः शाणैः शिलायां खल्लयेत्पुनः ॥ ९७ ॥
शोषयित्वा वटी कार्य्या त्वनेका राजिकोपमा ।
त्रिदोषजं ज्वरं हन्ति तथा प्रबलकोष्ठकम् ॥ ९८ ॥
तप्ते तु नारिकेलस्य जलं देयं प्रयत्नतः ।
यदा वटी न कार्या तु तदा खाद्या तु रक्तिका ।
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम सन्निपातहरो रसः ॥ ९९ ॥

पारा २ मासे और गन्धक २ मासे दोनोंको एकत्र कर मर्दन करके कज्जली बनावे। फिर कुड़ाकी छालका रस ४ मासे, मुसलीका रस ४ मासे, धतूरेके पत्तोंका रस ४ मासे, भांगरेका रस ४ मासे, बंदालका रस ४ मासे, जयंतीका रस ४ मासे और मण्डूकपर्णी (ब्रह्ममण्डूकी) का रस ४ मासे लेवे। इन सबके रसोंमें अच्छे प्रकारसे खरल करके राईकी बराबर गोली बना लेवे। इससे सन्निपात

ज्वर और कोष्ठगतज्वर नष्ट होते हैं । जो इस औषधिके सेवन करनेसे शरीरमें सन्ताप हो तो नारियलका जल पीना चाहिये । जो राईकी बराबर गोली गुण न करे तो एक एक रत्तीकी गोली बनावे । इसको सन्निपातनाशक त्रैलोक्यसुन्दर रस कहते हैं ॥ ९६-९९ ॥

स्वच्छन्द भैरव रस ।

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धञ्चैकत्र कारयेत् ॥१००॥
रुद्रजटा सिन्दवारो नागरामलकी तथा ।
विषकण्टालिका चैषां स्वरसं शाणमात्रकम् ॥१०१॥
दत्त्वा संशोध्य संमर्द्य कार्या मुद्गसमा वटी ।
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकश्चानु भक्षयेत् ॥१०२॥
स्वच्छन्दो भैरवाख्योऽयं सन्निपातोग्रहन्मतः ।
ग्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेदविचारतः ॥ १०३ ॥

पारा ४ मासे और गन्धक ४ मासे लेवे दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर उसमें ४ मासे शुद्ध सोनामाखीभस्म फिर रुद्रजटा, सम्हालू, सोंठ, आमले और बांझककोड़े इन प्रत्येकके चार चार मासे स्वरसमें खरल करके मूंगके बराबर गोलियें बनावे । इनमेंसे एक गोली अदरखके रसके साथ खावे ऊपरसे थोड़ासा जीरा चबावे तो यह स्वच्छन्द भैरव रस उग्र सन्निपातको दूर करता है एवं ग्रहणी तथा प्रसूति रोगको झट नष्ट कर देता है ॥ १००-१०३ ॥

शीतांग सन्निपातके लक्षण ।

शीतं शरीरं शीताङ्गे छर्द्यतीसारकम्पनम् ।
क्षुद्विघातोऽङ्गमर्दश्च हिक्का श्वासः श्रमोऽरतिः ॥
सर्वांगशिथिलत्वञ्च सन्निपाते प्रजायते ॥१०४॥

शीतांग सन्निपातमें मनुष्यका शरीर अत्यंत शीतल होता है, तथा वमन, अतिसार, कम्प, क्षुधाका नाश, अंगमर्दन, शरीरकी पीड़ा, हिचकी, श्वास, श्रम, बेचैनी और संपूर्ण शरीरमें शिथिलता होती है ॥ १०४ ॥

आनन्द भैरव।

हिंगुलञ्च विषं व्योषं मरिचं टंकणं कणा।
जातीकोषसमं चूर्णं जम्बीरद्रवमर्दितम् ॥ १०५ ॥
रक्तिमानां वटीं कुर्यात्खादेदार्द्रकसंयुताम्।
वटीद्वयं त्रयं वापि सन्निपाते सुदारुणे ॥ १०६ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति तथाऽतीसारनाशनः।
जीर्णज्वरहरश्चैव तथा सर्वाङ्गभेदकः ॥ १०७ ॥

सिंगरफ, विष, त्रिकुटा, कालीमिरच, सुहागा, पीपल और जायफल यह सब औषधि समान भाग लेकर जम्भीरीनींबूके रसमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंमेंसे दो गोली अथवा तीन गोली लेकर अदरखके साथ घोरतर सन्निपातज्वरमें देवे। यह औषधि आठ प्रकारके ज्वर, अतिसार, जीर्णज्वर, शरीरभेद और आमवातादि रोगोंको नष्ट करती है। इसको आनन्दभैरव कहते हैं ॥ १०५-१०७ ॥

आनंद भैरवी।

विषं त्रिकटुकं गन्धं टंकणं मृतशुल्वकम्।
धूस्तूरस्य च बीजानि हिंगुलं नवमं स्मृतम् ॥ १०८ ॥
एतानि समभागानि दिनैकं विजयाद्रवैः।
मर्दयेच्चणकाभां तु वटीश्चानन्दभैरवीम् ॥ १०९ ॥

भक्षयेच्च पिबेच्चानु रविमूलकषायकम् ।
सव्योषं हन्ति नो चित्रं सन्निपातं सुदारुणम् ॥११०

विष, त्रिकुटा, गंधक, सुहागा, ताम्रभस्म, धतूरेके बीज और सिंगरफ यह नव ९ औषधि समान भाग लेकर भांगके रसमें अथवा जयंतीके रसमें खरल करके चनेकी बराबर गोली बना लेवे। एक गोली खाकर और ऊपरसे आककी जड़का क्वाथ पीवे। त्रिकुटेके चूर्णके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे घोरतर सन्निपातज्वर नष्ट होता है। इसको आनन्दभैरवीरस कहते हैं ॥ १०८-११० ॥

शीतांगे सन्निपाते वा सामान्ये वा त्रिदोषजे ।
धान्याकं पिप्पली शुण्ठी कटुकी कण्टकारिका॥११॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं चतुर्गुञ्जा च पर्पटी ।
सन्निपातज्वरं हन्ति वटिकाऽऽनन्दभैरवी ॥ १२ ॥
मूलञ्च कटुरोहिण्याः समं बिल्वं सजीरकम् ।
दध्ना पिष्टं पिबेच्चानु वटिकाऽऽनन्दभैरवी ॥१३॥

धनिया, पीपल, सोंठ, कुटकी और कटेरीके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर शीतांग सन्निपात अथवा साधारण सन्निपातमें इन आनन्दभैरवी गोलियोंका सेवन करना चाहिये। अथवा चार रत्ती परिमाण पर्पटी रसको लेकर इसी अधिकारमें कहे हुए इसी क्वाथसे सेवन करे तो सन्निपातज्वर नष्ट होता है । समान भाग कुटकीकी जड़, बेल और जीरा इन औषधियोंको दहीमें पीसकर आनन्दभैरवी-रसके अंतमें अनुपान सेवन करे ॥ ११-१३ ॥

सनिपातातिसारघ्नी पथ्यं शाकविवर्जितम् ।
आनन्दभैरवीं पीत्वा क्वाथं वरुणसम्भवम् ॥ १४ ॥
पाययेदश्मरीं हन्ति सप्तरात्रान्न संशयः ।
वागुजीसम्भवैस्तैलैर्वटीञ्चानन्दभैरवीम् ॥ १५ ॥

लेहयेन्निष्कमात्रान्तु गलत्कुष्ठञ्च नाशयेत् ।
दधिमस्तुसिताक्षौद्रैः वटीञ्चानन्दभैरवीम् ॥ १६ ॥
भक्षयेन्मूत्रकृच्छ्रार्त्तो यवक्षारं सितान्वितम् ।
गोदुग्धं क्वथितञ्चानु शीतलं मधुना पिबेत् ॥ १७ ॥
गुञ्जामूलं पिबेत्क्षीरैरनुपानं प्रशस्यते ।
अनेन चानुपानेन वटिकाऽऽनन्दभैरवी ॥
देया रुद्रजटाक्षौद्रैः सर्वमेहप्रशान्तये ॥ १८ ॥

इस आनन्दभैरवी गोलीके सेवन करनेसे त्रिदोषज अतीसार नष्ट होता है । इस औषधि पर शाकरहित पथ्य सेवन करे । इस औषधिका सेवन करके ऊपरसे वरनेकी छालका क्वाथ पान करनेसे सात दिनमें अश्मरीरोग नष्ट होता है । बावचीके तेलके साथ निष्क प्रमाण इस औषधिके सेवन करनेसे गलत्कुष्ठ नष्ट होता है । मूत्रकृच्छ्ररोगी दहीके तोड़, मिश्री और शहतके साथ इस औषधिका सेवन करे, अथवा मिश्री जवाखार मिलाकर सेवन करे, अथवा गायके दूधको औटाकर फिर शीतल करके शहत मिलाकर पान करे; एवं गुंजाकी जड़को दूधके साथ पान करे । प्रमेह दूर करनेके लिये इस आनंदभैरवीकी गोलीको रुद्रजटाके क्वाथके साथ शहदयुक्त सेवन करे ॥ १४–१८ ॥

प्राणेश्वर रस ।

शुद्धसूतं तथा गन्धं सूतार्द्धं विषसंयुतम् ।
समस्तं मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥ १९ ॥
पूरयेत्कूपिकान्ते च सन्निरोध्य विशोषयेत् ।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा तु शोषयेत् ॥ २० ॥
पुटेत्कुम्भीप्रमाणेन स्वांगशीतं समुद्धरेत् ।
गृहीत्वा कूपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग और शुद्ध विष आधा भाग लेवे। इन सब औषधियोंको मुसलीके रसमें तीन दिन तक खरल करे, फिर एक आतशी शीशीमें भरकर उसका मुख बंद करके ऊपरसे सात वार कपड़मिट्टी करके सात वार सुखावे, पश्चात् कुम्भीपुटमें पकावे, जब स्वांगशीतल होजावे तब उसमेंसे निकाल कर एक दिन खरल करे ॥ १९-२१ ॥

अजाजीजीरकं हिंगुसर्जिकाटङ्कणैर्युतम् ।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यमानिका ॥ २२ ॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समांशतः ।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत्सप्तधाऽऽतपे ॥ २३ ॥
नागवल्लीद्लयुतं पञ्चगुञ्जं रसेश्वरम् ।
दद्यान्नवज्वरे तीव्रे कोष्णं वारि पिबेदनु ॥ २४ ॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित् ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥ २५ ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्याच्चन्दनलेपनम् ।
तावदेव प्रशमनो नानातीसारनाशनः ।
भवेच्च नात्र संदेहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥ २६ ॥

फिर कालाजीरा और सफेद जीरा, हींग, सज्जी, सुहागा, गूगल, पाँचों नमक, जवाखार, अजवायन, कालीमिरच और पीपल यह सब औषधि समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर इनके क्वाथमें सात वार भावना देकर धूपमें सुखावे। इसमेंसे पांच रत्ती औषधि लेकर पानमें रखकर खावे और ऊपरसे गरम जल पीवे। इसको प्राणेश्वर रस कहते हैं। इसके सेवन करनेसे नवज्वर, सन्निपातज्वर, शीतज्वर, दाहपूर्वकज्वर, गुल्म, शूल और त्रिदोषज रोग नष्ट होते हैं। इसका सेवन करके इच्छानुसार पथ्य सेवन करे और शरीर पर चन्दनादिक

लेप करे। यह औषधि अनेक प्रकारके अतिसारोंको नष्ट करती है तथा स्वस्थताको उत्पन्न करती है ॥ २२-२६ ॥

सन्निपातभैरव ।

ताम्रं गन्धं रसं श्वेतगुञ्जा मरिचपूतना ।
समीनपित्तजैपालांस्तुल्यानेकत्र मर्द्दयेत् ॥ २७ ॥
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य नवज्वरहरं परम् ।
ज्वरांकुशः सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ २८ ॥

तांवा भस्म, गंधक, पारा, सुफेदचौंटली, कालीमिरच, हरड़, रोहूमछलीका पित्ता और जमालगोटे इन सबको समान भाग लेकर एकत्र अच्छे प्रकारसे खरल कर इस औषधिको चार रत्ती परिमाण सेवन करनेसे तत्काल नवीनज्वर नष्ट होजाता है। यह ज्वररूपी हस्तीके लिये अंकुशके समान है। इसको सन्निपातभैरव रस कहते हैं॥ २७॥ २८॥

शीतभञ्जी रस ।

रसो हिंगुलगन्धश्च जैपालं सम्मितं त्रिभिः ।
दंतीक्काथेन संमर्द्य रसो ज्वरहरः परः ॥ २९ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्यामामात्रतः ॥ १३० ॥
शर्करादधिभक्तञ्च पथ्यं देयं प्रयत्नतः ।
शीततोयं पिबेच्चानु इक्षुमुद्गरसो हितः ।
शीतभञ्जीरसो नाम सर्वज्वरकुलांतकः ॥ ३१ ॥

पारा, सिंगरफ और गंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और जमालगोटे तीन भाग लेवे, इन सबको एकत्र दंतीके क्काथमें अच्छे प्रकारसे खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। एक गोली अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारका ज्वर नष्ट होता है।

इस औषधिके सेवन करनेसे एक प्रहरमें घोरतर नवीनज्वर नष्ट हो जाता है। इस औषधि पर मिश्री, दही और भात भोजन करे। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् शीतल जल पीवे तथा गन्नेका रस और मूंगका यूष इस पर अत्यन्त हितकारी है। इसको शीतभञ्जी रस कहते हैं। यह शीतभंजी रस सब प्रकारके ज्वरोंको अन्तक-स्वरूप है॥ २९-३१॥

उन्मत्त रस।

रसं गन्धश्च तुल्यांशं धूस्तूरफलजैर्द्रवैः।
मर्द्दयेद्दिनमेकन्तु तुल्यं त्रिकटुकं क्षिपेत्।
उन्मत्ताख्यो रसो नाम नस्यः स्यात्सन्निपातजित्॥३२॥
सन्निपातार्णवे मग्नं योऽभ्युपैति च रोगिणम्।
कस्तेन न कृतो धर्मः काञ्च पूजां न सोऽर्हति॥३३॥

पारा १ भाग और गंधक १ भाग लेवे, दोनोंको एकत्र धतूरेके फलोंके रसमें एक दिन खरल करे। फिर उसमें समान भाग त्रिकुटा मिलाकर अच्छे प्रकारसे खरल करे। इसको उन्मत्त रस कहते हैं। इसकी नस्य ग्रहण करनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होजाता है। जो वैद्य इस सन्निपातरूपी समुद्रमें निमग्न हुए रोगीका उद्धार करता है उसने कौनसा धर्म नहीं किया और वह कौनसी पूजाके योग्य नहीं है॥ ३२॥ ३३॥

मृतसञ्जीवन रस।

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो जैपालस्य त्रयो मताः।
द्वौ भागौ टंकणस्यैव भागैकममृतस्य च॥ ३४॥
तत्सर्वं मर्दयेच्छ्लक्ष्णं शुष्कं यामं भिषग्वरः।
शृङ्गवेराम्बुना देयं व्योषचित्रकसैन्धवैः॥ ३५॥
माषद्वयमितन्तापं हरत्येव विनिश्चयः।
घनसारेण सारेण चन्दनेन विलेपनम्॥ ३६॥

विदध्यात्कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक् ।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥ ३७ ॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे ।
आमवाते वातशूले गुल्मे प्लीह्नि जलोदरे ।
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे संततज्वरे ॥ ३८ ॥
अग्निमांद्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः ।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातोऽयं रसायने ॥ ३९ ॥

सिंगरफ ४ भाग, जमालगोटे ३ भाग, सुहागा २ भाग और विष एक भाग लेवे, इन सबको एकत्र खरल करके सोंठके क्राथमें एक प्रहर खरल करके सुखा लेवे। इस औषधिको त्रिकुटा, चित्रक और सेंधा नमकमें मिला करके दो मासे परिमाण अदरखके रसके साथ सेवन करे या ऊपरसे अदरखका रस पान करे इससे ज्वरका सन्ताप अवश्य दूर होजाता है। इस औषधिसेवनके पश्चात् कपूर और चन्दनसे रोगीके शरीरको लिप्त करे तथा रोगीकी नाभिके ऊपर काँसीका पात्र स्थापन करके उसमें शीतल जलकी धारा छोड़े। पश्चात् तक्र और ईखके रसके साथ शालि चावलोंका भात खाये। यह औषधि घोरतर सन्निपातज्वर, त्रिदोषज, विषमज्वर, शीतपूर्व और दाहपूर्व, विषमज्वर, सततज्वर, आमवात, वातजन्यशूल, गुल्म, प्लीहा, जलोदर, मन्दाग्नि और वातरोगको दूर करती है। यह उत्तम रसायन है॥ ३४–३९॥

स्वल्प वडवानल रस ।

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात्सर्वं श्लक्ष्णं सुचूर्णितम्॥१४०॥
लांगलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।
रक्तिकाद्वितयं वापि त्रितयं वा प्रकल्पयेत् ॥ ४१ ॥

दोषे व्योषसमायुक्तस्त्रिदोषशमनो भवेत्।
भक्षयेत्पवने चोग्रे वडवानलसंज्ञितम् ॥ ४२ ॥

ताम्रभस्म १ भाग, मरिच १ भाग, विष २ भाग इन औषधियोंको एकत्र करके कलिहारीके रसमें खरल करके पुटपाक करे। रोगीके दोषोंका बलाबल विचार कर दो रत्ती अथवा तीन रत्ती औषधि सेवन करे। इसको त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज्वर शमन होता है। पवनकी अधिकतामें यह वडवानलसंज्ञित रस भक्षण करना चाहिये ॥ १४०-१४२ ॥

बृहद्वडवानल रस।

सूतकं गन्धकं चैव हरितालं मनःशिला।
अभ्रकं वत्सनाभश्च दारुजङ्गमजं विषम् ॥ ४३ ॥
जैपालात्सार्द्धशतकं सर्वं संचूर्ण्य मर्दयेत्।
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥ ४४ ॥
वटिकां शीततोयेन कुर्याद्गुञ्जाप्रमाणतः।
वडवानलनामाऽयं नारिकेलजलेन वै।
रक्षयेत्सन्निपातार्तं मृत्युस्तस्यामुखो भवेत् ॥ ४५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, हरिताल भस्म, मैनसिल भस्म, अभ्रक-भस्म, वत्सनाभविष, काष्ठविष और साँपका विष यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले, जमालगोटे १५० बीज इन सबका एकत्र चूर्ण करके मत्स्य, महिष, मयूर और बकरी इनके पित्तमें अलग अलग भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। सन्निपातसे पीड़ित रोगीको यह औषधि शीतल जल अथवा नारियलके जलके साथ सेवन करनेसे मृत्यु दूर भाग जाती है ॥ ४३-४५ ॥

सूचिकाभरण रस।

रसगन्धकनागं च विषं स्थावरजंगमम्।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥ ४६ ॥

सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः ।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिबर्हणः ॥ ४७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सीसाभस्म, स्थावर और जंगम विष (सिंगिया विष और गरल) यह सब औषधि समान भाग लेकर एकत्र मछलीके पित्त, सुअरके पित्त, मोर और बकरेके पित्तमें अलग अलग भावना देवे । इसको सूचिकाभरण रस कहते हैं । यह औषधि स्वयं भैरवने कही है । इस औषधिमेंसे सुईके अग्रभागकी बराबर सेवन करे । यह सन्निपातको नष्ट करती है, इसको कोई सूचीसे शरीरमें लगाते हैं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

पञ्चानन रस ।

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्तं रविः,
पक्षौ सागरलोचनं शशियुगं भागोऽर्कसंख्यान्वितः ।
खल्ले तत्परिमर्दितं रविजलैर्गुंजैकमात्रं ददेत्,
सिंहोऽयं ज्वरदंतिदर्पदलनः पंचाननाख्यो रसः ४८ ॥

विष २ भाग, कालीमिरच ७ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, सिंगरफ २ भाग और तांबाभस्म १२ भाग इन सब औषधियोंको आकके मूलके रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इसको पञ्चानन रस कहते हैं, ज्वररूपी मत्तहस्तीके दर्पको दलनेके लिये यह औषधि सिंहके समान है ॥ ४८ ॥

त्रिदोषनीहाररवि रस ।

रसेन गन्धं द्विगुणं कृशानुरसैर्विमर्द्याष्टदिनानि
घर्मे । रसाष्टभागं त्वमृतं च दद्याद्विमर्दयेद्वह्निरसेन
किंचित् ॥ पिबेत्तु सम्भावित एष देय-
स्त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यः ॥ ४९ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग इन दोनोंको एकत्र रगड़ चित्रकके रसमें आठ दिन तक भावना देवे और खरल करे, फिर शुद्ध पारेसे आठवां भाग विष मिलाकर फिर चित्रकके रसमें खरल करे। इस औषधिका त्रिदोषजज्वरमें प्रयोग करै । इसको त्रिदोषनीहाररवि रस कहते हैं । यह त्रिदोषरूपी नीहारको नष्ट करनेके लिये सूर्य्यके समान है ॥ ४९ ॥

रसराजेन्द्र रस।

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम् ॥ १५० ॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत्।
मर्दयेत्काकमाच्याश्च आर्द्रकस्य रसेन च ॥ ५१ ॥
मात्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिषपित्तकैः।
मर्दयेद्भिन्नभिन्नं च त्रिकटोरम्बुभिस्तथा ॥ ५२ ॥

शुद्ध पारा, तांवा भस्म, लोहा भस्म, अभ्रक भस्म, सीसा भस्म, वंग भस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध हरिताल भस्म और शुद्ध विष यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेकर बारीक चूर्ण करके मकोयके रसमें और अदरखके रसमें खरल करे । फिर मछली, सूअर, मोर, बकरी, और भैंस इनके पित्तोंमें अलग अलग भावना देकर पश्चात् त्रिकुटेके क्वाथमें भावना देवे ॥ १५०-१५२ ॥

सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः।
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात्सुरसारससंयुतम् ॥ ५३ ॥
मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारि मस्तके।
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ॥ ५४ ॥
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत्।

ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ।
पावकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥ ५५ ॥

इसको रसराजेन्द्र कहते हैं । स्वयं धन्वन्तरिजीने यह औषधि कही है । एक रत्ती परिमाण इसको तुलसीके पत्तोंके रसके साथ सेवन करे । इसके सेवन करनेके पश्चात् रोगीके शिरपर जलकी धाराओंको प्रदान करे,यदि दाह शांत न हो तब शर्करा सेवन करनेके लिये देवे । दिनमें केवल एक बार दहीके साथ भोजन करे । जिस प्रकार महादेवके द्वारा कामदेव, कृष्णके द्वारा दानवकुल और अग्निके द्वारा शीत नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके द्वारा संपूर्ण ज्वर नष्ट होते हैं ॥ ५३–५५ ॥

मृतसञ्जीवन रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले तत्कज्जलीकृतम् ।
अभ्रलोहकयोर्भस्म ताम्रभस्म समं समम् ॥ ५६ ॥
विषं तालं वराटञ्च शिलाहिंगुलचित्रकान् ।
हस्तिशुण्डी चातिविषा त्र्यूषणं हेममाक्षिकम् ॥५७॥
चूर्णं विमर्दयेद्द्रावैरार्द्रकस्य दिनत्रयम् ।
निर्गुण्डीं विजयाद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्पुनः ॥ ५८ ॥
काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकायन्त्रगे पचेत् ।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मर्दयेदार्द्रकैर्द्रवैः ॥५९॥
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं शंकरोदितः ।
मृतोऽपि सन्निपातार्त्तो जीवत्येव न संशयः॥६०॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग इन दोनोंको खल्वमें मर्दन करके कज्जली बनावे । फिर अभ्रक,लोहा और तांबा इन सबकी भस्म, शुद्ध विष, शुद्ध हरिताल भस्म, कौड़ी भस्म, मैनशिल, सिंग्रफ,

चित्रक, हाथीशुण्डी, अतीस, त्रिकुटा और सोनामाखी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग ग्रहण करके उत्तम विधिसे चूर्ण करके उपरोक्त कज्जलीमें मिला देवे, फिर इसको अदरखके रसमें तीन दिनतक खरल करके फिर सम्हालूके रसमें तीन दिनतक खरल करे, पश्चात् भांगके पत्तोंके रसमें तीन दिन तक खरल करे। फिर इस औषधिको आतसी शीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें दोप्रहर तक पकावे। फिर इसको अदरखके रसमें खरल करे। इसको मृतसंजीवन रस कहते हैं। इसको स्वयं महादेवने प्रकाशित किया है। इस औषधिके सेवन करनेसे मृत्युको प्राप्त हुआ सन्निपातरोगी भी आरोग्य होजाता है॥ १५६-२६०॥

गन्धक कज्जली।

कण्टकारी सिन्धुवारस्तथा नाटकरञ्जकम्।
अमीषां रसमादाय कृत्वा खर्परखण्डके॥ ६१॥
प्रक्षिप्य गन्धकं तत्र ज्वालां मृद्वग्निना दहेत्।
गन्धके स्नेहतापन्ने पारदं तत्समं क्षिपेत्॥ ६२॥
मिश्रीकृत्य ततो द्वाभ्यां द्रवं तमवतारयेत्।
आमर्दयेत्तथा तं तु यथा स्यात्कज्जलप्रभम्॥ ६३॥
ततस्तु रक्तिकामस्य जीरकस्य च माषकम्।
माषैकं लवणस्यापि पर्णे कृत्वा प्रदापयेत्।
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे जलमुष्णं पिबेदनु॥ ६४॥

कटेरी, सम्हालू और करंजके रसमें गंधकको डालकर अग्निके द्वारा गलावे, जब अच्छे प्रकारसे गल जाये तब बराबरका शुद्ध पारा मिला देवे। पश्चात् अच्छे प्रकारसे दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावे। इसमेंसे प्रति दिन एक रत्ती परिमाण लेकर जीरेका चूर्ण एक मासा और सेंधानमक एक मासा मिलाकर पानके साथ सेवन करे। घोर त्रिदोषज्वरमें इस औषधिका सेवन करके ऊपरसे गरम जलका अनुपान करे॥ ६१-६४॥

छर्द्यां शर्करया दद्यात्सामे दद्यात्तथा गुडम् ।
क्षये च छागदुग्धं स्यादनुपानं प्रयोजितम् ॥ ६५ ॥
रक्तातिसारे कुटजमूलवल्कलजं रसम् ।
रक्तवान्तौ तथा दद्यादुदुम्बरभवं रसम् ॥ ६६ ॥
सर्वव्याधिहरश्चायं गन्धकः कज्जलीकृतः ।
आयुर्वृद्धिकरश्चायं मृतश्चापि प्रबोधयेत् ॥ ६७ ॥
ये रसाः पित्तसंयुक्ताः प्रोक्ताः सर्वत्र शंभुना ।
जलसेकावगाहैश्च बलिनस्ते तु नान्यथा ।
यथालाभेन पित्तेन रसाः सर्वे भवन्ति हि ॥ ६८ ॥

वमनरोगमें इस औषधिको मिश्रीके साथ, साम ज्वरमें गुड़के साथ, क्षयरोगमें बकरीके दूधके साथ, रक्तातीसारमें कुड़ेकी जड़की छालके रसके साथ और रुधिरकी वमनमें गूलरके रसके साथ इस औषधिका सेवन करना चाहिये। यह गंधककी कज्जली सम्पूर्ण रोगोंको नष्ट करती है और आयुको बढ़ाती है। इससे मृतक मनुष्य भी फिर चेतनालाभ करते हैं। महादेवने जो पित्तयुक्त औषधि कही हैं, उन पित्त संयुक्त औषधियोंके सेवनके पश्चात् रोगीको जलसेचन और अवगाहन (स्नानादि) क्रिया करानी चाहिये। क्योंकि पित्तमें मर्दन किये हुए रसोंका जलसेकादिसे ही बल बढता है अन्यथा नहीं. यह रस यथा-लाभ पित्तोंसे मर्दन करने चाहिये ॥ ६५-६८ ॥

वेताल रस ।

रसं गन्धं विषं चैव मरिचालं समांशिकम् ।
शिलायां मर्दयेत्तावद्यावज्जायेत कज्जलम् ॥ ६९ ॥
गुञ्जामात्रं प्रयोक्तव्यं हरेद्द्वादशसंज्ञकम् ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं सुदारुणम् ७०

दन्तपंक्तिर्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके ।
चलिते चेन्द्रियग्रामे वेतालं विनियोजयेत ॥ ७१ ॥
म्लानेषु लिप्तदेहेषु मोहग्रस्तेषु देहिषु ।
दातुमर्हति वेतालो यमदूतनिवारकः ॥ ७२ ॥

पारा, गंधक, विष, मरिच और हरिताल यह सब शुद्ध औषधि समान भाग लेकर इनको तबतक खरल करे कि जबतक कज्जलीके समान न हो जाये । जब यह कज्जलीके समान होजाये तब इस औषधिको एक रत्ती परिमाण लेकर सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे साध्य और असाध्य बारह प्रकारके दारुण सन्निपात शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं । जिसकी दांतोंकी पंक्ति अत्यंत दृढ हो तथा जिसके नेत्रोंके तारे घूमें और अन्यान्य इन्द्रियोंमें विकलता हो तो उसको यह वेताल रस खिलावै । मलीन मनुष्य, लिप्त शरीरवाला मनुष्य, मोहसे व्याकुल इत्यादि मनुष्योंको यह औषधि अत्युपकारी है । इसको वेताल रस कहते हैं ॥ ६९-७२ ॥

चन्द्रशेखर रस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टंकणं तथा ।
चतुस्तुल्या शिला योज्या मत्स्यपित्तेन भावयेत् ७३
त्रिदिनं मर्दयेत्तेन रसोऽयं चन्द्रशेखरः ।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्देयं शीतोदकं पुनः ॥ ७४ ॥
तक्रभक्तञ्च वृन्ताकं भिषक् तत्र प्रयोजयेत् ।
त्रिदिनाच्छ्लेष्मपित्तोत्थमत्युष्णं नाशयेज्ज्वरम् ७५॥

शुद्ध पारा, गंधक, कालीमिरच और सुहागा यह सब द्रव्य समान भाग लेवे और शुद्ध मैनशिल चार भाग लेवे, सबको एकत्र करके मछलीके पित्तकी भावना देकर तीन दिन तक खरल करे । इसको चन्द्रशेखर रस कहते हैं । इसकी दो दो रत्तीकी गोली बनाकर अदरखके रसके साथ सेवन करे और ऊपरसे शीतल जलका अनुपान करे ।

इसपर तक्र, भात और बैंगन सेवन करे । यह औषधि तीन दिनमें कफपित्तसे उत्पन्न हुए अत्यंत तीव्र ज्वरको नष्ट करती है ॥ ७३-७५ ॥

कस्तूरी भैरव ।

हिंगुलञ्च विषं टङ्कं जातीकोषफलं तथा ।
मरिचं पिप्पली चैव कस्तूरी च समं समम् ।
रक्तिद्वयं ततः खादेत्सन्निपाते सुदारुणे ॥ ७६ ॥

सिंगरफ, शुद्ध विष, सुहागा, जावित्री, जायफल, कालीमिरच पीपल और कस्तूरी यह सब औषधि समान भाग लेकर एकत्र खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बनाकर सेवन करे । यह दारुण सन्निपातज्वरको दूर करता है ॥ ७६ ॥

बृहत्कस्तूरी भैरव ।

मृतं वङ्गं खर्परञ्च स्वर्णं कस्तूरितारकम् ।
एतेषां समभागेन कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ ७७ ॥
मृतं कान्तं पलं देयं हेमसारं द्विकार्षिकम् ।
रसभस्म लवङ्गञ्च जातिकाफलमेव च ॥ ७८ ॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ।
द्रोणपुष्पीरसैर्वापि नागवल्ल्या रसेन च ॥ ७९ ॥
द्विचन्द्रौ त्रिकटुर्देयो यत्नतो वटिकाञ्चरेत् ।
वातात्मके सन्निपाते महाश्लेष्मगदेषु च ॥ १८० ॥
त्रिदोषजनिते घोरे सन्निपाते सुदारुणे ।
नष्टगर्भे नष्टशुक्रे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ ८१ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे महाशोथे महागदे ।
स्त्रीणां शतं गच्छतश्च न च शुक्रक्षयो भवेत् ।
एतान्त्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ८२ ॥

वंग भस्म, खपरिया भस्म, सुवर्णभस्म, कस्तूरी और चांदीकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे, कांतलोहकी भस्म चार तोले, सोनामाखीकी भस्म, रससिन्दूर, लौंग और जायफल यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र करके द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसमें सात दिन तक और पानोंके रसमें भी सात दिन तक भावना देवे, फिर इसमें कपूरका चूर्ण और त्रिकुटेका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोला मिलाकर अच्छे प्रकारसे खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको वातिक, सान्निपातिक और कफके रोगोंमें,त्रिदोषजनित दारुण सन्निपात ज्वरमें, नष्टगर्भरोगमें, शुक्रकी क्षीणतामें, प्रमेह रोगमें, विषमज्वरमें, खांसीमें, श्वासरोगमें, क्षयरोगमें, गुल्मरोगमें और महाशोथमें प्रयुक्त करे । इस औषधिके सेवन करके सौ स्त्रियोंके साथ रमण करनेपर भी कदापि शुक्रका क्षय नहीं होता । जिस प्रकार सूर्य अंधकारके समूहको नष्ट कर देता है उसी प्रकार यह औषधि समस्त रोगोंको नष्ट करती है ॥ ७७-८२ ॥

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बी,
कनकरजतमुक्ता विद्रुमो लोहपाठाः ।
क्रिमिरिपुघनविश्वातोयतालाभ्रधात्री,
रविदलरसपिष्टः कस्तुरीभैरवोऽयम् ॥ ८३ ॥
कस्तूरीभैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः ।
आर्द्रकस्य रसैः पेयो विषमज्वरनाशनः ॥ ८४ ॥
द्वन्द्वजान् भौतिकान्वापि ज्वरान्कामादिसम्भवान् ।
अभिचारकृतांश्चैव तथा शुक्रकृतान्पुनः ।
डाकिन्यादिकृतांश्चैवावेशजन्यान्निहन्त्ययम् ॥८५॥

द्वितीय कस्तूरीभैरव रस-कस्तूरी, कपूर, तांबा भस्म, धायके फूल, कौंचके बीज, सुवर्ण भस्म, रूपाभस्म, मोतीभस्म, प्रवालभस्म, लोह-

भस्म, पाठा, वायविडंग,नागरमोथा, सोंठ, सुगंधवाला, हरितालभस्म, अभ्रकभस्म और आमले यह सब औषधि समान भाग लेकर आकके पत्तोंके रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकारके ज्वर, विषम ज्वर, तथा द्वन्द्वज, भौतिक, कामादिजनित, अभिचारज ज्वर, शुक्रस्थज्वर और डाकिन्यादि आवेशजनित ज्वर तत्काल नष्ट होजाते हैं ॥ ८३–८५ ॥

सौभाग्यवटी ।

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवणव्योषाभयाक्षामला,
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान्भावयेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृंगराजकवृषापामार्गपत्रोल्लसत,
प्रत्येकं स्वरसेन सिद्धवटिका घ्नन्ति त्रिदोषोदयम्८६
येषां शीतमतीव देहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं,
निद्रा घोरतरा समस्तकरणव्यामोहमूढं मनः ।
शूलं श्वासबलासकासससहितं मूर्च्छारुचिं तृड्ज्वरं,
तेषां वैपरिहृत्य जीवितमसौ गृह्णाति मृत्योर्मुखात्८७

सुहागा, विष, जीरा, पांचों लवण, त्रिकुटा, हरड, बहेडा,आमला, अभ्रक भस्म, गंधक और पारा यह सब द्रव्य समान भाग लेकर सम्हालू, भांगरा, काला भांगरा, अडूसा और चिरचिटा इन सबके पत्तोंके रसमें अलग अलग खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। यह गोली त्रिदोषजनित रोगोंको नष्ट करती है । जिन मनुष्योंके शरीरमें अतीव शीत व्याप्त हो गया हो तथा जिनका शरीर अत्यंत पसीनेसे भीज रहा हो, जो अतीव घोरतर निद्रासे विह्वल हो, जिनकी समस्त इन्द्रियें विकल और जिनका मन मुग्ध होगया हो उनको यह औषधि सेवन करनेसे शूल, श्वास, कफ, खाँसी, मूर्छा, अरुचि, तृषा और ज्वर नष्ट कर मृत्युके मुखसे भी बचा देती है ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

सन्निपातहर रस।

सूतं गंधं टंकणं वै मरीचं व्योषं तद्वद्धस्तिनः पिप्पली च। सर्वं तुल्यं धूर्तनीरैः प्रपेष्य व्योष-क्षोदैरर्कनीरैर्द्विगुञ्जम् ॥ ८८ ॥

पारा, गंधक, सुहागा, कालीमिरच, गजपीपल और त्रिकुटा यह सब औषधि समानभाग लेकर एकत्र धतूरेके पत्तोंके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको आकके क्वाथ और त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे सन्निपातज्वर नष्ट होता है ॥ ८८ ॥

सन्निपात वडवानल रस।

रसस्याष्टौ सप्त विषात् षट् षड् गन्धालयोस्तथा।
दन्तीबीजानि षड् भागाः पंचभागन्तु टङ्कणम् ॥ ८९ ॥
चत्वारि धूर्तबीजस्य त्रयस्त्रिकटुकस्य च।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥ ९० ॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ देयं गुंजाद्वयं हितम्।
वडवानलसंज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ ९१ ॥

पारा ८ भाग, विष ७ भाग, गन्धक ६ भाग, हरिताल ६ भाग, जमालगोटे ६ भाग, सुहागा ५ भाग, धतूरेके बीज ४ भाग और त्रिकुटा ३ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र चीतेके क्वाथमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको अदरखके रसके साथ सेवन करे। यह वडवानल रस सन्निपातज्वरको नष्ट करता है ॥ ८९-९१ ॥

सिंहनाद रस।

लोहपात्रगते गन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत्।
शुद्धसूतं समं चाभ्रं भार्ङ्गीद्रावं तयोः समम् ॥ ९२ ॥
निर्गुण्ड्याः पल्लवोत्थञ्च तुल्यं तुल्यं प्रदापयेत्।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवं द्वयम् ॥ ९३ ॥

विषपादयुतः सोऽयं सिंहनादरसोत्तमः ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यः सन्निपातज्वरान्तकः ।
अनुपानं पिबेद्व्याघ्रीकाथं पुष्करचूर्णितम् ॥ ९४ ॥

गन्धकको लोहेके पात्रमें रखकर मन्द २ अग्निके योगसे गलावे, फिर इसमें बराबरका पारा और अभ्रककी भस्म तथा पारे और अभ्रकके समान भारंगी और सम्हालूका रस डालकर जबतक जलका भाग न जल जाये तबतक पकावे । फिर गन्धकसे चौथाई भाग विष मिलाकर अच्छे प्रकारसे खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इसको सिंहनाद रस कहते हैं । कटेरीके क्राथके साथ और पोहकरमूलके चूर्णके साथ इसका सेवन करे । यह औषधि सन्निपात ज्वरको नष्ट करती है ॥ ९२–९४ ॥

सन्निपात सूर्य ।

रसस्य भागः प्रथमस्ततो द्वौ गंधस्य मद्यौं च मृतारकूप्ययोः । सुवर्णकस्यापि मृतस्य भागे तुर्ये रसे चित्रकजे दिनत्रयम् ॥९५॥ विषं हि भागार्धमथो गृहीत्वा मत्स्यस्य पित्तेन हि भावयेच्च । नीरे पुनश्चित्रकजे विक्राथ्य सूर्यातपे वै त्रिकटोश्च चूर्णे ॥ ९६ ॥ वल्लद्वयं चास्य ददीत वह्निकटुत्रयार्द्रद्रवसम्प्रयुक्तम् । तैलानुलिप्तस्य सुशीततोयैः स्नातस्य वेगावधिकोपचारः ॥ याद्भवेद्दुःसहशीतमस्य मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥ ९७ ॥ पथ्यं यदीहा परिजायतेऽस्य मरीचखण्डं दधिभक्तकं च । स्वल्पं ददीतार्द्रकमत्स्यशाकं दिनान्तरं स्नानविधिञ्च कुर्यात् ॥ ९८ ॥

पारा १ भाग, गन्धक २ भाग इन दोनोंको एकत्र खरल कर ले, पश्चात् इसमें पारे और गन्धकसे चौथाई भाग तांबाभस्म, रूपाभस्म और सुवर्णकी भस्म मिलाकर तीन दिन तक चित्रकके रसमें धूपमें खरल करे, फिर इसमें आधा भाग विष मिलाकर फिर मछलीके पित्तकी भावना देवे; फिर इसको चित्रक क्वाथ और त्रिकुटेकी भावना देकर धूपमें सुखा लेवे। इस औषधिको छः ६ रत्ती परिमाण लेकर चित्रकके क्वाथ और त्रिकुटेके चूर्णके अनुपानके साथ सेवन करे। इस औषधिका सेवन कराकर रोगीके सम्पूर्ण शरीरमें तैल मर्दन करके शीतल जलसे स्नान करावे। जबतक रोगीको अत्यंत शीत नहीं लगे, मल मूत्रकी प्रवृत्ति नहीं होय और शरीर कांपने नहीं लगे तब-तक रोगीको शीतल जलमें रखना चाहिये। रोगीको क्षुधाके लगनेपर मारिच, शर्करा, दही, अन्न देवे। तथा बहुत थोड़ा अदरख, मछली और अन्य शाकके साथ भोजन करावे, दूसरे दिन फिर उसी प्रकार स्नान करावे। इसको सन्निपात सूर्य कहते हैं ॥ ९६-९८ ॥

स्वच्छन्दनायक रस।

सूतगन्धकलोहानि रौप्यं संमर्दयेत् त्र्यहम्।
सूर्यावर्त्तश्च निर्गुण्डी तुलसी गिरिकर्णिका ॥ ९९ ॥
अग्निवल्ल्याद्रकं वह्निर्विजयाथ जया सह।
काकमाचीरसैरेषां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ २०० ॥
अन्धमूषागतं पश्चाद्वालुकायन्त्रगं दिनम्।
विपचेच्चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ॥ २०१ ॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत्।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ॥
छागीदुग्धेन मुद्गं वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥ २०२ ॥

मायूरमात्स्यवाराहच्छागमाहिषमेव च ।
पञ्चपित्तमिदं देयं भावनासु च सर्वदा ॥ २३० ॥

इसके उपरान्त अभिन्यास ज्वरकी चिकित्सा कहते हैं। पारा, गन्धक, लोहेकी भस्म, रूपाभस्म इन सबको एकत्र करके हुलहुल, सम्भालू, तुलसी, गिरिकर्णिका, कलिहारी, अदरख, चित्रक, जयन्ती, भांग और मकोय इन प्रत्येकके रसमें तीन दिन तक और पांच प्रकारके पित्तोंमें तीन दिन उत्तम विधिसे खरल करके भावना देवे। फिर अन्धमूषामें बन्द करके एक दिन वालुकायन्त्रमें पकाकर चूर्ण कर लेवे। यह १ मासे औषधि अदरखके रसके साथ सेवन करे और ऊपरसे सम्हालू और दशमूलके काथमें काली मिरचोंका चूर्ण मिलाकर अनुपान करे। इसको स्वच्छन्दनायक रस कहते हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे अभिन्यास ज्वर शीघ्र नष्ट होजाता है। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् बकरीका दूध और मूंगका यूष पथ्य देवे। मोर, मछली, सुअर, बकरा और भैंस इन पांच जीवोंके पित्तको पञ्चपित्त कहते हैं। भावनाकार्यमें ये ही पांच पित्त लिये जाते हैं १९९–२०३॥

सन्निपातान्तक रस ।

शुद्धसूतः समो गन्धो दरदं शुद्धखर्परम् ।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥ २०५ ॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं प्रत्यहं भावना पृथक् ।
दातव्यं तच्चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य रसैः सह ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातान्तको रसः २०४

शुद्ध पारा, गन्धक, सिंग्रफ और खपरिया यह सब एक एक भाग तथा पारेसे दो गुनी तांबेकी भस्म और अमलवेत इन सबको भांगरेके रसमें सात भावना देवे। इसकी चार रत्तीकी मात्रा है। अदरखके रसके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे शीघ्र ही सन्निपात ज्वर नष्ट होजाता है। इसको सन्निपातान्तक रस कहते हैं ॥ २०४ ॥ २०५ ॥

अथ जीर्णज्वर विषमज्वर चिकित्सा ।

अथ विषमज्वर लक्षण ।

यः स्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यां तथैव च ।
वेगतश्चापि विषमः स ज्वरो विषमः स्मृतः॥२०६॥

जिस ज्वरमें ज्वरके आगमनका समय अनियमित हो, तथा शीत और उष्णता भी अनियत हो और ज्वर कभी समान स्थितिमें स्थित नहीं होय उसको विषमज्वर कहते हैं ॥ २०६ ॥

जीर्णज्वरके लक्षण ।

त्रिसप्ताहव्यतीतस्तु ज्वरो यस्तनुतां गतः ।
प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते ॥ २०७ ॥

इक्कीस २१ दिन तक भी जो ज्वर नहीं पके किंतु सूक्ष्म होजाये तथा मंदाग्नि और प्लीहा आदि रोग उत्पन्न होजायँ तो उसको जीर्णज्वर कहते हैं ॥ २०७ ॥

ज्वरांकुश रस ।

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धतुल्यञ्च टंकणम् ।
रसतुल्यं विषं योज्यं मरिचं पंचधा विषात्॥२०८॥
कट्फलं दन्तिबीजञ्च प्रत्येकं मरिचोन्मितम् ।
ज्वरांकुशो रसो नाम मर्दयेद्याममात्रकम् ।
माषैकेन निहन्त्याशु ज्वरं जीर्णं त्रिदोषजम्॥२०९॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, सुहागा २ भाग, विष १ भाग, कालीमिरच, कायफल और जमालगोटे यह तीनों पांच पांच भाग, इन सबको एकत्र करके एक प्रहर तक खरल करे । इस औषधिके १ मासा सेवनसे त्रिदोषज जीर्णज्वर नष्ट होता है । इसको जीर्णज्वरांकुश रस कहते हैं ॥ २०८–२०९ ॥

ज्वरारि अभ्रक ।

अभ्रं ताम्रं रसं गन्धं विषश्चैव समं समम् ॥२१०॥
द्विगुणं धूर्त्तबीजञ्च व्योषं पञ्चगुणं मतम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटी कार्या द्विगुंजिका ॥ ११ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः ।
अभ्रं ज्वरारिनामेदं सर्वज्वरविनाशनम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥१२॥
विषमाख्याञ्ज्वरान्सर्वान्धातुस्थान्विषमज्वरान् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्रमांसं सशोथकम् ॥ १३ ॥
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च मन्दानलमरोचकम् ।
नाशयेन्नात्र सन्देहो वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ १४ ॥

अभ्रकभस्म, तांबेकी भस्म, पारा, गंधक और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, धतूरेके बीज दो भाग और त्रिकुटेका चूर्ण पांच भाग इन सबको एकत्र अदरखके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । रोगीके बलाबलको विचार कर अनुपानकी व्यवस्था करके औषधि सेवन करावे । इसको ज्वरारि अभ्रक कहते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे वातज, पित्तज, श्लैष्मिक और सान्निपातिक ज्वर, सर्वधातुगत विषम ज्वर, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अग्रमांस, शोथ, हिक्का, श्वास, खांसी, मंदाग्नि और अरुचि रोग निश्चय नष्ट होजाते हैं, जिस प्रकार वज्रसे वृक्षोंके समूह तत्काल नष्ट होजाते हैं इसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे उपरोक्त रोग शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं ॥ २१०–२१४ ॥

ज्वराशनि रस ।

रसं गन्धं सैंधवञ्च विषं ताम्रं समांशकम् ।
सर्वचूर्णसमं लौहं तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ १५ ॥

लौहे च लौहदण्डेन निर्गुण्डीस्वरसेन च ।
मर्द्दयेद्यत्नतः पश्चान्मरिचं सूततुल्यकम् ॥ १६ ॥
नागवल्ल्या दलेनैव दातव्यो रक्तिसम्मितः ।
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठो ज्वरान् हन्ति सुदारुणान् ॥१७॥
कासं श्वासं महाघोरं विषमाख्यं ज्वरं वमिम् ।
धातुस्थं परमं दाहं ज्वरं दोषत्रयोद्भवम् ॥ १८ ॥

पारा, गंधक, सेंधानमक, विष और तांबेकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, लोहभस्म पांच भाग, अभ्रक भस्म पांच भाग इन सब औषधियोंको एकत्र लोहेके खरलमें डालकर सम्हालूके रसमें लोहेके डंडेसे खरल करे। फिर इसमें एक भाग काली मिरचोंका चूर्ण मिलाकर खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिका पानके रसके साथ रोगीको सेवन करावे। इसके सेवन करनेसे दारुण त्रिदोष ज्वर, विषमज्वर, सब प्रकारके ज्वर, खाँसी, श्वास, वमन, धातुस्थ ज्वर और दाह नष्ट होते हैं। इसको ज्वराशनि रस कहते हैं ॥ १५-१८ ॥

अर्द्धनारीश्वर रस।

रसगन्धौ समौ शुद्धौ विषं ग्राह्यश्च तत्समम् ।
जैपालं तत्समं ग्राह्यं मरिचञ्च चतुर्गुणम् ॥ १९ ॥
त्रिफलाया रसैर्मर्द्यं भावना पञ्चधा तथा ।
जम्बीराणां द्रवैर्नस्यमेकस्मिन्नासिकापुटे ॥ २० ॥
शरीरार्द्धगतं घोरं ज्वरं हन्ति न संशयः ।
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसः शम्भुप्रकीर्तितः ॥ २१ ॥

पारा और गंधक एक एक भाग, विष दो भाग, जमालगोटे दो भाग और कालीमिरच चार भाग इन सब औषधियोंको त्रिफलेके

रसमें पांच भावना देवे । इस औषधिको जम्बीरी नींबूके रसमें भिगोकर एक ओरकी नासिकाके छिद्रमें नास देनेसे अर्द्धशरीरगत घोरतर ज्वर नष्ट होजाता है । इसको अर्द्धनारीश्वर रस कहते हैं । इसको स्वयं महादेवने कहा है ॥ १९-२१ ॥

चन्दनादिलोह ।

रक्तचन्दनह्रीबेरपाठोशीरकणा शिवा ।
नागरोत्पलधात्रीभिस्त्रिमदेन समन्वितम् ॥
लोहं निहन्ति विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥ २२ ॥

लाल चंदन, सुगंधवाला, पाढ़, खस, पीपल, हरड़, सोंठ, नीलोफर, आमले, वायविडंग, चीता और नागरमोथा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहेकी भस्म १२ भाग इन सबको एकत्र करके सूक्ष्म चूर्ण बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट होता है । इसको चन्दनादि लोह कहते हैं ॥ २२ ॥

ज्वरारि रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं विषश्चैव कटुत्रयम् ।
नागभस्म शिला चैव प्रत्येकं कर्षमानकम् ॥ २३ ॥
शुद्धतालार्द्धकर्षञ्च शुल्वमेकत्र कारयेत् ।
धूस्तूरस्य च बीजानि कार्षिकाणि प्रकल्पयेत् ॥ २४ ॥
रोहितमत्स्यपित्तेन अर्कक्षीरार्द्रकाम्बुना ।
मर्दयेदुदयास्तञ्च चणकाभा वटी कृता ॥ २५ ॥

पारा दो भाग, गंधक चार भाग, विष ४ भाग, विषके समान त्रिकुटेका चूर्ण, नागभस्म और मैनशिल यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग, हरितालभस्म एक भाग, तांबेकी भस्म एक भाग और धतूरेके बीज दो भाग इन सबको रोहूमछलीके पित्तेमें, अदरखके रसमें और आकके दूधमें एक दिन तक खरल करके चणेकी बराबर गोली बना लेवे ॥ २३-२५ ॥

आर्द्रकस्य रसैः कर्षैर्मधु माषसमायुतम् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय ज्वरारिरससंज्ञितम् ॥ २६ ॥
वातिकं पैत्तिकं चैव कफजं नाशयेद् ध्रुवम् ।
वातपित्तसमुद्भूतं वातश्लैष्मिकमेव च ॥ २७ ॥
भयोत्पत्तिकमेवापि शोकोत्पन्नमथापि वा ।
अभिचाराभिशापोत्थं भूतोत्थञ्च ज्वरं जयेत्॥२८॥
मेदःप्राप्तं सन्ततं च रसस्थं तु ज्वरं तथा ।
सन्निपातज्वरे देयो मधुव्योषसमायुतः ॥ २९ ॥
घर्मं पित्तं तथा कम्पं दाहं हन्ति न संशयः ।
इन्द्रवज्रं तथा वृक्षं तथा ज्वरविनाशनः ॥२३०॥

प्रातःकाल मुख धोकर एक तोले अदरखके रसके साथ और एक मासे शहतके साथ सेवन करे। इसको ज्वरारिरस कहते हैं। इस औषधिको उक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, वातपैत्तिक, वातश्लैष्मिक, भयज्वर, शोकज्वर, अभिचार-जनित, शापजनित, भूतोत्पन्न, सन्तत, मेदोगत और रसस्थ ज्वर दूर होता है। इस औषधिका शहत और त्रिकुटेके चूर्णके साथ सन्निपात ज्वरमें प्रयोग करे। इस औषधिके सेवन करनेसे निश्चय ही ज्वर शमन होता है, घर्म्म, कम्प और दाह दूर होते हैं। जिस प्रकार वज्रके गिरनेसे वृक्षोंके समूह नष्ट होजाते हैं उसीप्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारके ज्वर नष्ट होजाते हैं ॥ २२६–२३० ॥

वर्जयेत्क्षीरं मांसं च दधि तक्रं सुरां घृतम् ।
ज्वरे मांसास्थिगे चैव रक्तस्थे तु ज्वरे नृणाम्॥३१॥
शैत्ये दाहे तथा घर्मे प्रलापे चातुराहिके ।
महावेगे ज्वरे चैव जीर्णज्वरे प्रदापयेत ॥ ३२ ॥

इस औषधिके ऊपर दूध, मांस, दही, तक्र, मदिरा और घृतको त्याग देवे। मांसगत, अस्थिगत, रक्तज्वर, शीतज्वर, दाहज्वर, घर्म्म, प्रलाप, चातुर्थिकज्वर, महावेगवान् ज्वर और जीर्णज्वर इन सबमें इसका प्रयोग करे॥ ३१॥ ३२॥

सर्वज्वरहर लोह।

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥३३॥
किराततिक्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका।
शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं वत्सकैः समम् ॥३४॥
लोहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरन्तथा ॥ ३५ ॥

चित्रकमूल, त्रिफला, त्रिकुटा, वायविडंग, नागरमोथा, गजपीपल, पीपलीमूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाढ, कुटकी, कटेरी, सुहांजनके बीज, मुलैठी और कुड़ेके बीज यह सब वस्तु समान भाग लेवे और सबकी बराबर लोहभस्म लेकर गोलियां बना लेवे। इसको सर्वज्वरहर लोह कहते हैं। यह औषधि सब प्रकारके रोगोंको दूर करती है ३३-३५

वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
द्वन्द्वजं विषमाख्यं च धातुस्थं च ज्वरञ्जयेत् ॥३६॥
शीतं कम्पं तृषादाहं घर्मस्रुतिवमिभ्रमीन्।
रक्तपित्तमतीसारं मंदाग्निं कासमेव च ॥ ३७ ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सामवातं सुदारुणम्।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छा पाण्डुं हलीमकम् ॥३८॥
अजीर्णं ग्रहणीं चैव यक्ष्माणं शोथमेव च।

बल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिषूदनम् ।
सर्वज्वरहरं लौहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥ ३९ ॥

इस औषधिके सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम और धातुस्थज्वर तथा शीत, कम्प, तृषा, दाह, पसीना, वमन, भ्रम, रक्तपित्त, अतिसार, मन्दाग्नि, खाँसी, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, दारुण आमवात, अर्श, घोरतर उदररोग, मूर्छा, पांडु, हर्लीमक, अजीर्ण, ग्रहणी, यक्ष्मा और शोथरोग ये नष्ट होते हैं। यह सर्वज्वरहर लोह अत्यंत बलकारक, शुक्रवर्द्धक, पुष्टिकारक और सर्वरोगनाशक है। यह चन्द्रनाथने कहा है ॥ ३६-३९ ॥

बृहत्सर्वज्वरहर लोह ।

पारदं गंधकश्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ ४० ॥
कान्तलोहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥ ४१ ॥
कारवेल्लरसैर्वापि दशमूलरसेन च ।
पर्पटचाश्च कषायेण त्रिफलाक्काथकेन वा ॥ ४२ ॥
गुडूच्याः स्वरसेनैव नागवल्लीरसेन च ।
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्डयाः स्वरसैस्तथा ॥ ४३ ॥
पुनर्नवार्द्रकाम्भोभिर्भावनाः परिकीर्त्तिताः ।
रक्तिकादिक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ४४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, तांबाभस्म, अभ्रकभस्म, सोनामाखीभस्म, सुवर्णभस्म, रूपाभस्म, शुद्ध हरितालभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला और कान्तलोहभस्म चार तोले लेवे. इन सबको एकत्र करके करेला, दशमूल, पित्तपापडा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, सम्हालू,

पुनर्नवा और अदरख इन प्रत्येकके रसमें सात सात वार भावना देवे और एक एक रत्तीकी गोलियां बना लेवे ॥ २४०-२४४ ॥

गुडपिप्पलिसंयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी।
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरमथापि च ॥ ४५ ॥
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवं तथा।
सततादिज्वरं हंति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ४६ ॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवं तथा।
भूतावेशभवञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा ॥ ४७ ॥
अभिघातज्वरञ्चैव तथाभीचारसंभवम्।
अभिन्यासं महाघोरं विषमं त्र्याहिकं तथा ॥ ४८ ॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम्।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥ ४९ ॥
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थिकविपर्ययम्।
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमांद्यं महागदम् ॥२५०॥
एतान्सर्वान्निहंत्याशु पक्षार्द्धेन न संशयः।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेद्विडसंयुतम् ॥ ५१ ॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न बलवान् भवेत्।
सर्वज्वरहरं लौहं दुर्लभं परिकीर्त्तितम् ॥ ५२ ॥

एक गोली गुड़ और पीपलके चूर्णके साथ सेवन करनेसे आठ प्रकारका ज्वर नष्ट होता है। यह औषधि जीर्णज्वर, जलदोषजनित तथा अन्यान्य दोषजनित सततादिज्वर, साध्य असाध्य क्षयज धातुस्थ कामज शोकज भूतावेशज त्रिदोषजज्वर, अभिघात ज्वर, अभिचार-सम्भव ज्वर, घोरतर अभिन्यासज्वर, त्र्याहिकज्वर, शीतज्वर, दाहपूर्वक

ज्वर, सन्निपातज्वर, विषमज्वर, प्रलेपक ज्वर, घोरतर अर्द्धनारीश्वर-ज्वर, प्लीहज्वर, चातुर्थिक ज्वर, विपर्ययज्वर तथा ज्वर खाँसी, पाण्डु, कामला और मंदाग्नि प्रभृति समस्त उत्कट रोग केवल एक सप्ताहमें दूर होजाते हैं । इस औषधिका सेवन करके शालिचावलोंका भात, विडनमक और तक्रके साथ भोजन करे और ककोड़ा, करेला, कद्दू, ककड़ी आदि ककारादिगणकी सब वस्तु त्याग देवे औ जबतक रोगी बलवान् न हो तबतक स्त्रीका संभोग त्याग देवे । इस दुर्लभ लोहको बृहत्सर्वज्वरहर लोह कहते हैं ॥ ४९-५२ ॥

महाराजवटी ।

रसगंधकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥ ५३ ॥
स्वर्णं ताम्रं च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम् ।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवंगकम् ॥ ५४ ॥
कोकिलाक्षं विदारी च मूसली शूकशिंबिकम् ।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥५५॥
माषद्वयमितं भागं तालमूल्या रसेन च ।
पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥५६॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला; विधारा, वंगभस्म और लोहभस्म यह प्रत्येक ६-६ मासे; सुवर्णभस्म, कपूर और तांबाभस्म यह प्रत्येक तीन तीन मासे; भांग, सतावर, सुफेद राल, लौंग, तालमखाना, विदारीकन्द, मुसली, कौंचके बीज, जायफल, जावित्री, खिरैंटी और गंगेरन यह प्रत्येक औषधि दो दो मासे लेवे, इन सबको एकत्र करके मुसलीके रसमें खरल करके चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे ॥ ५३-५६ ॥

मधुना भक्षयेत्प्रातर्विषमज्वरशांतये ।
धातुस्थांश्च ज्वरान्सर्वान्हन्यादेव न संशयः ॥२५७॥
वातिकं पैत्तिकश्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
ज्वरं नानाविधं हंति कासं श्वासं क्षयन्तथा ॥२५८॥
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत्सदा ।
न च शुक्रक्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥२५९॥
ऊर्ध्वंग श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम् ।
कामलां पांडुरोगश्च प्रमेहं रक्तपित्तकम् ॥
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥२६०॥

इस औषधिको शहतके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट होता है तथा सब प्रकारके ज्वर, धातुगतज्वर, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक प्रभृति अनेक प्रकारके ज्वर खाँसी, श्वास और क्षय रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे बलकी वृद्धि होती है, शरीर पुष्ट होता है और सदैव स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे भी वीर्य क्षीण नहीं होता है, तथा दारुण कफोल्बण सन्निपात, कामला, पांडुरोग, प्रमेह और रक्तपित्त नष्ट होता है । इसको महाराजवटी कहते हैं । यह राजाओंको सेवन करनी उचित है ॥ २५७-२६० ॥

चिन्तामणि रस ।

हाटकं रजतं तालं मुक्ता गन्धकपारदौ ।
त्रिकटु कुनटी चैव कस्तूरी च पृथक् पृथक् ॥२६१॥
जलेन वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
चिन्तामणिरसो ह्येष ज्वराष्टानां निकृन्तनः ॥२६२॥

सुवर्णभस्म, रूपाभस्म, शुद्ध हरिताल भस्म, मोती भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, त्रिकुटा, मैनशिल और कस्तूरी यह सब औषधि समान भाग

लेकर जलसे दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इसको चिन्तामणि रस कहते हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे आठ प्रकारका ज्वर नष्ट होता है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

त्रैलोक्यचिन्तामणि रस ।

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं तारमभ्रकम् ।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकत्रयसम्मितम् ॥ ६३ ॥
भस्मसूतं सप्तकञ्च सर्वं मर्द्यं तु कन्यया ।
छायाशुष्का वटी कार्या छागीदुग्धानुपानतः ॥६४॥
क्षयं हन्ति तथा कासं गुल्मं चापि प्रमेहनुत् ।
जीर्णज्वरहरश्चायमुन्मादन्तु निकृन्तति ॥
सर्वरोगहरश्चापि वारिदोषनिवारणः ॥ ६५ ॥

सोनाभस्म ३ भाग, चांदीभस्म २ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग, लोहभस्म ५ भाग, मूंगा भस्म ५ भाग, मोती भस्म ३ भाग और रससिन्दूर या पारद भस्म सात भाग इन सब औषधियोंको एकत्र घृत-कुमारी (घीकार) के रसमें उत्तम रीतिसे खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना छायामें सुखा लेवे। इस औषधिको बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे क्षय, खाँसी, गुल्म, प्रमेह, जीर्णज्वर, उन्माद, वारिदोष आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं। इसको त्रैलोक्यचिन्तामणि रस कहते हैं ॥ ६३–६५ ॥

रसं गन्धं विषञ्चैव त्रिकटु त्रैफलन्तथा ।
शिलाह्वा रौप्यकं स्वर्णं मौक्तिकं तालकं समम्॥६६॥
मृगकस्तूरिकायाश्च ग्राह्यं षाणमाषिकं भिषक् ।
भृङ्गराजरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन वा ॥ ६७ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम् ।
चिन्तामणिरसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥ ६८ ॥

संनिपातज्वरहरः कफरोगं विनाशयेत् ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव विविधं विषमज्वरम् ॥ ६९ ॥
अग्निमांद्यं शिरःशूलं विद्रधिं सभगन्दरम् ।
एतान्येव निहंत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥२७०॥

पारा, गन्धक, विष, त्रिकुटा, त्रिफला, मैनशिल, रूपाभस्म, सोनाभस्म, मोतीभस्म और हरितालभस्म यह सब प्रत्येक एक एक तोला, कस्तूरी छः मासे इन सबको एकत्र करके भांगरे, तुलसी और अदरखके रसमें अलग अलग भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। (कस्तूरी भावना देनेके बाद डालना चाहिये) इसको बृहच्चिन्तामणि रस कहते हैं। यह सब रोगोंको नष्ट करता है। जिसप्रकार सूर्योदयसे अन्धकारका समूह नष्ट होजाता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर, कफज रोग, एकदोषज और द्वन्द्वज ज्वर, विविध प्रकारके विषमज्वर, मंदाग्नि, शिरःशूल, विद्रधि और भगन्दररोग नष्ट होते हैं ॥ २६६–२७० ॥

विषमज्वरान्तक लोह ।

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलम् ।
रसपर्पटिवत्पाच्यं सूतांघ्रिहेमभस्मकम् ॥ ७१ ॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसार्द्धञ्च विनिःक्षिपेत ॥ ७२ ॥
मुक्ता शङ्खं शुक्तिभस्म रसपादिकमेव च ।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ ७३ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणा हिंगु ससैन्धवम् ॥ ७४ ॥

सिंग्रफसे निकाला हुआ पारा और गन्धक इन दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर पर्पटीके समान पका लेवे। ऐसे उपरोक्त पर्पटी एक

भाग, सुवर्णभस्म पारदसे चतुर्थांश (चौथाई भाग), लोहाभस्म, तांबाभस्म और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक पारेसे दो दो भाग, वंगभस्म और प्रवाल (मूंगा) भस्म प्रत्येक पारेसे अर्द्ध भाग; मोती, शंख और सीपकी भस्म प्रत्येक पारेसे चौथाई भाग इन सबको एकत्र करके एक सीपमें भरकर पुटपाककी विधिसे पकावे। प्रातःकाल उठकर दो दो रतीप्रमाण इस औषधिका पीपलके चूर्ण, हींग और सेंधानमकके साथ सेवन करे ॥ ७१-७४ ॥

ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापिवा ॥ ७५ ॥
संततं सतताख्यञ्च त्र्याहिकं चातुराहिकम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥ ७६ ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासञ्च दारुणम्।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥ ७७ ॥

इस औषधिके सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक और श्लैष्मिकादि अष्टविध ज्वर, सन्तत, सतत, त्र्याहिक और चातुर्थिक ज्वर, प्लीहा, यकृत् रोग, साध्यासाध्य गुल्म, कामला, पाण्डु, सूजन, प्रमेह, अरुचि, संग्रहणी, आमाशयगत रोग, दारुण कास, श्वास, मूत्रकृच्छ्र और अतिसार शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं। इसको विषमज्वरान्तक लोह कहते हैं ॥ ७५-७७ ॥

बृहद्विषमज्वरान्तक लोह।

शुद्धसूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रञ्च ताम्रकम् ॥ ७८ ॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकञ्चापि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ७९ ॥
निर्गुण्डी नागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफला कारवेल्लञ्च दशमूली पुनर्नवा ॥२८०॥

गुडूची वृषकश्चापि सभृङ्गकेशराजकः ।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ ८१ ॥

प्रथम शुद्ध पारे और गंधकको खरल करके कज्जली बना लेवे और फिर इस कज्जलीकी बराबर रससिन्दूर या पारद भस्म, सुवर्णभस्म, रूपाभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, तांबेकी भस्म, हारिताल भस्म, वंग-भस्म, मोती, मूंगा और सोनामाखीकी भस्म यह सब द्रव्य समान लेकर एकत्र चूर्ण करके सम्हालू, पान, मकोय, पित्तपापडा, त्रिफला, करेला, दशमूल, पुनर्नवा, गिलोय, अडूसा, भांगरा और कुकुरभांगरा इन प्रत्येकके रसमें तीन दिन तक अलग अलग भावना देवे॥ २७८–२८१॥

गुञ्जामानां वटीं कुर्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक् ।
पिप्पलीगुडकेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥८२॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा ।
सप्तधातुगतश्चापि नानादोषोद्भवं तथा ॥ ८३ ॥
सततादिज्वरं हंति साध्यासाध्यमथापिवा ।
अभिघाताभिचारोत्थं जीर्णज्वरं विशेषतः ॥ ८४ ॥

पश्चात् कार्यमें दक्ष वैद्य इसकी एक एक रत्तीकी गोली बनालेवे । इन गोलियोंको पीपल और गुड़के साथ मिलाकर सेवन करे तो आम (अपक्क) और निराम (पक्क) अष्टविध ज्वर, सप्तधातुगत ज्वर, नानादोषोद्भव सततादि ज्वर, साध्यासाध्य अभिघात और अभिचार-जात ज्वर और विशेषकर जीर्ण ज्वर नष्ट होता है । इसको बृहद्विषम-ज्वरान्तक लोह कहते हैं ॥ ८२–८४ ॥

शीतभञ्जी रस ।

तालकं दरदोद्भूतपारदो गन्धकः शिला ।
क्रमवृद्धया ताम्रपात्रीं द्रवैरेतैर्विलेपयेत् ॥ ८५ ॥

अधोमुखीं दृढे भाण्डे तां निरुध्याथ पूरयेत् ।
चुल्ल्यां वालुकया यन्त्रमग्निं प्रज्वालयेद्दृढम् ॥८६॥
शीते संचूर्ण्य माषोऽस्य नागवल्लीदले स्थितः ।
भक्षितो मरिचैः सार्द्धं समस्तान्विषमज्वरान् ॥
शीतदाहादिकं हन्यात्पथ्यं शाल्योदनं पयः ॥८७॥

हरिताल १ भाग, सिंग्रफसे निकाला हुआ पारा २ भाग, गन्धक ३ भाग और मनशिल ४ भाग इन सबको (भांगरेके रसमें) खरल कर एक तांबेकी कटोरीमें लेप कर दे; इस लिपी हुई कटोरीको एक पक्की हांडीमें अधोमुख रख दे जिससे लिपी हुई औषधी बीचमेंही रहे इस प्रकार रख सन्धि लेप करके इस हांडीको वालूरेतसे भर देवे। इस यन्त्रको चूल्हेपर चढ़ा नीचे तीव्र अग्नि जलावे बारह पहर अग्नि देकर फिर शीतल होनेपर यत्नसे वालुरेतको अलग कर उस तांबेकी कटोरीके बीचसे रस निकालकर पीस लेवे। इसको एक माष बराबर पानमें रखकर खावे, ऊपरसे कालीमिरचें चबावे तथा उत्तम शाली चावलोंका भात और दूध पथ्य सेवन करे तो सब प्रकारके विषमज्वर, शीतपूर्वक ज्वर और दाहपूर्वक ज्वर नष्ट होते हैं। इसको शीतभञ्जी रस कहते हैं ॥ ८५–८७ ॥

चिन्तामणि रस ।

तालकं शुल्वकं चूर्णं शिखिग्रीवं समांशकम् ।
संपिष्य कारयेत्सर्वं चक्रिकासन्निभं शुभम् ॥८८॥
शरावपिहितं रात्रौ पचेद् गजपुटेन तु ।
स्वांगशीतं समुद्धृत्य भक्षयेन्माषमात्रकम् ॥
शर्करासहितं सेव्यं सर्वज्वरहरं परम् ॥ ८९ ॥

हरिताल; शुद्ध तांबेका चूर्ण और शुद्ध नीलाथोथा इन सबको समभाग लेकर (घीकुमारके रसमें) खरलकर गोल टिकिया बना ले,

इन टिकियोंको दो शरावोंमें बन्दकर कपड़मिट्टी कर सुखा लेवे, इस सम्पुटको रात्रिके समय गजपुटमें रखकर अग्नि देवे दूसरे दिन शीतल होनेपर निकालकर पीस ले । इसमेंसे एकमासे प्रमाण खांडमें रखकर खावे तो सब प्रकारके ज्वर दूर होते हैं ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

ज्वरांकुश रस ।

ताम्रतो द्विगुणं तालं मर्दयेत्सुषवीद्रवैः ।
प्रपुटेद्भूधरे शीते वज्रीक्षीरैर्विमर्दयेत् ॥ २९० ॥
प्रपुटेद्भूधरे पश्चात्पञ्चगुञ्जामितं शुभम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सर्वज्वरनिकृन्तनः ॥ ९१ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्चातुराहिकम् ।
विषमञ्चापि शीताढ्य ज्वरं हन्ति ज्वरांकुशः ॥९२॥

तांबा भस्म १ भाग, हरिताल भस्म २ भाग इन दोनोंको एकत्र करेलेके रसमें पीसकर भूधरयन्त्रमें पकावे । शीतल होनेपर थूहरके दूधमें खरल करके फिरसे पुटपाककी रीतिसे पकावे । पांच रत्ती भर इस औषधिको अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, विषम और शीताढ्य प्रभृति सब प्रकारका ज्वर नष्ट होता है । इसको ज्वरांकुश रस कहते हैं ॥ २९०–२९२ ॥

मेघनाद रस ।

अभ्रं कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यञ्च गन्धकम् ।
रसेन मेघनादस्य पिष्ट्वा बद्ध्वा पुटे पचेत् ॥ ९३ ॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनम् ।
अस्य मात्रा द्विगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ॥९४॥

अभ्रक भस्म, काँसा भस्म और तांबा भस्म यह प्रत्येक एक एक भाग और गंधक ३ भाग इन सबको एकत्र चौलाईके रसमें खरल

करके पुटपाक करे । फिर इसका चूर्ण करके दो रत्ती परिमाण पानके रसके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट होता है । इस औषधिके सेवन करनेपर दूधके साथ भात खाय । इसको मेघनाद रस कहते हैं ॥ ९३॥९४॥

शीतज्वरहर रस ।

सूतमाक्षिकगन्धानां भागश्चारुष्करस्य च ।
तथाष्टौ तालकाच्चूर्णाद्रविदुग्धस्य षोडश ॥९५॥
स्नुहीक्षीरस्य चैवाष्टौ सर्वं मृद्वग्निना पचेत् ॥
स्वांगशीतं समुद्धृत्य ततः खल्ले विमर्दयेत् ।
शीतज्वरहरो नाम्ना रसोऽयं परिकीर्तितः ॥ ९६ ॥

पारा, सोनामाखी भस्म, गंधक और भिलावे यह सब औषधि एक एक भाग, हरिताल आठ भाग, आकका दूध १६ भाग, थूहरका दूध आठ भाग इन सब द्रव्योंको एकत्र करके अग्निमें मृदुपाक करे शीतल होनेपर खरलमें पीस लेवे । इसको शीतज्वरहर रस कहते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे शीतज्वर नष्ट होजाता है ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

शीतभञ्जी रस ।

पारदं रसकं तालं तुत्थं टंकणगन्धकम् ।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेल्लरसैर्दिनम् ॥ ९७ ॥
मर्दयेत्तेन कल्केन ताम्रपात्रोदरं लिपेत् ।
अंगुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥ ९८ ॥
यन्त्रे यावत्स्फुटन्त्येव व्रीहयस्तस्य पृष्ठतः ।
ततस्तच्छीतलं ग्राह्यं ताम्रपात्रोदराद्भिषक् ॥ ९९ ॥
माषैकं पर्णखण्डेन भक्षयेन्मरिचैः समम् ।
शीतभञ्जीरसो नाम त्रिदिनान्नाशयेज्ज्वरम् ॥ २०० ॥

पारा, खपरिया, हरिताल, तूतिया, सुहागा और गंधक इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर करैलेके रसमें एकत्र खरल करके एक तांबेके पात्रमें चौथाई अंगुल परिमाण ऊंचा लेप करदेवे और फिर उसको हांडीके मध्यमें औधाकर वालुकायन्त्रमें पकावे । वालूके ऊपर धान आदि अन्न बिछा देवे । जब देखे कि धान फटने लगे अर्थात् उनकी खीले होने लगें तब इसको शीतल होनेपर उतार कर तांबेके पात्रमें स्थित औषधिको ग्रहण कर लेवे । इस औषधिको एक मासे परिमाण पान और मरिचोंके साथ भक्षण करे । इसको शीतभञ्जी रस कहते हैं । इस औषधिके भक्षण करनेसे तीन दिनमें सब प्रकारका ज्वर नष्ट होजाता है ॥ २९७-३०० ॥

पञ्चानन रस ।

रसकं तालकं तुत्थं टंकणं रसगन्धकम् ।
तुल्यांशं सुषवीतोयैर्मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ ३०१ ॥
कृत्वा गोलं ताम्रपात्रेणाधोवक्त्रेण रोधयेत् ।
स्थालीं मृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पचेच्चुल्ल्यां दिनं ततः ३०२
तच्छीतं ताम्रभस्मापि गृह्णीयात्सुरसाजलैः ।
यामं मर्द्यं ततो वल्लं तुलसीमरिचैर्युतम् ॥३०३॥
हन्ति सर्वज्वरं घोरं विषमञ्च त्रिदोषजम् ।
धात्रीकल्केन वा युक्तं दाहाख्यं विषमं जयेत् ३०४॥
पथ्यं दुग्धौदनं दद्यान्मुद्गयूषं सशर्करम् ।
ज्वरे धातुगते दद्यात्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ।
अयं पञ्चाननो नाम विषमज्वरनाशनः ॥३०५॥

खपरिया, हरिताल, तूतिया, सुहागा, पारा और गंधक यह सब औषधि समान भाग लेकर करेलेके रसमें दो प्रहर तक खरल करके एक हांडीमें रखकर ऊपरसे एक तांबेके पात्रसे ढककर सन्धि लेप

कर उस हांडीको वालूसे परिपूर्ण कर देवे। फिर उस हांडीको चूल्हे-पर चढा देवे और एक दिन तक यथाविधिसे पकावे। फिर इसके शीतल होनेपर ताम्रभस्म और वह औषध एक पहर तुलसीके रसमें खरल करे। फिर यह औषधि तीन रत्ती तुलसीके रस और काली-मिरचोंके चूर्णके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे विषमज्वर और घोरतर त्रिदोषज्वर नष्ट होता है। आमलोंके कल्कके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर, दाहज्वर नष्ट होजाते हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे दूधके साथ भात अथवा मिश्रीके साथ मूंगका यूष पथ्य देवे। धातुगतज्वरमें पीपलके चूर्ण और शहतके साथ यह औषधि सेवन करे। इसको पञ्चानन रस कहते हैं। यह औषधि सब प्रकारके विषमज्वरोंको दूर करती है॥ ३०१-३०५॥

वमनयोग।

कुमारीमूलकर्षैकं पिबेत्कोष्णजलेन तु।
विषमन्तु ज्वरं हन्ति वमनेन चिरन्तनम्॥ ३०६॥

घीकारकी जड़ एक तोला परिमाण लेकर गरम जलके साथ पीस-कर पान करनेसे वमन होकर पुराना विषमज्वर नष्ट होता है॥३०६॥

विश्वेश्वर रस।

दरदं गन्धकं सूतं तुल्यांशं मर्दयेद्द्रवैः।
अश्वत्थजेरुयहं पश्चाद्रसैः कानकमूलजैः॥ ३०७॥
निदिग्धिकारसैः काकमाचिकाया रसैः पुनः।
द्विगुञ्जां वा त्रिगुञ्जां वा गोक्षीरेण प्रदापयेत्॥
रात्रिज्वरं निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रसः॥३०८॥

सिंग्रफ, गंधक और पारा यह तीनों औषधि समान भाग लेकर पीपलकी छाल, धतूरेकी जड़, कटेरी और मकोय इन प्रत्येकके रसमें तीन दिन तक खरल करके पश्चात् रोगीकी अवस्थाको विचार कर

दो अथवा तीन रत्ती परिमाण गायके दूधके साथ इस औषधिका सेवन करे। इस औषधिके सेवन करनेसे रात्रिज्वर नष्ट होता है। इसको विश्वेश्वर रस कहते हैं ॥ ३०७ ॥ ३०८ ॥

त्र्याहिकारि रस।

रसेन गन्धं शंखञ्च शिखिग्रीवञ्च पादिकम्।
गोजिह्वया जयन्त्या च तण्डुलीयैश्च भावयेत्॥३०९॥
प्रत्येकं सप्त सप्ताथ शुष्कं गुञ्जाचतुष्टयम्।
जरणेन घृतेनाद्यात् त्र्याहिकज्वरशान्तये ॥३१० ॥

पारा ४ भाग, गन्धक, शंखभस्म और तूतिया एक एक भाग लेवे। इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग सात वार भावना देकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिको जीरेके चूर्ण और घृतके साथ सेवन करनेसे त्र्याहिक ज्वर नष्ट होता है॥ ३०९ ॥ ३१० ॥

चातुर्थिकारि रस।

हरितालं शिलां तुत्थं शंखचूर्णञ्च गन्धकम्।
समांशं मर्दयेत्प्राज्ञः कुमारीरसभावितम् ॥ ११ ॥
शरावसंपुटे कृत्वा पश्चाद्गजपुटे पचेत्।
कुमारिकारसेनैव वल्लमात्रा वटी कृता ॥ १२ ॥
दत्ता शीतज्वरं हन्ति चातुर्थिकं विशेषतः।
मरीचघृतयोगेन तक्रं पीत्वा चरेद्वटीम्॥
एतया वमनं भूत्वा ज्वरश्शीघ्रं विनश्यति ॥ १३ ॥

हरिताल, मैनाशिल, तूतिया, शंख और गन्धक यह सब द्रव्य समान भाग लेकर घीकारके रसमें एकत्र खरल करे। फिर इसको शरावसम्पुटमें रखकर गजपुटमें पकावे। फिर घीकारके रसमें खरल

करके तीन तीन रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे शीतज्वर और चातुर्थिकज्वर नष्ट होता है। यह वटिका खानेके पहले तक्र पीकर ऊपरसे कालीमिरचोंका चूर्ण घीके साथ सेवन करे तो वमन होकर शीघ्र ही ज्वर नष्ट होजाता है। इसको चातुर्थिकारि रस कहते हैं ॥ ११-१३ ॥

चिन्तामणि रस ।

रसं गन्धं विषं शुल्वं मृतमभ्रं फलत्रिकम् ।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च समं खल्ले विमर्दयेत् ॥ १४ ॥
द्रोणपुष्पीरसैर्भाव्यं शुष्कं तद्वस्त्रगालितम् ।
चिन्तामणिरसो ह्येष अजीर्णे शस्यते सदा ॥१५॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति सर्वशूलहरः परः ।
गुञ्जैकं वा त्रिगुञ्जं वा देयमार्द्रकवारिणा ॥ १६ ॥

पारा, गन्धक, विष, तांबेकी भस्म, अभ्रकभस्म, त्रिफला, त्रिकुटा और जमालगोटा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसमें भावना देकर सुखा लेवे । फिर इसको बारीक वस्त्रमें छान लेवे । इसको चिन्तामणि रस कहते हैं । अजीर्णरोगमें यह औषधि अतीव हितकारी है, रोगीकी अवस्थाको विचार कर यह औषधि एक रत्तीसे तीन रत्ती परिमाण तक अदरखके रसके साथ सेवन करे । इससे अष्टविध ज्वर और सब प्रकारकी शूल रोग नष्ट होजाता है ॥ १४-१६ ॥

बृहच्चिन्तामणि रस ।

रसगन्धकलौहानि ताम्रं तारं हिरण्यकम् ।
हरितालं खर्परञ्च कांस्यं वङ्गश्च विद्रुमम् ॥ १७ ॥
मुक्तामाक्षिककाशीशं शिलाटङ्कणकं समम् ।
कर्पूरञ्च समं दत्त्वा भावना सप्तसप्तकम् ॥ १८ ॥

भार्ङ्गी वासा च निर्गुण्डी नागवल्ली जयन्तिका ।
कारवेल्लं पटोलञ्च शक्राशनं पुनर्नवा ॥ १९ ॥
आर्द्रकञ्च ततो दद्यात्प्रत्येकं वारसप्तकम् ।
चिन्तामणिरसो नाम्ना सर्वज्वरविनाशनः ॥३२०॥

पारा, गन्धक, लोहभस्म, तांबेकी भस्म, चांदीकी भस्म, सोनेकी भस्म, हरितालभस्म, खपरिया, काँसेकी भस्म, वंगभस्म, मोती, मूंगा, सोनामाखीकी भस्म, शुद्ध हीराकसीस, मैनशिल, सुहागा और कपूर यह सब औषधि समान भाग लेकर, भारंगी, अडूसा, सम्हालू, पान, जयन्ती, करेला, परवल, भांग, पुनर्नवा और अदरख इन प्रत्येकके रसमें सात सात भावना देवे । इसको बृहच्चिन्तामणि रस कहते हैं । यह सब प्रकारके ज्वरोंको हरनेवाला है ॥ ३१७-३२० ॥

वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ॥२१॥
कासं श्वासं तथा शोथं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ २२ ॥

रोगीकी अवस्थाको विचार कर यह औषधि एक अथवा दो रत्ती परिमाण यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम, सर्वधातुगत ज्वर तथा खाँसी, श्वास, शोथ, पांडु, हलीमक, प्लीहा, अग्रमांस और यकृत्रोग दूर होते हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥

महाज्वरांकुश रस ।

पारदं गन्धकं ताम्रं हिंगुलं तालमेव च ।
वङ्गं लौहं माक्षिकञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥ २३॥
मृताभ्रकं गैरिकं च टङ्कणं दन्तिबीजकम् ।
सर्वाण्येतानि द्रव्याणि चूर्णयित्वा विभावयेत्॥२४॥

जम्बीरविजयाचित्रतुलसीतिन्तिडीरसैः ।
एभिर्दिनत्रयं भाव्यं निर्जने रौद्रसंकुले ॥ २५ ॥

पारा, गंधक, तांबेकी भस्म, सिंग्रफ, हरितालभस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, सोनामाखीभस्म, खपरिया, मैनशिल, अभ्रकभस्म, गेरू, सुहागा और दन्तीके बीज यह सब औषधि समान भाग लेकर चूर्ण कर ले, फिर इस चूर्णको जम्बीरी, भांग, चित्रक, तुलसी और इमली इन सबके रसमें तीन दिन तक प्रचण्ड धूपमें भावना देवे ॥ २३-२५ ॥

चणमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कांश्च कारयेत् ।
मन्दाग्निदीपनी चैव सर्वज्वरविनाशिनी ॥ २६ ॥
द्वन्द्वजं सर्वजञ्चैव चिरकालसमुद्भवम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च ज्वरन्तु सान्निपातिकम् ॥२७॥
चातुर्थिकं तथाऽत्युग्रं जलदोषसमुद्भवम् ।
सर्वान्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
महाज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं मुनिभाषितः ॥ २८ ॥

फिर चनेकी बराबर गोली बनाकर छायामें सुखा लेवे । यह औषधि मंदाग्निको प्रज्वलित करती है और सब प्रकारके ज्वरको दूर करती है, जिस प्रकार सूर्योदयसे अंधकारका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे बहुत दिनोंका ज्वर सर्वज, द्वन्द्वज, ऐकाहिक, द्व्याहिक, सान्निपातिक, चातुर्थिक और जलदोषज प्रभृति अत्यंत उग्र सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं । इसको महाज्वरांकुश रस कहते हैं ॥ २६-२८ ॥

तन्त्रान्तरोक्त महाज्वरांकुश ।

पारदं हिंगुलं ताम्रं माक्षिकं तुत्थमेव च ।
वङ्गं मृतञ्च गन्धञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥ २९ ॥
तालकं घनपाषाणं गैरिकं टंकणन्तथा ।

दन्तिबीजानि सर्वाणि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥
भावना पूर्ववद्देया वटीं कुर्याच्च पूर्ववत् ॥ ३३० ॥

पारा, सिंग्रफ, तांबेकी भस्म, सोनामाखीभस्म, शुद्ध तूतिया, वंगभस्म, गंधक, खपरिया, मैनशिल, हरितालभस्म, घनपाषाण (कांतपाषाण), गेरू, सुहागा और जमालगोटे इन सब औषधियोंका चूर्ण करके पूर्वोक्त भावनाके द्रव्यों द्वारा पूर्ववत् भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना लें। इसको महाज्वरांकुश रस कहते हैं ३२९॥३३०॥

सर्वतोभद्र रस ।

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम् ।
तोलकं तोलकार्द्धञ्च हिंगुलोत्थरसन्तथा ॥ ३१ ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजपत्रं लवङ्गकम् ।
जातीकोषफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ ३२ ॥
कुष्ठं तालीशपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।
हरीतकी मरीचं च शृङ्गवेरं विभीतकम् ॥ ३३ ॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम् ।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम् ॥ ३४॥

अभ्रकभस्म २ कर्ष, शुद्ध गंधक १ तोला, सिंग्रफमेंसे निकाला हुआ पारा ६ मासे, कपूर, नागकेशर, बालछड़, तेजपात, लौंग, जावित्री, जायफल, छोटी इलायची, गजपीपल, कूठ, तालीशपत्र, धायके फूल, दारचीनी, नागरमोथा, हरड़, काली मिरच, सोंठ, बहेड़ा, पीपल और आमला यह प्रत्येक चार चार मासे सबको एकत्र उत्तम रीतिसे पीसकर दो दो रत्तीकी गोलियां बना लेवे ॥ ३१-३४ ॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयापि वा ।
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानं च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥३५॥

हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदोषं विषूचिकाम् ।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवं तथा ॥ ३६ ॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रं च संग्रहग्रहणीं वमिम् ।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ ३७ ॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम् ।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥३८॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन भाषितः पुरा ।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ ३९ ॥

इस औषधिका पान, शहत और मिश्रीके साथ सेवन करे। विचक्षण वैद्य रोगको विचार कर अनुपानकी कल्पना करे। यह औषधि प्रातःकाल सेवन करनी चाहिये। इस औषधिके सेवन करनेसे मदाग्नि, आमदोष, विषूचिका, पित्तकफोत्पन्न रोग, वातश्लेष्मोत्पन्न रोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, संग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, बहुत दिनोंका पित्तज्वर, धातुस्थ विषम ज्वर, पांच प्रकारकी खाँसी, कामला और पांडु आदि समस्त रोग नष्ट होजाते हैं। पूर्वकालमें इस औषधिको लोकहितके लिये महादेवजीने कथन किया था। इसको सर्वतोभद्र रस कहते हैं। यह रस साक्षात् महेश्वरके समान गुणकारी है॥३५-३९॥

बृहज्ज्वरान्तक।

रसं गन्धं तोलकं च जातीकोषफलं तथा ।
हेमभस्म तु पादैकं तोलार्द्धं रूप्यलौहकम् ॥४०॥
अभ्रं शिलाजतु चैव भृङ्गराजं च मुस्तकम् ।
केशराजमपामार्गं लवङ्गं च फलत्रिकम् ॥ ४१ ॥
वरांगवल्कलञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
सैन्धवञ्च विडञ्चैव गुडूचीचूर्णमेव च ॥ ४२ ॥

कण्टकारी रसोनञ्च धान्यकं जीरकद्वयम् ।
चन्दनं देवकाष्ठञ्च दार्वीन्द्रयवमेव च ॥ ४३ ॥
किराततिक्तकं वालं तोलकञ्च समाहरेत् ।
द्वितोलं मरिचं देयं भावयेदार्द्रजै रसैः ॥ ४४ ॥
माषार्द्धं भक्षयेत्प्रातर्मधुना मधुरीकृतम् ।
ज्वरं नानाविधं हन्ति शुक्रस्थं चिरकालजम् ॥
साध्यासाध्यविचारोऽत्र नैव कार्यो भिषग्वरैः॥४५॥

पारा, गन्धक, जावित्री और जायफल यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, सुवर्णकी भस्म ३ मासे, चांदीकी भस्म ६ मासे, लोहेकी भस्म ६ मासे, अभ्रकभस्म, शिलाजीत, भांगरा, नागरमोथा, कुकुरभांगरा, चिरचिटा, लौंग, त्रिफला, दालचीनी, पीपलामूल, सेंधानमक, विडनमक, गिलोय, कटेरी, लहसुन, धनिया, जीरा, कालाजीरा, चंदन, देवदारु, दारुहलदी, इन्द्रजौ, चिरायता और सुगन्धवाला यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, काली मिरचोंका चूर्ण दो तोले इन सबको एकत्र करके अंदरखके रसमें भावना देकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। प्रातःकाल इस औषधिका शहतके साथ सेवन करे। इस औषधिके प्रयोग करते समय वैद्य रोगके साध्यासाध्यका विचार नहीं करे। यह औषध अनेक प्रकारके ज्वर,शुक्रगत ज्वर और पुराने ज्वरको दूर करती है ॥ ३४०-३४९ ॥

अन्तर्धातुगतञ्चैव नाशयेन्नात्र संशयः ।
भूतोत्थं श्रमजञ्चापि सन्निपातज्वरन्तथा ॥ ४६ ॥
असाध्यञ्च ज्वरं हन्ति यथा सूर्योदयस्तमः ।
गरुडञ्च समालोक्य यथा सर्पः पलायते ॥ ४७ ॥
तथैवास्य प्रसादेन ज्वरः शीघ्रं पलायते ।
बलदं पुष्टिदञ्चैव मन्दाग्निनाशनं परम् ॥ ४८ ॥

वीर्यस्तम्भकरश्चैव कामलापाण्डुरोगनुत् ।
सदा तु रमते नारीं न वीर्यं क्षीणतां व्रजेत् ॥ ४९ ॥
प्रमेहं विविधश्चैव विविधां ग्रहणीं तथा ।
अनुपानविशेषेण सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥ ३५० ॥

इस औषधिके विधिपूर्वक सेवन करनेसे अन्तर्धातुगत ज्वर, भूतोत्थ ज्वर, श्रमजानित ज्वर, सांनिपातिक ज्वर और असाध्य ज्वर यह सब शीघ्र नष्ट होजाते हैं । जिस प्रकार सूर्योदयके होनेसे अन्धकारका समूह नष्ट होजाता है, जिस प्रकार गरुड़को देखकर सर्प दूर भाग जाते हैं उसी प्रकार इस औषधिके प्रसादसे ज्वर शीघ्र ही नष्ट होजाता है। यह अत्यंत बलकारक, पुष्टिजनक, मन्दाग्निनाशक, वीर्यस्तम्भक, कामला और पाण्डुरोगको दूर करनेवाला है । इस औषधिके सेवन करनेसे सदैव स्त्रियोंके साथ रमण करनेपर भी वीर्य क्षय नहीं होता । यह औषधि अनेक प्रकारके प्रमेह और सब प्रकारके ग्रहणीरोगको दूर करती है । यथायोग्य अनुपानके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं । इसको बृहज्ज्वरान्तक लोह कहते हैं ॥ ३४६-३५० ॥

चूडामणि रस ।

मृतं सूतं प्रवालञ्च स्वर्णं तारञ्च वङ्गकम् ।
शुल्वं मुक्ता तीक्ष्णमभ्रं सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ ५१ ॥
जलेन पिष्ट्वा वटिका कार्या वल्लप्रमाणतः ।
धातुस्थं सन्निपातोत्थं ज्वरं विषमसम्भवम् ॥ ५२ ॥
कामशोकसमुद्भूतं त्रिदोषजनितं तथा ।
कासं श्वासञ्च विविधं शूलं सर्वाङ्गसम्भवम् ॥ ५३ ॥
शिरोरोगं कर्णशूलं दन्तशूलं गलग्रहम् ।
वातपित्तसमुद्भूतं ग्रहणीं सर्वसम्भवाम् ॥ ५४ ॥

आमवातं कटीशूलमग्निमान्द्यं विषूचिकाम् ।
आर्शांसि कामलां मेहं मूत्रकृच्छ्रादिकञ्च यत् ॥ ९५ ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु विष्णुचक्रमिवासुरान् ।
चूडामणिरसो ह्येष शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ९६ ॥

पारदभस्म या रससिन्दूर तथा मूंगा, सोना, चांदी, वंग, तांबा, मोती, लोहा और अभ्रक इन सबकी भस्म समान भाग लेकर जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बनावे । यथायोग्य अनुपानके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे धातुगत, सान्निपातिक ज्वर, विषमज्वर, कामज और शोकज ज्वर, त्रिदोषजनित ज्वर, विविध प्रकारकी खाँसी, श्वास, सर्वशरीरगत शूल, शिरोरोग, कर्णरोग, दन्तशूल, वातपित्तजन्य गलग्रह, सर्वदोषजनित ग्रहणी, आमवात, कटिशूल, मंदाग्नि, विषूचिका, अर्श, कामला, प्रमेह और मूत्रकृच्छ्रादि समस्त रोग नष्ट होजाते हैं, जिस प्रकार विष्णुके चक्रसे दैत्योंका समूह नष्ट होता है । यह चूडामणि रस स्वयं महादेवजीने कहा है ॥ ९१-९६ ॥

भानुचूडामणि रस ।

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च ।
लौहं ताम्रं तेजपत्रं यमानी विश्वभेषजम् ॥ ९७ ॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं द्विहरिद्रकम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागं च कारयेत् ॥ ९८ ॥
वारिणा वटिका कार्या रक्तिद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ९९ ॥

सुवर्णभस्म, रससिंदूर, मूंगेकी भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, तांबेकी भस्म, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, कालीमिरच, कूठ, कत्था, हलदी, दारुहलदी, रसौत और सोनामाखी भस्म इन सब औष-

धियोंको समान भाग लेकर जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस रसका उचित अनुपानसे सेवन करे तो सब प्रकारके ज्वर दूर होते हैं ॥ ५७–५९ ॥

वृहच्चूडामणि रस ।

कस्तूरिका विद्रुमरौप्यलोहं तालं हिरण्यं रससिंदुरञ्च । सुवर्णसिन्दूरलवङ्गमौक्तिकं चोचं घनं माक्षिकराजपट्टम् ॥ ३६० ॥ गोक्षूरजातीफलजातिकोषं मरीचकर्पूरशिखिग्रीवञ्च । प्रगृह्य सर्वं हि समं प्रयत्नादथाश्वगन्धां द्विगुणां हि वैद्यः ॥ ६१ ॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं मुनिसंख्यया ।
निर्गुण्डीफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः ॥ ६२ ॥

कस्तूरी, मूंगेकी भस्म, रूपेकी भस्म, लोहभस्म, हरितालभस्म, सोनेकी भस्म, रससिन्दूर, स्वर्णसिन्दूर, लौंग, मोतीकी भस्म, दारचीनी, नागरमोथा, सोनामाखीभस्म, राजपट्टभस्म, गोखुरु, जायफल, जावित्री, काली मिरच, कपूर और शुद्ध तूतिया यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, असगंध दो भाग इन सबको एकत्र पीसकर सम्हालूके पत्ते, भारंगीकी जड़, अडूसेके पत्ते, आककी जड़ और गोखुरु इन प्रत्येकके रसमें सात सात भावना देवे । इसकी मात्रा दो रत्तीकी है ॥ ३६०–३६२ ॥

तद्वीर्यं कथयिष्यामि वातिकं पैत्तिकं ज्वरम् ।
कफोद्भवं द्विदोषोत्थं त्रिदोषजनितं तथा ॥ ६३ ॥
सन्ततं सततं हन्ति तृतीयकचतुर्थकौ ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च विषमं भूतसम्भवम् ॥ ६४ ॥
नाशयेदचिरादेव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
चूडामणिरसो ह्येष शिवेन परिभाषितः ॥ ६५ ॥

इस औषधिके सेवन करनेसे वातिकज्वर, पैत्तिकज्वर, कफज्वर, त्रिदोषज्वर, द्विदोषज्वर, सन्ततज्वर, सततज्वर, तृतीयकज्वर, चातुर्थिकज्वर, ऐकाहिकज्वर, द्व्याहिकज्वर, विषमज्वर और भूतोत्पन्न ज्वर यह सब वज्राहत वृक्षके समान नष्ट होजाते हैं। इसको शिवजीने बृहत् चूडामणि रस कहा है ॥ ६३-६५ ॥

बृहज्ज्वरचूडामणि रस।

सुवर्णसिन्दुरं स्वर्णं लोहं तारं मृगाङ्ककम्।
जातीफलं जातिकोषं लवंगञ्च त्रिकण्टकम् ॥ ६६ ॥
कर्पूरं गगनञ्चैव चोचं मूसलतालकम्।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु तुरङ्गञ्च द्विकार्षिकम् ॥ ६७ ॥
विद्रुमं भस्मसूतञ्च मौक्तिकं माक्षिकं तथा।
राजपट्टं शिखिग्रीवं सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥ ६८ ॥
खल्ले तु चूर्णमादाय भावयेत्परिकीर्तितैः।
निर्गुण्डीफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापिवा ॥ ६९ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे ज्वराधिकारः।

सुवर्णसिन्दूर, सोनेकी भस्म, लोहेकी भस्म, रूपेकी भस्म, कस्तूरी, जायफल, जावित्री, लौंग, गोखुरु, कपूर, अभ्रकभस्म, दारचीनी और मुसली यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, गंधक दो तोला, मूंगेकी भस्म, रससिन्दूर, मोती, सोनामाखी, राजपट्टभस्म और शुद्ध तूतिया यह प्रत्येक दो दो तोले लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर सम्हालूके पत्ते, भारंगीकी जड़, अडूसेके पत्ते, आककी जड़ और गोखुरु इन प्रत्येकके रसमें सात सात भावना देवे। इस औषधिके सेवन करनेसे साध्य और असाध्य आठ प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं। इसको बृहज्ज्वरचूडामणि रस कहते हैं ॥ ३६६-३६९ ॥ इति ज्वराधिकार ॥

अथ ज्वरातिसारचिकित्सा।

मृतसञ्जीवनी वटी।

मागधी वत्सनाभञ्च तयोस्तुल्यञ्च हिंगुलम्।
मृतसञ्जीवनी ख्याता जम्बीररसमर्दिता ॥ १ ॥
मूलकस्य च बीजानां वटिका तुल्यरूपिणी।
पानीया शीततोयेन ज्वरातीसारनाशिनी ॥
विषूच्यां सन्निपाते च ज्वरे चैवातिदुस्तरे ॥ २ ॥

पीपल एक भाग, विष एक भाग और सिंग्रफ दो भाग लेवे; इन सब औषधियोंको जम्भीरी नींबूके रसमें पीसकर मूलीके बीजोंकी बराबर गोलियां बना लेवे। इस औषधिको शीतल जलके साथ सेवन करनेसे ज्वरातिसार, विषूचिका, दुस्तर ज्वर और सन्निपात नष्ट होते हैं। इसे मृतसञ्जीवनी वटी कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

आनन्दभैरव रस।

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं गन्धकं समम्।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेद् यामकद्वयम् ॥ ३ ॥
कासश्वासातिसारेषु ग्रहण्यां सान्निपातिके।
अपस्मारेऽनिले मेहेऽप्यजीर्णे वह्निमान्द्यके ॥
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्दभैरवः ॥ ४ ॥

सिंग्रफ, विष, सोंठ, पिप्पली, मिर्च, सुहागा और गन्धक समान भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। इसके सेवन करनेसे कास, श्वास, अतिसार, संग्रहणी, सन्निपात, अपस्मार, वातरोग, प्रमेह और अजीर्ण तथा मन्दाग्नि आदि सब रोग नष्ट होते हैं। इसको आनन्दभैरव रस कहते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

अमृतार्णव ।

हिंगुलोत्थो रसो लोहं टंकणं गन्धकं शटी ।
धान्यकं बालकं मुस्तं पाठा जीरं घुणप्रिया ॥ ५ ॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।
माषैका वटिका कार्या रसोऽयममृतार्णवः ॥ ६ ॥
वटिकां भक्षयेत्प्रातर्गहनानन्दभाषिताम् ।
धान्यजीरकयूषेण विजयाशणबीजतः ॥ ७ ॥
मधुना छागदुग्धेन मण्डेन शीतवारिणा ।
कदलीमोचकरसैः कञ्चटद्रवकेण च ॥ ८ ॥
अतिसारं जयेदुग्रमेकजं द्वन्द्वजं तथा ।
दोषत्रयसमुद्भूतमुपसर्गसमन्वितम् ॥ ९ ॥
शूलघ्नो वह्निजननो ग्रहण्यर्शोविकारनुत् ।
अम्लपित्तप्रशमनः कासघ्नो गुल्मनाशनः ॥ १० ॥

सिंग्रफसे निकाला हुआ पारा, लोहभस्म, सुहागा, गन्धक, कचूर, धानिया, सुगंधवाला, नागरमोथा, पाढ, जीरा और अतीस यह सब एक एक तोला लेकर बकरीके दूधमें पीसकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे । इस गोलीको प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपरसे धानिया और जीरेके साथ मूंगका यूष, भांग, सनके बीज, सहत, बकरीका दूध, मांड, शीतल जल, केले और मोचेका रस या जल, पीपलके रसके साथ सेवन करनेसे एकदोषज अतिसार, द्विदोषज अतिसार, त्रिदोषज अतिसार, समस्त उपद्रवों सहित अतिसार, शूल, मन्दाग्नि संग्रहणी, बवासीर, अम्लपित्त, खाँसी और गुल्मरोग नष्ट होते हैं । इसको गहनानन्दने कहा है, इसको अमृतार्णव रस कहते हैं ॥५-१०॥

सिद्धप्राणेश्वर रस।

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम्।
स्वर्जिटंकयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥ ११ ॥
वराव्योषेन्द्रबीजानि द्विजीराग्नियमानिका।
सहिंगुबीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १२ ॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूतः प्राणिनां प्राणदायकः।
माषैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलैर्युतम् ॥ १३ ॥
उष्णोदकानुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम्।
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च ॥ १४ ॥
ज्वरातिसारेऽतिसृतौ केवले वा ज्वरेऽपिवा।
वातरोगे तथा शूले शूले च परिणामजे ॥ १५ ॥

गंधक, पारा और अभ्रक भस्म प्रत्येक चार चार भाग, सज्जीखार, सुहागा, जवाखार, पांचों लवण, त्रिफला, त्रिकुटा, इन्द्रजौ, जीरा, काला जीरा, चित्रक, अजवायन, हींग, वायविडंग और सौंफ यह समस्त औषधि समान भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर एक मासे औषधि पानके रसके साथ सेवन करे। औषधि सेवनके अन्तमें १२ तोले परिमाण गरम जल पान करना चाहिये। इसके सेवन करनेसे ज्वरातिसार, अतिसार, ज्वर, घोरतर सान्निपात ज्वर, संग्रहणी, वातरोग, शूल और परिणामशूल नष्ट होते हैं। यह औषधि मनुष्योंके जीवनकी रक्षा करनेवाली है। इसको सिद्धप्राणेश्वर रस कहते हैं ॥ ११-१५ ॥

अभ्रवटिका।

अथ शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु ग्राह्यं रसगुणैषिणा ॥ १६ ॥

ततः कज्जलिकां कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत् ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्डयाश्चित्रकस्य च॥१७॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथ जयन्त्याः स्वरसं तथा ।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं तथा शक्राशनस्य च ॥१८॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम् ।
दापयेद्रसतुल्यञ्च विधिज्ञः कुशलो भिषक् ॥ १९ ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं मरिचसम्भवम् ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टंकणसम्भवम् ॥ २० ॥
शुभे शिलामये पात्रे घर्षणीयं प्रयत्नतः ।
शुष्कमातपसंयोगाद्वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २१ ॥
कलायपरिमाणन्तु खादेत्तां तु प्रयत्नतः ।
दृष्ट्वा वयश्चाग्निबलं यथाव्याध्यनुपानतः ॥ २२ ॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवं रुजम् ।
परं वाजीकरः श्रेष्ठो बलवर्णाग्निवर्द्धकः ॥ २३ ॥
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यतेऽत्ररसायनात् ॥ २४ ॥
भोजने शयने पाने नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ।
दधि चावश्यकं भक्ष्यं प्राह नागार्जुनो मुनिः॥२५॥

शुद्ध पारा १ तोला, गंधक १ तोला और अभ्रक भस्म १ तोला इन सब औषधियोंको एकत्र करके कज्जली बनावे । फिर इसमें एक तोला परिमाण त्रिकुटेका चूर्ण डालकर पश्चात् कुकुरभांगरा, भांगरा, सम्हालू, चित्रककी जड़, ग्रीष्मसुन्दर, जयंती, ब्राह्मी, भांग, सुफेद कोयली और पान इन प्रत्येकका स्वरस एक एक तोला लेकर

प्रत्येकके रसमें अलग अलग भावना देवे। फिर इसमें एक तोला कालीमिरचोंका चूर्ण और सुहागा छः मासे इन सबको मिलाकर रगड़े, फिर धूपमें सुखा लेवे और मटरके समान इसकी गोली बना लेवे। रोगीकी आयु, अग्नि और बलाबलका विचार कर यथायोग्य अनुपानके साथ प्रयोग करनेसे खाँसी, क्षय, श्वास और वातकफजनित पीड़ा दूर होती है। वाजीकरणमें इससे उत्तम अन्य औषधि नहीं है। इससे बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है, ज्वर और अतीसाररोगकी यह सिद्ध औषधि है। रसायन कार्यमें इस औषधिसे उत्तम अन्य औषधि नहीं है। इस औषधिके भक्षण करनेसे भोजन और शयनादिका कुछ परिहार नहीं है। इसपर अवश्य दही भक्षण करना चाहिये। इस औषधिको नागार्जुन मुनिने कहा है। इसको अभ्रवटिका कहते हैं॥ १६-२५॥

कनकसुन्दर रस।

हिंगुलं मरिचं गन्धं टंकणं पिप्पली विषम्।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः॥ २६॥
मर्द्दयेद्यामम़ात्रन्तु चणमात्रा वटी कृता।
भक्षणाद्ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः।
अग्निमान्द्यं ज्वरं तीव्रमतिसारञ्च नाशयेत्॥ २७॥

सिंग्रफ, कालीमिरच, गंधक, सुहागा, पीपल, विष और काले धतूरेके बीज यह सब औषधि समान भाग लेव; पश्चात् भांगके पत्तोंके रसमें एक प्रहर उत्तम रीतिसे खरल करके चनेकी बराबर गोली बना लेवे। इस औषधिके भक्षण करनेसे संग्रहणी, मंदाग्नि, ज्वर और अतीसार रोग नष्ट होते हैं। इसको कनकसुन्दर रस कहते हैं॥ २६ ॥ २७॥

कनकप्रभा।

सुवर्णबीजं मरिचं मरालपादं कणा टंकणकं विषञ्च।
गन्धं जयाद्भिर्दिवसं विमर्द्य गुञ्जाप्रमाणां वटिकां

विदध्यात् ॥ २८ ॥ एषाऽतिसारग्रहणीं ज्वराग्नि-
मान्द्यं निहन्यात्कनकप्रभेयम् । दध्योदनं भोज्य-
मनुष्णवारि मांसं भजेत्तित्तिरिलावकानाम् ॥ २९ ॥

काले धतूरेके बीज, कालीमिरच, सिंग्रफ, पीपल, सुहागा, विष और गंधक यह सब औषधि सामन भाग लेकर भांगके पत्तोंके रससें एक दिवस खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे अतीसार, संग्रहणी, ज्वर और मंदाग्नि नष्ट होती है । इसके सेवन करनेके अंतमें दही भात, शतिल जल, तीतरका मांस और लवेका मांस इनका पथ्य देवे । इसको कनकप्रभा वटी कहते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

कारुण्यसागर रस ।

भस्मसूताद्विधा गन्धं तथा द्वित्वं मृताभ्रकम् ।
दिनं सार्षपतैलेन पिष्ट्वा यामं विपाचयेत् ॥ ३० ॥
रसैर्मार्गवमूलोत्थैः पिष्ट्वा यामं विपाचयेत् ।
त्रिक्षारपञ्चलवणविषाव्योषाग्निजीरकैः ॥ ३१ ॥
सविडंगैस्तुल्यभागैरयं कारुण्यसागरः ।
माषमात्रं ददीतास्य भिषक् सर्वातिसारके ॥ ३२ ॥
सज्वरे विज्वरे वापि सशूले शोणितोद्भवे ।
निरामे शोथयुक्ते वा ग्रहण्यां सान्निपातिके ।
अनुपानं विनाप्येष कार्यसिद्धिं करिष्यति ॥ ३३ ॥

पारदभस्म या रससिन्दूर १ भाग, गंधक २ भाग और अभ्रकभस्म ४ भाग लेवे; इन सबको एकत्र करके एक दिनतक सरसोंके तेलमें खरल करे । फिर एक प्रहर वालुकायंत्रमें पकावे, फिर भांगरेके रसमें पीसकर वालुकायंत्र में एक प्रहरतक पकावे; तदनंतर सज्जी, जवाखार, सुहागा, विडनमक, सेंधानमक, समुद्रनमक, कालानमक, रोमक लवण, विष,

सोंठ, पीपल, कालीमिरच, चित्रककी जड़, जीरा और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग ले सबको एकत्र पीसकर पूर्वोक्त औषधिमें मिला देवे। इसमेंसे एक मासे परिमाण औषधि लेकर सब प्रकारके अतिसारोंमें प्रयोग करना चाहिये । इससे ज्वरातिसार, अतिसार, शूलातिसार, रक्तातिसार, निरामातिसार, शोथयुक्तातिसार, त्रिदोषज ग्रहणी और सब प्रकारके गुदज रोग नष्ट होते हैं । यह औषधि विना अनुपानकेभी कार्यको सिद्ध कर सकती है ॥ ३०-३३ ॥

बृहत्कनकसुन्दर रस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा ।
स्वर्णबीजं समं मर्द्यं भार्ङ्गीद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥ ३४ ॥
सूततुल्यं मृतञ्चाभ्रं रसः कनकसुन्दरः ।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति पित्तातीसारमुग्रकम् ॥ ३५ ॥

पारा, गंधक, कालीमिरच, सुहागा और धतूरेके बीज यह सब औषधि समान भाग लेकर भारंगीकी जड़के रसमें दो प्रहर तक खरल करे, फिर पारेकी बराबर इसमें अभ्रकभस्म मिलाकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इससे उग्र पित्तातिसार नष्ट होता है । इसको बृहत्कनकसुंदर रस कहते हैं ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

मृतसञ्जीवन रस ।

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत् ।
सर्वतुल्यं मृतञ्चाभ्रं मर्द्यं धूस्तूरजैर्द्रवैः ॥ ३६ ॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवैर्यामं कषायेणाथ भावयेत ।
धातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठी जीरकवालकम् ॥ ३७ ॥
यमानी धान्यकं बिल्वं पाठा पथ्या कणान्वितम् ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं बालदाडिमम् ॥ ३८ ॥

प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्कुट्टितं क्राथयेज्जलैः ।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादावशेषितम् ॥ ३९ ॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम् ।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ४० ॥
मृतसञ्जीवनो नाम चास्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्यासाध्यं जयेद् ध्रुवम् ॥४१॥

पारा दो तोले, गंधक दो तोले, विष छः मासे, अभ्रकभस्म साढ़े चार तोले इन सब औषधियोंको एकत्र करके धतूरेके पत्तोंके रसमें एक प्रहरतंक और सर्पाक्षीके रसमें एक प्रहर तक खरल करे। फिर इसमें धायके फूल १ तोला, अतीस १ तोला, नागरमोथा १ तोला, सोंठ १ तोला, जीरा १ तोला, सुगंधवाला १ तोला, अजवायन १ तोला, धनिया १ तोला, बेलगिरी १ तोला, पाढ एक तोला, हरड़ एक तोला, पीपल एक तोला, कुड़ेकी छाल एक तोला, इन्द्रजौ एक तोला, कैथ एक तोला और कच्चा अनार एक तोला लेकर उत्तम रीतिसे कूटकर सम्पूर्ण द्रव्योंसे चौगुने जलमें पकावे। जब पकते पकते चौथाई जल बाकी रह जाये तब उतारकर छान लेवे; फिर इस क्राथकी उपरोक्त औषधिमें तीन वार भावना देवे। फिर एक हांडीमें रखकर ऊपरसे एक छोटेसे सिकोरेके साथ हांडीके मध्यमें ही औषधिको ढक देवे और उसकी संधियोंको अच्छे प्रकारसे बंद करके उसके ऊपर वालू भर देवे। पश्चात् मंद मंद अग्निसे दो घड़ी तक पकावे। फिर अपने आप शीतल होजाने पर औषधि निकाल लेवे। इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करनेसे असाध्य अतिसार भी नष्ट होजाता है। इससे साध्य और असाध्य छः प्रकारका अतिसार निश्चय ही दूर होजाता है। इसको मृतसंजीवन रस कहते हैं ॥ ३६-४१ ॥

नागरादि चूर्ण।

नागरातिविषा मुस्तं देवदारु कणा वचा।
यमानी वालकं धान्यं कुटजत्वक् हरीतकी ॥ ४२॥
धातकीन्द्रयवौ बिल्वं पाठा मोचरसं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम् ॥ ४३॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, वच, अजवायन, सुगंधवाला, धनिया, कुड़ेकी छाल, हरड़, धायके फूल, इन्द्रजौ, बेलगिरी, पाढ और मोचरस यह सब औषधि समान भाग लेकर चूर्ण करके शहतमें मिला उपरोक्त मृतसंजीवनी गोलीके ऊपर चाटे तो सब अतिसार दूर हों। अथवा यह अकेला चूर्ण भी उचित अनुपानसे सेवन करे तो अतिसार रोगको दूर करता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

प्राणेश्वर रस।

रसं गन्धकमभ्रं च टंकणं शतपुष्पकम्।
यमानी जीरकाख्यं च प्रत्येकं कर्षयुग्मकम् ॥ ४४॥
कर्षमेकं यवक्षारं हिंगु पटुकपंचकम्।
विडंगेन्द्रयवं सर्ज्जरसकं चाग्निसंज्ञितम् ॥
घृष्ट्वा च वटिका कार्या नाम्ना प्राणेश्वरो रसः॥४५॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे ज्वरातिसारचिकित्सा।

पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, सुहागा, सौंफ, अजवायन और जीरा यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले, जवाखार एक तोला, हींग, पांचों लवण, वायविडंग, इन्द्रजौ, राल और चित्रककी छाल यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेकर सबको एकत्र पीसकर जलसे एक एक रत्तीकी गोली बना लेव; इसके सेवनसे ज्वर, अतिसार रोग दूर होते हैं। इसको प्राणेश्वर रस कहते हैं ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ इति ज्वरातिसारचिकित्सा ॥

अथ अतिसारचिकित्सा ।

अतिसारवारण रस ।

दरदं कृतकर्पूरं मुस्तेन्द्रयवसंयुतम् ।
सर्वातिसारशमनं खाखसीक्षीरभावितम् ॥ १ ॥

सिंग्रफ, पक्ककपूर, नागरमोथा और इन्द्रजौ यह सब औषधि समान भाग लेकर अफीमके पानीकी भावना देवे । इसको यथायोग्य अनुपान और उचित मात्रानुसार सेवन करनेसे सब प्रकारका अतीसार नष्ट होता है । इसको अतिसारवारण रस कहते हैं ॥ १ ॥

पूर्णचन्द्रोदय रस ।

शुद्धञ्च तालकं लोहं गगनं च पलं पलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ २ ॥
जातीकोषं मुरापत्रं शटी तालीशकेशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवंगं पिचुसम्मितम् ॥ ३ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥ ४ ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलं च परिणामजम् ।
रसायनवरश्चायं वाजीकरण उत्तमः ॥ ५ ॥

शुद्ध हरितालभस्म ४ तोले, लोहभस्म ४ तोले, अभ्रकभस्म ४ तोले, कपूर ८ मासे, पारा ८ मासे, गन्धक ८ मासे, जायफल, कपूरकचरी, तेजपात, कचूर, तालीशपत्र, नागकेशर, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, दारचीनी, पीपलामूल और लवंग यह प्रत्येक एक एक तोला इन सब औषधियोंको एकत्र करके जलमें पीसकर गोली बनाकर यथायोग्य मात्रानुसार रोगीको सेवन करावे । गुरु, देवता और ब्राह्म-

णोंकी पूजा करके प्रातःकाल इस औषधिका सेवन करे । इससे अनेक प्रकारका अतिसार, सर्व प्रकारकी संग्रहणी, अम्लपित्त, शूल और परिणामशूल नष्ट होजाते हैं । यह रसायन और वाजीकरण कर्ममें श्रेष्ठ औषधि है । इसको पूर्णचन्द्रोदयरस कहते हैं ॥ २-५ ॥

कणाद्यलोह ।

कणानागरपाठाभिस्त्रिवर्गत्रितयेन च ।
बिल्वचन्दनह्रीबेरैः सर्वातीसारजिद्भवेत् ॥ ६ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तामपि हन्ति प्रवाहिकाम् ।
नानेन सदृशं लोहं विद्यते ग्रहणीहरम् ॥ ७ ॥

पीपल, सोंठ, पाढ, "सोंठ, मिरच, पीपल; हरड, बहेडा, आमला" दालचीनी, इलायची, तेजपात, बेलगिरी, चन्दन और सुगंधवाला इन सब औषधियोंको समान भाग लेवे और सबकी बराबर लोह भस्म लेवे, सबको एकत्र जलमें पीसकर गोली बना लेवे। पश्चात् इसको उपयुक्त मात्रानुसार उपयुक्त अनुपानके साथ सेवन करे तो अतिसार और समस्त उपद्रवसंयुक्त प्रवाहिका रोग नष्ट होते हैं । इसके समान संग्रहणीको हरनेवाली अन्य औषधि नहीं है । इसको कणाद्यलोह कहते हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥

बृहद्गगनसुन्दर रस ।

पारदं गन्धकं चाभ्रं लोहं चापि वराटकम् ।
रूप्यं चातिविषं कर्ष समभागं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥
धान्यशुण्ठीकृतक्काथैर्भावयेच्च पृथक् पृथक् ।
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ॥ ९ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
दग्धबिल्वं गुडेनैव कुर्यात्तदनुपानकम् ॥ १० ॥

अजादुग्धेन वा पेयं जम्बुत्वक्साधितं रसम् ।
अतीसारे ज्वरे घोरे ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥११॥
सामे सशूले रक्ते च पिच्छास्रावे भ्रमे तथा ।
शोथे रक्तातिसारे च संग्रहग्रहणीषु च ॥ १२ ॥

पारा १ तोला, गन्धक १ तोला, अभ्रकभस्म १ तोला, लोहभस्म १ तोला, कौड़ीकी भस्म १ तोला, चांदीकी भस्म १ तोला और अतीस १ तोला इन सब औषधियोंको अच्छे प्रकारसे खरल करे; पश्चात् धनिये और सोंठके क्राथमें अलग अलग भावना देवे । फिर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । पश्चात् प्रातःकाल उठकर प्रथम गुरु, देव और ब्राह्मणोंकी पूजा करके इस औषधिका सेवन करे । पश्चात् भुने हुए बेल, गुड़, अथवा बकरीका दूध और जामुनकी छालके रसका अनुपान करे । इस औषधिके भक्षण करनेसे आतिसार, घोर ज्वर, ग्रहणी, अरुचि, आमशूल, रक्तस्राव, आँव, भ्रम, शोथ, रक्तातीसार और संग्रहणीरोग नष्ट होते हैं । इसको बृहद्गगनसुन्दर रस कहते हैं ॥ ८–१२ ॥

लोकनाथ रस ।

भस्म सूतस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगन्धकात् ।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टंकणेन निरुध्य च ॥ १३ ॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वांगशीतं समुद्धरेत् ।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥१४॥
नागरातिविषा मुस्तं देवदारु वचान्वितम् ।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनः ॥ १५ ॥

पारद भस्म या रससिंदूर १ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग इन दोनोंको खरल करके कौडियोंमें भरकर और सुहागेसे कौड़ियोंके मुखको बंद करके मूषामें रखकर पुटपाक करे । स्वांग शीतल होनेपर

कौड़ियोंको पीस लेवे। इसमेंसे ४ रत्ती औषधि शहतमें मिलाकर चाटे ऊपरसे सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु और वच इनका क्वाथ पीवे तो सब प्रकारके अतिसार दूर होते हैं। इसको लोकनाथ रस कहते हैं ॥ १२-१५ ॥

चिन्तामणि रस।

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं गन्धकं प्रतिकार्षिकम्।
चूर्णयेद्विपकर्षार्द्धं विषार्द्धं तिंतिडीफलम् ॥ १६ ॥
मर्दयेत्खल्लमध्ये तु चाम्लेन गोलकीकृतम्।
गर्भं षडङ्गुलं कुर्यात्सर्वतो वर्तुलं शुभम् ॥ १७ ॥
नागवल्ल्याः क्षिपेत्पत्रमादौ पात्रे च गोलकम्।
आच्छाद्य तच्च पात्रेण रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥१८॥
स्वांगशीतं समुद्धृत्य सपत्रञ्च विशेषतः।
कर्षार्द्धं मरिचं दत्त्वा कर्षार्द्धं तिन्तिडीफलम् ॥१९॥
गुञ्जामितां वटीं कुर्याच्चिन्तामणिरसो महान्।
अतिसारे त्रिदोषस्थे संग्रहग्रहणीगदे॥
अनुपानं विधातव्यं यथादोषानुसारतः ॥२०॥

शुद्ध पारा, तांबेकी भस्म और गंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, विष आधा कर्ष और इमलीके फल चार मासे लेवे, फिर इन सबको एकत्र कांजीमें पीसकर गोलासा बना लेवे; फिर छः अंगुल गहरे गोल पात्रमें प्रथम एक पान रखै फिर उस पानके ऊपर औषःधिका गोला स्थापन करे और फिर उसके ऊपर पान ढककर अच्छे प्रकारसे जोड़ोंको बंद करके गजपुटमें पकावे। स्वांग शीतल होनेपर पिंडको पीसकर चूर्ण कर लेवे; फिर इसमें छः मासे काली मिरच और छः मासे इमली डालकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। इन

गोलियोंके सेवन करनेसे त्रिदोषज अतिसार और संग्रहणी रोग नष्ट होजाते हैं। दोषानुसार इसके अनुपानकी कल्पना करे। इसको चिन्तामणि रस कहते हैं ॥ १६–२० ॥

अहिफेनवटिका ।

अहिफेनं सखर्जूरं घृष्ट्वा गुञ्जैकमात्रकम् ।
रक्तस्रावमतीसारमतिवृद्धं विनाशयेत् ॥ २१ ॥

अफीम और छुहारा इन दोनोंको एकत्र पीसकर एक एक रत्तीकी गोली बनाकर सेवन करनेसे रक्तातीसार, रुधिरका स्राव और सब प्रकारके अत्यन्त बढ़े हुए अतिसार नष्ट होते हैं ॥ २१ ॥

महागन्धक ।

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥२२॥
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गारिष्टपत्रके ।
सिन्धुवारदलञ्चैव एलाबीजं तथैव च ॥ २३ ॥
एषां च कर्षमात्रेण तोयेनाथ विमर्दयेत् ।
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्यं पुटपाकेन साधयेत् ॥२४॥
घनपङ्कैर्बहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २५ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला लेवे; फिर इन दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बना लेवे । फिर रसपर्पटीके समान इसको मृदुपाकसे पकाकर इसमें जायफल, जावित्री, लौंग, नीमके पत्ते, सम्हालूके पत्ते और इलायची यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला मिलाकर जलमें पीस गोला बनाकर दोसीपियोंमें बन्दकर २–२ अंगुल मोटी कपड़मिट्टीकर मृदुपुटपाकसे पकाकर ६ रत्ति परिमाण प्रतिदिन सेवन करे ॥ २२–२५ ॥

एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम् ।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसाधनम् ॥ २६ ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।
सूतिकाञ्च जयेदेतद्रक्ताशों रक्तसम्भवम् ॥ २७ ॥
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः ।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां न यांति ते ॥ २८ ॥
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥ २९ ॥

यह बालकोंकी रक्षाके लिये उत्तम औषधि है। यह औषधि ज्वरनाशक, अग्निप्रदीपक, बल और वर्णको बढ़ानेवाली तथा दुस्तर संग्रहणी रोग, प्रवाहिका, सूतिकारोग, रक्तार्श और रक्तोत्पन्न रोगोंको नष्ट करती है। जिस स्थानमें यह औषधि स्थित रहती है वहां बालकोंके विघ्न करनेवाले पिशाच, दानव, दैत्य दूर भाग जाते हैं। यह रोगी बालक और स्त्रीजनोंको अतीव उपकारी है। इसको महागन्धक कहते हैं ॥ २६-२९ ॥

सर्वांगसुन्दर रस ।

विना पाकेन सर्वाङ्गसुन्दरोऽयं प्रकीर्त्तितः ॥
ग्रहण्यां ये रसाः प्रोक्तास्तेऽतीसारे प्रकीर्तिताः॥३०॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे अतिसाररोगचिकित्सा ।

पूर्वोक्त महागन्धक पाकरहितको सर्वांगसुन्दर रस कहते हैं। केवल अन्तर इतना है कि महागन्धकका पाक किया जाता है और सर्वांगसुन्दरका पाक नहीं किया जाता। संग्रहणीरोगमें जो रस कहे हैं वह अतीसार रोगमें भी प्रयुक्त करने चाहिये ॥ ३० ॥

इति अतिसाररोगचिकित्सा ।

अथ ग्रहणीरोगचिकित्सा ।

जातीफलादिग्रहणीकपाट रस ।

जातीफलं टङ्कणमभ्रकञ्च धूस्तूरबीजं समभागचूर्णम् । भागद्वयं स्यादहिफेनकस्य गन्धालिकापत्ररसेन मर्द्यम् ॥१॥ चणप्रमाणा वटिका विधेया यत्नाद्विदद्याद् ग्रहणीगदेषु । सामेषु रक्तेषु सशूलकेषु पक्केष्वपक्केषु गुदामयेषु ॥ २ ॥ रोगेषु दद्यादनुपानभेदैर्मधुप्रयुक्तां ग्रहणीगदेषु । पथ्यं सदध्योदनमत्र देयं रसोत्तमोऽयं ग्रहणीकपाटः ॥ ३ ॥

जायफल, सुहागा, अभ्रकभस्म और धतूरेके बीज यह प्रत्येक एक एक भाग और अफीम २ भाग लेवे; इन सव औषधियोंको गन्धप्रसारणीके रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके चनेकी बराबर गोलियां बना लेवे। इन गोलियोंका आमसंयुक्त, रुधिरसहित, शूलसमेत और पक्कापक्क ग्रहणी रोग तथा अर्शरोगमें सेवन करना चाहिये । रोगीकी अवस्थाको विचारकर अनुपानकी कल्पना करे । संग्रहणीरोगमें इस औषधिका सहतके साथ सेवन करे । इसके सेवन करनेपर दहीके साथ भातका पथ्य देवे । इसको जातीफलादिग्रहणीकपाट रस कहते हैं ॥ १–३॥

ग्रहणीकपाट रस ।

टंकणाक्षारगन्धाश्मरसं जातीफलं तथा ।
बिल्वं खदिरसारञ्च जीरकं श्वेतधूनकम् ॥ ४ ॥
कपिहस्तकबीजञ्च तथा चोरकपुष्पकम् ।
एषां शाणं समादाय श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत् ॥ ५ ॥

बिल्वपत्रककार्पासफलं शालिश्च दुग्धिका।
शालिञ्च मूलं कुटजं तथा कञ्चटपत्रकम् ॥ ६ ॥
सर्वेषां स्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
रक्तिकैकप्रमाणेन खादयेद्दिवसत्रयम् ॥ ७ ॥
दधिमस्तु ततः पेयं पलमात्रप्रमाणतः।
अपि योगशताक्रान्तां ग्रहणीमुद्धतां जयेत् ॥ ८ ॥
आमशूलं ज्वरं कासं श्वासञ्चैव प्रवाहिकाम्।
रक्तस्रावकरं द्रव्यं कार्यं नैवात्र युक्तितः ॥ ९ ॥
कृष्णवार्त्ताकुमत्स्यश्च दधि तक्रञ्च शस्यते।
ज्ञात्वा वायोः कृतिं तत्र तैलं वारि प्रदापयेत् ॥१०॥

सुहागा, गन्धक, पारा, जायफल, बेलगिरी, खैरसार, जीरा, सफेद राल, कौंचके बीज और चोरहुली इन प्रत्येक औषधिको चार चार मासे लेवे, सबका बारीक चूर्ण कर लेवे। फिर इस चूर्णको बेलके पत्ते, कपासके फल, शालि धान, दुद्धी, शालिंचकी जड़, कुड़ेकी छाल और जलचौलाईके स्वरसमें अलग अलग खरलकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक गोलीके हिसाबसे तीन दिन तक खाये और ऊपरसे चार तोले दहीका पानी पीवे। जो ग्रहणीरोग सैकड़ों औषधियोंके सेवन करनेसे आरोग्य नहीं होता वह इससे अवश्य दूर होता है। तथा आमशूल, ज्वर, खांसी, श्वास और प्रवाहिका इन सब रोगोंको भी दूर करता है। इसपर रुधिरको स्रावण करानेवाले द्रव्य त्याग देवे। तथा काला बैंगन, मछली, दही और तक्रका सेवन पथ्य है। पवनसे बचाकर तैल और जलादिकसे स्नान करनेकी व्यवस्था करे ॥ ४-१० ॥

जातीफलाद्या वटिका।

अभ्रस्य सूतस्य च गन्धकस्य प्रत्येकशो माष-

चतुष्टयं च। विधाय शुद्धोपलपात्रमध्ये सुकज्जलीं वैद्यवरः प्रयत्नात् ॥ ११ ॥ जातीफलं शाल्मलिवेष्टमुस्तं सटंकणं सातिविषं सजीरम् । प्रत्येकमेषां मरिचस्य शाणप्रमाणमेकं विषमाषकं च ॥१२॥ विचूर्ण्य सर्वाण्यवलोड्य पश्चात् विभावयेत् पत्ररसैरमीषाम् । इन्द्राणिकेन्द्राशनकञ्च जम्बु जयन्तिका दाडिमकेशराजौ ॥ १३ ॥ अविद्धकर्णापि च भृंगराजो विभाव्य सम्यग्वटिका विधेया । कोलास्थिमानाथ बहुप्रकारं सामं निहन्यादनिलान् गदांश्च ॥ १४ ॥ कुर्याद्विशेषादनलप्रवृद्धिं कासञ्च पञ्चात्मकमम्लपित्तम् । इयं निहन्याद् ग्रहणीमसाध्यां मर्त्यस्य जीर्णग्रहणीं प्रवृद्धाम् ॥१५॥ असारकत्वं त्वतिसारमुग्रं श्वासं तथा पाण्डुमरोचकञ्च। चिरोद्भवां संग्रहकोष्ठदुष्टिं जयेद्भृश योगशतैरसाध्याम् । अनेकसम्भावितमर्त्यलोका नानाविधव्याधिपयोधिनौका ॥१६॥

अभ्रकभस्म ४ मासे, शुद्ध पारा ४ मासे और गन्धक ४ मासे, इन सबको एकत्र कर शुद्ध पाषाणके पात्रमें पीसकर कज्जली बनावे । फिर इसमें जायफल, मोचरस, नागरमोथा, सुहागा, अतीस, जीरा और काली मिरच यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे तथा विष एक मासे मिलाकर सबको एकत्र पीसकर इन्द्रायन, भांग, जामुन, जयन्ती, अनार, कुकुरभांगरा, पाढ और भांगरा इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग भावना देकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे साम और निराम अनेक प्रकारका ग्रहणीरोग

तथा वातरोग नष्ट होता है । यह औषधि अत्यन्त अग्निप्रदीपक तथा पांच प्रकारकी खाँसी, अम्लपित्त, पुरानी और असाध्य ग्रहणी, असारकता, अतिसार, श्वास, पाण्डुरोग, अरुचि और कोष्ठबद्धतादि समस्त रोग नष्ट करती है । सैकड़ों औषधियोंके सेवन करनेसे जो रोग दूर नहीं होते वह इसके सेवन करनेसे निश्चय दूर होजाते हैं । मर्त्यलोकमें यह औषधि रोगरूपी समुद्रसे पार तरनेके लिये नौकाके समान है । इसको जातीफलाद्या वटिका कहते हैं ॥ ११-१६ ॥

पूर्णकला वटी ।

रसं गन्धं घनं लोहं धातुकीपुष्पबिल्वकम् ।
विषं कुटजबीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम् ॥ १७ ॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु पलं तथा ।
अभ्रञ्च त्रिफलं ग्राह्यं प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ १८ ॥
भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चटदाडिमम् ।
शृङ्गाटं केशरं जम्बू-दधिमस्तु-जयन्तिका ॥१९॥
केशराजं भृङ्गराजं प्रत्येकं तोलकद्वयम् ।
द्विमाषा वटिका कार्या तक्रेण परिसेविता ॥ २० ॥
इयं पूर्णकला नाम्नी ग्रहणीगदनाशिनी ।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी संग्रहग्रहणीं जयेत् ॥ २१ ॥

पारा, गंधक, नागरमोथा, लोहभस्म, धायके फूल, बेलगिरी, विष, इन्द्रजौ, पाढ, जीरा, धनिया, रसौत, सुहागा और शिलाजीत यह प्रत्येक औषधि एक एक पल, अभ्रकभस्म और त्रिफले ये प्रत्येक औषधि तीन तीन तोले, मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), पञ्चमूल, खिरैंटी, जलपीपल, अनार, सिंघाड़े, नागकेशर, जामुन, दहीका तोड़, जयन्ती, कुकुरभांगरा और जलभांगरा यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवे । इन

सबको एकत्र पीसकर दो दो मासेकी गोली बना लेवे। एक एक गोली तक्रके साथ सेवन करे। इस औषधिके सेवन करनेसे संग्रहणी, शूल, दाह ज्वर, वमन, भ्रम और संग्रहणी प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं। यह अत्यन्त अग्निप्रदीपक है। इसको पूर्णकला वटी कहते हैं ॥ १७-२१ ॥

वज्रकपाट रस ।

पारदं गन्धकञ्चैव अहिफेनं समोचकम् ।
त्रिकटु त्रिफलं चैव सममेकत्र कारयेत् ॥ २२ ॥
भङ्गं भृङ्गद्रवैश्चैतद्भावयेच्च पुनः पुनः ।
रक्तित्रयं ततश्चास्य मधुना सह भक्षयेत् ॥
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति रसो वज्रकपाटकः ॥ २३ ॥

पारा, गंधक, अफीम, मोचरस, त्रिकुटा और त्रिफला यह सब औषधि समान भाग लेकर एकत्र खरल करके भांगके पत्तोंके रसमें और भांगरेके पत्तोंके रसमें सात सात भावना देवे। इस औषधिका तीन रत्ती परिमाण शहतके साथ सेवन करनेसे असाध्य भी ग्रहणीरोग दूर होता है। इसको वज्रकपाट रस कहते हैं ॥ २२ ॥ २३ ॥

जातीफल रस ।

पारदाभ्रकसिन्दूरं गन्धं जातीफलं समम् ।
कुटजस्य फलं चैव धूर्त्तबीजानि टङ्कणम् ॥ २४ ॥
व्योषं मुस्ताऽभया चैव चूतबीजं तथैव च ।
बिल्वं सर्ज्जरसं चैव दाडिमीफलवल्कलम् ॥ २५ ॥
एतानि समभागानि निःक्षिपेत् खल्लमध्यतः ।
विजयास्वरसेनैव मर्दयेच्छ्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ २६ ॥
गुञ्जाफलप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकां कुटज-मूल-त्वक्कषायेण प्रयोजयेत् ॥ २७ ॥

आमातिसारं हरते कुरुते वह्निदीपनम्।
मधुना बिल्वशुण्ठेन रक्तग्रहणिकां जयेत् ॥ २८ ॥
शुण्ठीधान्यकयोगेन चातिसारं निहन्त्यसौ।
जातीफलरसो ह्येष ग्रहणीगदनाशनः ॥ २९ ॥

पारा, अभ्रकभस्म, स्वर्णसिन्दूर, गंधक, जायफल, इन्द्रजौ, धतूरेके बीज, सुहागा, त्रिकुटा, नागरमोथा, हरड़, आमकी गुठली, बेलगिरी, राल और अनारके फलकी छाल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर खरलमें डालकर भांगके रसकी भावना देकर खूब मर्दन करके एक एक रत्तीकी गोली बनावे। प्रतिदिन एक गोली कुडेकी जड़के क्काथके साथ सेवन करे तो आमातिसारको दूर करती है। अग्निको दीपन करती है। शहत और बेलगिरीके साथ सेवन करनेसे रक्तग्रहणी रोग दूर होता है। सोंठ और धनियेके साथ सेवन करनेसे अतिसार रोग दूर होता है। यह जातीफलरस ग्रहणीरोगको दूर करताहै॥ २४-२९॥

ग्रहणीगजेन्द्रवटिका।

रस-गन्धक-लोहानि शंख-टङ्कण-रामठम्।
शठीतालीशमुस्तानि धान्यजीरकसैन्धवम् ॥ ३० ॥
धातक्यतिविषा शुण्ठी गृहधूमो हरीतकी ॥ ३१ ॥
भल्लातकं तेजपत्रं जातीफललवंगकम्।
त्वगेलावालुकं बिल्वं मेथी शक्राशनं समम् ॥ ३२ ॥
छागीदुग्धेन वटिका रसवैद्येन कारिता ॥ ३३ ॥
गहनानन्दनाथेन भाषितेयं रसायने।
वटी गजेन्द्रसंज्ञेयं श्रीमता लोकरक्षणे ॥ ३४ ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति ज्वरातीसारनाशिनी।
शूलगुल्माम्लपित्तानि कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३५ ॥

बलवर्णाग्निजननी सेविता च चिरायुषी ।
कंडूं कुष्ठं विसर्पञ्च गुदभ्रंशं क्रिमिं जयेत् ॥ ३६ ॥
माषद्वयां वटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः ।
वयोऽग्निबलमावीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्धनम् ॥३७॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, शंखभस्म, सुहागा, हींग, कचूर, तालीशपत्र, नागरमोथा, धनिया, जीरा, सेंधानमक, धायके फूल, अतीस, सोंठ, घरका धुँआसा, हरड़, भिलावे, तेजपात, जायफल, लौंग, दारचीनी, इलायची, सुगंधवाला, बेलगिरी, मेथी और भांग इन सबको समान भाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर गोली बना लेवे। श्रीमद्गहनानन्दने रसायन अधिकारमें यह ग्रहणी गजेन्द्रवटिका लोककी रक्षाके लिये कही है। यह अनेक प्रकारकी ग्रहणी, ज्वर, अतिसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला, हलीमक, कण्डू, कुष्ठ, वीसर्प, गुदभ्रंश और कृमिरोगको दूर करती है। यह गोली तोलमें दो दो मासेकी बनानी चाहिये और प्रतिदिन एक गोली बकरीके दूधके साथ सेवन करनी चाहिये। अथवा रोगीकी अवस्था, बल और अग्निको देखकर उपरोक्त दो मासेके अतिरिक्त कम अथवा ज्यादे मात्राका निरूपण करे। यह गोली बल और वर्णको बढ़ाती है तथा अवस्थाको स्थापित करती है ॥ ३०–३७ ॥

पीयूषवल्लीरस ।

सूतमभ्रं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक् पृथक् ॥ ३८ ॥
लवंगं चन्दनं मुस्तं पाठा जीरक-धान्यकम् ।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥३९॥
जातीफलं विश्वबिल्वं कनकं दाडिमीच्छदम् ।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥४०॥

भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः ।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥ ४१ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धबिल्वं समं गुडैः ।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरजामपि ॥ ४२ ॥
आमसम्पाचनो सम्यग् वह्निवृद्धिकरस्तथा ।
पीयूषवल्लीनामायं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ४३ ॥

पारा, अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक, रूपाभस्म, लोहाभस्म, सुहागा, रसौत और सोनामाखी भस्म यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे लेवे; लौंग, चन्दन, नागरमोथा, पाढ, जीरा, धनिया, वराहक्रान्ता, अतीस, लोध, कुडेकी छाल, इन्द्रजौ, दालचीनी, जायफल, सोंठ, बेलगिरी, नागकेशर, अनारके पत्ते, मंजीठ, धायके फूल और कूठ यह प्रत्येक औषधि पारेकी बराबर अर्थात् चार चार मासे लेवे; (कितने एक वैद्य यहां आठ आठ मासे औषधि लेनी चाहिये ऐसा कहते हैं) इन सबको एकत्रकर कुकुरभांगरेके रसमें भावना दे; पश्चात् बकरीके दूधमें पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे । इस औषधिका भुने हुए बेल और गुड़के साथ सेवन करे । यह औषधि सब प्रकारके अतीसार और बहुत दिनोंकी पुरानी संग्रहणी रोगको दूर करती है । यह ग्रहणीरोगको हरनेवाला, आमको पचानेवाला और अच्छे प्रकारसे अग्निको दीपन करनेवाला पीयूषवल्ली रस है ॥ ३८-४३ ॥

ग्रहणीशार्दूल रस ।

रस-गन्धकयोश्चापि कर्षमेकं सुशोधितम् ।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा हाटकं षोडशांशतः ॥ ४४ ॥
लवङ्गं निम्बपत्रञ्च जातीकोषफले तथा ।
एतेषां कर्षचूर्णेन सूक्ष्मैलां सह मेलयेत् ॥ ४५ ॥

मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ।
पञ्चगुञ्जाप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ ४६ ॥
सूतिकां ग्रहणीरोगं हरत्येष सुनिश्चितः ।
अर्शोघ्नो दीपनश्चैव बलपुष्टिप्रदायकः ॥ ४७ ॥
कासश्वासातिसारघ्नो बलवीर्यकरः परः ।
दुर्वारं ग्रहणीरोगमामशूलञ्च नाशयेत् ॥
संसारलोकरक्षार्थं पुरा रुद्रेण भाषितः ॥ ४८ ॥

पारा और गंधक यह दोनों शोधित एक एक तोला लेवे, फिर इन दोनोंकी एकत्र कज्जली बनावे और इसमें सोलहवां भाग सोनेके भस्म मिलावे तथा लौंग, नींबके पत्ते, जायफल, जावित्री और छोटी इलायची इन प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोला परिमाण लेवे। सबको एकत्र पीसकर एक सीपमें भर देवे और उसको अच्छेप्रकारसे बंद करके पुटपाककी विधिसे पकावे। फिर इसमेंसे निकाल प्रतिदिन पांच रत्तीके हिसावसे सेवन करे। इसके सेवन करनेसे सूतिकारोग, संग्रहणीरोग, बवासीर, खाँसी, श्वास, अतिसार, दुस्तर ग्रहणी रोग और आमशूल नष्ट होते हैं तथा अग्नि अत्यंत दीपन होती है, वल, वीर्य और सत्त्वकी वृद्धि होती है। संसारकी रक्षाके लिये पूर्व कालमें श्रीमहादेवने यह रस कहा है ॥ ४४-४८ ॥

वैद्यनाथ वटी ।

रसस्य शाणं संगृह्य काञ्जिकेन तु शोधयेत् ।
चित्रकस्य रसेनापि त्रिफलायाश्च बुद्धिमान् ॥४९॥
रसार्द्धं गन्धकं शुद्धं भृङ्गराजरसेन वा ।
द्वाभ्यां संमूर्च्छनं कृत्वा स्वरसैः शाणसम्मितैः॥५०॥
खल्लयेत्तु शिलाखण्डे क्रमशो वक्ष्यमाणजैः ।
निर्गुण्डीमधुकश्वेताकुठेरग्रीष्मसुन्दरैः ॥ ५१ ॥

भृङ्गाऽब्दकेशराजैश्च तथा चेन्द्राशनोत्कटैः।
सर्षपाभां वटीं कृत्वा दद्यात्तां ग्रहणीगदे ॥
सामवातेऽग्निमांद्ये च ज्वरे प्लीहोदरेषु च ॥ ५२ ॥
वातश्लेष्मविकारेषु तथा श्लेष्मगदेषु च।
अम्लतक्रादिसेवाञ्च कुर्वीत स्वेच्छया बहु ॥ ५३ ॥
श्रीमता वैद्यनाथेन लोकानुग्रहकारिणा।
स्वप्नान्ते ब्राह्मणस्येयं भाषिता लिखितेन तु ॥ ५४ ॥

पारा चार मासे लेकर कांजीमें शुद्ध करे, पश्चात् चित्रकके रसमें फिर त्रिफलेके रसमें भावना देकर शुद्ध करे और फिर पारेसे आधा भाग शुद्ध गंधक लेवे, फिर इन दोनोंको भांगरेके चार मासे रसमें खरल करके मूर्छित करे। फिर निर्गुण्डी, मुलैठी, अपराजिता, सुफेद वनतुलसी, ग्रीष्मसुन्दर, भांगरा, नागरमोथा, कुकुरभांगरा और भांग इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग भावना देकर सरसोंकी बराबर गोली बनावे। इन गोलियोंका ग्रहणी रोग, आमवात, मंदाग्नि, ज्वर, प्लीहोदर, वातकफके रोग, कफके रोग और समस्त अग्निके रोगोंमें विधिपूर्वक सेवन करे। इसपर खटाई और तक्र यथेच्छानुसार सेवन करे। श्रीमान् वैद्यनाथने संसारके ऊपर अनुग्रह करके यह किसी ब्राह्मणको स्वप्नमें कही है और लिखित ऋषिने भाषण की है॥४९-५४॥

रसपर्पटिका।

याम्लपित्ते विधातव्या गुटिका च क्षुधावती।
तत्र प्रोक्तविधा शुद्धौ समानौ रसगन्धकौ ॥ ५५ ॥
संमर्द्य कज्जलाभन्तु कुर्यात्पात्रे दृढाश्रये।
ततो बादरवह्निस्थे लौहपात्रे द्रवीकृतम् ॥ ५६ ॥
गोमयोपरि विन्यस्त-कदलीपत्रपातनात्।
कुर्यात्पर्प्पटिकाकारमस्य रक्तिद्वयं क्रमात् ॥ ५७ ॥

द्वादशरक्तिकां यावत्प्रयोगः प्रहरार्द्धतः ।
तदूर्ध्वं बहुपूगस्य भक्षणं दिवसे पुनः ॥९८॥

अम्लपित्तरोगमें क्षुधावती गुटिकामें जो पारे और गंधकके शुद्ध करनेकी विधि कही है उसी विधिसे शुद्ध किये हुए समान भाग पारे और गंधकको लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बना लेवे; फिर एक लोहेके पात्रमें बेरीके जलते हुए अंगारोंपर उस कज्जलीको स्थापित करे । पात्रमें थोड़ा घृत अवश्य लगाना चाहिये, नहीं तो यह कज्जली आगसे उड़ जायेगी और तैलके समान पतली कभी न होगी यह अनुभवकी बात है । पर्पटी बनाते समय आंच बहुत मन्दी होनी चाहिये; जब यह गल जाय तब गोबरके ऊपर एक केलेका पत्ता बिछाकर उसके ऊपर इसको डाल देवे और ऊपरसे एक केलेके पत्तेमें बँधी हुई गोबरकी पोटलीसे दबाकर पापड़ जैसी बना लेवे । इस प्रकारसे यह रसपर्पटिका सिद्ध होती है । इसे पहिले दिन दो रत्ती सेवन करे । फिर क्रमसे एक एक रत्ती बढ़ाता जाय, जब बढ़ते बढ़ते बारह दिन पूरे हो जावें तब फिर क्रमसे एक एक रत्ती घटाता जावे । आधे प्रहरके अनन्तर ऊपरसे बहुतसी सुपारी चर्वण करे ॥ ९९-९८॥

तृतीय एव मांसाज्यदुग्धाद्यत्र विधीयते ।
वर्ज्यं विदाहिस्त्रीरम्भामूलं तैलञ्च सार्षपम् ॥ ९९ ॥
कृष्णमत्स्याम्बुजखगांस्त्यक्त्वोन्निद्रः पयः पिबेत् ।
ग्रहणीक्षयकुष्ठार्शः-शोथाऽजीर्णविनाशिनी ॥
रसपर्प्पटिका ख्यांता निबद्धा चक्रपाणिना ॥६०॥

तीसरे दिनसे मांस, रस, घृत और दूधका पथ्य दे । इस औषधिके सेवन करने पर दाहकारक पदार्थ, स्त्रीप्रसंग, केलेका कन्द, सरसोंका तेल, छोटी मछली, कच्छपादि और पक्षीका मांस त्याग देवे ।

दिनमें सोना भी त्याग देवे । इस औषधिका सेवन करनेवाला मनुष्य बार बार दूधको पान करे। इस औषधिके सेवन करनेसे संग्रहणी, क्षय, कोढ़,बवासीर, अर्श, शोथ और अजीर्ण रोग नष्ट होते हैं, इसको चक्रपाणिदत्तने कहा है । इसको रसपर्पटिका कहते हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥

विजयपर्पटी ।

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र पारेदीयते ।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदनी ॥ ६१ ॥

उपरोक्त रसपर्पटीमें यदि पारेकी बराबर सोना भस्म, रूपा भस्म और तांबा भस्म मिलाकर पूर्वोक्त विधिसे पर्पटी तैयार की जाय तो इसको विजयपर्पटी कहते हैं । यह विजयपर्पटी सम्पूर्ण रोगोंको नष्ट करती है ॥ ६१ ॥

स्वर्णपर्पटी ।

रसोत्तमं पलं शुद्धं हेम तोलकसंयुतम् ।
शिलायां मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम् ॥ ६२ ॥
गन्धकस्य पलञ्चैकमयःपात्रे ततो दृढे ।
मर्दयेद्दृढपाणिभ्यां यावत्कज्जलतां व्रजेत् ॥ ६३ ॥
ततः पाकविधानज्ञः पर्पटीं कारयेत्सुधीः ।
रक्तिकादिक्रमेणैव योजयेदनुपानतः ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति वृष्या सर्वज्वरापहा ॥ ६४ ॥

सिंगरफसे निकाला हुआ पारा ४ तोले, सुवर्णभस्म (कोई वैद्य सुवर्णके वक डालते हैं) १ तोला इन दोनोंको एकत्र खरल करे । पश्चात् इसमें चार तोले शुद्ध गंधक डालकर लोहेके पात्रमें खूब अच्छे प्रकारसे खरल करे । जब कज्जलके समान होजावे तब रसपर्पटीके नियमानुसार पर्पटी तैयार करावे । प्रतिदिन एक एक रत्तीके नियमसे सेवन करे और यथादोषानुसार अनुपानकी कल्पना करे । यह औषधि स ।

प्रकारकी संग्रहणीको दूर करती है। (इसके प्रयोगमें दूधके सिवाय और खाना पीना कुछ भी न करे, यह १२ रत्ती तक क्रमशः बढ़ानी और फिर एक एक रत्तीके ही हिसाबसे घटानी चाहिये। तृषा लगे तो मौसम्मी, अनार आदिका रस लेवे; यह विल्वपत्रके स्वरसके साथ बहुत अच्छा काम करती है) तथा वृष्य है और सर्व प्रकारके ज्वरको दूर करती है॥ ६२-६४॥

पञ्चामृतपर्पटी।

अष्टौ गन्धकमाषकारसदलं लौहं तदर्द्धं शुभं,
लौहार्द्धञ्च वराभ्रकं सुविमलं ताम्रं तथाभ्रार्द्धिकम्।
पात्रे लौहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो,
दार्व्यां बादरवह्निनातिमृदुना पाकं विदित्वा दले६५
रम्भाया लघु ढालयेत्पटुरियं पञ्चामृतापर्पटी,
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयं वृद्धितः।
लौहे मर्द्दनयोगतः सुविमलं भक्षक्रिया लौहवद्,
गुञ्जाष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत्॥६६॥
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकादौ,
छर्द्यां दीर्घातिसारे ज्वरभवकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि।
वृष्याणां वृष्यराज्ञी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,
स्वस्थं दीप्तस्थिराग्निपुनरपिनवकं रोगिदेहंकरोति६७

गन्धक ८ मासे, शुद्ध पारा ४ मासे, लोहभस्म २ मासे और अभ्रकभस्म १ मासा और तांबाभस्म ४ रत्ती लेवे। फिर इन सबको एकत्र लोहेके पात्रमें खरल करके पीछे एक लोहेकी करछीमें इसको रखकर उस करछीको बेरीके अंगारों पर रखकर मन्द मन्द अग्निसे पकावे। जब यह अच्छे प्रकारसे गल जावे तब गोबरके ऊपर एक केलेका पत्ता रखकर उसके ऊपर इसको ढाल देवे और ऊपरसे एक

केलेके पत्तेमें गोबरकी पोटली बांध उससे पिघली हुई दवाको दबाकर पपड़ीसी बना लेवे, इसको पञ्चामृत पर्पटी कहते हैं। इस पर्पटीका पहिले दिन शहत और घृतके साथ दो रत्ती परिमाण सेवन करे; फिर प्रतिदिन क्रम क्रमसे एक एक रत्ती बढाता जाय। जब आठ या नौ रत्ती परिमाण हो जाय तब मात्राको रोक देवे; फिर एक एक रत्तीके क्रमसे घटा देवे। इस औषधिके सेवन करनेसे अनेक प्रकारकी संग्रहणी, दुष्ट बवासीर, अरुचि, वमन, बहुत दिनोंका अतिसार, ज्वर, रक्तपित्त, क्षय और नेत्ररोग नष्ट होते हैं तथा अत्यंत शुक्रकी वृद्धि होती है, वलि और पलितरोग नष्ट होता है। अग्नि दीपन होती है। इसके सेवन करनेसे रोगीका शरीर फिर नवयुवकके समान होजाता है। इसको पञ्चामृतपर्पटी कहते हैं। लोहमें मर्दन करनेके कारण इसमें पथ्यादि क्रम लोहवत् करना चाहिये ॥ ६५–६७ ॥

अग्निकुमार रस।

शुद्धसूतं समं गन्धं त्रिकटु पटुपञ्चकम्।
दशकं तुल्यतुल्यञ्च विजया सर्वसम्मिता ॥ ६८ ॥
भावयेच्चित्रभृंगोत्थैस्त्रिधा च विजयाद्रवैः।
दीप्ताग्निना तु यामैकं वालुकायन्त्रगे पचेत् ॥ ६९ ॥
संचूर्ण्य चार्द्रकद्रावैर्भावयित्वा च भक्षयेत्।
मधुना शाणमानन्तु रसो ह्यग्निकुमारकः।
दीप्ताग्निकारकः सामग्रहणीदोषनाशनः ॥ ७० ॥

पारा, गंधक, त्रिकुटा और पांचों लवण इन सब औषधियोंको समान भाग लेवे और सबकी बराबर भांग लेवे। फिर चित्रक, भांग, भांगरा इन तीनों औषधियोंके रसमें अलग अलग तीन तीन भावना देवे। पश्चात् प्रचण्ड अग्निके द्वारा वालुकायंत्रमें एक प्रहर पकावे। फिर अद-

रखके रसमें भावना देवे। इस औषधिको छः मासे शहतके साथ सेवन करे। यह अत्यन्त अग्निप्रदीपक और संग्रहणी रोगको दूर करता है। इसको अग्निकुमार रस कहते हैं ॥ ६७-७० ॥

वडवामुख रस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रटङ्कणम् ।
सामुद्रञ्च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥ ७१ ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पलाशवरुणस्य च ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यादम्लयोगेन मर्दयेत् ॥ ७१ ॥
हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाग्नौ मर्दयित्वा पुटेल्लघु ।
माषमात्रः प्रदातव्यो रसोऽयं वडवामुखः ।
ग्रहणीं विविधां हन्ति संग्रहग्रहणीं ज्वरम् ॥ ७३ ॥

पारा, गंधक, तांबा भस्म, अभ्रक भस्म, सुहागा, समुद्रलवण, जवाखार, सज्जी, सेंधानमक, सोंठ, चिरचिटेका खार, ढाकका खार और वरनेका खार इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर कांजीमें खरल करे। फिर इसको हाथीशुंडीके रसमें खरल करके लघु पुटमें पकावे। एक मासे भर इस औषधिका सेवन करे। इस औषधिके सेवन करनेसे ग्रहणी, संग्रहणी और ज्वर नष्ट होते हैं ॥ ७१-७३ ॥

ग्रहणीकपाट रस ।

रसगन्धकयोश्चापि जातीफललवङ्गयोः ।
प्रत्येकं शाणमानञ्च श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ ७४ ॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च ।
शृङ्गाटकसमुद्भूतस्वरसेन च मर्दयेत् ॥ ७५ ॥
चण्डातपेन संशोष्य वटिकां कारयेद्भिषक् ।
बिल्वपत्ररसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥ ७६ ॥

दध्ना च भोजनीयश्च ग्रहणीरोगनाशनः ।
पाण्डुरोगमतीसारं शोथं हन्ति तथा ज्वरम् ।
अयञ्च ग्रहणीरोगे कपाटो रस उत्तमः ॥ ७७ ॥

पारा, गंधक, जायफल और लौंग यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे लेवे, सबको एकत्र पीसकर बारीक चूर्ण कर लेवे, फिर इसको बेलपत्तोंके रसमें, हुलहुलके पत्तोंके रसमें और सिंघाडेके रसमें खरल करके सूर्यकी प्रचण्ड धूपमें सुखा लेवे। फिर इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर बेलके पत्तोंके रसके साथ सेवन करे। इसपर दहीके साथ भात खावे। इस औषधिके सेवन करनेसे संग्रहणी, पांडु, अतीसार, शोथ और ज्वर नष्ट होते हैं। यह ग्रहणीरोगकी उत्कृष्ट औषधि है। इसको ग्रहणीकपाट रस कहते हैं ॥ ७४-७७ ॥

बृहद्ग्रहणीकपाट रस।

मुक्ता सुवर्णं रसगन्धटङ्कमभ्रं कपर्दोऽमृततुल्य-
भागः। शङ्खस्य चूर्णं सममत्र सर्वैर्भाग्यश्च खल्ले-
ऽतिविषाद्रवेण॥७८॥ गोलश्च कृत्वा मृदु कर्पटस्थं
सम्पाच्य भाण्डे दिवसार्द्धकञ्च। सर्वाङ्गशीतो रस
एष भाव्योधूस्तूरवह्निर्मुसलीद्रवैश्च॥७९॥ लोहस्य
पात्रे परिभावितश्च सिद्धो भवेत्संग्रहणीकपाटः।
वातोत्तरायां मरिचाज्ययुक्तः पित्तोत्तरायां मधु-
पिप्पलीभिः॥८०॥ कफोत्तरायां विजयारसेन कटु-
त्रयेणाज्ययुतो ग्रहण्याम्। क्षये ज्वरे चार्शसि षट्-
प्रकारे सामातिसारेऽरुचिपीनसे च। मेहे च कृच्छ्रे
गतधातुवर्द्धने गुञ्जाद्वयं चापि महामयघ्नम् ॥ ८१ ॥

मोती, सोनाभस्म, पारा, गन्धक, सुहागा, अभ्रकभस्म, कौड़ी भस्म और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला और शंखभस्म ८ तोले लेवे; इन सब औषधियोंको एकत्रकर अतीसके रसमें डालकर खरल करे । फिर खरल करते करते जब अच्छे प्रकारसे गाढ़ा होजाय तब गोला बना लेवे । फिर उस पिंडको बारीक कपड़ेमें लपेटकर मन्द मन्द अग्निसे दो प्रहरतक पकावे । जब शीतल होजाय तब इस औषधिको लोहेके पात्रमें डाल करके धतूरेकी जड़, चित्रककी जड़ और मुसली इन प्रत्येकके स्वरसकी भावना देवे । इस प्रकार यह बृहद-ग्रहणीकपाट रस तैयार होता है । इस औषधिको मरिचोंके चूर्ण और घृतके साथ वातज संग्रहणी रोगमें प्रयुक्त करे । शहत और पीपलके साथ पित्तज ग्रहणीमें, भांगके पत्तोंके रसके साथ और त्रिकुटेके चूर्णके साथ घीमें मिलाकर कफजन्य संग्रहणीमें प्रयोग करे । इस औषधिको दो रत्ती परिमाण लेकर नित्यप्रति सेवन करनेसे क्षय, ज्वर, छः प्रकारकी बवासीर, आमातीसार, अरुचि, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं तथा शरीरमें सप्तधातुओंकी वृद्धि होकर देह पुष्ट होता है । इसको बृहद्ग्रहणीकपाट रस कहते हैं ॥ ७८-८१॥

प्रकारान्तरसे ग्रहणीकपाट रस ।

गिरिजाभवबीजकज्जली परिमर्द्यार्द्ररसेन शोषिता ।
कुटजस्य तु भस्मना पुनर्द्विगुणेनाथ विमर्द्य मिश्रिता ८२

मर्दयित्वा प्रदातव्यमस्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
अजाक्षीरेण दातव्यं क्वाथेन कुटजस्य वा ॥ ८३ ॥
यूषं देयं मसूरस्य वारिभक्तञ्च शीतलम् ।
दध्ना सह पुनर्देयं ग्रासादौ रक्तिकाद्वयम् ॥ ८४ ॥
वर्द्धयेद्दशपर्यन्तं ह्रासयेत्क्रमशस्तथा ।
निहन्ति ग्रहणीं सर्वां विशेषात्कुक्षिमार्दवम् ॥ ८५ ॥

पारा और गंधक दोनोंको समान भाग लेकर कज्जली बनावे फिर अदरखके रसमें खरल करके सुखालेवे । फिर इसमें दुगुनी कुड़ेकी छालकी भस्म मिला लेवे; सबको अच्छे प्रकारसे खरल करके चार रत्ती परिमाण औषधि बकरीके दूधके साथ अथवा कुड़ेकी छालके क्वाथके साथ सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् मसूरका यूष और शालि चावलोंका भात शीतल करके भोजन करे । रक्तातिसार रोगमें इस औषधिको दहीके साथ दो रत्ती परिमाण सेवन करे और क्रमसे एक एक रत्ती प्रति दिन बढाता जाय । जब दश रत्ती परिमाण होजाये तब फिर एक एक रत्ती परिमाण घटाता जाये । इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारका संग्रहणी रोग और मन्दाग्नि दूर होते हैं ॥ ८२-८५ ॥

विजयावटिका ।

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र परिदीयते ।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदनी ॥ ८६ ॥

यदि उपरोक्त औषधिमें पारेकी बराबर सोनेकी भस्म, चांदीकी भस्म और तांबेकी भस्म मिलाकर गोली बना लेवे । इसको विजयावटिका कहते हैं । यह विजयावटिका पूर्वोक्त गुणोंवाली और सम्पूर्ण रोगोंको दूर करती है ॥ ८६ ॥

ग्रहणीकपर्दपोट्टली ।

कपर्दतुल्यं रसकं तु गन्धकं लोहं मृतं टंकणकञ्च तुल्यम् । जयारसेनैकदिनं विमर्द्य चूर्णेन संवेष्ट्य पुटेच्च भाण्डे ॥ ददीत तत्पोट्टलिकाभिधानं वातप्रधानां ग्रहणीं निहन्ति ॥ ८७ ॥

कौड़ीकी भस्म, पारा, गंधक, लोहभस्म और सुहागा इन सब औषधियोंको एकत्र भांगके पत्तोंके रसमें एकादिन खरल करके गोला-

कार करलेवे । फिर इस गोलेको शंखके चूनेमें वेष्टित करके संपुट कर पुटपाक करे । यह औषधि वातज संग्रहणी रोगमें अतीव हितकारी है। इसको ग्रहणीकपर्दपोट्टली रस कहते हैं ॥ ८७ ॥

हंसपोट्टली रस ।

दग्धान् कपर्दकान् पिष्ट्वा त्र्यूषणं टंकणं विषम् ।
गन्धकं शुद्धसूतञ्च तुल्यं जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ८८ ॥
मर्दयेद्भक्षयेन्माषं मरिचार्द्रं लिहेदनु ।
निहन्ति ग्रहणीरोगं पथ्यं तक्रौदनं हितम् ॥ ८९ ॥

कौडीकी भस्म, सोंठ, मरिच, पीपल, सुहागा, विष, शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा इन सबको बराबर लेकर जम्बीरी नींबूके रसमें खरल करे। इसमेंसे एक मासे परिमाण औषधि सेवन करे और ऊपरसे कालीमिरच और अदरखके रसका अनुपान करे। इससे संग्रहणीरोग तत्काल नष्ट होजाता है। इसपर तक्र और भात पथ्य है ॥ ८८॥ ८९ ॥

ग्रहणीकपाट रस ।

तुल्यं कान्तं रसं तालं माक्षिकं टंकणन्तथा ।
सपादनिष्कं प्रत्येकं पञ्चनिष्कं वराटकम् ॥९०॥
द्विनिष्कं गन्धकं सर्वं पिष्ट्वा जम्बीरजैर्द्रवैः ॥
अर्द्धभारकरीषेण पुटितं भस्मशोभनम् ।
प्रदद्याद् ग्रहणीगुल्मक्षयकुष्ठप्रमेहके ॥ ९१ ॥

कान्तलोहभस्म, पारा, हरितालभस्म, सोनामाखीकी भस्म और सुहागा यह प्रत्येक औषधि सवा चार चार मासे, कौडीकी भस्म २० मासे और शुद्ध गंधक आठ ८ मासे लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके गोला बना लेवे । फिर गोलेको एक मूषामें संपुट करके ५० सेर जंगली उपलोंकी आंच दे,

स्वयं शीतल होनेपर संपुटको निकालकर औषधिका चूर्ण कर लेवे। इस औषधिके यथोचित मात्रा और यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, गुल्म, क्षय, कुष्ठ और प्रमेह रोग नष्ट होते हैं। इसको ग्रहणीकपाट रस कहते हैं ॥ ९० ॥ ९१ ॥

रसाभ्रगन्धान् क्रमवृद्धियुक्ताञ्जङ्घारसेन त्रिदिनं विमर्द्य। जयन्तिकाभृङ्ककलम्बिनीरैर्दिनं यवक्षार-सटंकणञ्च॥९२॥क्षिप्त्वा तु गन्धस्य च तुल्यभागं वातारितैलेन युतं पुटित्वा। गुडूचिका शाल्म-लिकारसेन जयारसेनापि विमर्द्य शाणम्॥ मरीच-सार्द्धं मधुना समेतं ददीत पथ्यं दधिभक्तकञ्च॥९३

दूसरा ग्रहणीकपाट रस—पारा १ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग और गन्धक ३ भाग लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर काकजंघाके रसमें तीन दिन तक, जयंतीके रसमें एक दिन, भांगरेके रसमें और कलम्बीके रसमें एक एक दिन तक खरल करके जवाखार ३ भाग और सुहागा ३ भाग मिलाकर एरंडके तेलमें खरल करके पुटपाककी विधिसे पकावे। पश्चात् गिलोय, सेमल और भांगके रसमें अलग अलग मर्दन करे। इसको कालीमिरचोंके चूर्ण और शहतके साथ चार मासे परिमाण सेवन करे। इस औषधिके सेवनके अंतमें दहीके साथ भात खाय। इसको ग्रहणीकपाट रस कहते हैं ॥ ९२ ॥ ९३ ॥

ग्रहणीवज्रकपाट रस।

सूतं गन्धं यवक्षारं जयन्त्युग्राभ्रटंकणम्।
जयन्तीभृङ्गजम्बीरद्रवैः पिष्ट्वा दिनत्रयम् ॥ ९४ ॥
यामार्द्धं गोलकं स्वेद्यं मन्देन पावकेन च।
शीते जयारससमं शाल्मलीविजयाद्रवैः ॥ ९५ ॥

भावयेत्सप्तधा वज्रकपाटः स्याद्रसोत्तमः ।
माषद्वयं त्रयं वास्य मधुना ग्रहणीं जयेत् ॥ ९६ ॥

पारा, गन्धक, जवाखार, जयंती, वच, अभ्रकभस्म और सुहागा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जयंती, भांगरा और जम्भीरी नींबूके रसमें तीन दिन तक खरल करके गोला बना लेवे । फिर इस गोलेको पानके पत्तोंमें लपेट संपुट कर हांडीमें रख चार घड़ी तक मन्दाग्निसे स्वेदन करे; फिर शीतल होनेपर जयन्तीके रसकी सात, सेमलकी जड़के रसकी सात और भांगके रसकी सात भावना देवे। इसको दो मासे अथवा तीन मासे परिमाण शहतके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी रोग नष्ट होता है । इसको ग्रहणीवज्रकपाट रस कहते हैं ॥ ९४-९६॥

तारमौक्तिकहेमानि सारश्चैकैकभागिकम् ।
द्विभागो गन्धकः सूतस्त्रिभागो मर्दयेदिमान् ॥९७॥
कपित्थस्वरसैर्गाढं मृगशृङ्गे ततः क्षिपेत् ।
पुटेन्मध्यपुटेनैव तत उद्धृत्य मर्दयेत् ॥ ९८ ॥
बलारसैः सप्तधैवमपामार्गरसैस्त्रिधा ।
लोध्रप्रतिविषामुस्ताधातकीन्द्रयवामृताः ॥ ९९ ॥
प्रत्येकमेतत्स्वरसैर्भावना स्यात्त्रिधा त्रिधा ॥
माषमात्रो रसो देयो मधुना मरिचैस्तथा ॥१००॥
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वजामपि ॥
कपाटो ग्रहणीरोगे रसोऽयं वह्निदीपनः ॥१०१॥

द्वितीय ग्रहणीवज्रकपाट रस—चांदी, मोती, सोना और लोहा इन सबकी भस्म एक एक भाग, गन्धक २ भाग और पारा ३ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको कैथके रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके एक

हिरनके सींगमें भर देवे और ऊपरसे मृत्तिकादि बन्द करके मध्यम रीतिसे पुटपाक करे । जब शीतल हो जाये तब सींगमेंसे औषधि निकालकर खिरैंटीकी जड़के रसमें सात तथा चिरचिटा, लोध, अतीस, नागरमोथा, धायके फूल, इद्रजौ और गिलोय इन प्रत्येकके रसके द्वारा तीन तीन भावना देवे । इसमेंसे एक मासे औषधि लेकर शहत और काली मिरचोंके चूर्णमें मिलाकर सेवन करनेसे अतीसार और सर्वदोषजग्रहणीरोग नष्ट होता है, अग्नि दीप्त होती है । यह रस ग्रहणीकपाट रसके समान गुणोंवाला है ॥ ९७-१०१ ॥

पानीयभक्तवटी ।

कृष्णाऽभ्रलोहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं प्रत्येकमेव पलिकं विधिवद्विधाय । चव्यं कटुत्रयफलत्रयकेशराजदंती-पयोदचपलाऽनलघण्टकर्णाः ॥ २ ॥ माणोलकुम्भ-बृहतीत्रिवृताः ससूर्यावर्त्ताः पुनर्नविकया सहिता-स्त्वमीषाम् । मूलं प्रतिप्रतिविशोधितमक्षमेकं चूर्णं तदर्द्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥ ३ ॥ कृत्वाऽऽर्द्रकीय-रससंवलितञ्च भूयः सम्पिष्य तस्य वटिका विधि-वद्विधेया । हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥ ४ ॥ शूलञ्च पाकजनितं सतताग्निमान्द्यं सद्यः करोत्यपचितिं चिरनष्टवह्नेः । कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धां श्वासं च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥ ५ ॥

काले अभ्रककी भस्म १ पल, मण्डूर १ पल, वायविडंगका चूर्ण १ पल, चव्य, सोंठ, पीपल, मरिच, हरड़, बहेड़ा, आमला, कुकुर-भांगरा, दंतीमूल, नागरमोथा, पीपल, चित्रकमूल, घण्टाकर्ण, मानकंद, बडहर, कटेरी, निशोथ, हुलहुल और पुनर्नवा प्रत्येकका मूल चूर्ण एक

एक तोला, इन सब द्रव्योंसे आधी पारे गंधककी कज्जली करके सबको मिलाकर अदरखके रसमें वार वार खरल करके गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे अम्लपित्त, अरुचि, संग्रहणी, बवासीर, कामला, भगंदर, शोथ, गुल्म, परिणामशूल, मन्दाग्नि और बहुत दिनोंके उत्पन्न हुए अग्निके दोष सब नष्ट होजाते हैं तथा अग्नि अत्यन्त दीपन होती है । इसके सेवनसे कुष्ठरोग, वलि, पलित, श्वास, खांसी और पाण्डुरोग यह सब नष्ट होते हैं ॥ २–५ ॥

वार्यन्नमांसदधिकाञ्जिकतक्रमत्स्यवृक्षाम्लतैलपरि-
पक्वभुजो यथेष्टम् । शृङ्गाटबिल्वगुडकंचटनारि-
केलदुग्धानि सर्वद्विदलानि विवर्जयेत्तु ॥ ६ ॥

इस औषधिके सेवनके अन्तमें जलके साथ सिद्ध किया भात, मांस-रस, दही, कांजी, तक्र, मत्स्य, तिंतडी और तेलमें पकाये हुए समस्त पदार्थ यथेष्ट भक्षण करे । सिंघाड़े, बेल, गुड़, जलपीपल, नारियल, दूध और सब प्रकारके दो दो दलवाले अन्न त्याग देवे ॥ ६ ॥

शम्बूकादिवटी ।

दग्धशम्बूकसिन्धूत्थं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत् ।
निष्कैकेन निहन्त्याशु वातसंग्रहणीगदम् ॥ ७ ॥

घोंघे (छोटे शंख) की भस्म और सेंधानमक दोनों बराबर भाग ले पीसकर शहतमें मिलाकर तीन मासे परिमाण सेवन करनेसे वातज ग्रहणीरोग शीघ्र ही नष्ट होजाता है । इसे शम्बूकादिवटी कहते हैं ७

हिरण्यगर्भपोट्टली रस ।

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यो द्वौ हाटकस्य च ।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिःस्वनात् ॥८॥
त्र्यंशं बलेर्वराटचाश्व टङ्कणो रसपादिकः ।
पक्वनिम्बुकतोयेन सर्वमेवात्र मर्दयेत् ॥ ९ ॥

मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत् ॥
गर्त्तेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेत् त्रिंशद्वनोपलैः ॥ ११० ॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरान्नयेत् ।
ततः खल्लोदरे मर्द्य सुधारूपं समुद्धरेत् ॥ ११ ॥
एतस्यामृतरूपस्य दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥ १२ ॥
मन्दाग्नौ रोगसंघे च ग्रहण्यां विषमज्वरे ।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयोः ॥ १३ ॥
अतीसारे महाव्याधौ श्वयथौ पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कुष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहोदरेषु च ॥ १४ ॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च ।
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥ १५ ॥

पारा १ भाग, सुवर्णभस्म २ भाग, मोती ४ भाग, शंखभस्म ६ भाग, गन्धक ३ भाग, कौड़ीकी भस्म ३ भाग और सुहागा पारेसे चौथाई भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके पके हुए नींबूके रसमें खरल करके मूषामें संपुट करे। फिर इस मूषाको एक हाथ परिमाण गहरे गढेमें ३० जंगली उपलोंके बीचमें रख यथोक्त विधिसे अग्नि देवे। जब पककर अपने आप शीतल होजाये तब मूषामेंसे औषधियोंको निकालकर खरलमें डालकर पीस लेवे। फिर इस अमृतके समान औषधिमेंसे चार रत्ती परिमाण लेकर घी, शहत और उनतीस काली मिरचोंके साथ मन्दाग्नि रोग, रोगसंकर, संग्रहणीरोग, विषमज्वर, अर्शरोग, भयंकरशूल, पीनस, श्वासरोग, खांसी, अतिसार, शोथ, पाण्डुरोग, सब प्रकारके कुष्ठ रोग, यकृत् और प्लीहा रोग, उदररोग, वातज रोग, पित्तज रोग, कफज रोग, द्विदोषज रोग, त्रिदोषज

रोग और सब प्रकारके रोगोंमें प्रयोग करना चाहिये । यह उत्तम रसायन है । इसको हिरण्यगर्भपोट्टली रस कहते हैं ॥ ८–१५ ॥

रसाभ्रवटी ।

शुद्धसूतस्य कर्षैकं कर्षैकं गन्धकस्य च ।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा तुल्यं व्योम प्रदापयेत् ॥१६॥
केशराजस्य भृंगस्य निर्गुण्डयाश्चित्रकस्य च ।
ग्रीष्मसुन्दरमण्डूकीजयन्तीन्द्राशनस्य च ॥ १७ ॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम् ।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्च मरिचोद्भवम् ॥ १८ ॥
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टंकणसम्भवम् ।
संमर्द्य वटिकां कुर्यात्कलायसदृशीं बुधः ॥ १९ ॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवं रुजम् ।
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट् ॥ २० ॥
चातुर्थिके ज्वरे श्रेष्ठो ग्रहण्यातंकनाशनः ।
दधि चावश्यकं देयं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा १ कर्ष, शुद्ध गन्धक १ कर्ष, दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर और सबकी बराबर अभ्रक भस्म मिलाकर कुकुरभांगरा, भांगरा, निर्गुण्डी, चित्रकमूल, ग्रीष्मसुन्दर,मण्डूकपर्णी, जयन्ती, भांग, सुफेद कोयलकी जड़ और पान इन प्रत्येकका स्वरस एक एक कर्ष परिमाण, मरिचका चूर्ण १ कर्ष और सुहागा ६ मासे इन सबको एकत्र खरल करके मटरके प्रमाण गोली बनावे । यह यथाविधि सेवन करनेसे खांसी, क्षय, श्वास, वातकफोत्पन्न रोग, ज्वर, अतिसार, चातुर्थिकज्वर और संग्रहणी रोगमें तत्काल फल देनेवाली सिद्ध औषधि है । इस औषधिके सेवन करनेसे अन्तमें दही पीना चाहिये । इस रसाभ्र-वटीको नागार्जुन मुनिने कहा है ॥ १६–२१ ॥

अग्निकुमार रस।

रसं गन्धं विषं व्योषं टंकणं लौहभस्मकम्।
अजमोदाहिफेनञ्च सर्वतुल्यं मृताभ्रकम्॥
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेद्याममात्रकम्॥ २२॥
मरिचाभां वटीं खादेदजीर्णं ग्रहणीन्तथा।
नाशयेन्नात्र सन्देहो गुह्यमेतच्चिकित्सितम्॥
रसश्चाग्निकुमारोऽयं दीपयत्याशु पावकम्॥ २३॥

पारा, गन्धक, विष, सोंठ, मरिच, पीपल, सुहागा, लोहभस्म, अजमोद और अफीम यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और सब औषधियोंके बराबर अभ्रककी भस्म इन सबको एकत्र चीतेकी जड़के रस या काथमें भावना देकर मरिचकी बराबर गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे अजीर्ण और संग्रहणी रोग नष्ट होते हैं। यह जठराग्निको बहुत जल्दी प्रदीप्त करता है। इसको अग्निकुमार रस कहते हैं॥२२॥२३॥

नृपतिवल्लभ रस।

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटंकरामठम्।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानीविश्वसैन्धवाः॥ २४॥
लौहमभ्रं रसो गन्धताम्रं प्रत्येकशः पलम्।
मरिचं द्विपलं दत्त्वा छागीक्षीरेण पेषयेत्॥ २५॥
धात्रीरसेन वा पेष्यं वटिकाः कुरु यत्नतः।
श्रीमद्गहननाथेन विचिन्त्य परिनिर्मितः॥ २६॥

जायफल, लौंग, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, सुहागा, हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सेंधानमक, सोंठ, लोहभस्म, अभ्रक-भस्म, पारा, गन्धक और तांबेकी भस्म यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले तथा कालीमिरच ८ तोला इन सबको एकत्र बकरीके दूधमें पीसकर अथवा आमलोंके रसमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली

बना लेवे । इसको श्रीमद्गहनानन्दनाथने विशेष विचारपूर्वक निर्माण किया है ॥ २४–२६ ॥

सूर्यवत्तेजसा चायं रसो नृपतिवल्लभः ।
अष्टादशवटीं खादेत्पवित्रः सूर्यदर्शकः ॥ २७ ॥
हन्ति मन्दानलं सर्वमामदोषं विषूचिकाम् ।
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलायकृत्पाण्डुत्वकामलाम् ॥ २८ ॥
सर्वानेव गदान् हन्ति चण्डांशुरिव पापहा ।
बलवर्णकरो हृद्य आयुष्यो वीर्यवर्द्धनः ॥ २९ ॥
परं वाजीकरः श्रेष्ठः पटुदो मन्त्रसिद्धिदः ।
अरोगी दीर्घजीवी स्याद्रोगी रोगाद्विमुच्यते॥ ३० ॥
रसस्यास्य प्रसादेन बुद्धिमाञ्जायते नरः ।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३१ ॥

इस नृपतिवल्लभ रसका प्रताप सूर्यके समान है । इसकी १८ गोली पवित्र और सूर्यके दर्शन करनेवाला मनुष्य भक्षण करे । यह रस मंदाग्नि, सब प्रकारका आमदोष, विषूचिका, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, यकृत्रोग, पांडुरोग, कामला और सब प्रकारके रोगोंको दूर करता है; बल और वर्णको बढ़ानेवाला, हृदयको हितकारी, अवस्थाको स्थापन करनेवाला, वीर्यवर्द्धक, श्रेष्ठ,परम वाजीकरण और चतुरताको देनेवाला है । इसका नित्य सेवन करनेवाला मनुष्य सदैव निरोगी, बहुत कालतक जीनेवाला होता है और रोगी मनुष्य रोगसे मुक्त होजाता है । इस रसके प्रसादसे मनुष्य बुद्धिमान् हो जाता है । इसकी बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बनानी चाहिये ॥ २७–३१ ॥

राजवल्लभ रस ।

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटङ्करामठम् ।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानीविश्वसैन्धवम् ॥ ३२ ॥

लौहमभ्रं सताम्रञ्च रसगन्धकमेव च ।
मरिचं त्रिवृतं रूप्यं प्रत्येकं द्विपलोन्मितम् ॥ ३३ ॥
धात्रीरसे वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जाफलमानतः ।
हन्ति शूलं तथा गुल्ममामवातं सुदारुणम् ॥ ३४ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च चक्षुःशूलं हलीमकम् ।
शिरःशूलं कटीशूलमानाहमष्टशूलकम् ॥ ३५ ॥
क्रिमिकुष्ठानि दद्रूश्च वातरक्तं भगन्दरम् ।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शःप्रवाहिकाम् ॥
नृपवल्लभराजोऽयं महेशेन प्रकाशितः ॥ ३६ ॥

जायफल, लौंग, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, सुहागा, हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, तांबेकी भस्म, पारा, गन्धक, कालीमिरच, निसोथ और चांदीभस्म यह प्रत्येक औषधि दो दो पल लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके आमलोंके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बनावे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे शूल, गुल्म, आमवात, हृदयशूल, पार्श्वशूल, चक्षुःशूल, हलीमक, शिरःशूल, कटिशूल, आनाह, अष्ट प्रकारका शूल, कृमि, कुष्ठ, दद्रु, वातरक्त, भगन्दर, उपदंश, अतिसार, संग्रहणी, बवासीर और प्रवाहिकादि समस्त रोग नष्ट होते हैं । इस नृपवल्लभराज रसको स्वयं महादेवजीने कहा है ॥ ३२-३६ ॥

बृहन्नृपवल्लभ ।

रसगन्धकलौहाभ्रं नागं चित्रं त्रिवृत्समम् ।
टङ्कं जातीफलं हिंगुत्वगेलाब्दलवंगकम् ॥ ३७ ॥
तेजपत्रमजाजीं च यमानीविश्वसैन्धवम् ।
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं मरीचतारयोस्तथा ॥ ३८ ॥

निरुत्थकं मृतं हेम तथा द्वादशरक्तिकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव धात्र्याश्च स्वरसेन च ॥ ३९ ॥
भावयित्वा प्रदातव्यो माषद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पथ्यं भक्षेद्यथेप्सितम् ॥ १४० ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च दुर्नामं ग्रहणीं जयेत् ।
आमाजीर्णप्रशमनः सर्वरोगनिषूदनः ॥
नाशयेदुदराद्रोगान्विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥ ४१ ॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, नागभस्म, चित्रकमूल, निशोथ, सुहागा, जायफल, हींग, दालचीनी, इलायची, नागरमोथा, लौंग, तेजपात, जीरा, अजवायन, सोंठ, सैंधानमक, कालीमिरच और चांदीभस्म, यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, सोनाभस्म १२ रत्ती इन सबको एकत्र पीसकर अदरख और आमलोंके रसमें अलग २ भावना देकर दो दो मासे प्रमाण गोली बना लेवे। प्रातःकाल यथायोग्य मात्रानुसार और यथोचित अनुपानके साथ यथेष्ट भोजन करे। इससे मंदाग्नि, अजीर्ण, बवासीर, संग्रहणी और आमाजीर्ण प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं। जिस प्रकार विष्णुके चक्रसे दैत्योंका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे उदरके रोग नष्ट होते हैं। इसको बृहन्नृपतिवल्लभ रस कहते हैं ॥ ३७-४१ ॥

संग्रहग्रहणीकपाट रस ।

मुक्ता सुवर्णं रसगंधटंकमभ्रं कपर्दो रसतुल्यभागः । सर्वैः समं शङ्खकचूर्णमिष्टं खल्ले च भाव्योऽतिविषाद्रवेण ॥४२॥ गोलञ्च कृत्वा मृदु कर्पटस्थं सम्पाच्य भाण्डे दिवसार्द्धकञ्च । सर्वांगशीते रस एष भाव्यो धूस्तूरवह्नीमुसलीद्रवैश्च ॥ ४३ ॥ लौहस्य पात्रे

परिभावितश्च सिद्धो भवेत्संग्रहणीकपाटः। वातोत्तरायां मरिचाज्ययुक्तः पित्तोत्तरायां मधुपिप्पलीभिः॥ ४४॥ कफोत्तरायां विजयारसेन कटुत्रयेणाज्ययुतो ग्रहण्याम्। क्षये ज्वरे चार्शसि षट्प्रकारे भगन्दरे चारुचिपीनसे च। मेहे च कृच्छ्रे गतधातुवर्द्धने गुञ्जाद्वयश्चास्य महामयघ्नम्॥ ४५॥

मोती, सोनाभस्म, पारा, गंधक, सुहागा, अभ्रकभस्म और कौड़ीकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, शंखकी भस्म ७ भाग इन सब द्रव्योंको एकत्रकर अतीसके क्वाथमें मर्दन करके गोला बना नरम वस्त्रमें लपेटकर मूषामें संपुटकर हांडीमें रख दो प्रहरतक पकावे। जब शीतल होजावे तब एक लोहेके पात्रमें डालकर धतूरेके पत्ते, चीतेकी जड़ और मुसलीके रसकी अलग अलग भावना दे; फिर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिका वातजन्य ग्रहणी रोगमें कालीमिरचोंके चूर्ण और घृतके साथ, पित्तप्रधान ग्रहणीरोगमें पीपलके चूर्ण और शहतके साथ, कफप्रधान ग्रहणी रोगमें भांगके रस; त्रिकुटेके चूर्ण और घृतके साथ सेवन करे। क्षयरोग, छः प्रकारके अर्शरोग, भगन्दर, अरुचि, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्रमें और नष्ट धातुको बढ़ानेके लिये इसका प्रयोग करना चाहिये। इसको संग्रहग्रहणीकपाट रस कहते हैं॥ ४२-४५॥

महाराजनृपतिवल्लभ रस।

कर्षत्रयं मृतं कान्तं मृताभ्रं मृतताम्रकम्।
मृतं तारं माक्षिकञ्च कर्षं कर्षं प्रदापयेत्॥ ४६॥
मृतं स्वर्णं मृतं तारं टङ्कणं शृङ्गमेव च।
वसिरं दन्तिमूलञ्च मरिचं तेजपत्रकम्॥ ४७॥
यमानी बालकं मुस्तं शुण्ठकञ्च सधान्यकम्।

सिन्धूद्भवं सकर्पूरं विडङ्गं चित्रकं विषम् ॥ ४८ ॥
पारदं गन्धकञ्चैव तोलमानं प्रदापयेत् ।
तोलद्वयं त्रिवृच्चूर्णं लवंगं तच्चतुर्गुणम् ॥ ४९ ॥
जातीकोषफलञ्चैव तत्समं तु वराङ्गकम् ।
सर्वेषामर्द्धभागन्तु विडकं तत्र मिश्रयेत् ॥ १५० ॥
सर्वमेकीकृतं यद्यत् त्रुटिचूर्णञ्च तत्समम् ।
भावना च प्रदातव्या छागीदुग्धेन सप्तधा ॥ ५१ ॥
मातुलुङ्गरसैः पश्चाद्भावयेत्सप्तवारकम् ।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा भक्षयेद्दशरक्तिकाम् ॥५२॥

कांतलोहभस्म ३ कर्ष, अभ्रकभस्म, तांबेकी भस्म, सोनामाखी और रूपामाखीकी भस्म, यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष लेवे। सोनाभस्म, चांदीभस्म, सुहागा, बारहसिंगेके सींगकी भस्म, गजपीपल, दंतीकी जड़, कालीमिरच, तेजपात, अजवायन, सुगन्धवाला, नागरमोथा, सोंठ, धनिया, सैंधानामक, कपूर, वायविडंग, चित्रक, विष, पारा और गंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला, निसोथका चूर्ण दो तोले, लौंग, जावित्री, जायफल और दालचीनी यह प्रत्येक आठ आठ तोले, सब औषधियोंसे आधा भाग विडनमक और सब औषधियोंके समान छोटी इलायचियोंका चूर्ण इन सब औषधियोंको एकत्र करके बकरीके दूधकी सात तथा बिजोरे नींबूके रसकी सात भावना देकर छायामें सुखा दश दश रत्तीकी गोली बनाकर सेवन करे ॥ ४६–५२ ॥

मन्दानलं संग्रहणीं प्रवृद्धामामानुबन्धीं क्रिमिपाण्डुरोगम् । छर्द्यम्लपित्तं हृदयामयञ्च गुल्मोदरानाहभगंदरं च ॥५३॥ अर्शांसि वै पित्तकृतानशेषान् सामं सशूलाष्टकमेव हन्ति । साजीण-

विष्टम्भविसर्पदाहं विलम्बिकाञ्चाप्यलसं प्रमेहम्
॥५४॥कुष्ठान्यशेषाणि च कासशोषं हन्यात् स-
शोथं ज्वरमूत्रकृच्छ्रम् । मतान्तरे सर्वतोभद्रनामा
महेश्वरेणैव विभाषितोऽयम् ॥ ५५ ॥

इसके सेवन करनेसे मंदाग्नि, अत्यन्त बढ़ी हुई आम सहित संग्रहणीरोग, कृमि, पाण्डु, वमन, अम्लपित्त, हृदयरोग, गुल्म, उदररोग, आनाह, भगन्दर, बवासीर, पित्तजनित अनेक प्रकारके रोग, आमदोष, आठ प्रकारके शूल, विष्टब्धाजीर्ण, विसर्प, दाह, विलम्बिका, अलसक, प्रमेह, सब प्रकारके कुष्ठ; खांसी, शोथ, ज्वर और मूत्रकृच्छ्र रोग यह सब दूर होते हैं । इसको कोई सर्वतोभद्र रस भी कहते हैं । यह स्वयं महादेवजीने कहा है ॥ ५३-५५ ॥

माक्षिकं लौहमभ्रञ्च वङ्गं रजतहाटकम् ।
ग्रन्थिर्यमानिका चोचं ताम्रं नागरटंकणम् ॥ ५६ ॥
सैन्धवं वालकं मुस्तं धान्याकं गन्धकं रसम् ।
शृङ्गी कर्पूरकञ्चैव प्रत्येकं माषकोन्मितम् ॥ ५७ ॥
माषद्वयं रामठं स्यान्मरिचानां चतुष्टयम् ।
जातीकोषं लवङ्गञ्च पत्रञ्च तोलकोन्मितम् ॥ ५८ ॥
नाभिशङ्खं विडङ्गञ्च शाणं माषद्वयं विषम् ।
कर्षषट्कं सत्रिमाषं सूक्ष्मैलानां ततः क्षिपेत् ॥ ५९॥
विडं कर्षद्वयं सर्वं छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
चतुर्गुञ्जामितं खादेत्सानाहग्रहणीं जयेत् ॥ १६० ॥
शम्भुना निर्मितो ह्येष पूर्ववद्गुणकारकः ।
नाम्ना महाराजपूर्वो नृपवल्लभ उच्यते ॥ १६१ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे ग्रहणीरोगचिकित्सा ।

दूसरा महाराजनृपतिवल्लभ–सोनामाखी, लोह, अभ्रक, वंग, चांदी और सोना इन सबकी भस्म, पीपलामूल, अजवायन, दालचीनी, तांबाभस्म, सोंठ, सुहागा, सेंधानमक, सुगन्धवाला, नागरमोथा, धनिया, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, काकड़ासिंगी और कपूर यह प्रत्येक औषधि एक एक मासा, हींग २ मासे लेवे; कालीमिरच ४ मासे, जावित्री, लौंग और तेजपात यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेवे। शंखकी भस्म और वायविंडग चार चार मासे, विष २ मासे, छोटी इलायचीके बीज ६। कर्ष और विडनमक २ कर्ष लेवे। इन सबको बकरीके दूधमें पीसकर चार चार रत्तीकी गोलियां बना लेवे। प्रतिदिन एक गोली खाये तो आनाह और ग्रहणी रोग दूर हो, यह महाराजनृपतिवल्लभ पहिले कहे महाराजनृपतिवल्लभके समान गुणकारक है। इसको महादेवजीने निर्माण किया है ॥ १९६–१६१ ॥

इति ग्रहणीरोगचिकित्सा समाप्त।

अथार्शोऽधिकार।

चक्रेश्वर रस।

चतुर्भागं शुद्धसूतं पञ्च टंकणमभ्रकम्।
त्रिदिनं भावयेद्धर्म्मे द्रवैः श्वेतपुनर्नवैः ॥ १ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं वातदुर्नामशान्तये।
सिद्धश्चक्रेश्वरो नाम रसश्चार्शःकुलान्तकः ॥ २ ॥

शुद्ध पारा ४ भाग, सुहागा और अभ्रकभस्म पांच पांच भाग इन सबको एकत्र करके सुफेद विषखपरेके रसमें तीन दिनतक धूपमें खरल करे। फिर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे वातजन्य अर्शरोग दूर होता है, यह चक्रेश्वर रस अर्शकुलनाशक है। (चक्रेश्वरमें पारदभस्म या रससिंदूर पारेके स्थानमें डालना चाहिये, अथवा द्विगुण गंधक मिलाकर पारा डालना चाहिये) ॥ १ ॥ २ ॥

तीक्ष्णमुख रस।

मृतंसूतार्कहेमाभ्रं तीक्ष्णं मुण्डञ्च गन्धकम्।
मण्डूरञ्च समं ताप्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम् ॥३॥
अन्धमूषागतं सर्वं ततः पाच्यं दृढाग्निना।
चूर्णितं सितया माषं खादेत्तच्चार्शसां हितम् ॥
रसस्तीक्ष्णमुखो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥४॥

पारेकी भस्म, तांबेकी भस्म, सोनेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, तीक्ष्ण-लोहभस्म, मुण्डलोहभस्म, गंधक, मण्डूरभस्म और सोनामाखीकी भस्म इन सबको घीकारके रसमें एक दिनतक खरल करे। पश्चात् इसको अन्धमूषामें रखकर तीक्ष्ण अग्निसे पकावे। जब शीतल होजाय तब मूषामेंसे औषधिको बाहर निकालकर चूर्ण कर ले। इसको एक मासे परिमाण मिश्रीके साथ सेवन करनेसे असाध्य अर्श रोग भी नष्ट होजाता है। इसको तीक्ष्णमुख रस कहते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

अर्शःकुठार रस।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मृतलौहञ्च ताम्रकम्।
प्रत्येकं द्विपलं दन्ती त्र्यूषणं शूरणन्तथा ॥ ५ ॥
शुभा टंकयवक्षारसैन्धवं पलपञ्चकम्।
पलाष्टकं स्नुहीक्षीरं द्वात्रिंशच्च गवां जलैः ॥ ६ ॥
आपिण्डितं पचेदग्नौ खादेन्माषद्वयं ततः।
रसश्चार्शःकुठारोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥ ७ ॥

शुद्ध पारा एक पल, शुद्ध गंधक दो पल, लोहेकी भस्म और तांबेकी भस्म आठ आठ तोले, दंती, सोंठ, मिरच, पीपल, जमीकंद, वंशरोचन, सुहागा, जवाखार और सेंधानमक यह सब बीस बीस

तोले, थूहरका दूध ३२ तोले और गोमूत्र १२८ तोले लेवे। इन सबको एकत्र करके खूब खरल करके गोलासा बना लेवे। फिर इसको विधि-पूर्वक मंद मंद अग्निसे पकावे। प्रतिदिन इसमेंसे दो मासे परिमाण सेवन करे तो यह अर्शकुठार रस सब रोगोंको नष्ट करता है ॥५-७॥

चक्राख्य रस।

मृतसूताभ्रवैक्रान्तं ताम्रं कांस्यं समं समम्।
सर्वतुल्येन गन्धेन दिनं भल्लातकद्रवैः ॥ ८ ॥
मर्दयेद्यत्नतः पश्चाद्वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम्।
भक्षणाद्गुदजान् हन्ति द्वन्द्वजान्सर्वजानपि ॥ ९ ॥

पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, वैक्रान्तकी भस्म, तांबेकी भस्म और कांसेकी भस्म यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबकी बराबर शुद्ध गंधक लेवे। इन सबको एकत्र मिलावेके रसमें एक दिन तक खरल करे। फिर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे द्वन्द्वज और सर्वदोषजनित अर्शरोग दूर होता है ॥८॥९॥

नित्योदित रस।

मृतसूताभ्रलौहार्कविषं गन्धं समं समम्।
सर्वतुल्यन्तु भल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १० ॥
माषमात्रं लिहेदाज्यै रसश्चार्शांसि नाशयेत्।
नित्योदितो रसो नाम गुदोद्भवकुलान्तकः ॥ ११ ॥

पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकी भस्म, तांबेकी भस्म, शुद्ध विष और शुद्ध गंधक यह सब समान भाग लेवे और सबकी बराबर शुद्ध भिलावे लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर तीन दिन तक जमीकिं-दके रसमें भावना देवे और खरल करे। इसमेंसे प्रतिदिन एक मासे परिमाण औषधि लेकर घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे अर्शरोग नष्ट होता है। यह नित्योदित रस बवासीरको जड़से नष्ट करता है॥१०॥११॥

चन्द्रप्रभा वटिका।

क्रिमिरिपुदहनव्योषत्रिफलासुरदारुचव्यभूनिम्बम्।
मागधिमूलं मुस्तं सशटा वचा धातुमाक्षिकञ्चैव॥
लवणक्षारनिशायुगकुस्तुम्बुरुगजकणातिविषा१२॥
कर्षांशकान्येव समानि कुर्यात्पलाष्टकं चाश्मजतोर्विदध्यात्। निष्पत्रशुद्धस्य पुरस्य धीमान् पलद्वयं लौहरजस्तथैव॥ १३॥ सिताचतुष्कं पलमत्र वांश्यां निकुम्भकुम्भत्रिसुगन्धियुक्तम्। चन्द्रप्रभेयं गुटिका विधेया अर्शांसि निर्णाशयते षडेव॥१४॥भगन्दरं कामलपाण्डुरोग विनष्टवह्नेः कुरुते च दीप्तिम्। हन्त्यामयान् पित्तकफानिलोत्थान्नाडीगते मर्मगते व्रणे च॥ १५॥ ग्रन्थ्यर्बुदे विद्रधिराजयक्ष्ममेहे भगाख्ये प्रदरे च योज्या। शुक्रक्षये चाश्मरिमूत्रकृच्छ्रे मूत्रप्रवाहेऽप्युदरामये च॥१६॥ तक्रानुपानं त्वथ मस्तुपानमाजो रसो जाङ्गलजो रसो वा। पयोऽथवा शीतजलानुपानं बलेन नागस्तुरगो जवेन॥ १७॥ दृष्ट्या सुपर्णः श्रवणे वराहः कान्त्या रतीशो धिषणश्च बुद्ध्या। न पानभोज्ये परिहार्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु। शम्भुं समभ्यर्च्य कृतप्रणामं प्राप्ता गुटी चन्द्रमसःप्रसादात्॥१८॥ शुक्रदोषान् निहन्त्याशु प्रमेहानपि दारुणान्। वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धोऽपि तरुणायते॥ १९॥

वायविडंग, चीतेकी जड़, सोंठ, मरिच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, देवदारु, चव्य, चिरायता, पीपलामूल, नागरमोथा, कचूर, वच, सोनामाखी भस्म, सेंधानमक, जवाखार, सज्जीखार, हल्दी, दारु-हलदी, धनिया, गजपीपल और अतीस यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष लेवे, शिलाजीत ८ पल लेवे, शुद्ध गूगल २ पल, लोहा २ पल, मिश्री ४ पल, वंशलोचन १ पल, दन्तीकी जड़ १ पल, निसोथ १ पल, दालचीनी १ पल, इलायची १ पल और तेजपात १ पल लेवे; इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गोली बना लेवे । इस चन्द्रप्रभा गुटिकाके सेवन करनेसे छः प्रकारकी बवासीर, भगन्दर, कामला और पांडुरोग नष्ट होते हैं । मंदाग्नि नष्ट होकर अग्नि दीप्त होती है । पित्त, कफ और वातजन्य रोग नष्ट होते हैं । तथा नाड़ीगत व्रण, मर्मगत व्रण, ग्रंथि, अर्बुद, रसौली, विद्रधि, राजयक्ष्मा, प्रमेह, भगन्दर, प्रदर, शुक्रक्षय, पथरी रोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रप्रवाह और उदरामय प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् तक्र, दहीका तोड़, बकरीका दूध, जंगल प्रदेशके जीवोंका मांस, दूध अथवा शीतल जल पान करे । इस औषधिके सेवन करनेसे हाथीके समान बल; घोड़ेके समान गतिशक्ति, गरुड़के समान दृष्टिशक्ति, सूअरके समान श्रवणशक्ति, कामदेवके समान कांति और बृहस्पतिके समान बुद्धिशक्ति उत्पन्न होती है । इस औषधिके सेवन करनेपर पान भोजन, शीतल वायुका सेवन, सूर्यकी धूप और स्त्री प्रसंग आदिका कुछ नियम नहीं है । इससे वीर्यदोष और अत्यंत दारुण प्रमेह रोग नष्ट होता है तथा वलीपलित रोग नष्ट होकर वृद्ध भी तरुणताको प्राप्त होता है । इसको चन्द्रमाके प्रसादसे प्राप्त हुई चन्द्रप्रभा वटी कहते हैं ॥ १२-१९ ॥

माणाद्य लोह ।

माणशूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लौहं दुर्नामनाशनम् ॥ २० ॥

मानकन्द, जमीकंद, भिलावे, निसोथ, दन्तीमूल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, तेजपात, दालचीनी और इलायची यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबके बराबर लोहा लेवे; इन सबको एकत्र करके जलमें पीसकर गोली बना लेवे। प्रतिदिन इसमेंसे यथामात्रानुसार उचित अनुपानके साथ सेवन करे तो बवासीर नष्ट होती है ॥ २० ॥

चंचूकुठार रस।

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं भागयुग्मकम्।
दन्तित्रिकटुकुष्ठैकं षड्भागं लाङ्गलस्य च ॥ २१ ॥
क्षारसैन्धवटङ्कानां प्रत्येकं भागपञ्चकम्।
गोमूत्रस्य च द्वात्रिंशत्स्नुहीक्षीरं तथैव च ॥ २२ ॥
यावच्च पिण्डितं सर्वं तावन्मृद्वग्निना पचेत्।
माषद्वयं ततः खादेद्दिवास्वप्नादि वर्जयेत्।
रसश्चञ्चूकुठारोऽयमर्शसां कुलनाशनः ॥ २३ ॥

पारा दो भाग, गंधक दो भाग और लोहेकी भस्म दो भाग लेवे; सोंठ, मरिच, पीपल, दंतीकी जड़, कूठ और कलिहारी यह प्रत्येक औषधि छः छःभाग लेवे; जवाखार, सेंधानमक और सुहागा यह प्रत्येक पांच पांच भाग, गोमूत्र और थूहरका दूध प्रत्येक बत्तीस २ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके मंद मंद अग्निसे तबतक पकावे जबतक कि औषधिका गोला न हो जाय। प्रतिदिन इसमेंसे दो मासे औषधि खाये और इसपर दिनमें सोना आदि त्याग देवे। यह चंचूकुठार रस बवासीरको समूल नष्ट करता है ॥२१-२३॥

शिलागन्धक वटक।

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाऽऽप्लुतम्।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥२४॥

अर्शसश्चानुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम् ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्कुष्ठादिरहितो नरः ॥ २५ ॥

मैनशिल और गंधक दोनोंको समान भाग लेकर चूर्ण कर लेवे। फिर भांगरेके रसकी सात भावना देकर घी और शहतमें खरल करके दो रत्ती परिमाण सेवन करनेसे बवासीर रोग नष्ट होता है। तथा मंदाग्नि दीप्त होती है और कुष्ठादि रोग दूर होते हैं ॥ २४ ॥ २५ ॥

जातीफलादि वटी।

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पली सैन्धवन्तथा ।
शुण्ठीधूस्तूरबीजञ्च दरदं टङ्कणं तथा ॥ २६ ॥
समं सर्वं विचूर्ण्याथ जम्भाम्भसा विमर्द्दयेत् ।
जातीफलवटिकेयमर्शोऽग्निमान्द्यनाशिनी ॥ २७ ॥

जायफल, लौंग, पीपल, सेंधानमक, सोंठ, धतूरेके बीज, सिंगरफ और सुहागा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे बवासीर और मंदाग्नि नष्ट होती है। इसको जातीफलादि वटी कहते हैं ॥२६॥२७॥

पञ्चानन वटी।

मृतसूताभ्रलोहानि मृतार्कगन्धकैः सह ।
सर्वाणि समभागानि भल्लातं सर्वतुल्यकम् ॥ २८ ॥
वन्यसूरणकन्दोत्थैर्द्रवैः पलप्रमाणतः ।
मर्दयेद्दिनमेकञ्च माषमात्रं पिबेद् घृतैः ॥ २९ ॥
भक्षणाद्धन्ति सर्वाणि चार्शांसि च न संशयः ।
असाध्येष्वपि कर्तव्या चिकित्सा शंकरोदिता ॥
कुष्ठरोगं निहन्त्याशु मृत्युरोगविनाशिनी ॥३०॥

पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकी भस्म, तांबेकी भस्म और शुद्ध गंधक इन सब औषधियोंको समान भाग लेवे और सबके बरा-

बर मिलावे लेवे, सबको एकत्र पीसकर वनजमीकंदके चार पल रसमें एक दिनतक खरल करे। इसमेंसे प्रतिदिन एक मासे औषधि लेकर घृतके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे असाध्य अर्शरोग, कुष्ठरोग और मृत्युजनक घोर रोग भी शीघ्र ही नष्ट हो जात हैं;इसको महादेवने कहा है ॥ २८-३० ॥

अष्टांग रस।

गन्धं रसेन्द्रं मृतलौहकिट्टं फलत्रयं त्र्यूषणवह्नि-
भृङ्गम्। कृत्वा समं शाल्मलिका गुडूचीरसेन
यामत्रितयं विमर्द्य। निष्कप्रमाणं गदितानुपानैः
सर्वाणि चार्शांसि हरेद्रसस्य ॥ ३१ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे अर्शोऽधिकारः।

गन्धक, पारा, लोहेका मण्डूर, हरड़,बहेड़ा, आमला, सोंठ, मरिच; पीपल, चीतेकी जड़ और भांगरा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर सेमल और गिलोयके रसमें तीन प्रहर खरल करके चार मासे औषधि यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारकी बवासीर दूर होती है। इसको अष्टांगरस कहते हैं ॥ ३१ ॥

इति अर्शोऽधिकार समाप्त।

अथ अजीर्णाधिकार।

महोदधि वटी।

एकैकं विषसूतञ्च जातीटंकं द्विकं द्विकम्।
कृष्णात्रिकं विश्वषट्कं गन्धं कापर्दकं द्विकम् ॥ १ ॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं संमर्द्य यत्नतः।
महोदधिवटी नाम्ना नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ॥ २ ॥

विष १ भाग, पारा १ भाग, जायफल २ भाग, सुहागा २ भाग, पीपल ३ भाग, सोंठ ६ भाग, गंधक २ भाग, कौड़ीकी भस्म २ भाग और लौंग ५ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जलमें खरल करके यथोचित मात्रानुसार वटी बनाके सेवन करनेसे नष्ट अग्नि फिरसे दीप्त हो जाती है । इसको महोदधि वटी कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

अग्नितुण्डी रस ।

शुद्धसूतं विषं गन्धमजमोदा फलत्रिकम् ।
स्वर्जिक्षारं यवक्षारं वह्निसैन्धवजीरकम् ॥ ३ ॥
सौवर्च्चलं विडङ्गानि सामुद्रं त्र्यूषणन्तथा ।
विषमुष्टिसमं सर्वं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
मरिचाभां वटीं खादेद्वह्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, विष, गंधक, अजवायन, हरड़, बहेड़ा, आमला, सज्जी, जवाखार, चीतेकी जड़, सेंधानमक, जीरा, कालानमक (विरिया संचर नमक) वायविडंग, सामुद्रलवण, सोंठ, मरिच, पीपल और कुचला इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके मरिचकी बराबर गोली बना लेवे । इस औषधिके यथोक्त मात्रानुसार सेवन करनेसे मंदाग्नि नष्ट होती है ॥ ३ ॥ ४ ॥

वडवानल रस ।

शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकं तत्समं मतम् ।
पिप्पली पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥ ५ ॥
क्षारत्रयं समं सर्वं, चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
निर्गुण्डयाश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः ॥
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निञ्च विनाशयेत् ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा १ कर्ष, शुद्ध गंधक १ कर्ष, पीपल १ कर्ष, पांचों लवण प्रत्येक एक एक कर्ष, काली मिरच १ कर्ष, त्रिफला ३ कर्ष,

जवाखार १ कर्ष, सज्जी १ कर्ष और सुहागा १ कर्ष इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके सम्हालूके रसमें एक दिन भावना देकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे मंदाग्नि दूर होती है। इसको वडवानल रस कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

हुताशन रस।

गन्धेशटंकणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम्।
अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥ ७ ॥
तद्वटीं मुद्गमानेन कृत्वार्द्रेण प्रयोजयेत्।
शूलारोचकगुलमेषु विषूच्यां वह्निमान्द्यके ॥
अजीर्णे सन्निपातादौ शैत्ये जाडये शिरोगदे ॥ ८ ॥

गन्धक, पारा और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, विष ३ भाग, काली मिरच ८ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र जम्बीरी नींबूके रसमें एक दिन अच्छे प्रकारसे खरल करके मूंगकी बराबर गोली बना लेवे। इन गोलियोंको अदरखके रसके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे शूल, अरुचि, गुल्म, विषूचिका, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, सान्निपात, शैत्य, जडता और शिरोरोग नष्ट होता है। इसको हुताशन रस कहते हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥

बृहत् हुताशन रस।

एकद्विकद्वादशभागयुक्तं योज्यं विषं टंकणमूषणञ्च। हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफजिन्नराणाम् ॥ ९ ॥

विष एक भाग, सुहागा दो भाग और कालीमिरच १२ भाग लेवे; इन सबको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अग्निकी वृद्धि होकर कफ नष्ट होता है ॥ ९ ॥

अमृतकल्प वटी ।

शुद्धौ पारदगन्धौ च समानौ कज्जलीकृतौ ।
तयोरर्द्धं विषं शुद्धं तत्समं टंकणं भवेत् ॥ १० ॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यत्नतः पुनः ।
मुद्गप्रमाणा वटिकाः कर्त्तव्या भिषजां वरैः ॥ ११ ॥
वटीद्वयं हरेच्छूलमग्निमान्द्यं सुदारुणम् ।
अजीर्णं जरयत्याशु धातुपुष्टिं करोति च ॥ १२ ॥
नानाव्याधिहरा चेयं वटी गुरुवचो यथा ।
अनुपानविशेषेण सम्यग्गुणकरी भवेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक १ भाग, विष १ भाग और सुहागा १भाग लेवे । पहले पारे गंधककी कज्जली कर ले; फिर इन सब औषधियोंको एकत्र करके भांगरेके रसमें तीन भावना देकर मूंगकी बराबर गोली बना लेवे। इनमेंसे दो गोली नित्य खानेसे शूल, अग्निकी मंदता और अजीर्ण रोग नष्ट होते हैं, धातुकी वृद्धि होती है और अनेक प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। यह गुरुदेवके वचनानुसार अनुपानविशेषोंके साथ सेवन करनेसे श्रेष्ठ गुणोंको उत्पन्न करती है ॥ १०-१३ ॥

अग्निकुमार रस ।

रसेन्द्रगन्धौ सह टंकणेन समं विषं योज्यमिह त्रिभागम् । कपर्दशंखाविह नेत्रभागौ मरीचमत्राष्टगुणं प्रदेयम् ॥ १४ ॥ सुपक्वजम्बीररसेन घृष्टः सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः । विषूचिकाजीर्णसमीरणार्त्ते दद्याद्भि वल्लं ग्रहणीगदे च ॥ १५ ॥

पारा, गंधक, सुहागा प्रत्येक एक एक भाग, विष तीन भाग, शंखकी भस्म २ भाग, कौड़ीकी भस्म २ भाग और काली मिरच ८ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र करके अच्छे प्रकारसे पके हुए जम्बीरी नींबूके रसमें खरल करके चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे विषूचिका, अजीर्ण, वातरोग और ग्रहणी रोग नष्ट होते हैं । इसको अग्निकुमाररस कहते हैं ॥ १४ ॥ १५ ॥

बृहदाग्निकुमार रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च टंकणम् ।
फलत्रयं यवक्षारं व्योषं पञ्चपटूनि च ॥ १६ ॥
द्वादशैतानि सर्वाणि रसतुल्यानि दापयेत् ।
संमर्द्य सप्तधा सर्वं भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥ १७ ॥
संशोष्य चूर्णयित्वा तु भक्षयेदार्द्रकाम्बुना ।
शाणमात्रं वयो वीक्ष्य नानाऽजीर्णप्रशान्तये ॥
रसश्चाग्निकुमारोऽयं महेशेन प्रकाशितः ॥ १८ ॥

पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सुहागा २ भाग, त्रिफला, जवाखार, त्रिकुटा और पांचों लवण यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके अदरखके रसकी सात भावना देवे और धूपमें सुखा लेवे । पश्चात् इसका चूर्ण करके रोगीकी अवस्थाको देखकर चार मासे परिमाण अदरखके रसके साथ सेवन करे । अनेक प्रकारके अजीर्णोंको दूर करनेवाली यह औषधि स्वयं महादेवने कही है ॥ १६-१८ ॥

महाग्निकारकश्चै कालभास्करतेजसाम् ।
अग्निमान्द्यभवान् रोगान् शोथं पाण्ड्वामयं जयेत् १९
दुर्नामग्रहणीसामरोगान् हन्ति न संशयः ।
यथेष्टाहारचेष्टस्य नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥२०॥

इससे अत्यन्त बढ़ी हुई मंदाग्नि, शोथ, पाण्डुरोग, बवासीर, संग्रहणी और आमरोग नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेपर यथेष्ट आहार विहार करे, इसपर किसी प्रकारका नियम नहीं है। यह प्रलयके सूर्यके समान अग्निको अत्यंत प्रदीप्त करता है ॥ १९ ॥ २० ॥

व्योषं जातीफले द्वे च लवङ्गञ्च वरांगकम् ।
पत्रं शृंगीं कणा टङ्कं यमानी जीरकद्वयम् ॥ २१ ॥
सैन्धवञ्च विडं हिङ्गु रसं गन्धञ्च रौप्यकम् ।
लोहमभ्रं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥ २२ ॥
चतुर्गुञ्जां वटीं कृत्वा खादेदजीर्णशान्तये ।
अत्यग्निकारकश्चायं रसश्चाग्निकुमारकः ॥ २३ ॥
संग्रहग्रहणीञ्चैव वातपित्तकफोद्भवाम् ।
नाशयेदामदोषञ्च त्रिदोषजनितञ्च यत ॥
शूलदोषं विषूचीञ्च भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४ ॥

अपर बृहदग्निकुमार रस–सोंठ, पीपल, कालीमिरच, जायफल, जावित्री, लौंग, दालचीनी, तेजपात, काकड़ासिंगी, पीपल, सुहागा, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, सेंधानमक, विडनमक, हींग, पारा, गंधक, रूपा भस्म, लोहभस्म और अभ्रकभस्म इन सब द्रव्योंको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। अनेक प्रकारके अजीर्णोंको शमन करनेके लिये इन गोलियोंका सेवन करे । यह अग्निको अत्यन्त दीपन करता है । इसके सेवन करनेसे वातज, पित्तज और कफज ग्रहणी रोग नष्ट होता है तथा आमदोष, त्रिदोषजरोग, शूल और विषूचिका रोग ऐसे नष्ट होते हैं जिसप्रकार सूर्योदयसे अन्धकारका समूह नष्ट होता है । इसको अपर बृहदग्निकुमार रस कहते हैं ॥ २१-२४ ॥

बृहन्महोदधि वटी ।

लवंगं चित्रकं शुण्ठी जयपालं समं समम् ।
टंकणञ्च प्रदातव्यं वृद्धदारस्य कार्षिकम् ॥ २५ ॥
चतुर्दश भावनाश्च दन्तीद्रावैः प्रदापयेत ।
निम्पाकेन त्रिधा देया वृद्धदारेण पञ्चधा ॥ २६ ॥
रसं गन्धञ्च गरलं मेलयित्वा विभावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव चित्रकस्य रसेन वा ॥ २७ ॥
मुद्गप्रमाणां वटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने ।
क्षुत्पिपासाकरी चेयं जीर्णज्वरविनाशिनी ॥ २८ ॥

लौंग, चित्रकमूल, सोंठ, जमालगोटे, सुहागा और विधारेके बीज यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर दंतीकी जड़के रसमें चौदह भावना देवे, फिर कागजी नींबूके रसमें तीन भावना देवे, पश्चात् विधारेके क्काथकी पांच भावना देवे । फिर इसमें पारा एक कर्ष, गंधक एक कर्ष और विष एक कर्ष परिमाण लेवे । इन सबको एकत्र पीसकर अदरखके रसकी सात और चित्रक जड़की सात भावना देकर मूंगकी बराबर गोली बना लेवे । इनमेंसे प्रतिदिन एक गोली भक्षण करे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे क्षुधा और पिपासाकी वृद्धि होती है तथा जीर्णज्वर नष्ट होता है । इसको बृहन्महोदधि वटी कहते हैं ॥ २५-२८ ॥

रामबाण रस ।

पारदामृतलवंगगन्धकं भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम् । जातिकाफलमथार्द्धभागिकं तिन्तिडीफलरसेन मर्दितम् ॥ २९ ॥ माषमात्रमनुपानयोगतः सद्य एव जठराग्निदीपनः । संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं

सामवातखरदूषणं जयेत् । वह्निमान्द्यदशवक्त्र-
नाशनो रामबाण इव विश्रुतो रसः ॥ ३० ॥

पारा, विष, लौंग और गंधक यह प्रत्येक एक एक भाग, कालीमिरच दो भाग, जायफल आधा भाग इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके कच्ची इमलीके रसमें भावना देकर यथोचित मात्रानुसार अथवा एक मासे औषधि यथोक्त अनुपानके साथ सेवन करे तो जठराग्निकी वृद्धि होकर मंदाग्नि नष्ट होती है। इसके सेवन करनेसे कुम्भकर्णकी समान संग्रहणी, खरदूषणके समान आमवात और दशाननकी समान मंदाग्नि नष्ट होती है। इसको रामबाण रस कहते हैं ॥ २९ ॥ ३० ॥

अजीर्णकण्टक रस ।

शुद्धसूतं विषं गन्धं समं सर्वं विचूर्णयेत् ।
मरिचं सर्वतुल्यञ्च कण्टकार्याः फलद्रवैः ॥ ३१ ॥
मर्दयेद्भावयेत्सर्वमेकविंशतिवारकम् ।
त्रिगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्वाजीर्णप्रशान्तये ।
अजीर्णकण्टकः सोऽयं रसो हंति विषूचिकाम् ॥ ३२ ॥

शुद्ध पारा, विष और गंधक समान भाग लेकर एकत्र पीसकर बारीक चूर्ण कर ले और सब चूर्णके बराबर काली मिरचोंका चूर्ण लेवे। सबको एकत्र कटेरीके फलोंके रसमें २१ वार भावना देकर तीन तीन रत्तीकी गोलियां बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे सब प्रकारका अजीर्ण रोग दूर होता है तथा विषूचिका नष्ट होती है। इसको अजीर्णकण्टक रस कहते हैं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

पाशुपत रस ।

कर्षं सूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम् ।
त्रिभिर्विषं समं देयं चित्रकक्वाथभावितम् ॥ ३३ ॥

धूर्त्तबीजस्य भस्मापि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।
कटुत्रयं त्रिभागं स्याल्लवंगैला च तत्समम् ॥ ३४ ॥
जातीफलं तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत् ।
तथाऽर्द्धं लवणं पञ्च स्नुह्यर्कैरण्डतिन्तिडी ॥ ३५ ॥
अपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्याद्विचक्षणः ।
हरीतकी यवक्षारं स्वर्जिका हिंगुजीरकम् ॥ ३६ ॥
सूततुल्यं टङ्कणं च चाम्लयोगेन मर्दयेत् ।
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥ ३७ ॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विषूचिकाम् ॥ ३८ ॥

पारा १ भाग , गंधक २ भाग, लोहाभस्म ३ भाग और विष छः भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर चित्रकके रसमें भावना देकर सुखा लेवे। फिर इसमें ३२भाग धतूरेके बीजोंकी भस्म, त्रिकुटेका चूर्ण ३ भाग, लौंग ३ भाग, इलायची ३ भाग,जायफल आधा भाग, जावित्री आधा भाग, पांचों नमक प्रत्येक आधा आधा भाग तथा थूहर, आक, अरण्ड, इमली,चिरचिटा और पीपल इन प्रत्येकका क्षार एक एक भाग लेवे। फिर हरड़, जवाखार, सज्जी, हींग, जीरा और सुहागा यह समस्त औषधि प्रत्येक एक एक भाग मिलाकर पूर्वोक्त अम्लवर्गकी औषधियोंमें खरल करे। भोजनके पश्चात् इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि सेवन करनी चाहिये। यह औषधि तत्काल गुण-दायक है; अग्निको दीपन करनेवाली, पाचक, हृदयको हितकारी और तत्काल विषूचिका रोगको दूर करती है ॥ ३३-३८ ॥

तालमूलीरसेनैव उदरामयनाशनः ।
मोचरसेनातिसारं ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः ॥ ३९ ॥

सौवर्च्चलकणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत् ।
अर्शो हन्ति च तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ॥ ४० ॥
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्च्चलान्वितः ।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम् ॥ ४१ ॥
पिप्पलीक्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात् ।
अस्मात् परतरो नास्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥ ४२ ॥

इस औषधिको मुसलीके रसके साथ सेवन करनेसे उदरामय नष्ट होता है, मोचरसके साथ सेवन करनेसे अतिसार रोग, तक्र और सेंधानमकके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, कालानमक पीपल और सोंठके साथ सेवन करनेसे शूल, तक्रके साथ सेवन करनेसे बवासीर, पीपलके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, सोंठ और काले नमकके साथ सेवन करनेसे वातरोग, मिश्री और धनियेके साथ सेवन करनेसे पित्तरोग, पीपलके चूर्ण और शहतके साथ सेवन करनेसे कफरोग तत्काल नष्ट होजाता है । इसके समान संसारमें अन्य औषध गुणकारक नहीं है । इसको पाशुपत रस कहते हैं ॥ ३९-४२ ॥

बृहच्छंखवटी ।

दग्धशंखस्य चूर्णं स्यात्तथा लवणपञ्चकम् ।
तिंतिडीक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥ ४३ ॥
तथैव हिंगुकं ग्राह्यं विषपारदगन्धकम् ।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैर्निम्पाकजैर्द्रवैः ॥ ४४ ॥
भावयेत्सर्वचूर्णं तदम्लवर्गैर्विशेषतः ।
यावत्तदम्लतां याति गुटिकाऽमृतरूपिणी ॥ ४५ ॥
सद्यो वह्निकरी चैव भस्मकञ्च नियच्छति ।

भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेच्च गुटिकामिमाम् ।
तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजनमिच्छति ॥ ४६ ॥

शंखकी भस्म, पांचों लवण, इमलीकी छालका खार, त्रिकुटा, हींग, विष, पारा और गंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेकर चिराचिटे और चित्रकके क्वाथमें तथा कागजी नींबूके रसमें खरल करके चूर्ण कर लेवे । फिर इसको समस्त अम्लवर्गकी औषधियोंमें भावना देकर गोली बना लेवे । यह औषधि अमृतके तुल्य है । इस औषधिके सेवन करनेसे तत्काल अग्निकी वृद्धि होती है और भस्मक रोग दूर होता है । कण्ठपर्य्यंत भोजन कर लेनेपर इसकी एक गोली सेवन करे तो तत्काल सब भोजन जीर्ण होकर फिर भोजनकी इच्छा उत्पन्न होती है ॥ ४३-४६ ॥

हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ।
गुलमाख्यं पण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम् ॥४७॥
शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम् ।
वक्त्रस्रावञ्च शोथञ्च दुर्नामानि विशेषतः ॥ ४८ ॥

इस औषधिके सेवन करनेसे वातरोग, पित्तरोग, कुष्ठ, विषम ज्वर, गुल्म, पांडु, निद्रा, आलस्य, अरुचि, शूल, परिणामशूल, प्रमेह, प्रवाहिका, लालास्राव, शोथ और बवासीर नष्ट होती है । इसको बृहच्छङ्ख वटी कहते हैं ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

भक्तविपाक वटी ।

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला ।
त्रिवृद्दन्तीवारिवाहं चित्रकञ्च महौषधम् ॥ ४९ ॥
पिप्पली मारिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम् ।
रामठं कटुकापाढसैन्धवं साजमोदकम् ॥५०॥

जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्डयाः स्वरसेन च ॥ ५१ ॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन च ।
आतपे भावयेद्द्रव्यः खल्लपात्रे च निर्मले ॥
पेषयित्वा वटीं खादेद्गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥ ५२ ॥

सोनामाखी, पारा, गंधक, हरिताल, मैनशिल, निसोथ, दंती, नागरमोथा, चित्रक, सोंठ, पीपल, मरिच, हरड़, अजवायन, काला जीरा, हींग, कुटकी, पाढ़, सेंधानमक, अजमोद, जायफल और जवाखार इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र पीसकर अदरख, सम्हालू, हुलहुल और तुलसी इन प्रत्येकके स्वरसकी सात सात भावना देवे और उत्तम खरलमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे ॥ ४९-५२ ॥

भुक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते मुहुर्मुहुर्वाञ्छति भोजनानि । आमानुबन्धे च चिराग्निमान्द्ये विड्विग्रहे पित्तकफानुबन्धे ॥ ५३ ॥ शोथोदरे चार्शसि चाप्यजीर्णे शूले प्रदोषप्रभवे ज्वरे च । शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा सुखं विपाच्याशु निरस्य कोष्ठम् ॥ ५४ ॥

इस औषधिको भोजनके पश्चात् सेवन करनेसे वारंवार भोजन करनेकी अभिलाषा उत्पन्न होती है । आमानुबन्धी, बहुत समयकी मंदाग्नि, मलरोध, पित्त और कफका अनुबन्ध, शोथ, उदररोग, अर्श, अजीर्ण, दोषोंके प्रकोपसे उत्पन्न हुए शूल और ज्वर रोग नष्ट होते हैं । इसको भक्तविपाक वटी कहते हैं ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

पञ्चामृत वटी ।

अभ्रकं पारदं ताम्रं गन्धकं मरिचानि च ।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम् ॥ ९५ ॥
मर्दिते हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः ।
भावनाऽपि च कर्त्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥९६॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव वा ।
वह्निमान्द्ये प्रदातव्या वटचः पञ्चामृतास्तथा ॥९७॥

अभ्रक भस्म, पारा, तांबा भस्म, गन्धक और कालीमिरच यह सब औषधि समान भाग लेकर चांगेरी। रसकी भावना देवे, फिर जयन्ती और सम्हालूके रसकी भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। मंदाग्नि रोगमें तीन या चार गोली गरम जलसे प्रयोग करे। इसको पञ्चामृतवटी कहते हैं ॥ ९५-९७ ॥

क्रव्याद रस ।

पलं रसस्य द्विपलं बलेः स्याच्छुल्वायसी चार्द्धप-
लप्रमाणे । संचूर्ण्य सर्वं द्रुतमग्नियोगादेरण्डपत्रेऽथ
निवेशनीयम् ॥९८॥ कृत्वाथ तां पर्पटिकां विदध्या-
ल्लोहस्य पात्रे त्ववपूतमस्मिन् । जम्बीरजं पक्वरसं
पलानां शतं नियोज्याग्निमथाल्पमल्पम् ॥ ९९ ॥
जीर्णे रसे भावितमेतदेतैः सुपञ्चकोलोद्भववारिपूरैः ।
सवेतसाम्लैः शतमत्र योज्यं समं रजष्टंकणजं
सुभृष्टम् ॥ ६० ॥ विडं तदर्द्धं मरिचं समञ्च
तत्सप्तवारं चणकाम्लकेन । क्रव्यादनामा भवति

प्रसिद्धो रसस्तु मन्थानकभैरवोक्तः ॥ माषद्वयं सैन्धवतक्रपीतमेतत्सुधन्यं खलु भोजनान्ते ॥६१॥

पारा १ पल, गंधक २ पल, तांबा भस्म आधा पल, लोहाभस्म आधा पल इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर अग्निके योगसे गला लेवे और एरण्डके पत्तोंपर ढाल देवे, जब यह पर्पटीके समान हो जाय तब पीसकर चूर्ण कर लेवे । फिर जम्भीरी नींबूके १०० पल रसमें यह चूर्ण डालकर मंद मंद अग्निसे पकावे, फिर पंचकोल, बिजौरा नींबू और अमलवेत इन प्रत्येकके एकसौ पल रसकी भावना देवे । पश्चात् इसमें सुहागा १६ तोला, संचरनमक सबसे आधा और काली मिरच सबके बराबर मिलाकर चनाखारकी सात भावना देवे । पश्चात् इसकी दो दो मासेकी गोली बनाकर नित्य एक गोली तक्र और सेंधानमकके साथ भोजनके अंतमें सेवन करे ॥ ५८-६१ ॥

गुरूणि मांसानि पयांसि पिष्टं घृतानि सेव्यानि फलानि चापि । मात्रातिरिक्तान्यपि सेवितानि यामद्वयाज्जारयति प्रसिद्धः ॥६२॥ कार्श्यस्थौल्यनिबर्हणो गरहरः सामार्त्तिनिर्णाशनो, गुल्मप्लीहनिषूदनो ग्रहणिकाविध्वंसनः स्रंसनः । वातश्लेष्मनिबर्हणः श्रमहरः शूलार्तिशूलापहो, वातग्रन्थिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः ॥ ६३ ॥

भारी पदार्थ, मांस, दूध, मिष्टान्न और पक्वान्न, घृत और फल खूब पेट भरकर भोजन करके इस औषधिके सेवन कर लेने पर दो प्रहरमें समस्त जीर्ण हो जाता है । इस औषधिके सेवन करनेसे कृशता, स्थूलता, विषदोष, आमरोग, गुल्म, प्लीहा, संग्रहणी, वातकफज रोग, श्रम, शूल, वातज ग्रंथि और उदररोग नष्ट होते हैं । इसको क्रव्याद रस कहते है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

ज्वालानल रस ।

क्षारद्वयं सूतगन्धौ पञ्चकोलमिदं समम् ।
सर्वतुल्या जया देया तदर्द्धं शिग्रुवल्कलम् ॥ ६४ ॥
एतत्सर्वं जयाशिग्रुवह्निमार्कवजै रसैः ।
भावयेत्रिदिनं घर्मे ततो लघुपुटे पचेत् ॥ ६५ ॥
भावयेत्सप्तधा चार्द्रद्रवैर्ज्वालानलो भवेत् ।
पाचनो दीपनो हृद्यश्चोदरामयनाशनः ॥ ६६ ॥

जवाखार, सज्जीखार, पारा, गंधक और पंचकोल यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबकी बराबर भांग लेवे, भांगसे आधा भाग सहिंजनेकी छाल लेवे। इन सबको एकत्र करके भांग, सहजना, चित्रक और भांगरा इन प्रत्येकके रसकी तीन दिनतक भावना देवे। फिर धूपमें सुखाकर लघुपुटमें पकावे। फिर अदरखके रसमें सात वार भावना देवे । यह औषधि अत्यंत पाचक, अग्निप्रदीपक, हृदयको हितकारी और उदररोग को दूर करती है । इसको ज्वालानल रस कहते हैं ॥ ६४–६६ ॥

अमृतावटी ।

अमृतवराटमरिचैर्द्विपञ्चनवभागयोजितैः क्रमशः ।
वटिका मुद्गसमाना कफत्रिदोषवह्निमांद्यहारिणी ॥६७॥

शुद्ध विष २ भाग, कौड़ीकी भस्म ५ भाग, काली मिरच ९ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर मूंगकी बराबर गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे कफादि त्रिदोष और मंदाग्नि नष्ट होती है । इसको अमृतवटी कहते हैं ॥ ६७ ॥

बृहद्रक्तपाक वटी ।

अभ्रं पारदगन्धकौ सदरदौ ताम्रञ्च तालं शिला,
वङ्गञ्च त्रिफला विषञ्च कुनटी भागास्त्रयो दन्तिनः ।

शृंगीव्योषयमानि चित्रजलदं द्वे जीरके टंकण,-
मेलापत्रलवंगहिंगुकटुकीजातीफलं सैन्धवम् ॥६८॥
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसावासारसैर्बिल्वजैः, पत्रो-
त्थैरपि सप्तधा सुविमले खल्ले विभाव्यान्यतः।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयोज्या बुधै-
र्विड्बन्धे कफजे त्रिदोषजनिते ह्यामानुबन्धेऽपि
च ॥ ६९ ॥ मन्दाग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले
त्रिदोषोद्भवे, हन्यात्तानपि भक्तपाकवटिका भूयश्च
सामं जयेत् ॥ ७० ॥

अभ्रक भस्म, पारा, गंधक, सिंग्रफ, तांबा भस्म, हरिताल भस्म, मैनशिलभस्म, वंगभस्म, त्रिफला, विष और नैपाली मैनशिल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, दंती ३ भाग, काकड़ाशिंगी, त्रिकुटा, अजवायन, चित्रक, नागरमोथा, जीरा, कालाजीरा, सुहागा, इलायची, तेजपात, लौंग, हींग, कुटकी, जायफल और सेंधानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग; इन सब औषधियोंको एकत्र करके अदरख, चित्रक, दंती, तुलसी, अडूसा और बेलके पत्ते इन प्रत्येकके रसकी सात सात भावना देवे। इसको सब प्रकारके रोगोंमें तीन रत्ती परिमाण प्रयुक्त करनी चाहिये। कफजन्य मलरोध, त्रिदोषजनित आमानुबन्ध, अग्निमांद्य, विषमज्वर और त्रिदोषजनित शूल रोगमें यह औषधि अतीव हितकारी है। इसको भक्तपाक वटी कहते हैं॥ ६८-७०॥

लवङ्गादि वटी।

लवंगशुण्ठीमरिचानि भृष्टसौभाग्यचूर्णानि समानि
कृत्वा । भाव्यान्यपामार्गहुताशवारा प्रभूत-
मांसादिकजारणाय ॥ ७१ ॥

लौंग, सोंठ, काली मिरच और भुना हुआ सुहागा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चिरचिटे और चित्रकके रसकी सात सात भावना देकर गोलियां बना लेवे। इस औषधिके भक्षण करनेसे भारी पदार्थ और देरमें पचनेवाले मांसादि पदार्थ शीघ्र ही पच जाते हैं। इसको लवंगादि वटी कहते हैं ॥ ७१ ॥

बृहल्लवंगादि वटी।

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठं जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च। एलात्वचं टंकवराटमुस्तं वचाजमोदाविडसैन्धवञ्च ॥ ७२ ॥ तदर्धकं पारदगन्धमभ्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम्। तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं वल्लप्रमाणां वटिकाञ्च कृत्वा ॥ ७३॥ प्रातर्विदद्यादपि चोष्णतोयैरियं निहन्याद्ग्रहणीविकारम्। आमानुबन्धं सरुजं प्रवाहं ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥ ७४ ॥ कुष्ठाम्लपित्तं प्रबलं समीरं मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम्। वटी लवङ्गाद्यवसुप्रणीता तथाऽऽमवातं विनिहन्ति शीघ्रम् ॥ ७५ ॥

लौंग, जायफल, धनिया, कूठ, जीरा, काला जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, इलायची, दालचीनी, सुहागा, कौड़ीकी भस्म, नागरमोथा, वच, अजमोद, विडनमक और सेंधानमक यह समस्त प्रत्येक औषधि एक एक भाग और पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, लोहाभस्म यह प्रत्येक औषधि आधा आधा भाग; इन सब औषधियोंको एकत्र कर पानके रसमें खरलकर तीन तीन रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके प्रातःकाल गरम जलके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी रोग, आमसहित पीड़ायुक्त प्रवाहिका, ज्वर, कफजनित

शूल,कुष्ठ,अम्लपित्त,प्रबल वातरोग, मंदाग्नि और कोष्ठगत वात रोगोंको शीघ्र ही नष्ट करती है। इसको बृहल्लवंगादि वटी कहते हैं ॥७२-७५॥

जातीफलादि वटी ।

जातीफलं लवंगञ्च पिप्पलीं सिन्धुरामृतम् ।
शुण्ठीधूस्तूरबीजञ्च दरदं टंकणन्तथा ॥ ७६ ॥
समं सर्वं समाहृत्य जम्भाम्भसा विमर्दयेत् ।
वल्लमाना वटी कार्या चाग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ७७॥

जायफल, लौंग, पीपल, सम्हालूके पत्ते, विष, सोंठ, धतूरेके बीज, सिंग्रफ और सुहाग। इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जम्बीरी नींबूके रसमें भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलि- योंके यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य रोग नष्ट होता है । इसको जातीफलादि वटी कहते हैं ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

शंखवटी ।

सार्धकर्ष रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विषं कर्षत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ ७८ ॥
दग्धशंखञ्च तत्तुल्यं पञ्च कर्षाणि नागरात् ।
स्वर्जिका रामठकणा सिन्धुसौवर्च्चलं विडम् ॥७९ ॥
सामुद्रमौद्भिदञ्चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥ ८० ॥
वह्निमान्द्यकृतान् रोगान्सामदोषं विनाशयेत् ॥८१॥

पारा १॥ तोले, गन्धक १॥ तोले, विष ३ तोले, काली मिरच ६ तोले, शंखकी भस्म ६ तोले, सोंठ ५ तोले, सज्जी ५ तोले, हींग ५ तोले, पीपल ५ तोले, सेंधानमक ५ तोले, कालानमक ५ ताले,

विडनमक ५ तोले, सामुद्रक नमक ९ तोले और सांभर नमक ९ तोले इन सब औषधियोंमें एकत्र अच्छे प्रकारसे कागजी नींबूके रसकी भावना देकर गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे संग्रहणी, अम्लपित्त और शूल रोग नष्ट होते हैं । अग्नि दीप्त होती है, मन्दाग्निजन्य रोग और आमदोष नष्ट होते हैं । इसको शंखभस्मवटी अथवा शंखवटी कहते हैं ॥ ७८-८१ ॥

चिन्तामणि रस ।

रसं गन्धो मृतं ताम्रं मृतमभ्रं फलत्रयम् ।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत् ॥८२॥
द्रोणपुष्पीरसैश्चापि भावयेच्च पुनः पुनः ।
अस्य मात्रा प्रदातव्या गुञ्जैका वा त्रिगुञ्जिका ॥८३॥
चिन्तामणिरसो ह्येष चाजीर्णे शस्यते सदा ।
आमवातं ज्वरं हन्ति सर्वशूलनिषूदनः ॥८४॥

पारा, गन्धक, तांबा भस्म, अभ्रक भस्म, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, जमालगोटा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र पीसकर गूमाके रसकी सात भावना देवे, पश्चात् एक रत्तीसे तीन रत्तीतककी गोली बनावे । यह औषधि अजीर्ण रोगमें अतीव हितकारी है। इससे आमवात, ज्वर और सब प्रकारका शूल नष्ट होजाता है । इसको चिन्तामणि रस कहते हैं ॥ ८२-८४ ॥

प्रदीपन रस ।

रसनिष्कं गन्धनिष्कं निष्कमात्रं प्रदीपनम् ।
मानमर्द्धं प्रदातव्यं चुल्लिकालवणं भिषक् ॥ ८५ ॥
मर्द्दयित्वा प्रदातव्यमथास्य माषमात्रकम् ।
अजीर्णे चाग्निमान्द्ये च दातव्यो रसवल्लभः ॥ ८६ ॥

पारा आधा तोला, गन्धक आधा तोला, विष आधा तोला और चूल्ही लवण ३ मासे इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर एक मासे परिमाण जलके साथ सेवन करे तो अजीर्ण रोग और अग्निमांद्य रोग नष्ट होते हैं। इसको प्रदीपन रस कहते हैं ॥ ८५–८६ ॥

विजय रस ।

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम् ।
क्षारत्रयं पलं देयं लवंगं पलपञ्चकम् ॥ ८७ ॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत् ।
चित्रकस्य रसेनाथ भृङ्गराजरसेन तु ॥ ८८ ॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चापि ततो भाण्डे निरुध्य च ।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥ ८९ ॥
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्निष्कमितं सदा ॥ ९० ॥

पारा १ पल, सीसा भस्म १ पल, गन्धक १ पल, जवाखार १ पल, सज्जी १ पल, सुहागा १ पल, लौंग ५ पल, दशमूल ५ पल, भांगका चूर्ण ५ पल इन सब औषधियोंको एकत्र करके चीतेकी जड़, भांगरा और सहिंजनेकी जड़ इन प्रत्येकके रसकी सात सात भावना देवे। पश्चात् एक हांडीमें रखकर उसका मुख बंद करके एक प्रहर-तक अग्नि देवे। जब अपने आप शीतल होजाय तब उसको अदरखके रसमें खरल करके चार चार मासे पानमें रखकर सेवन करना चाहिये। इसको विजय रस कहते हैं ॥ ८७–९० ॥

महाभक्तपाक वटी ।

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला ।
गगनं कान्तलौहञ्च सर्वमेतच्च कार्षिकम् ॥ ९१ ॥

त्रिवृद्दन्ती वारिवाहं चित्रकञ्च महौषधम् ।
पिप्पलीमरिचं पथ्या यवानी कृष्णजीरकम् ॥ ९२॥
रामठं कटुकापानी सैन्धवं साजमोदकम् ।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ९३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्डयाः स्वरसेन च ।
सूर्यावर्तरसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ ९४ ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः कृत्वा गुञ्जामितां वटीम् ।
भक्षयेत्तां वटी प्राज्ञो लवङ्गेन नियोजिताम् ॥ ९५॥
भुक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते आमानुबन्धे
चिरवह्निमान्द्ये । विड्विग्रहे वातकफानुबन्धे
शोथोदरानाहगदेऽप्यजीर्णे। शूले त्रिदोषप्रभवे
ज्वरेच शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा ॥ ९६ ॥

सोनामखी भस्म, पारा, गंधक, हरताल भस्म, मैनशिल, अभ्रकभस्म और कान्तलोह भस्म, यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला; निसोथ, दंतीकी जड़, नागरमोथा, चीतेकी जड़, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, अजवायन, काला जीरा, हींग, कटुकापानी (मकोय), सेंधानमक, अजमोद, जायफल और जवाखार इन सब औषधियोंको भी एक एक तोला- लेकर अदरख, सम्हालू, हुलहुल और मालकांगुनी इन प्रत्येकके रसमें सात सात भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । भोजनके अन्तमें, अथवा बहुत भोजन करनेपर, आमके रोगोंमें, बहुत दिनोंके अग्निमांद्यरोगमें, मलावरोध, वात और कफ संबन्धी रोगोंमें, शोथरोगमें, उदररोगमें, आनाहरोगमें, अजीर्णरोगमें, शूल और त्रिदोषज रोगमें, तथा ज्वर इन सब रोगोंमें यह औषधि लवंगोंके साथ खाना अतीव हितकारी है । इसको महाभक्तपाक वटी कहते हैं ॥ ९१-९६ ॥

रसराक्षस ।

ताम्रं पारदगन्धकं त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं,
खल्ले मर्द्य दिनं निधाय सिकतात्कुम्भेषु यामं ततः ।
स्विन्नं तेष्वपि रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं भावये-
देकीकृत्य च मातुलुंगकजलैर्नाम्ना रसो राक्षसः॥९७॥

तांबाभस्म, पारा, गंधक, सोंठ, पीपल, मरिच, तीक्ष्ण लोहभस्म, कालानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर वालुकासे भरे हुए कुम्भमें स्थापन करके एक प्रहर तक पकावे । जब शीतल हो जाय तब उसमेंसे औषधिको निकालकर उसमें एक भाग लाल पुनर्नवेका खार मिलाकर बिजौरे नींबूके रसकी सात भावना देवे । इसको यथोचित मात्रानुसार रोगीको सेवन करावे । इसको राक्षस रस कहते हैं ॥ ९७ ॥

त्रिफला लोह ।

त्रिफलामुस्तवेल्लैश्च सितया कणया समम् ।
खरमञ्जरिबीजैश्च लौहं भस्मकनाशनम् ॥ ९८ ॥

हरड़, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग,मिश्री,पीपल, चिरचिटेके बीज यह प्रत्येक एक एक भाग और सबकी बराबर लोहभस्म इन सबको एकत्र पीसकर गोली बनाकर प्रयोग करनेसे भस्मक रोग नष्ट होता है ॥ ९८ ॥

विसूच्यञ्जन ।

अपामार्गस्य पत्रं च मरिचञ्च समं समम् ।
अम्लेरोलीयुतं पिष्टमञ्जनात्सूचिकां जयेत् ॥ ९९ ॥

चिरचिटेके पत्ते और कालीमिरचोंको समान भाग लेकर चांगेरीके रसमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे विषूचिका रोग नष्ट होता है ॥ ९९ ॥

अग्निकुमार रस ।

टंकणं रसगन्धौ च समं भागत्रयं विषात् ।
कपर्दशंखयोस्त्र्यंशं वसुभागं मरीचकम् ।
दिनं जम्भाम्भसा पिष्टं वल्लमात्रं प्रदापयेत् ॥१००॥
विषूचीशूलविष्टम्भवह्निमान्द्ये ज्वरे तथा ।
अजीर्णे संग्रहण्याञ्च सिद्धश्चाग्निकुमारकः ॥१०१॥

सुहागा, पारा और गंधक यह प्रत्येक एक २ भाग, विष तीन भाग, कौडीकी भस्म और शंख भस्म तीन २ भाग, कालीमिरच ८ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इसको विषूचिका, शूल, विष्टम्भ, मंदाग्नि, ज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी आदि रोगोंमें प्रयुक्त करे। इसको अग्निकुमार रस कहते हैं ॥ १०० ॥ १०१ ॥

शंखवटी ।

द्वौ क्षारौ रसगन्धकौ सलवणौ क्षारेण तुल्यं विषं,
चिञ्चा शङ्खचतुर्गुणं रसवरैर्निम्पाकजातैः कृतम् ।
वारंवारमिदं सुपाकरचितं लौहं क्षिपेद्द्विगुकं,
भूयष्टङ्कसमं सुमर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणं भजेत् ॥ २॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत्पाचनी,
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयोच्छेदिनी,
सर्वव्याधिनिषूदनी क्रिमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी॥३॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहेऽजीर्णाधिकारः ।

जवाखार, सज्जीखार, पारा, गंधक, सैंधानमक, विडनमक और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेवे । इमलीका खार चार तोले, शंखकी भस्म चार तोले लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र कागजी-नींबूके रसमें सात वार भावना देकर पश्चात् उसमें लोहा भस्म १ भाग, हींग १ भाग और सुहागा १ भाग मिलाकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । यह गोली अग्निको अतिशय दीपन करती है । शूलको नष्ट करती है,पाचक तथा श्वास, खांसी और क्षयरोगको नष्ट करती है । मंदाग्निको दीपन करनेवाली, वातव्याधि, उदररोग, तृषा, कृमि और समस्त दुष्ट रोग नाशक है । इसको शंखवटी कहते हैं ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

इति अजीर्णरोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ क्रिमिरोगचिकित्सा ।

क्रिमिकालानल रस ।

विडंगं द्विपलञ्चैव विषचूर्णं तदर्द्धकम् ॥
लौहचूर्णं तदर्द्धञ्च तदर्द्धं शुद्धपारदम् ॥ १ ॥
रसतुल्यं शुद्धगन्धं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा खादेत्षोडशरक्तिकाम् ॥ २ ॥
धान्यजीरानुपानेन नाम्ना कालानलो रसः ।
उदरस्थं क्रिमिं हन्याद्ग्रहण्यर्शःसमन्वितम् ॥ ३ ॥
अग्निदः शोथशमनो गुल्मप्लीहोदराञ्जयेत् ।
गहनानन्दनाथेन भाषितो विश्वसम्पदे ॥ ४ ॥

वायविडंग २ पल, शुद्ध विष १ पल, लोहभस्म आधापल, शुद्ध पारा १ तोला और शुद्ध गंधक १ तोला इन सबको एकत्र पीसकर बकरीके दूधमें खरल कर सोलह सोलह रत्तीकी गोली बना लेवे और

छायामें सुखा देवे। धनिये और जीरेके अनुपानके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, अर्श और समस्त क्रिमिरोग नष्ट होते हैं। यह अग्निको अत्यन्त दीपन करनेवाला, तथा सूजन, गुल्म और प्लीहोदर रोगको दूर करता है। संसारके हितके लिये श्रीमद्गगहनानन्दनाथने यह कहा है। इसको क्रिमिकालानल रस कहते हैं॥ १-४॥

क्रिमिविनाश रस।

शुद्धसूतं समं गन्धमभ्रं लौहं मनःशिला।
धातकी त्रिफला लोध्रं विडंगं रजनीद्वयम्॥ ५॥
भावयेत्सप्तधा सर्वं शृंगवेरभवै रसैः।
चणमात्रां वटीं कृत्वा त्रिफलारससंयुताम्॥ ६॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय क्रिमिरोगोपशान्तये।
वातिकं पैत्तिकं हन्ति श्लैष्मिकञ्च त्रिदोषजम्।
क्रिमिविनाशनामायं क्रिमिरोगकुलान्तकः॥ ७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, मैनशिल, धायके फूल, हरड़, बहेड़ा, आमला, लोध, वायविडंग, हलदी, दारुहलदी यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसकी सात भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे। प्रातःकाल त्रिफलेके रसके द्वारा सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज क्रिमिरोग दूर होते हैं। यह क्रिमिरोगोंका नाशक है। इसको क्रिमिविनाश रस कहते हैं॥ ५-७॥

क्रिमिरोगारि रस।

सूतं गन्धं मृतं लोहं मरिचं विषमेव च।
धातकी त्रिफला शुण्ठी मुस्तकं सरसाञ्जनम्॥ ८॥
त्रिकटु मुस्तकं पाठा वालकं बिल्वमेव च।
भावयेत्सर्वमेकत्र स्वरसैर्भृङ्गजैस्ततः॥ ९॥

वराटिकाप्रमाणेन भक्षणीयो विशेषतः ।
क्रिमिरोगविनाशाय रसोऽयं क्रिमिनाशनः ॥ १० ॥

पारा, गन्ध, लोहाभस्म, कालीमिरच, विष, धायके फूल, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, नागरमोथा, रसोंत, त्रिकुटा, मोथा, पाढ, सुगंधवाला और बेलगिरी इन सबको एकत्र खरल करके भांगरेके रसकी सात भावना देवे । फिर इसमेंसे एक कौड़ीभर सेवन करनेसे क्रिमिरोग नष्ट होता है । इसको क्रिमिरोगारि रस कहते हैं ॥ ८–१० ॥

कीटमर्द रस ।

शुद्धसूतं शुद्धगन्धमजमोदाविडङ्गकम् ।
विषमुष्टि ब्रह्मबीजं क्रमाद्द्विगुणितं भवेत् ॥ ११ ॥
चूर्णयेन्मधुना मिश्रं निष्कैकं क्रिमिजिद्भवेत् ।
कीटमर्दो रसो नाम मुस्ताक्वाथं पिबेदनु ॥ १२ ॥

पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, अजमोद ४ भाग, वायविडंग ८ भाग, कुचला १६ भाग और ढाकके बीज ३२ भाग, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर प्रतिदिन इसमेंसे चार मासे परिमाण शहतमें मिलाकर सेवन करे तो क्रिमिरोग नष्ट होता है । इसके ऊपर नागरमोथेका क्वाथ पान करे । इसको कीटमर्द रस कहते हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥

क्रिमिघ्न रस ।

क्रिमिघ्नं किंशुकारिष्टबीजं सुरसभस्मकम् ।
वल्लद्वयं चाखुपर्णीरसैः क्रिमिविनाशनः ॥ १३ ॥

वायविडंग, ढाकके बीज, नीमके बीज और तुलसीके पत्तोंकी भस्म इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण कर ले । फिर इस चूर्णमेंसे चार रत्ती परिमाण लेकर मूसाकानीके रसके साथ पान करनेसे क्रिमिरोग नष्ट होता है । इसको क्रिमिघ्न रस कहते हैं ॥ १३ ॥

क्रिमिमुद्गर रस ।

क्रमेण वृद्धं रसगन्धकाजमोदाविडंगं विषमुष्टिकाच । पलाशबीजञ्च विचूर्ण्यमस्य निष्कप्रमाणं मधुना-ऽवलीढम् ॥१४॥ पिबेत्कषायं घनजं तदूर्ध्वं रसो-ऽयमुक्तः क्रिमिमुद्गराख्यः । क्रिमिं निहन्यात्क्रिमि-जांश्च रोगान् सन्दीपयत्यग्निमयं त्रिरात्रात्॥१५॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, अजमोद ३ भाग, वायविडंग ४ भाग, कुचला ५ भाग और ढाकके बीज ६ भाग लेवे । इन सबको एकत्र चूर्ण करके चार मासे परिमाण शहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे नागरमोथेका क्वाथ पान करे । तीन दिनतक इस औषधिके सेवन करनेसे क्रिमिरोग और क्रिमिजनित अन्यान्य समस्त रोग नष्ट होते हैं तथा तीन दिन सेवनसे अग्निकी वृद्धि होती है । इसको क्रिमि-मुद्गर रस कहते हैं ॥ १४ ॥ १५ ॥

क्रिमिधूलिजलप्लव रस ।

पारदं गन्धकं शुद्धं वङ्गं शंखं समं समम् ।
चतुर्णां योजयेत्तुल्यं पथ्याचूर्णं भिषग्वरः ॥ १६ ॥
दण्डयन्त्रेण निर्मथ्य पटोलस्वरसं क्षिपेत् ।
कार्पासबीजसदृशीं वटिकां कुरु यत्नतः ॥ १७ ॥
त्रिवटीं भक्षयेत्प्रातः शीततोयं पिबेदनु ।
केवलं पैत्तिके योज्यः कदाचिद्वातपैत्तिके ॥
श्रीमद्गहननाथोक्तः क्रिमिधूलिजलप्लवः ॥ १८ ॥

पारा, गंधक, वंग और शंखकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, हरड़का चूर्ण ४ भाग इन सबको एकत्र पीसकर पटोल (परवल) के रसके द्वारा खरल करके कपासके बीजोंकी बराबर

गोली बना लेवे । प्रातःकाल तीन गोलियोंका सेवन करे और ऊपरसे शीतल जलका अनुपान करे तो केवल पैत्तिक क्रिमिरोग तथा कदाचित वातपैत्तिक क्रिमिरोग भी नष्ट होता है। इसको श्रीमान् गहनानन्दनाथने कहा है । इसको क्रिमिधूलिजलप्लव रस कहते हैं ॥ १६-१८ ॥

क्रिमिकाष्ठानल रस ।

विशुद्धं पारदं गन्धं वङ्गं तालं वराटकम् ।
मनःशिला कृष्णकाचं सोमराजीं विडङ्गकम् ॥ १९ ॥
दन्तीबीजञ्च जैपालं शिवा टङ्कणचित्रकम् ।
कर्षमात्रन्तु प्रत्येकं वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥ २० ॥
कलायसदृशीं कृत्वा वटिकां भक्षयेत्ततः ।
क्रिमिकाष्ठानलो नाम रसोऽयं परिनिर्मितः ॥
श्लैष्मिके श्लेष्मपित्ते च श्लेष्मवाते च शस्यते ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, वंगभस्म, हरतालभस्म, कौड़ीकी भस्म, मैनशिल, काले रंगका कांच, बावची, वायविडंग, दन्तीके बीज, जमालगोटा, हरड़, सुहागा और चित्रककी जड़ यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेकर थूहरके दूधमें खरल करके मटरकी बराबर गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे कफजक्रिमि, कफपित्तजक्रिमि और कफवातजक्रिमि रोग नष्ट होता है । इसको क्रिमिकाष्ठानल रस कहते हैं ॥ १९-२१ ॥

लाक्षादि वटी ।

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिका ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्गमथ गुग्गुलुः ॥ २२ ॥
एभिः कीटाश्च शाम्यन्ते तिष्ठतापि गृहे सदा ।

भुजङ्गा मूषिका दंशाः संघनामा मतङ्गजाः ।
दूरादेव पलायन्ते किं न कीटाश्च ये पराः ॥ २३ ॥

लाख, भिलावे, श्रीवासका गोंद (गंधविरोजा), सुफेद कोइलकी जड़, अर्जुनके फल, अर्जुनके फूल, वायविडंग और गूगल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र मर्दन करके गोली बना लेवे; इन गोलियोंके सेवन करनेसे क्रिमिरोग नष्ट होता है। जिस घरमें यह औषधि स्थित रहती है उस घरमेंसे साँप, चूहे, डांस, मकोड़े आदि जीव दूर भाग जाते हैं। इसको लाक्षादि वटी कहते हैं ॥ २२ ॥ २३ ॥

क्रिमिहर रस।

शुद्धसूतमिन्द्रयवमजमोदा मनःशिला ।
पलाशबीजं गन्धश्च देवदाल्या द्रवैर्दिनम् ॥ २४ ॥
संमर्द्य भक्षयेन्नित्यं शालपर्णीरसैः सह ।
सितायुक्तं पिबेच्चानु क्रिमिपातो भवत्यलम्॥ २५ ॥

पारा, इन्द्रजौ, अजमोद, मैनशिल, ढाकके बीज और गंधक इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर देवदाली (बंदाल) के रसमें एक दिन तक खरल करके गोली बना लेवे, शालिपर्णीके रस और मिश्रीके साथ इन गोलियोंके सेवन करनेसे उदरास्थित सम्पूर्ण क्रिमि नष्ट हो जाते हैं। इसको क्रिमिहर रस कहते हैं ॥ २४ ॥ २५॥

विडंगलोह।

रसं गन्धश्च मरिचं जातीफललवंगकम् ।
कणा तालं शुण्ठि टङ्कं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥ २६ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।
लौहं विडङ्गकं नाम कोष्ठस्थक्रिमिनाशनम् ॥२७॥

दुर्नाममरुचिश्चैव मन्दाग्निश्च विषूचिकाम् ।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥२८॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे क्रिमिचिकित्सा ।

पारा, गंधक, कालीमिरच, जायफल, लौंग, पीपल, हरिताल, सोंठ और सुहागा ये प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोह सबकी बराबर लेवे, सबको एकत्र पीसकर चूर्ण कर ले और सब चूर्णकी बराबर वायविडंगका चूर्ण मिलावे। इसको जलमें पीसकर यथोचित मात्रानुसार यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करे तो कोष्ठगत क्रिमि, बवासीर, अरुचि, मंदाग्नि, विषूचिका, शोथ, शूल, ज्वर, हिक्का, श्वास और कास यह समस्त रोग नष्ट होते हैं ॥ २६-२८ ॥

इति क्रिमिरोग चिकित्सा ।

अथ पाण्डुरोगचिकित्सा ।

निशालोह ।

लोहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलारोहिणीयुतम् ।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां कामलापाण्डुशान्तये ॥ १ ॥

हलदी, दारुहलदी, हरड़, बहेडा, आमला और कुटकी यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और सबकी बराबर लोहेकी भस्म लेवे। इस औषधिके शहत और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे पाण्डु और कामला रोग नष्ट होते हैं। इसको निशालोह कहते हैं ॥ १ ॥

धात्री लोह ।

धात्रीलौहरजोव्योषनिशाक्षौद्राक्षशर्कराः ।
भक्षणाद्विनिहन्त्याशु कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २ ॥

आमले, लोहेकी भस्म, त्रिकुटा, हलदी, शहत, बहेड़ा और मिश्री इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे कामला और हलीमकरोग दूर होते हैं ॥ २ ॥

पञ्चानन वटी।

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृतताम्राभ्रगुग्गुलु।
जैपालबीजं तुल्यांशं घृतेन वटकीकृतम् ॥ ३ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभं शोथपाण्डुप्रशान्तये।
पञ्चाननवटी ख्याता पाण्डुरोगकुलान्तिका ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, तांबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, गूगल और जमालगोटे इन सबको एकत्र करके घृतमें पीसकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे शोथ और पांडु रोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

प्राणवल्लभ रस।

हिंगुलसम्भवं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धके।
लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिंगु फलत्रिकम् ॥ ५ ॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारं जैपालं दन्तिकं त्रिवृत्।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥ ६ ॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुना सह।
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ ७ ॥
श्लेष्मदोषं समालोक्य युक्त्या च त्रुटिवर्द्धनम्।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥ ८ ॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम्।
शोथं शूलमुरुस्तम्भं संग्रहग्रहणीं जयेत् ॥ ९ ॥
वान्तिं मूर्च्छां भ्रमिं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम्।
असाध्यं सन्निपातञ्च जीर्णज्वरमरोचकम् ॥ १० ॥

वातरक्तं तथा शोषं कण्डूं विस्फोटकापचीम् ।
नातः परतरं किञ्चित्कामलार्त्तिरुजापहम् ॥११॥

सिंग्रफमेंसे निकाला हुआ पारा, गंधक, केशर, लोहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ीकी भस्म, तुत्थ, हींग, हरड, बहेडा, आमला, थूहरका दूध, जवाखार, जमालगोटे, दंतीकी जड और निसोथ यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे लेकर बकरीके दूधमें पीसकर चार २ रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंको शहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे थोडा जलपान करे । जो कफकी अधिकता हो तो एक एक गोली बढ़ाकर खाये । इस औषधिसे कामला, पांडु, आनाह, श्लीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, शोथ, शूल, ऊरुस्तम्भ, संग्रहग्रहणी, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, खांसी, श्वास, गलग्रह, असाध्य सान्निपात, जीर्णज्वर, वातरक्त, शोष, कण्डू, विस्फोटक और अपची यह समस्त रोग नष्ट होते हैं । कामला रोगको हरनेके लिये इससे उत्तम अन्य औषधि नहीं है । इसको प्राणवल्लभ रस कहते हैं ॥ ९–११ ॥

कामेश्वर रस ।

पलं सूतं पलं गन्धं पथ्याचित्रकयोः पलम् ।
मुस्तैलापत्रकाणाञ्च प्रतिसार्द्धं पलं क्षिपेत् ॥१२॥
त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं विषञ्चापि पलं न्यसेत् ।
नागकेशरकं कर्षमेरण्डस्य पलं तथा ॥ १३ ॥
पुरातनगुडेनैव तुल्येनैव विमिश्रयेत् ।
मर्दयेत्कनकद्रावैर्भावयेच्च घृतान्विताम् ॥१४॥
वटिकां बदरास्थ्याभां कारयेद्भक्षयेन्निशि ।
पाण्डुरोगहरः सोऽयं रसः कामेश्वरःस्वयम् ॥ १५ ॥

पारा १ पल, गंधक १ पल, हरड १ पल, चित्रककी जड १ पल, नागरमोथा, इलायची और तेजपात यह प्रत्येक औषधि डेढ़ डेढ़ पल,

सोंठ, मिरच, पीपलामूल और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे, नागकेशर १ कर्ष और एरण्डके बीज एक पल लेवे, सबको एकत्र पीस लेवे और सबके बराबर पुराना गुड़ लेवे, सबको एकत्र मिलाकर धतूरेके रसमें भावना देकर घीके योगसे बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना नित्यप्रति रात्रिके समय एक गोली खावे। यह गोली पांडुरोगको नष्ट करती है । इसको कामेश्वर रस कहते हैं ॥ १२–१५ ॥

त्रिकत्रयाद्य लोह ।

पलं लौहस्य किट्टस्य पलं गव्यस्य सर्पिषः ।
सितायाश्च पलञ्चैकं क्षौद्रस्यापि पलं तथा ॥ १६ ॥
तोलैकं कान्तलौहस्य त्रिकत्रयसुभावितम् ।
ततः पात्रे विधातव्यं लोहे च मृन्मये तथा ॥ १७ ॥
हविषा भावितश्चापि रौद्रे च शिशिरे तथा ।
भोजनादौ तथा मध्ये चान्ते चापि प्रदापयेत् ॥ १८ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च हलीमकं सुदारुणम् ॥
निहन्ति नाऽत्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १९ ॥

मण्डूर १ पल, गायका घी १ पल, मिश्री १ पल, शहत १ पल और कांतलोहेकी भस्म १ तोला परिमाण लेवे । प्रथम लोहे और मण्डूरको एकत्र पीसकर; घी मिलाकर त्रिकत्रय (हरड़, बहेड़ा, आमला; सोंठ,मरिच,पीपल, दालचीनी,इलायची और नागकेशर) के क्काथमें सात और घृतमें सात लोहेके अथवा मट्टीके पात्रमें भावना देवे । सूर्योदयके समय क्काथकी और रात्रिमें सरदीके समय घृतसे भावना देवे;जब भावना समाप्त हो जायें तब मिश्री और शहत मिलावे । दोषोंका बलाबल विचार कर अनुपानकी कल्पना करे । इसका भोज-

नसे पहिले, भोजनके मध्यमें और भोजनके अन्तमें सेवन करावे । जिस प्रकार सूर्योदयके होनेसे अन्धकारका समूह नष्ट होजाता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे कामला, पाण्डु और हलीमक रोग नष्ट होते हैं । इसको त्रिकत्रयाद्य लोह कहते हैं ॥ १६-१९ ॥

विडंगादि लोह ।

विडंग-मुस्त-त्रिफला-देवदारु-षडूषणैः ।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २० ॥
तैरक्षमात्रां गुटिकां कृत्वा खादेद्दिनेदिने ।
कामलापांडुरोगार्त्तः सुखमाप्यतेऽचिरात् ॥ २१ ॥

वायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु और षडूषण (पीपल पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, और मरिच) यह प्रत्येक औषधि समान भाग और सबकी बराबर लोहाभस्म लेवे और लोहेसे अठगुना गोमूत्र लेवे। प्रथम लोहेके चूर्णको और गोमूत्रको एकत्र मिलाकर एक हांडीमें रखकर मन्द मन्द अग्निसे पकावे । जब पकते पकते गोमूत्र जल जाय केवल लोहा बाकी रहजाय तब उतारकर उपरोक्त विडंगादि चूर्ण मिलाकर एक एक तोलेकी गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक गोली खानेसे कामला और पाण्डुरोग नष्ट होकर सुखकी वृद्धि होती है । इसको विडंगादि लोह कहते हैं ॥ २० ॥ २१ ॥

विडंगत्रिफलाव्योषं शुद्धलोहन्तु तत्समम् ।
पुरातनगुडेनात्र लेहयेद्दिनसप्तकम् ॥
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगहलीमकम् ॥ २२ ॥

अन्य विडंगादि लोह-वायविडंग, त्रिफला और त्रिकुटा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सबकी बराबर लोहेकी भस्म लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर पुराने गुड़में मिलाकर सात दिन खानेसे शोथ, पाण्डुरोग और हलीमक रोग नष्ट होते हैं ॥ २२ ॥

त्रैलोक्यसुन्दर रस।

मानश्चैकं चतुःसूतं षडभ्रं वसुलौहकम्।
गन्धकं त्रिफलाव्योषं चूर्णं मोचरसस्य च ॥ २३ ॥
मुसली चामृतासत्त्वं प्रत्येकं पञ्चभागिकम्।
भावयेत्सर्वमेकत्र त्रिफलानां कषायके ॥ २४ ॥
भावना विंशतिर्देया दशरात्रं सुभावना।
शिग्रुचित्रकमूलाभ्यामष्टधा च पृथक् पृथक् ॥ २५ ॥
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम रसो निष्कमितो हितः।
सितया च समं क्षौद्रैः शोथपाण्डुक्षयापहः ॥
ज्वरातिसारसंयुक्तसर्वोपद्रवनाशनः ॥ २६ ॥

मानकन्द १ भाग, पारा ४ भाग, अभ्रक भस्म ६ भाग, लोहेकी भस्म ८ भाग, गंधक, त्रिफला, त्रिकुटा, मोचरस, मुसली और गिलोयका सत्त्व यह प्रत्येक पांच पांच भाग लेवे, सबको एकत्र पीसकर दश दिनतक त्रिफलेके क्काथकी बीस भावना देवे। पश्चात् सहंजिनेके रसमें आठ भावना देवे और चित्रककी जड़के रसमें आठ भावना देवे। इसमेंसे नित्य चार मासे औषधि मिश्री और शहतमें मिलाकर सेवन करनेसे सूजन, पांडु, क्षयरोग और सर्वोपद्रवसंयुक्त ज्वरातिसार नष्ट होते हैं। इसको त्रैलोक्यसुन्दररस कहते हैं ॥ २३–२६॥

दार्व्यादि लोह।

दार्वीसत्रिफलाव्योषविडङ्गान्ययसो रजः।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापाण्डुरोगवान् ॥ २७ ॥

दारुहल्दीकी छाल, त्रिफला, त्रिकुटा और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सबकी बराबर लोहभस्मका चूर्ण

लेवे । सबको एकत्र पीसकर घृत और शहतमें मिलाकर सेवन करनेसे कामला और पांडुरोग नष्ट होते हैं ॥ २७ ॥

पांडुरोगपर पथ्यापथ्य ।

शालियष्टिकगोधूमयवमुद्गादयो हिताः ।
रसाश्च जांगलभवा मधुराः पाण्डुरोगिणाम् ॥ २८ ॥

शालिधान, साँठीधान, गेहूं, जौ और मूंग आदि अन्न, जांगलप्रदेशके जीवोंके मांसरस और मधुर रसवाले पदार्थ यह सब पांडुरोगियोंको हितकारी हैं ॥ २८ ॥

अथ कामलाचिकित्सा ।

पाण्डुरोगोदिता योगा घ्नन्ति ते कामलामपि ॥२९॥

जो प्रयोग पांडुरोगमें कहे हैं वह सब कामलारोगको भी नष्ट करते हैं ॥ २९ ॥

चन्द्रसूर्यात्मक रस ।

सूतकं गन्धकं लौहमभ्रकञ्च पलं पलम् ।
शंखटंकवराटं च प्रत्येकार्द्धपलं हरेत् ॥ ३० ॥
गोक्षुरबीजचूर्णञ्च पलैकं तत्र दीयते ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं बाष्पयन्त्रे विभावयेत् ॥ ३१ ॥
पटोलपर्पटौ भार्ङ्गी विदारीशतपुष्पिका ।
दन्ती वासा कुण्डली च काकमाचीन्द्रवारुणी ॥३२॥
वर्षाभूकेशराजञ्च शालिञ्च द्रोणपुष्पिका ।
प्रत्येकार्द्धपलैर्द्रावैर्भावयित्वा वटीं कुरु ॥ ३३ ॥
चतुर्दशवटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः ।
गहनानन्दनाथोक्तश्चन्द्रसूर्यात्मको रसः ॥ ३४ ॥

हलीमकं निहन्त्याशु पाण्डुरोगं सकामलाम् ।
जीर्णज्वरं सविषममम्लपित्तमरोचकम् ॥ ३५ ॥
शूलं प्लीहोदरानाहमष्ठीलां गुल्मविद्रधिम् ।
शोथं मन्दानलं हिक्कां कासं श्वासं वमिं भ्रमिम् ३६॥
भगन्दरोपदंशं च दद्रुकण्डूव्रणानि च ।
दाहं तृष्णामुरुस्तम्भमामवातं कटीग्रहम् ॥ ३७ ॥
युक्तो मण्डेन मद्येन मुद्गयूषेण वारिणा ।
गुडूचीत्रिफलावासाक्काथनीरेण वा क्वचित् ॥ ३८ ॥

पारा, गंधक, लोहाभस्म, अभ्रक भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक पल, शंखकी भस्म, सुहागा और कौड़ीकी भस्म प्रत्येक आधा आधा पल, गोखुरुके बीज १ पल इन सब औषधियोंको एकत्र करके पटोलपात, पित्तपापड़ा, भारंगी, विदारीकंद, सौंफ, गिलोय, दंतीकी जड़, अडूसा, मकोय, इन्द्रायनकी जड़, पुनर्नवा, कुकुरभांगरा, शालिंच शाक, द्रोणपुष्पी (गूमा) इन प्रत्येक औषधिके आधे आधे पल स्वरसमें भावना देकर गोली बना लेवे, बकरीके दूधके साथ इन चौदह गोलियोंको चौदह दिनतक सेवन करे। इससे हलीमक, पांडुरोग, कामला, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, अम्लपित्त, अरुचि, शूल, प्लीहा, उदररोग, आनाह, आष्ठीला, गुल्म, विद्रधि, शोथ, मंदाग्नि, हिक्का, खांसी, श्वास, वमन, भ्रम, भगन्दर, उपदंश, दद्रु, कण्डू, व्रण, दाह, तृषा, ऊरुस्तम्भ, आमवात और कमरकी पीड़ा यह सब शांत होते हैं। मांड, मदिरा, मूंगकका यूष, जल, गिलोयका क्वाथ, त्रिफलेका क्वाथ और अडूसेका क्वाथ इनमेंसे एक किसीके साथ इसका सेवन करे। इसको गहनानन्दनाथने चन्द्रसूर्यात्मक रस कहा है ॥ ३०-३८ ॥

पाण्डुसूदन रस ।

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलु ।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३९ ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रशान्तये ।
शीतलञ्च जलञ्चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥ ४० ॥

पारा, गंधक, तांबा भस्म, जमालगोटेके बीज और गूगल यह सब औषधि समान भाग लेकर घृतमें मर्दन करके यथोक्त मात्राकी गोली बना लेवे । इनमेंसे प्रतिदिन एक एक गोली पाण्डु और शोथरोग शान्त करनेके लिये खावे। इसके सेवन करनेपर शीतल जल और अम्लरसवाले पदार्थोंको त्याग देवे । इसको पाण्डुसूदन रस कहते हैं॥ ३९ ॥ ४० ॥

मण्डूरवज्र वटक।

पञ्चकोलं समरिचं देवदारुफलत्रिकम् ।
विडंगमुस्तयुक्ताश्च भागास्त्रिपलसम्मिताः ॥ ४१ ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
पक्त्वा चाष्टगुणे मूत्रे घनीभूते तदुद्धरेत् ॥ ४२ ॥
ततोऽक्षमात्रान् वटकान्पिबेत्तक्रेण तक्रभुक् ।
पाण्डुरोगं जयत्याशु मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥४३ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापि वा ।
क्रिमिं प्लीहानमानाहं गलरोगञ्च नाशयेत् ।
मण्डूरवज्रनामायं रोगानीकप्रणाशनः ॥ ४४ ॥

पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीतेकी जड़, सोंठ, मरिच, देवदारु, हरड़, बहेड़ा, आमला, वायविडंग और नागरमोथा यह प्रत्येक औषधि तीन तीन पल और सब औषधिसे दुगुना मण्डूर लेवे, और मण्डूरसे आठगुना गोमूत्र लेवे । प्रथम मण्डूर और गोमूत्रको एकत्र करके

पकावे । जब पकते पकते गाढा हो जाये तब उसमें उपरोक्त पंच-कोलका चूर्ण डालकर एक एक तोलेकी वटी बना लेवे । एक एक वटी तक्रके साथ सेवन करनेसे पांडुरोग, मंदाग्नि, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, ऊरुस्तम्भ, कृमि, प्लीहा, आनाह और गलरोग नष्ट होते हैं । इसको मण्डूरवज्र वटक कहते हैं ॥ ४१-४४ ॥

लघ्वानन्द रस ।

पारदं गन्धकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
समांशं मरिचस्याष्टौ टङ्कणञ्च चतुर्गुणम् ॥ ४५ ॥
भृङ्गराजरसैः सप्त भावना चाम्लवेतसैः ।
गुञ्जाद्वयं पर्णखण्डे खादेत्सायं निहन्ति च ॥ ४६ ॥
पाण्डुतामरुचिञ्चैव मन्दाग्निं ग्रहणीं ज्वरम् ।
वातश्लेष्मभवान् रोगाञ्जयेदचिरसेवनात् ॥ ४७ ॥

पारा, गंधक, लोहाभस्म, विष और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, काली मिरच आठ भाग, सुहागा चार भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके भांगरेके रसकी सात भावना और खट्टे अनारके बीजोंके रसकी सात भावना देकर दो २ रत्तीकी गोली बना कर पानके साथ सेवन करनेसे पाण्डुरोग, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी, ज्वर, वातकफके विकार थोड़े ही समय सेवन करनेसे नष्ट होते हैं । इसको लघ्वानन्द रस कहते हैं ॥ ४५-४७ ॥

सम्मोह लोह ।

त्रिकटुत्रिफलावह्निविडङ्गं लौहमभ्रकम् ।
एतानि समभागानि घृतेन वटिकां कुरु ॥ ४८ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च ।
भगन्दरं क्रिमिकोष्ठं मन्दानलमरोचकम् ॥ ४९ ॥

तान्सर्वान्नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
सम्मोहलोहनामायं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥ ५० ॥

त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक, वायविडङ्ग, लोहभस्म, अभ्रकभस्म यह सब समान भाग लेकर घृतमें गोलियां बनावे । यह रस सेवन करनेसे कामला, पाण्डुरोग, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर, कोष्ठगतक्रिमि, मन्दाग्नि, अरुचि इन सब रोगोंको शीघ्र नष्ट करता है और बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाला है; पाण्डुरोगके लिये अत्यन्त श्रेष्ठ है । इसको सम्मोह लोह कहते हैं ॥ ४८-५० ॥

त्र्यूषणादि मण्डूर ।

स्विन्नमष्टगुणे मूत्रे लौहकिट्टं सुशोधितम् ।
पाकान्ते त्र्यूषणं वह्नित्रयादार्वीसुरद्रुमान् ॥ ५१ ॥
विडंगबीजचूर्णञ्च मुस्तं किट्टसमं क्षिपेत् ।
प्रातःकर्षं भजेदस्य जीर्णे तक्रौदनं भजेत् ॥ ५२ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगमर्शांसि श्वयथुं तथा ।
ऊरुस्तम्भं जयेदेतत्कामलां कुम्भकामलाम् ॥५३॥

शुद्ध मण्डूरको आठ गुणे गोमूत्रमें पकाकर गाढ़ा करके त्रिकुटा, चित्रकमूल, त्रिफला, दारुहल्दी, देवदारु, वायविडंग, नागरमोथा यह सब मण्डूरके बराबर लेकर (कूटकपडछानकर) मिलावे । इसमेंसे १ तोला परिमाण प्रातःकाल सेवन करे । औषधिके पचजानेपर भात और माठा खाना चाहिये । इससे हलीमक, पाण्डुरोग, बवासीर, शोथ, ऊरूस्तम्भ, कामला और कुम्भकामला यह सब रोग नष्ट होते हैं ॥ ५१-५३ ॥

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसः।
प्रातर्माक्षिकसंयुक्तः शीलितः कामलापहः॥ ९४॥
इति रसेन्द्रसारसंग्रहे पाण्डुरोगाधिकारः।

त्रिफला, गिलोय, दारुहल्दी और नीम इनके रसमें सहत डालकर सेवन करनेसे कामलारोग नष्ट होता है॥ ९४॥

इति पाण्डुरोगचिकित्सा।

अथ रक्तपित्तचिकित्सा।

अर्केश्वर रस।

मृतार्कं सूतवंगञ्च मृताभ्रञ्च समाक्षिकम्।
अमृतास्वरसैर्भाव्यं त्रिसप्तकपुटे पचेत्॥ १॥
वासा क्षीरविदारीभ्यां चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः।
भक्षणाद्विनिहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम्॥ २॥

तांबा भस्म, पारद भस्म, वंग भस्म, अभ्रक भस्म और सोनामाखी भस्म यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर गिलोयके रसमें २१ वार भावना देकर पुटपाककी विधिसे पकाकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिको अडूसा और विदारीकन्दके रसके साथ सेवन करनेसे दारुण रक्तपित्तरोग दूर होता है। इसको अर्केश्वर रस कहते हैं॥ १॥ २॥

सुधानिधि रस!

सूतं गन्धं माक्षिकञ्चैव लौहं सर्वं घृष्ट्वा त्रैफलेनोदकेन। लौहे पात्रे गोमयेऽग्नौ पुटित्वा रात्रौ दद्याद् रक्तपित्तप्रशान्त्यै॥ ३॥

पारा, गन्धक, सोनामाखीकी भस्म और लोहा भस्म यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर त्रिफलेके क्वाथमें लोहेके पात्रमें अरने उपलोंकी अग्निके द्वारा पकावे। रात्रिके समय इस औषधिके सेवन करनेसे रक्तपित्तरोग नष्ट होता है। इसको सुधानिधि रस कहते हैं ॥ ३ ॥

आमलक्यादि लोह ।

आमला पिप्पलीलोहं तुल्यया सितया सह ।
रक्तपित्तहरं लौहं योगराजमिदं स्मृतम् ॥ ४ ॥
वृष्याग्निदीपनं बल्यमम्लपित्तविनाशनम् ।
पित्तोत्थानपि वातोत्थान्निहन्ति विविधान्गदान् ॥५॥

आमले, पीमल, लोहेका चूर्ण समानभाग और सबकी बराबर मिश्री मिलावे। सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे रक्तपित्त रोग नष्ट होता है। इसको योगराज कहते हैं, इससे बलकी वृद्धि होती है और अग्नि दीप्त होती है। इससे अम्लपित्त प्रभृति वातिक, पैत्तिक और अनेक प्रकारके रोग नष्ट होते हैं, इसको आमलक्यादि लोह कहते हैं ॥४॥५॥

शतमूल्यादि लोह ।

शतमूलीसिताधान्यानागकेशरचन्दनैः ।
त्रिकत्रयतिलैर्युक्तं लौहं सर्वगदापहम् ॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दिरक्तपित्तविनाशनम् ॥ ६ ॥

शतावर, मिश्री, धनिया, नागकेशर, चन्दन, त्रिकुटा, त्रिफला, त्रिजात और तिल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और सबके बराबर लोहेका चूर्ण लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गोली बनाकर सेवन करनेसे तृषा, दाह, ज्वर, वमन और रक्तपित्त प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं ॥ ६ ॥

रक्तपित्ते पिबेद्व्योमसहितं पर्पटीरसम् ।
वासाद्राक्षाभयानाञ्च क्वाथं वा शर्करान्वितम् ॥
योगवाहिरसान्सर्वान् रक्तपित्ते प्रयोजयेत् ॥ ७ ॥

रक्तपित्तरोगमें पित्तपापड़ेके रसके साथ अभ्रककी भस्मको; अथवा अडूसा, दाख और हरड़ इनके क्वाथमें मिश्री डालकर पीवे; अथवा समस्त योगवाही औषधि प्रयुक्त करे ॥ ७ ॥

रक्तपित्तान्तक रस ।

मृताभ्रं मुण्डतीक्ष्णञ्च माक्षिकं रसतालकम् ।
गन्धकञ्च भवेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षामृताद्रवैः ॥ ८ ॥
दिनैकं मर्द्दयेत्खल्ले सिताक्षौद्रसमन्वितम् ।
माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥
ज्वरं दाहं क्षतक्षीणं तृष्णां शोषमरोचकम् ॥ ९ ॥

अभ्रकभस्म, लोहभस्म, मुण्डलोहभस्म, सोनामाखीभस्म, पारा-भस्म, हरितालभस्म और गंधक यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर मुलहठी, दाख और गिलोय इनके क्वाथमें अलग अलग एक एक दिन पर्यंत खरल करे। इस औषधिको एक मासे परिमाण मिश्री और शहतमें मिलाकर खानेसे शीघ्र ही दारुण रक्तपित्त, ज्वर, दाह, क्षतक्षीण, तृषा, शोष और अरुचि रोग नष्ट होते हैं । इसको रक्त-पित्तान्तक रस कहते हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

रसामृत रस ।

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु ।
गुडूची चन्दनं द्राक्षा मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ १० ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकी निम्बपत्रकम् ।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयाऽन्वितम् ॥ ११ ॥

विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रं तु भक्षयेत् ।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ १२ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः ।
निहन्ति सर्वदोषं च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ १३ ॥

पारा १ भाग, गंधक, सोनामाखी भस्म, शिलाजीत, लालचन्दन, गिलोय, दाख, महुवेके फूल, धनिया, इन्द्रजौ, कुड़ेकी छाल, धायके फूल, नीमके पत्ते, मुलैठी, शहत और मिश्री यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग लेवे, इन सबको विधिवत् एकत्र खरल करके प्रातःकाल मुख धोकर एक कर्ष परिमाण भक्षण करे और ऊपरसे धारोष्ण दूध पीवे। इसके सेवन करनेसे पित्तरोग, अम्लपित्त, रक्तपित्त और ज्वर निश्चय नष्ट होते हैं । इसको स्वयं गहनानन्दनाथने कहा है । इसको रसामृत रस कहते हैं ॥ १०-१३ ॥

खण्डकूष्माण्ड ।

कूष्माण्डकात्पलशतं सुस्विन्नं निष्कुलीकृतम् ।
पचेत्ताम्रे घृतप्रस्थे शनैस्ताम्रमये दृढे ॥ १४ ॥
यदा मधुनिभः पाकस्तदा खण्डं शतं न्यसेत् ।
पिप्पलीशृङ्गवेराभ्यां द्वे पले जीरकस्य च ॥ १५ ॥
त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानां पलार्द्धकम् ।
न्यसेच्चूर्णीकृतं तत्र दर्व्या संघट्टयेत्पुनः ॥ १६ ॥
तत्पक्कं स्थापयेद्भाण्डे दत्त्वा क्षौद्रं घृतार्द्धकम् ।
तद्यथाग्निबलं खादेद्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥ १७ ॥

उत्तम प्रकारसे पका हुआ एक पेठा लेकर उसको छीलकर उसके बीज निकाल डाले । इसको अच्छे कली किये हुए पात्रमें पकाकर निचोड़ लेवे और छिलके रहित पेठेके टुकड़े १०० पल लेवे । फिर

इसको उत्तम कली किये हुए तांबेके पात्रमें डालकर एक प्रस्थ घृतमें पकावे। जब पकते पकते शहतके समानवर्ण होजाय तब १०० पल खांडकी चासनी उसी पेठेमेंसे निकले हुए जलसे बनाकर डाले तथा पीपल, अदरख और जीरा इन प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ तोले; दालचीनी, इलायची, तेजपात, कालीमिरच और धनिया प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले, सबको मिलाकर अच्छे प्रकारसे करछीसे चलाकर एकजीव करके रख देवे। फिर घृतसे आधा भाग शहत डालकर एक उत्तम चिकने बासनमें भरकर रख देवे। इसका अग्निके बलानुसार रक्तपित्त, क्षत और क्षयरोगी सेवन करे ॥ १४–१७ ॥

शर्कराद्य लोह।

शर्करातिलसंयुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु चाम्लपित्तहरं परम् ॥ १८ ॥

मिश्री, तिलका चूर्ण, हरड़का चूर्ण, बहेड़ेका चूर्ण, आमलोंका चूर्ण, सोंठका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, काली मिरचोंका चूर्ण, चित्रकका चूर्ण, नागरमोथेका चूर्ण और वायविडंगका चूर्ण यह प्रत्येक एक एक भाग और सब चूर्णकी बराबर लोहाभस्म लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके यथोक्त मात्रानुसार सेवन करनेसे रक्तपित्त और अम्लपित्त रोग नष्ट होते हैं। इसको शर्कराद्य लोह कहते हैं ॥ १८ ॥

समशर्कर लोह।

लोहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम्।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥ १९ ॥
ताम्रपात्रे दृढे पक्त्वा स्थापयेद् घृतभाजने।
माषकादिक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ २० ॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम्।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतक्षयम्।
प्रहृष्टकान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ २१ ॥

लोहभस्म १ भाग, दूध, ४ भाग, घृत २ भाग, वायविडंगका चूर्ण चौथाई भाग, मिश्री एक भाग और सहत १ भाग लेवे । प्रथम लोह भस्म, दूध और घृत इनको एकत्र करके एक दृढ तांबेके पात्रमें मंद मंद अग्निसे पकावे । जब पकते पकते गाढ़ा होजाय तब वायविडंगका चूर्ण और मिश्री डाल देवे । पाक सिद्ध होनेपर चूल्हे परसे उतार लेवे । शीतल होनेपर शहत मिलाकर एक घीके चिकने बासनमें भर-कर रख देवे । इस औषधिको पहिले दिन एक मासा, दूसरे दिन दो मासे और तीसरे दिन तीन मासे इस प्रकार प्रतिदिन छः दिन तक एक एक मासा बढ़ाकर खाये । इसके सेवन करनेके पश्चात् नारियलका जल पान करे । इससे रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षत और क्षयरोग नष्ट होते हैं । यह आनन्दजनक कांतिको उत्पन्न करनेवाला और आयुको बढ़ानेवाला है । इसको समशर्कर लोह कहते हैं ॥ १९-२१ ॥

कपर्दक रस ।

मृतं वा मूर्च्छितं सूतं कार्पासकुसुमद्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु तेन पूर्या वराटिका ॥ २२ ॥
निरुध्य चान्धमूषायां भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत् ।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं मरिचैर्द्विगुणैः सह ॥ २३ ॥
गुञ्जामात्रं घृतेनैव भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
उदुम्बरं घृतञ्चैव अनुपानं प्रयोजयेत् ॥
कपर्दको रसो नाम रक्तपित्तविनाशनः ॥ २४ ॥

पारेकी भस्मको अथवा मूर्च्छित पारेको लेकर कपासके फूलोंके रसमें एक दिनतक खरल करके कौड़ियोंमें भरकर उसका मुख बंद कर देवे । फिर उन कौड़ियोंको अन्धमूषामें रखकर पुटपाक करे; शीतल होनेपर इसका चूर्ण करके दो भाग काली मिरचोंका चूर्ण मिलाकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंका घृतके

साथ सेवन करे और ऊपरसे गूलर और घीका अनुपान करे। इसके सेवन करनेसे रक्तपित्तरोग नष्ट होता है ॥ २२-२४ ॥

नीलोत्पलसिताक्षौद्रसंयुक्तं पद्मकेसरम्।
तण्डुलोदकपानेन रक्तपित्तं नियच्छति ॥ २५ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे रक्तपित्ताचिकित्सा।

नीलकमल अथवा नीलोत्पल (नीलोफर), मिश्री, शहत और कमलकेशर यह सब औषधि समान भाग लेकर एकत्र खरल करके चावलोंके जलके साथ सेवन करनेसे रक्तपित्तरोग नष्ट होता है ॥ २५॥

इति रक्तपित्तचिकित्सा।

अथ यक्ष्माधिकार।

रास्नादि लौह।

रास्नाश्वगन्धाकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लौहं यक्ष्मान्तकृन्मतम् ॥ १ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।
हन्ति कासं स्वराघातं राजयक्ष्म क्षतक्षयम् ॥
बलवर्णाग्निपुष्टीनां वर्द्धनं दोषनाशनम् ॥ २ ॥

रास्ना, असगंध, कपूर, मण्डूकपर्णी, शिलाजीत, हरड़, बहेडा, आमला, सोंठ, मरिच, पीपल, चित्रक, नागरमोथा और वायविडंग यह प्रत्येक एक एक भाग लेवे और सबकी बराबर लोहभस्म लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र मिलाकर यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करनेसे समस्त उपद्रव युक्त, वैद्य करके छोडा हुआ राजयक्ष्म-रोगी अवश्य आरोग्य होजाता है। इस औषधिके सेवन करनेसे खाँसी, स्वरभेद, राजयक्ष्मा, क्षत और क्षयरोग नष्ट होते हैं; बल, वर्ण अग्नि और पुष्टिकी वृद्धि होती है तथा त्रिदोषको नष्ट करता है। इसको रास्नादि लौह कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

राजमृगांक रस ।

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम् ।
मृततारस्य भागैकं शिलागन्धकतालकम् ॥ ३ ॥
प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
वराटिका तेन पूर्या चाजाक्षीरेण टङ्कणम् ॥ ४ ॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे तां निरोधयेत् ।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ॥ ५ ॥
दशपिप्पलिकैः क्षौद्रैर्मरिचैर्वा घृतान्वितैः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य क्षयरोगप्रशान्तये ॥ ६ ॥
सघृतैर्दापयेद्वाथ वातश्लेष्मभवे क्षये ।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं नानारोगनिषूदनः ॥ ७ ॥

पाराभस्म, या रससिन्दूर ३ भाग, सोनेकी भस्म १ भाग, चांदीकी भस्म १ भाग, मैनशिल २ भाग, गंधक २ भाग और हरितालभस्म २ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके कौडीमें भर देवे। पश्चात् बकरीके दूधमें सुहागेको पीसकर उससे कौडीके मुखको बंद कर देवे, फिर उस कौडीको मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे। शीतल होने-पर चूर्ण करके दश पीपल और सहतके द्वारा अथवा १० कालीमिरच और घृतके द्वारा इसको चार रत्ती परिमाण क्षयरोगको नष्ट करनेके लिये सेवन करे। वातश्लेष्मज क्षयरोगमें घृतके साथ भक्षण करे। इससे अनेक प्रकारके रोग नष्ट होते हैं ॥ ३–७ ॥

मृगाङ्क रस ।

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टंकणम् ॥
तत्सर्वं गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ८ ॥

मृगाङ्कसंज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥ ९ ॥
पिप्पलीदशकैर्वापि मधुना सह लेहयेत्।
पथ्यन्तु लघुभिर्मांसैः प्रयोगेऽस्मिन्प्रयोजयेत्॥१०॥
व्यञ्जनैर्घृतपक्वैश्च संस्कृतैर्ह्यविदाहिभिः॥
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लं च वर्जयेत्॥
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चापि विवर्जयेत् ॥ ११ ॥

पारा १ भाग, सोनाभस्म १ भाग, मोती २ भाग, गंधक २ भाग और सुहागा १ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र कांजीमें पीसकर गोला बना लेवे। फिर इस गोलेको मूषामें रखकर नमकसे भरी हुई हाँडीमें उस मूषाको रखकर चार प्रहर तक पकावे। इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि लेकर काली मिरचोंके चूर्णके साथ; अथवा दश पीपलके चूर्ण और सहतके साथ सेवन करे। इस औषधिके सेवनके अंतमें लघु (हलके) मांसको घृतके द्वारा संस्कार किये हुए और परिपक्क हुए व्यञ्जन और अविदाही पदार्थ पथ्य देवे। बैंगन, बेल, तैल और करेलेको नहीं खाये। तथा स्त्रीप्रसंग और क्रोधका त्याग कर देवे। इसके सेवन करनेसे राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है। इसको मृगांक रस कहते हैं ॥ ८-११ ॥

रत्नगर्भपोट्टली रस।

रसं वज्रं हेम तारं नागं लौहञ्च ताम्रकम्।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्ताविद्रुममाक्षिकम् ॥ १२ ॥
शंखं तुत्थञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेन पूर्या वराटिका ॥ १३ ॥

टङ्कणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत् ।
मृद्भाण्डे तां निरुध्याथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥१४॥
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्डया सप्त भावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्य च विंशतिः ॥१५॥
द्रवैर्भाव्यं ततश्चास्य देयं गुञ्जाचतुष्टयम् ।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्यासाध्यं न संशयः॥१६॥
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैस्तथा ।
महारोगाष्टके कासे श्वासे चैवातिसारके ॥
पोटलीरत्नगर्भोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १७ ॥

पारा, हीरा, सोना, चांदी, सीसा, लोहा, तांबा इन सबकी भस्म, काली मिरच, मोती, मूँगाभस्म, सोनामाखीभस्म, शंखकी भस्म और शुद्ध तूतिया इन सब औषधियोंको सम भाग लेकर और एकत्र पीसकर चित्रकके रसमें सात दिन तक खरल करे।फिर इसको कौड़ीमें भरकर उसके मुखको आकके दूधमें पिसे हुए सुहागेसे बन्द कर देवे। फिर मट्टीके सिकोरेमें रखकर ऊपरसे एक दूसरा सिकोरा ढक देवे और उसकी मूषा बनाकर गजपुटमें पकावे । शीतल होनेपर इसका चूर्ण कर ले । फिर सम्हालूके पत्तोंके रसकी सात भावना देवे, अदरखके रसकी सात भावना देवे और चित्रककी जड़के रसकी २० भावना देकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे साध्य और असाध्य क्षयरोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। यह औषधि आठ प्रकारके महारोग, खांसी, श्वास और अतिसारमें पीपलके चूर्ण और सहतके साथ सेवन करे । अथवा कालीमिरचोंका चूर्ण और घृतके साथ प्रयोग करे । यह औषधि सर्वरोगनाशक है। इसको रत्नगर्भपोट्टली रस कहते हैं ॥ १२-१७ ॥

लोकेश्वरपोट्टली रस ।

भस्म सूताच्चतुर्थांशं मृतस्वर्णं प्रदापयेत् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥ १८ ॥
पूर्या वराटिका तेन टङ्कणेन निरुध्य च ।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा रुद्ध्वा च मृन्मये ॥१९॥
शोषयित्वा गजपुटे पुटेत्तु चापराह्णिके ।
स्वांगशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ।
एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्द्धनः ॥२०॥
गुंजाचतुष्टयश्चास्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ।
मरिचैर्घृतयुक्तैश्च भक्षयेद्दिवसत्रयम् ।
अङ्गकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते क्षयेपि च ॥२१॥

पारदभस्म या रससिन्दूर ४ भाग; सोनेकी भस्म १ भाग और गन्धक २ भाग लेवे । इन सबको चित्रककी जड़के रसमें खरल करके कौड़ीमें भर देवे और उसका मुख सुहागेसे बन्द कर देवे । पश्चात् एक सिकोरेमें चूनेका लेप करके पश्चात् उसमें कौड़ीको रखकर फिर एक दूसरे सिकोरेसे ढक देवे । फिर उसकी अच्छे प्रकारसे कपरमट्टी करके सुखा लेवे । पश्चात् इसको दुपहरके बाद गजपुटमें रखकर फूंक देवे । शीतल होनेपर कौड़ीको पीसकर चूर्ण कर ले । यह लोकेश्वर-पोटली रस वीर्य और पुष्टकी वृद्धि करनेवाला है, इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि लेकर शहत पीपलके चूर्णके साथ सेवन करे । शरीरकी कृशता, मन्दाग्नि, खाँसी, पित्तरोग और क्षय रोगमें काली मिरचोंके चूर्ण और घृतके साथ तीन दिन तक सेवन करे ॥ १८–२१ ॥

लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च भोजयेत् ॥२२॥
एकविंशदिनं यावत्सघृतं मरिचं पिबेत् ।

पथ्यं मृगांकवद्देयं शयीतोत्तानपादतः ॥ २३ ॥

ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च येऽष्ठी-लया, पाण्डुत्वेन हताश्च वैद्यविधिना ये त्याजिता दुर्भगाः । ये तप्ता विविधैर्ज्वरैः श्रममदोन्मादैः प्रमादं गता,–स्ते सर्वे विगतामया हतरुजः स्युः पोट्टलीसेवनात् ॥ २४ ॥

इस औषधिके सेवन करनेपर लवणका भक्षण करना त्याग देवे । घृत और दधि अवश्य भक्षण करना चाहिये । इसको २१ दिन तक खाये और घी तथा मरिचोंके चूर्णका सेवन करे । मृगाङ्कके समान पथ्य देवे और ऊपरको पैर करके अर्थात् चित्त शयन करे । जो मनुष्य विषम भोजन करनेसे शुष्क हो गये हैं, जिनके क्षय रोग, अष्ठीला और पांडु रोग है, जिनको अत्यंत दारुण रोगोंसे पीड़ित होनेके कारण वैद्योंने त्याग दिया है, जो अनेक प्रकारके ज्वरोंसे संतप्त हैं, तथा जो श्रम और उन्मादरोगसे पीडित हैं उनको यह औषधि अवश्य सेवन करानी चाहिये । इससे शीघ्र ही उपरोक्त रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ २२–२४ ॥

कनकसुन्दर रस ।

रसस्य तुर्यभागेन हेमभस्म प्रयोजयेत् ।
मनःशिला गन्धकञ्च तुत्थं माक्षिकतालकम् ॥२५॥
विषं टङ्कणकं सर्वं रसतुल्यं प्रदापयेत् ।
मर्दयेत्सर्वमेकत्र खल्लपात्रे च निर्मले ॥ २६ ॥
जयन्तीभृंगराजोत्थैः पाठाया वासकस्य च ।
अगस्तिलांगलाग्नीनां स्वरसैश्च पृथक् पृथक् ॥२७॥
भावयित्वा विशोष्याथ पुनश्चार्द्रकवारिणा ।
सप्तधा भावयित्वा च रसः कनकसुन्दरः ॥२८॥

गुञ्जाद्वयं त्रयं वास्य राजयक्ष्मप्रशान्तये।
मधुना पिप्पलीभिर्वा मरिचैर्वा घृतान्वितम्॥२९॥
सन्निपाते प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै।
जयपालरजोभिर्वा गुल्मिने शूलरोगिणे॥ ३०॥
अम्लवर्ज्जं चरेत्पथ्यं बल्यं हृद्यं रसायनम्।
वर्ज्जयेल्लवणं हिंगु तक्रं दधि विदाहि यत्॥ ३१॥

पारा ४ भाग, सोनाभस्म १ भाग और मैनशिल, गंधक, तूतिया, सोनामाखी भस्म, हरिताल भस्म, विष और सुहागा यह प्रत्येक औषधि चार चार भाग लेवे। इन सब औषधियोंको अच्छे प्रकारसे खरल करके जयंती, भांगरा, पाढ, अडूसा, अगस्तियाके पत्ते, कालिहारी, चीतेकी जड़ और अदरख इन प्रत्येकके रसके द्वारा अलग अलग सात भावना देकर धूपमें सुखा लेवे, इसमेंसे दो रत्ती परिमाण अथवा तीन रत्ती परिमाण औषधि लेकर राजयक्ष्माको शांत करनेके लिये पीपलके चूर्ण और सहतके साथ अथवा कालीमिरचोंके चूर्ण और घृतके साथ; सन्निपात ज्वरमें अदरखके रसके साथ और गुल्म तथा शूल रोगमें जमालगोटेके चूर्णके साथ प्रयोग करे। इसके सेवन करनेपर अम्ल रसवाले पदार्थ, लवण, हींग, तक्र, दही और दाहकारक पदार्थोंका त्याग कर देवे। तथा बलकारक, हृदयको हितकारी और शरीरमें रसको बढ़ानेवाले पदार्थोंका सेवन करे। इसको कनकसुन्दर रस कहते हैं॥ २९-३१॥

हेमगर्भपोट्टली रस।

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम्।
मृतताम्रस्य भागैकं भागैकं गन्धकस्य च॥ ३२॥
मर्द्दयेच्चित्रकद्रावैर्दिनयामान्ते समुद्धरेत्।

पूर्या वराटिका तेन टंकणेन विलेपयेत् ॥ ३३ ॥
वराटीं पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
विचूर्णयेत्स्वांगशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ।
मृगांकवच्चतुर्गुञ्जाभक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ ३४ ॥

पारेकी भस्म २ भाग, सोनेकी भस्म १ भाग, तांबा भस्म १ भाग, गंधक १ भाग इन सब औषधियोंको एकत्रकर चित्रकके रसमें दो प्रहर तक खरल करके एक कौड़ीमें भर देवे और उस कौड़ीके मुखको सुहागेसे बंद कर देवे, फिर उस कौड़ीको मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे, शीतल होनेपर कौड़ीको पीसकर चूर्ण कर ले । फिर इसको चार रत्ती परिमाण मृगांकके समान सेवन करनेसे राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है । इसको हेमगर्भपोट्टली रस कहते हैं ॥ ३२-३४ ॥

सर्वांगसुन्दर रस ।

रसं गन्धश्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टंकणस्य च ।
मौक्तिकं विद्रुमं शंखभस्म देयं समांशकम् ॥ ३५॥
हेमभस्मार्धभागञ्च सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
निम्बुद्रवेण संपिष्य पिडिकां कारयेत्ततः ॥ ३६ ॥
पश्चाद्गजपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत् ।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्धं दरदं मतम् ॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥३७॥

पारा१भाग, गन्धक १ भाग, सुहागा २ भाग तथा मोती, मूंगा और शंखकी भस्म यह सब एक २ भाग और स्वर्णभस्म आधा भाग लेवे । इन सबको एकत्र पीसकर कागजी नींबूके रसमें खरल करके पिण्डाकार बनाकर मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे । शीतल होनेपर मूषामस औषधिको निकालकर पश्चात् उसमें आधा भाग तीक्ष्ण लोहभस्म और लोहेसे आधा भाग सिंग्रफ मिलाकर बारीक पीस लेवे॥ ३५-३७॥

ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ।
सर्वांगसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः ॥ ३८ ॥
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ।
अर्शांसि ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ॥ ३९ ॥
निहन्तिवातजान्रोगाञ्छ्लैष्मिकांश्च विशेषतः ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥ ४० ॥

फिर किसी उत्तम दिनमें पारेकी पूजा करके इस औषधिका सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, घोरतर वातपित्तज्वर, दारुण सन्निपातज्वर, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, समस्त वातज रोग और कफज रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिको पीपलके चूर्ण, सहत अथवा घृत किंवा पान या मिश्री या अदरखके रसके साथ सेवन करे । इसको सर्वांगसुन्दर रस कहते हैं ॥ ३८–४० ॥

लोकेश्वर रस ।

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
माषञ्च टंकणस्यैव जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ ४१ ॥
पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथरसोत्तमः ।
ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान् रोगान्बलाज्जयेत् ॥ ४२ ॥
पुष्टिवीर्यप्रसादौजः कान्तिलावण्यदः परः ।
कोऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतः ॥४३॥
पथ्यं शाल्योदनं सर्पिर्दधि शाकं सहिंगुकम् ।
नित्यं यामद्वयादूर्ध्वं कार्यं वारत्रयं दिवा ॥४४॥

त्र्यहाद्रुचौ वा वान्ते वा लग्नः सूतो न चेत्पुनः ।
अष्टमेऽह्नि प्रदातव्यः पूर्ववत्कार्यसिद्धये ॥ ४५ ॥

कौडीकी भस्म १ पल, पारा और गंधक प्रत्येक दो दो तोले और सुहागा १ मासा लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके जम्बीरी नींबूके रसमें खरल करके मूषामें रखकर पुटपाककी विधिसे पकावे। इस औषधिके सेवन करनेसे कुष्ठके अतिरिक्त रक्तपित्तके अन्यान्य समस्त रोग नष्ट होकर शरीर पुष्ट, वीर्यकी वृद्धि, प्रसाद, ओज, कांति और लावण्यताकी वृद्धि होती है । इस औषधिको स्वयं महादेवजीने कहा है। संसारमें इसके समान अन्य कोई भी औषधि गुणकारक नहीं है। इस औषधिके सेवन करनेपर शालि चावलोंका भात, घी, दही, शाक और हींग भक्षण करे । इस औषधिका नित्य दो दो प्रहरमें तीन वार सेवन करे । इसके सेवन करनेसे अरुचि अथवा वमन हो जाये तो तीन दिन तक सेवन कराकर पश्चात् रोक देवे, फिर आठ दिनके पश्चात् औषधि सेवन करे ॥ ४१-४५ ॥

प्रथमे सप्तमे देया लावशूरणमुद्गकाः ।
द्वितीये माषगोधूमं भक्ष्यं पूर्वोदितञ्च यत् ॥ ४६ ॥
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम् ।
तैलबिल्वारनालानि कोपस्त्रीस्वप्नजागरान् ॥ ४७ ॥
त्यजेत्कादीनि द्रव्याणि हृद्यं स्वादु च शीलयेत् ।
वायौ सेव्यं पयः कोष्णं पित्ते तु ससितं हितम् ॥४८॥
अत्यग्नौ चोरबीजानि तिलेक्षुकदलीफलम् ।
खर्जूरं मांसमृद्वीका सितादि सकलं भजेत् ॥
वीर्यच्युतौ नारिकेलजलतालफलानि च ॥ ४९ ॥

इस औषधिके सेवन करते समय पहिले सप्ताहमें लवा पक्षीके मांसके साथ, जमीकंद और मूंगका यूष । दूसरे सप्ताहमें उडद, गेहूं,

लवाका मांस, जमीकंद और मूंगका यूष। तीसरे सप्ताहमें मछली और मांसको भक्षण करे तथा शरीरपर तेलका मर्दन करे। तेल, बेल, कांजी, क्रोध, स्त्रीसंग, दिनमें सोना, रात्रिमें जागना और ककारादि नामवाले पदार्थोंका त्याग कर देवे। इसपर हृदयको हितकारी और स्वादु पदार्थ सेवन करने चाहिये। वात रोगमें इस औषधिका सेवन कराकर ऊपरसे गरम दूध और पित्त रोगमें मिश्रीके साथ गरम दूध पान करना चाहिये। तीक्ष्णाग्नि रोगमें काला कचूर, तिल, ईख, केलेकी फली, खजूर, मांस, दाख और मिश्री आदि भक्षण करे। वीर्य-स्तम्भके लिये नारियलका जल और ताड़के फल सेवन करे ॥४६-४९॥

आनाहारुचिमूर्च्छार्तिधूमोद्गारविषूचिकाः ।
एतेषु लघुशाल्यन्नं केवलं सघृतं हितम् ॥ ५० ॥
अतिवान्तौ पिबेच्छिन्नारसं क्षौद्रेण संयुतम् ।
सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्तेऽरुचिविपर्यये ॥ ५१ ॥
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ।
यवान्नं मधुसंयुक्तं पिबेद्वा माहिषं दधि ॥ ५२ ॥
घृतान्नं भक्षयेन्नित्यं सुखोष्णेन च वारिणा ।
छिन्नाम्बुसहितं देयं दाहेऽजीर्णे सुधाजलम् ॥५३॥
आर्द्रकं सर्षपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोल्बणे ।
अन्येऽप्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथौषधम्॥५४॥
द्वात्रिंशद्दिवसे कार्यं स्नानमामलकैस्तिलैः ।
युक्तं सेव्यं बले जाते शनैरग्निबलादनु ॥ ५५ ॥

आनाह, अरुचि, मूर्च्छा, वेदना, धूमोद्गार और विषूचिका इन रोगोंमें घी मिलाकर शालि चावलोंका भात खाये। वमन रोगमें सहत मिलाकर गिलोय सेवन करे। रक्तपित्तमें सहतमें अडूसेका स्वरस मिला-

कर, अरुचिमें मिश्रीयुक्त भूनाधनियां अथवा मध मिला भैंसका दही, अथवा मधुके साथ यवोंका सत्तू पीवे । अथवा घृत और भात सेवन करे तथा उष्ण जल पान करे । दाह और अजीर्ण रोगमें गिलोयका रस और हरड़का रस पान करे । कफाधिक्य रोगमें अदरख, सरसों, केलेकी फली और दालचीनी भक्षण करे । अन्यान्य उपद्रवोंको नष्ट करनेके लिये यथोक्त औषधियोंका सेवन करके बत्तीस दिनतक तिल और आमलोंके रसके द्वारा स्नान करावे । शरीरमें बल आजानेपर यथायोग्य अनुपानके साथ भोजन करे और जो बल अल्प हो तो अल्पपरिमाण भोजन करे । इसको लोकेश्वर रस कहते हैं ॥९०-९५॥

स्वल्पमृगांक ।

रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत् ।
दोषं बुद्ध्वाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः ॥ ९६ ॥

रससिन्दूर १ भाग और सोनेकी भस्म १ भाग इन दोनोंको एकत्र करके यथोक्त अनुपानके साथ २ रत्ती प्रमाण सेवन करनेसे क्षय रोग नष्ट होता है । इसको स्वल्पमृगांक कहते हैं ॥ ९६ ॥

काञ्चनाभ्रक ।

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम् ।
विद्रुमञ्चाभया तारं कस्तूरी च मनःशिला ॥ ९७ ॥
प्रत्येकं बिन्दुमात्रन्तु सर्वं संमर्द्य यत्नतः ।
वारिणा वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ॥ ९८ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः ।
क्षयं हन्ति तथा कासं श्लेष्मपित्तसमुद्भवम् ॥ ९९ ॥
प्रमेहं विविधञ्चैव दोषत्रयसमुत्थितम् ।
कफजान्वातजान् रोगान्नाशयेत्सद्य एव हि ॥ ६० ॥

बलवृद्धिं वीर्यवृद्धिं लिंगदार्ढ्यं करोति च।
श्रीकरः पुष्टिजननो नानारोगनिषूदनः॥
गहनानन्दनाथोक्तो रसोऽयं काञ्चनाभ्रकः॥ ६१॥

सोना भस्म, रससिन्दूर, मोती, लोहा भस्म, अभ्रक भस्म, मूंगा भस्म, हरड, चांदी भस्म, कस्तूरी और मैनशिल यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेकर जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके दोषनाशक अनुपानके साथ सेवन करनेसे क्षयरोग, पित्तकफज कास, विविध प्रकारका प्रमेह, त्रिदोषज रोग, कफज रोग और वातज रोगसमूह नष्ट होते हैं। इससे बल और वीर्यकी वृद्धि होती है, लिंगमें दृढता उत्पन्न होती है और लक्ष्मी तथा पुष्टिकी वृद्धि होती है, नाना प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। इस काञ्चनाभ्रकको श्रीमद्गहनानन्दनाथने कहा है॥ ५७-६१॥

बृहत्काञ्चनाभ्र रस।

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम्।
विद्रुमं मृतवैक्रांतं तारं ताम्रञ्च वंगकम्॥ ६२॥
कस्तूरिका लवंगञ्च जातीकोषैलवालुकम्।
प्रत्येकं बिन्दुमात्रञ्च सर्वं मर्द्यं प्रयत्नतः॥ ६३॥
कन्यानीरेण संमर्द्य केशराजरसेन च।
अजाक्षीरेण संभाव्यं प्रत्येकं दिवसत्रयम्॥ ६४॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः॥ ६५॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव दोषत्रयसमुद्भवान्॥
सर्वरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥ ६६॥

सोनाभस्म, रससिन्दूर, मोती, लोहा, अभ्रक, मूंगा, हीरा, चांदी, तांबा, वंग इनकी भस्म; कस्तूरी, लौंग, जावित्री और एलुआ यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेकर घीकार और कुकुरभांगरेके रसकी, बकरीके दूधकी अलग २ तीन २ भावना देकर चार २ रत्तीकी गोलियां बना लेवे। यथादोषानुसार योग्य अनुपानके साथ इसका प्रयोगकरे। इससे क्षयरोग, खाँसी, राजयक्ष्मा, श्वास और २० प्रकारके प्रमेह, त्रिदोषज रोग और इसके अतिरिक्त अन्यान्य समस्त रोग ऐसे नष्ट होते हैं जिसप्रकार सूर्योदयके होनेसे अंधकारका समूह नष्ट होता है। इसको बृहत्काञ्चनाभ्र कहते हैं ॥ ६२–६६ ॥

शिलाजत्वादि लोह।

शिलाजतु मधुव्योषताप्यं लौहरजस्तथा।
क्षीरेण लोहितस्याशु क्षयं क्षयमवाप्नुयात् ॥ ६७ ॥

शिलाजीत, मुलैठी, सोंठ, पीपल, कालीमिरच और सोनामाखी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहभस्मका चूर्ण सबके बराबर लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके यथोचित मात्रा दूधके साथ लेनेसे क्षय रोग नष्ट होता है। इसको शिलाजत्वादि लोह कहते हैं ॥ ६७ ॥

कुमुदेश्वर रस।

हेमभस्म रसभस्म गन्धकं मौक्तिकन्तु रसटंकणं तथा। तारकं गरुडसत्त्वतुल्यकं काञ्जिकेन परिमर्द्य गोलकम् ॥ ६८ ॥ मृत्स्नया च परिवेष्ट्य शोषितं भाण्डके लवणगेऽथ पाचयेत्। एकरात्रमृदुसंपुटेन वा सिद्धिमेति कुमुदेश्वरो रसः ॥ वल्लमस्य मरिचैर्घृतप्लुतै राजयक्ष्मपरिशान्तये पिबेत् ॥ ६९ ॥

सोनाभस्म, रससिन्दूर या पारद भस्म, गन्धक, मोती, शुद्ध पारा, सुहागा, चांदी भस्म और सोनामाखीभस्म यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर कांजीमें पीसकर गोलासा बना लेवे। फिर इस पिंडको मट्टीमें लपेटकर धूपमें सुखाकर नमकसे भरी हुई हांडीमें रखकर एक दिन तक मन्द मन्द अग्निसे पकावे। जब शीतल होजाये तब इसमेंसे औषधिको निकालकर चूर्ण कर ले। दो रत्ती परिमाण इस औषधिको कालीमिरचोंके चूर्ण और घृतके साथ सेवन करे तो राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है। इसको कुमुदेश्वर रस कहते हैं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

यक्ष्मकेसरी रस।

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैस्तुल्यं लौहपारदसिन्दुरम् ॥
मधुना क्षयरोगांश्च हन्त्ययं यक्ष्मकेसरी ॥ ७० ॥

हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, इलायची, जायफल और लौंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, लोहभस्म ९ भाग, रससिन्दूर नव भाग और स्वर्णसिन्दूर ९ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करे तो क्षयरोग नष्ट होता है। इसको यक्ष्मकेसरी रस कहते हैं ॥ ७० ॥

बृहच्चन्द्रामृत रस।

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥ ७१ ॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात्स्वर्णं तोलकसंमितम्।
ताम्रञ्च तोलकं दद्याद्विशुद्धं मारितं भिषक् ॥ ७२॥
लौहं कर्षं क्षिपेत्तत्र वृद्धदारकजीरकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरकञ्च बला तथा ॥ ७३ ॥

मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतस्वर्जरसं तथा ॥ ७४ ॥
शाणभागं समादाय चैकीकृत्य प्रयत्नतः ।
मधुना मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम् ॥ ७५ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पल्या मधुना सह ॥ ७६ ॥

पारा १ कर्ष, गन्धक १ कर्ष, अभ्रकभस्म आधा पल, कपूर ४ मासे, सोनाभस्म १ तोला परिमाण लेवे, तांबाभस्म १ तोला, लोहेकी भस्म १ तोला तथा विधारेके बीज, जीरा, विदारीकंद, शतावर, तालमखाना, खिरेंटी, कौंचके बीज, कंघी, जायफल, जावित्री, लौंग, भांगके बीज और सुफेद राल यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर सहतमें खूब खरल करे, फिर चार चार रत्तीकी गोली बनाकर पीपलके चूर्ण और सहतके साथ सेवन करावे। इससे क्षयरोग नष्ट होता है ॥ ७१–७६ ॥

महामृगांक ।

निरुत्थभस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम् ।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपुच्छं चतुर्गुणम् ॥७७॥
मृतताप्यञ्च पञ्चांशं तारभस्म चतुर्गुणम् ।
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च टंकणम् ॥ ७८ ॥
सर्वमेकत्र संमर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥ ७९ ॥
लवणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।
तन्मुखन्तु मृदा रुद्ध्वा पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ८० ॥

आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःषष्टिविभागतः।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥ ८१ ॥

सोनेकी भस्म एक तोला, रससिन्दूर या पारदभस्म दो तोले, मोतीकी भस्म ३ तोले, गंधक ४ तोले, सोनामाखी भस्म ५ तोले, चांदीकी भस्म ४ तोले, मूंगेकी भस्म ७ तोले और सुहागा २ तोले, इन सब औषधियोंको बिजोरे नींबूके रसमें तीन दिन तक खरल करके गोला बना धूपमें सुखा लेवे। पश्चात् इस गोलेको नमकसे भरी हुई हांडीमें रखकर और उसका मुख अच्छे प्रकारसे बंद करके चार प्रहर तक मंद मंद अग्निके द्वारा पकावे। शीतल होनेपर समस्त औषधिका चौसठवां भाग हीरेकी भस्म अथवा जो हीरा न मिले तो वैक्रान्तकी भस्म सोलहवाँ भाग मिलावे ॥ ७७-८१ ॥

महामृगांकः खलु सिद्ध एष श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्। वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाज्ययुक्तः सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ॥ ८२ ॥ अत्रोपचाराः कर्त्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः। बल्यं वृष्यञ्च भोक्तव्यं त्यजेत्सूतविरोधि यत् ॥ ८३ ॥ यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगदं गुल्मं तथा विद्रधिं, मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिश्च मूर्च्छां भ्रमिम्। अष्टावेव महागदान्गरगदान्पाण्ड्वामयान्कामलान्, पित्तोत्थांश्च समग्रकान्बहुविधानन्यांस्तथा नाशयेत् ८४

यह सिद्ध महामृगाङ्क श्रीनन्दिनाथका प्रगट किया हुआ है। इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर कालीमिरचोंके चूर्ण और घृतके द्वारा अथवा पीपलके चूर्णके द्वारा सेवन कराकर क्षयरोगोक्त

आहार और व्यवहारादि प्रयोग करे । बल और वीर्यवर्द्धक समस्त पदार्थ भक्षण करे और रसविरोधी सकल पदार्थोंको त्याग देवे । इस औषधिके सेवन करनेसे अनेक उपद्रव युक्त राजयक्ष्मा, ज्वर, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, खाँसी, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, आठ प्रकारके महारोग, विषरोग, पांडुरोग, कामला, पित्तजन्य अनेक प्रकारके रोग और इसके अतिरिक्त अन्यान्य अनेक रोग नष्ट हो जाते हैं । इसको महामृगांक कहते हैं ॥ ८२–८४ ॥

क्षयकेसरी ।

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहञ्च ताम्रकम् ।
मृतं नागं च कांस्यं च मण्डूरं विमलं मृतम् ॥ ८५ ॥
वङ्गं खर्परकं तालं शंखटंकणमाक्षिकम् ।
मृतं स्वर्णं मृतं कान्तं वैक्रान्तं विद्रुमौक्तिकम् ॥ ८६ ॥
वराटिका च माणिक्यं राजपट्टञ्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र संचूर्ण्य खल्लमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ८७ ॥
मर्दयेत्त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक्पृथक् ॥ ८८ ॥

अभ्रकभस्म, रससिंदूर, लोहाभस्म, तांबाभस्म, सीसाभस्म, काँसीभस्म, मण्डूरभस्म, रूपामाखीकी भस्म, वंगभस्म, खपरिया, हरितालभस्म, शंखकी भस्म, सुहागेकी भस्म, सोनामाखीभस्म, सोनाभस्म, कान्तलोहभस्म, वैक्रान्तभस्म, मूंगाभस्म, मोतीभस्म, कौडीकी भस्म, माणिक, राजावर्त्त और गन्धक यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेवे । सबको एकत्र पीसकर चित्रक और आककी जडके रसमें खरल करके फिर दुबारा उक्त रसके द्वारा अलग अलग भावना देकर तीन दिन तक लघुपुटमें पकावे । इस प्रकार पूर्वोक्त नियमानुसार तीन वार भावना देकर तीन वार पुटपाक करे ॥ ८५–८८ ॥

मातुलुंगवरावह्निस्वम्लवेतसमार्कवम् ।
इयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥ ८९ ॥
वातपित्तकफोत्क्लेशान् ज्वरान् संमर्दितानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥ ९० ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकार्द्रकसंयुक्तस्तद्वद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ९१ ॥
सेवितो हन्ति रोगान्हि व्याधिवारणकेसरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमिं जयेत् ॥ ९२ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥ ९३ ॥

पश्चात् इसको लोहेके पात्रमें डालकर बिजौरे नींबू, त्रिफला, चीता, अमलवेत, भांगरा, कनेर और अदरखके रसमें मन्द मन्द अग्निसे पकावे । इस औषधिके सेवन करनेसे वातपित्त, कफोत्क्लेश, ज्वर, सन्निपात, सर्वांगव्याप्त वातरोग और एकांगाश्रित वातरोग नष्ट होते हैं। इस औषधिको मिश्री और पीपलके चूर्णके साथ, मुलैठी और अदरखके रसके साथ, अथवा व्याधिनाशक अन्यान्य औषधियोंके साथ सेवन करनेसे ग्यारह प्रकारका क्षय, शोष, पांडु, क्रिमि, पांच प्रकारकी खाँसी, श्वास, प्रमेह, मेद, उदररोग, अश्मरी, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म और हलीमक प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं । तथा बल, वीर्य, मेधा और रसकी वृद्धि होती है ॥ ८९-९३ ॥

यक्ष्मारोगपर योगत्रय ।

चन्दनं मधुकं क्षीरं पीतं रुधिरवान्तिजित् ।
भृङ्गराजस्य पत्रन्तु चूर्णितं मधुना सह ॥ ९४ ॥
गोलकं धारयेदास्ये कासारिष्टप्रशान्तये ।
पिबेद्वान्तिप्रशान्त्यर्थं क्षौद्रैश्छिन्नरुहारसम् ॥ ९५ ॥

लाल चन्दन और मुलहठीके चूर्णको दूधके साथ सेवन करनेसे रुधिरकी वमन दूर होती है । भांगरेके पत्तोंके चूर्णको सहतमें खरल करके गोलीसी बनाकर मुखमें धारण करनेसे कासजनित अरिष्टके लक्षण दूर होते हैं । गिलोयके रसको सहतके साथ सेवन करनेसे वमन शांत होती है ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

रजतादि लोह ।

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं,
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं लोहमाज्येन युक्तम् ।
लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः,
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥९६॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे राजयक्ष्माधिकारः ।

स्वच्छ रूपेकी भस्म १ भाग, अभ्रकभस्म १ भाग, त्रिकुटा २ भाग, त्रिफला २ भाग और लोहाभस्म २ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके प्रातःकाल घृतमें मिलाकर चाटनेसे राजयक्ष्मा, पांडु, उदररोग, बवासीर, श्वास, खाँसी, नेत्रजनित पीड़ा और अनेक प्रकारके पित्तजनित रोग नष्ट होते हैं । इसको रजतादि लोह कहते हैं ॥ ९६ ॥

इति राजयक्ष्मचिकित्सा समाप्त ।

अथ कासरोगचिकित्सा।

बृहद्रसेन्द्र गुटिका।

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च विषस्य च॥ १॥
मनःशिलायाः क्षाराणां बीजस्य कनकस्य च।
मरीचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत्॥२॥
जयन्ती चित्रकं मानं खण्डकर्णोऽथ मण्डुकी।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजार्द्रसिन्धुकम्॥३॥
एतेषां स्वरसेनापि कर्षमात्रेण मर्दयेत्।
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ४॥
आर्द्रकस्वरसेनैव पञ्चकासान् व्यपोहति।
हन्ति हिक्कां तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम्॥५॥
अग्निमान्द्यारुची शोथमुदरं पाण्डुकामलाम्।
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रसादिनी॥ ६॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रककी भस्म, तांबाभस्म, हरितालभस्म, लोहाभस्म, विष, मैनशिल, जवाखार, सज्जी, सुहागा, धतूरेके बीज और काली मिरच वह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष लेवे। पश्चात् सबको एकत्र पीसकर जयन्ती, चित्रककी जड़, मानकंद, खंडकर्ण, मंडूकी, भांगके पत्ते, भांगरेके पत्ते, कुकुरभांगरेके पत्ते, अदरख और सम्हालू इन प्रत्येकके एक एक कर्ष परिमाण रस लेकर उसमें खरल करके मटरकी बराबर गोली बना लेवे। अदरखके रसके साथ इन गोलियोंके सेवन करनेसे पांचप्रकारकी खाँसी दूर होती है। इससे हिक्का, श्वास, राजयक्ष्मा, भगन्दर, मंदाग्नि, अरुचि, शोथ, उदररोग, पाण्डु और कामला रोग नष्ट होते हैं। यह रसायन है, वीर्यवर्द्धक, बल और वर्ण वर्द्धक है॥ १-६॥

अमृतार्णव रस ।

पारदं गन्धकं शुद्धं मृतलौहञ्च टंकणम् ।
रास्नाविडंगत्रिफला देवदारु च चित्रकम् ॥ ७ ॥
अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषञ्चैव विमर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं वातकासार्तः सेवयेदमृतार्णवम् ॥ ८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, चित्रककी जड़, गिलोय, पद्माख, सहत और विष इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । प्रातःकाल इस औषधिके सेवन करनेसे वातज खांसी दूर होती है । इसको अमृतार्णव रस कहते हैं । (कोई कोई शहदको अनुपानमें ही लेते हैं शहदसे गोली नहीं बनाते हैं) ॥ ७ ॥ ८ ॥

पित्तकासान्तक रस ।

भस्मताम्राभ्रकान्तानां कासमर्दत्वचो रसैः ।
मणिजैर्वेतसाम्लैश्च दिनं मर्द्यं सुपिण्डितम् ॥ ९ ॥
निष्कार्द्धं पित्तकासार्तो भक्षयेच्च दिनत्रयम् ।
कासश्वासाग्निमान्द्यञ्च क्षयञ्चापि निहन्त्यलम् १०॥

कान्तलोहभस्म,तांबाभस्म और अभ्रकभस्म यह सब औषधिसमान भाग लेकर कसौंदीके रसमें, अगस्तियाके रसमें और अमलवेतके रसमें खरल करके चार रत्ती परिमाण औषधि पित्तकाससे पीड़ित रोगीको तीन दिन तक सेवन करावे । इससे खांसी, श्वास, मंदाग्नि और क्षयरोग नष्ट होते हैं । इसको पित्तकासान्तक रस कहते हैं ॥ ९ ॥ १० ॥

काससंहारभैरव रस ।

रसगन्धकताम्राभ्रशंखटंकणलौहकम् ।
मरिचं कुष्ठतालीशजातीफललवंगकम् ॥ ११ ॥

कार्षिकं चूर्णमादाय दण्डेनामर्द्य भावयेत् ।
भेकपर्णी केशराजनिर्गुण्डी काकमाचिका ॥ १२ ॥
द्रोणपुष्पी शालपर्णी ग्रीष्मसुन्दरकं तथा ।
भार्ङ्गी हरीतकी वासा कार्षिकैः पत्रजै रसैः ॥१३॥
वटिकां कारयेद्वैद्यः पञ्चगुञ्जाप्रमाणतः ।
वातजं पैत्तिकं कासं श्लैष्मिकं चिरजं तथा ॥१४ ॥
श्रीमद्गहननाथेन काससंहारभैरवः ।
रसोऽयं निर्मितो यत्नाल्लोकरक्षणहेतवे ॥ १५ ॥
वासाशुण्ठीकण्टकारी–क्वाथेन पाययेद्बुधः ।
कासं नानाविधं हन्ति श्वासमुग्रमरोचकम् ॥
बलवर्णकरः श्रीदः पुष्टिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ १६ ॥

पारा, गंधक, तांबा, अभ्रकभस्म, शंखकी भस्म, सुहागा, लोह इन सबकी भस्म, कालीमिरच, कूठ, तालीशपत्र, जायफल और लौंग यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे । इन सबको एकत्र पीसकर मंडूकपर्णी, कुकुरभांगरा, सम्हालू, मकोय, गूमा, शालपर्णी, ग्रीष्मसुन्दर, भारंगी, हरड़ और अडूसा इन प्रत्येकका रस एक एक कर्ष परिमाण लेकर उसमें भावना देवे, पश्चात् उसकी पांच पांच रत्तीकी गोली बना लेवे । इसके सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और बहुत दिनोंका पुराना कास रोग नष्ट होता है। इसको अडूसे, सोंठ और कटेरीके क्वाथके साथ सेवन करनेसे अनेक-प्रकारकी खाँसी, उग्र श्वास और अरुचि नष्ट होकर बल, वर्ण, लक्ष्मी, पुष्टि और कान्तिकी वृद्धि होती है । श्रीमान् गहनानन्दनाथने लोककी रक्षाके लिये यह औषधि कही है। इसको काससंहारभैरव रस कहते हैं ॥ ११–१६ ॥

लक्ष्मीविलास रस ।

शुद्धसूतं सतालञ्च तालार्द्धं रसखर्परम् ।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलं पलम्॥१७॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनः पुनः ॥ १८ ॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजपत्रं लवंगकम् ।
यमानीजीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १९ ॥
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम् ।
छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ॥२०॥
शीताम्बुना पिबेद्धीमान्सर्वकासनिवृत्तये ।
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरंपथ्यंस्यात् स्निग्धभोजनम्२१
क्षयकासं तथा श्वासं सज्वरं वाथ विज्वरम् ।
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ॥ २२ ॥
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिञ्च कारयेत् ।
वर्जयेच्छाकमम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ २३ ॥

शुद्ध पारा १ पल, हारिताल १ पल, खपरिया आधा पल, वंगभस्म, तांबाभस्म, अभ्रकभस्म, कान्तलोहभस्म, कांसा इनकी भस्म और गन्धक कह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे। सबको एकत्र पीसकर कुकुरभांगरेके रसमें तीन भावना देवे; तदनंतर कुलथीके रसमें तीन भावना देवे। फिर इलायची, जायफल, तेजपात, लौंग, अजवायन, जीरा औ त्रिकुटा तथा त्रिफला यह सब समान भाग लेकर क्काथ बना लेवे, फिर उस क्काथमें भावना देकर चनेकी बराबर गोली बनाकर छायामें सुखा देवे। सर्व प्रकारकी खाँसीको दूर करनेके लिये शीतल जलके साथ इस औषधिका सेवन करना चाहिये और

ऊपरसे मछली, मांस, दूध और स्निग्ध अन्न पथ्य देवे। इससे क्षय, खाँसी, सज्वर अथवा विगतज्वर श्वास, हलीमक, पांडु, शोथ, शूल, प्रमेह और अर्शरोग नष्ट होकर बलकी वृद्धि होती है। इस औषधिके सेवन करनेपर शाक, अम्ल और भुने हुए पदार्थ भक्षण न करे। तथा अग्निका सेवन त्याग देवे। इसको लक्ष्मीविलास रस कहते हैं ॥१७-२३॥

सर्वेश्वर रस।

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याभ्रकं तथा।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ २४ ॥
त्र्यूषणानि लवंगैला टंकणं हेमतुल्यकम्।
कण्टकार्या रसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ २५ ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः सप्तधा भावयेत्पृथक्।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥ २६ ॥

पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, सोनाभस्म, त्रिकुटा, लौंग, इलायची और सुहागा यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेवे; सबको एकत्र कर २ प्रहर मर्दन करे; पश्चात् कटेरीके रसमें २१ वार, सहिंजनेके बीजोंके रसमें सात वार और अदरखके रसमें सात भावना देवे। बहेडेकी त्वचाके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे खाँसी, श्वास और क्षयरोग नष्ट होते हैं। इसको सर्वेश्वर रस कहते हैं ॥ २४-२६ ॥

शृङ्गाराभ्र।

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं शाणमात्रं यद-
न्यत्, कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा तेजपत्रं

लवङ्गम् । मांसीतालीशचोचे गजकुसुमगदं धातकी चेति तुल्यं, पथ्या धात्री विभीतं त्रिकटुरथ पृथक् चार्द्धशाणं द्विशाणम् ॥२७॥ एला जातीफलाख्यं क्षितितलविधिना शुद्धगन्धाश्मकोलं, कोलार्द्धं पारदस्य प्रतिपदविहितं सर्वमेकत्र मिश्रम् । पानीयेनैव कार्याः परिणतचणकस्विन्नतुल्याश्च वट्यः प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च कतिचिच्छृङ्गवेर सपर्णम् ॥ २८ ॥ पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति क्षिप्रमेतान्विकारान्, कोष्ठे दुष्टाग्निजातान् ज्वरमुदररुजो राजयक्ष्म क्षयं च । कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं मेहमेदोविकारान्, छर्दिं शूलाम्लपितं तृषमपि महतीं गुल्मजालं विशालम् ॥ २९ ॥ पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान्पीनसं प्लीहरोगान्, हन्यादामाशयोत्थान्कफपवनकृतान्पित्तरोगानशेषान् । बल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः सर्वरोगे प्रशस्तः, पथ्यं मांसैश्च यूषैर्घृतपरिलुलितैर्गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ३० ॥ भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया दीयमानं मुदा यच्छृंगाराभ्रेणकामी युवतिजनशता भोगयोगादतुष्टः । वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिपयचित्स्वेच्छया भोज्यमन्यद्दीर्घायुः काममूर्त्तिर्गतवलिपलितोमानवोऽस्यप्रसादात्॥३१॥

कृष्णाभ्रकभस्म दो पल, कपूर, जावित्री, सुगंधवाला, गजपीपल, तेजपात, लौंग, बालछड, तालीशपत्र, दालचीनी, नागकेशर,

कूठ और धायके फूल यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे; हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच और पीपल यह प्रत्येक औषधि तीन तीन मासे, इलायची और जायफल यह प्रत्येक औषधि आठ आठ मासे, पाताल यंत्रमें शुद्ध किया हुआ गंधक ८ मासे और पारा ४ मासे लेवे; प्रथम पारे गंधककी कज्जली करे फिर सबको एकत्र जलमें पीसकर सीजे चनेकी बराबर गोली बना लेवे। इस औषधिको प्रातःकाल अदरख और पानके रसके द्वारा सेवन करके ऊपरसे जल पान करे; इसकी मात्रा ४ गोली तक है। इसके भक्षण करनेसे कोष्ठगत मंदाग्निजनित रोगसमूह, ज्वर, उदररोग, राजयक्ष्मा, क्षय, खांसी, श्वास, शोथ, नेत्ररोग, प्रमेह, मेदरोग, वमन, शूल, अम्लपित्त, तृषा, गुल्म, पांडुता, रक्तपित्त, विषजरोग, पीनस, प्लीहारोग, आमाशयजन्य समस्त रोग और कफ, वायु तथा समस्त पित्तजनित रोग नष्ट होते हैं। यह औषधि बलकारक वीर्यवर्द्धक वृद्ध शरीरको नवीन करनेवाला और सर्व प्रकारके रोगोंमें उपयुक्त फलदायक है। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें घृतमें पके हुए मांसका यूष, बहुतसा गायका दूध और सुन्दरी स्त्रीके द्वारा प्रदान किया हुआ यथेष्ट भोजन करे। कामी मनुष्य इस औषधिका सेवन करके सैकड़ों युवती स्त्रियोंके साथ सम्भोग करनेसे भी तृप्त नहीं होता है। इस औषधिके सेवन करनेपर कुछ दिनोंतक अम्ल रसवाले पदार्थ और शाकको त्याग देवे। अन्यान्य खाद्य द्रव्योंको इच्छानुसार भोजन करे। मनुष्य इस औषधिके प्रभावसे वली और पलित रहित हो जाते हैं तथा कामदेवके समान रूपवान्, प्रभावयुक्त और दीर्घायु होते हैं। इसको शृंगाराभ्र कहते हैं ॥ २७-३१ ॥

सार्वभौम रस।

जीर्णं सुवर्णं लौहं वा यद्यत्रैव प्रदीयते।
तदायं सर्वरोगाणां सार्वभौमो न संशयः ॥ ३२ ॥

शृंगाराभ्रकमें जो औषधि कही हैं उनमें यदि पारेकी बराबर सोनाभस्म अथवा लोहाभस्म मिला लिया जाय तो उसको सार्वभौम रस कहते हैं; यह सब रोगनाशक है ॥ ३२ ॥

तरुणानन्द रस ।

कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च ।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शिलातलशुभे दृढे ॥ ३३ ॥
बिल्वाग्निमन्थः श्योनाकः काश्मरी पाटला बला ।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥ ३४ ॥
विदारी शतमूली च कर्षैरेषां पृथग्रसैः ।
मर्दयित्वा पुनर्वासास्वरसैर्दशतोलकैः ॥ ३५ ॥
मर्दयेत्तत्र शुद्धाभ्रं रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।
रसस्यार्द्धञ्च कर्पूरं तत्रैव दापयेद्भिषक् ॥ ३६ ॥
जातीकोषफले मांसी तालीशैला लवंगकम् ।
चूर्णं कृत्वा प्रयत्नेन माषमात्रं क्षिपेत्पृथक् ॥३७॥
विदारीस्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं क्षयञ्चोग्रमुरःक्षतम् ॥ ३८ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं स्वराघातमरोचकम् ।
कामलां पांडुरोगञ्च प्लीहानं सहलीमकम् ॥३९॥
जीर्णज्वरं तृषां गुल्मं ग्रहणीमामसंभवाम् ।
अतिसारञ्च शोथञ्च कुष्ठानि च भगन्दरम् ॥४०॥
नाशयेदेष विख्यातस्तरुणानन्दसंज्ञितः ।
रसायनवरो वृष्यश्चक्षुष्यः पुष्टिवर्द्धनः ॥ ४१ ॥

सहस्रं याति नारीणां भक्षणादस्य मानवः ।
क्षीणता न च शुक्रस्य न च बुद्धिबलक्षयम् ॥४२॥
द्विमाषमुपयोगेन निहन्ति कामलागदान् ।
शुक्रसन्दीपनं कृत्वा ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ४३॥
नारिकेलजलेनैव भक्ष्योऽयं च रसायनः ॥
क्षीरानुपानाद्वृष्योऽयं न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥ ४४ ॥

शुद्ध पारा २ कर्ष और शुद्ध गंधक २ कर्ष लेवे, इन दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बना लेवे। पश्चात् बेलगिरी, अरणी, सोनापाठा, कुंभेर, पाढ, खिरैंटी, नागरमोथा, पुनर्नवा, आमले, कटेरी, अडूसेके पत्ते, विदारीकंद और सतावर इन प्रत्येकके एक एक कर्ष रसके द्वारा अच्छे प्रकारसे खरल करके पश्चात् दश तोले परिमाण अडूसेका रस लेकर उसमें खूब खरल करे। फिर इसमें अभ्रक ४ कर्ष, कपूर १ तोला, जावित्री १मासा, जायफल १मासा, बालछड़ १मासा, तालीशपत्र १मासा, इलायची १ मासा और लौंग १ मासा लेकर सबको एकत्र विदारीकंदके स्वरसमें पीसकर गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे अत्यन्त उग्र राजयक्ष्मा, क्षत, उरक्षत, पांच प्रकारकी खांसी, श्वास, स्वरभेद, अरुचि, कामला, पांडुरोग, प्लीहा, हलीमक, जीर्णज्वर, तृषा, गुल्म, आमजन्य संग्रहणी, अतिसार, शोथ, कुष्ठ और भगन्दर रोग नष्ट होते हैं, यह औषधि उत्तम रसायन है। वीर्यको बढ़ानेवाली, नेत्रोंको हितकारी और पुष्टिको बढ़ानेवाली है। इसका सेवन करनेवाला मनुष्य सौ स्त्रियोंके साथ विषय करनेपर भी वीर्यक्षय नहीं होता तथा बुद्धि और बलकी कभी न्यूनता नहीं होती। इस औषधिको दो मासे परिमाण सेवन करनेसे कामला रोग नष्ट होता है; इससे शुक्रकी वृद्धि होकर ज्वर नष्ट होता है। इसको नारियलके जलके अनुपानके साथ सेवन करनेसे, दूधके अनुपानके साथ सेवन करनेसे वीर्यकी वृद्धि होती है। इसको तरुणानन्द रस कहते हैं ॥ ३२-४४ ॥

महोदधि रस ।

सूतकं गन्धकं लौहं विषश्चैव वराङ्गकम् ।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम् ॥४५॥
त्रिकटु भद्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम् ।
रेणुकामलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ ४६ ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
भावना तत्र दातव्या गजपिप्पलिकाम्बुभिः ॥४७ ॥
चणमात्रा वटी कार्या संग्रहग्रहणीहिता ।
कासं हन्ति तथा श्वासमर्शांसि च भगन्दरम्॥४८॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कर्णरोगं कपालिकाम् ।
हरेत्संग्रहणीरोगानष्टौ च जाठराणि च ॥
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव चतुर्विधमजीर्णकम् ॥ ४९ ॥
न चान्नपाने परिहार्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु ।
यथेष्टचेष्टाभिरतः प्रयोगे नरो भवेत् काञ्चन-
राशिगौरः ॥ ५० ॥

शुद्ध पारा, गन्धक, लोहभस्म, विष, दालचीनी, तांबाभस्म, वंगभस्म और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, वायविडंग, नागकेशर, रेणुका, आमले और पीपलामूल यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग इन सब औषधियोंको एकत्र मर्दन करके गजपीपलके रसकी भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे। यह गोली ग्रहणी रोगमें अत्यन्त हितकारी है। इस औषधिके सेवन करनेसे खांसी, श्वास, बवासीर, भगन्दर, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कर्णरोग, कपालिका रोग, संग्रहणी, आठ प्रकारके उदर रोग, बीस प्रकारके प्रमेह और चारप्रकारका अजीर्ण रोग ये सब नष्ट होते हैं,

इस औषधिके सेवन करनेपर पान और भोजनका कुछ नियम नहीं है। शीत पवन और सूर्यकी धूपका सेवन, स्त्रीप्रसंग आदिका कुछ परहेज नहीं है। इसपर यथेष्ट आहार और विहार करे। इस औषधिके सेवन करनेसे मनुष्य सुवर्णके समान वर्णवाला हो जाता है। इसको महोदधि रस कहते हैं॥ ४९-५० ॥

जया गुटिका।

सूतकं गन्धकं लौहं विषं वत्सकमेव च।
विडङ्गं केशरं मुस्तमेलाग्रन्थिकरेणुकम् ॥ ५१ ॥
त्रिकटु त्रिफला चित्रं शुद्धं जैपालबीजकम्।
एतानि समभागानि द्विगुणो गुड उच्यते ॥ ५२ ॥
तिन्तिडीबीजमानेन प्रातःकाले च भक्षयेत्।
कासं श्वासं क्षयं गुल्मं प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ ५३ ॥
अजीर्णं ग्रहणीरोगं शूलं पाण्ड्वामयन्तथा।
अपाने हृदये शूले वातरोगे गलग्रहे ॥ ५४ ॥
अरुचावतिसारे च सूतिकातङ्कपीडिते।
जयाख्या निर्मिता ह्येषा भक्षणीया सुरैरपि ॥५५॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, विष, कुड़ेकी छाल, बायविडंग, नागकेशर, नागरमोथा, इलायची, पीपलामूल, रेणुका, त्रिफला, त्रिकुटा, चीतेकी जड़ और शुद्ध जमालगोटे यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सब चूर्णसे दुगुना पुराना गुड़ लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर इमलीके बीजोंकी समान गोली बनाकर प्रातःकाल नित्य सेवन करनेसे कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी, शूल और पांडुरोग नष्ट होते हैं। इस औषधिका गुह्यशूल, हृदयशूल, वातरोग, गलेकी पीड़ा, अरुचि, अतिसार और सूतिकारोगमें

प्रयोग करे । यह औषधि देवतालोकोंको भी सेवन करनी चाहिये। इसको जया गुटिका कहते हैं ॥ ५१-५५ ॥

विजया गुटिका ।

सूतकं गंधकं लौहं विषं चित्रकपत्रकम् ।
विडंगं रेणुका मुस्तमेलाकेशरग्रन्थिकम् ॥ ५६ ॥
फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्वभस्म तथैव च ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥ ५७ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
सूतायां ग्रहणीरोगे शूले पाण्ड्वामये तथा ॥
हस्तपादादिदाहे च गुटिकेयं प्रशस्यते ॥ ५८ ॥

पारा, गन्धक, लोहभस्म, विष, चित्रकके पत्ते, वायविडंग, रेणुका, नागरमोथा, इलायची, नागकेशर, पीपलामूल, त्रिफला, त्रिकुटा और ताम्रभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सब चूर्णके बराबर पुराना गुड़ लेवे । इन सबको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे खाँसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी, शूल, पांडुरोग तथा हाथ और पावोंकी दाह दूर होती है । इसको विजया गुटिका कहते हैं ॥ ५६-५८ ॥

स्वच्छन्दभैरव रस ।

रसमेकं द्विधा गंधं गंधतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ ५९ ॥
मूषिकायां निरुध्याथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति वल्लमेनं प्रयोजयेत् ॥ ६० ॥
ग्रहण्यां संग्रहण्याञ्च कासे श्वासे विशेषतः ।
उग्रासु ज्वरतन्द्रासु निद्रास्वल्पासु योजयेत् ॥ ६१ ॥

अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम्।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ ६२ ॥

पारा १ भाग, गन्धक २ भाग इन दोनों औषधियोंको एकत्र खरल करके ज्वालामुखीके रसमें पांच दिन तक खरल करे। फिर मूषामें स्थापन करके रात्रिके समय मध्यम अग्निसे पुटमें पकावे। इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर संग्रहणी, खांसी, श्वास, उन्मादयुक्त उग्र ज्वर और निद्राकी अल्पता आदि रोगोंमें प्रयोग करे। इसके अतिरिक्त अन्यान्य रोगोंमें भी यह औषधि प्रयुक्त करनी चाहिये। इससे तुष्टि, पुष्टि और शरीरमें कोमलता उत्पन्न होती है। इसको स्वच्छन्दभैरव रस कहते हैं ॥ ५९-६२ ॥

रसगुटिका।

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत्।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागा विभीतकः॥६३॥
पञ्चभागस्त्वामलाश्च षड्गुणाः सप्तभागिका।
भार्ङ्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्यं बब्बोलजैर्द्रवैः ॥ ६४ ॥
एकविंशतिवारञ्च मधुना गुटिका कृता।
विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
कासं श्वासं हरेत्क्षुद्राक्काथन्तदनु कृष्णया ॥ ६५ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, पीपल ३ भाग, हरड़ ४ भाग, बहेड़ा ५ भाग, आमले ६ भाग और भारंगी ७ भाग लेवे, इन सबको एकत्र बबूरके रसमें २१ वार भावना देकर सहतमें खरल करके बहेड़की समान गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक एक गोली प्रातःकाल सेवन करे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे खाँसी और श्वास रोग नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवनके अन्तमें पीपलके चूर्णके साथ कटेरीके रसको पान करे। इसको रसगुटिका कहते हैं ॥ ६३-६५ ॥

रसेन्द्र गुटिका ।

माक्षिकञ्च शिखिग्रीवमभ्रकं तालकं तथा ।
एतांस्तु मिलितान् सर्वान्भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥ ६६ ॥
रक्तिद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेद्गुटिकां भिषक् ।
जीर्णान्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६७ ॥
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत् ।
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी कृशानां पुष्टिवर्द्धिनी ॥ ६८ ॥
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी ।
वह्निसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरोचकविनाशिनी ॥ ६९ ॥

सोनामाखीभस्म, शुद्ध तूतिया, अभ्रकभस्म और हरताल यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर एकत्र खरल करके अदरखके रसकी भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बनाकर दूध और मांसके भक्षण करनेवाला मनुष्य भोजनके जीर्ण होनेपर भक्षण करे। इन गोलियोंसे पांच प्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डु, क्रिमि और ज्वररोग नष्ट होते हैं। यह औषधि कृश मनुष्योंके लिये पुष्टिकारक, शुक्रवर्द्धक, अम्लपित्तनाशक, अग्निप्रदीपक और अरुचिको दूर करनेवाली है। इसको रसेन्द्रगुटिका कहते हैं ॥ ६६–६९ ॥

पुरन्दरवटी ।

सूतकाद्द्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम् ।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥ ७० ॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः ।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु ॥ ७१ ॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्द्धिनी ।

इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका ॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते ॥७२॥

पारा १ भाग और गंधक २ भाग लेवे, दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर उसमें त्रिकुटा ३ भाग और त्रिफला ३ भाग मिलावे। फिर बकरीके दूधकी भावना देकर गोली बनाकर अदरखके साथ सेवन करे और ऊपरसे थोड़ा शीतल जल पीवे। यह औषधि खाँसी और श्वासको हरनेवाली और अग्निको दीपन करनेवाली है। इस योगवाही औषधिको नित्य प्रातःकाल सेवन करनेसे वृद्ध मनुष्य भी तरुणके समान होजाता है तथा सौ स्त्रियोंसे रमण करनेको समर्थ होता है। इसको पुरन्दरवटी कहते हैं ॥ ७०-७२ ॥

कासांतक रस।

सूतं गन्धं विषञ्चैव शालपर्णी च धान्यकम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं मरीचकम् ॥
गुञ्जाचतुष्टयं खादेन्मधुना कासशान्तये ॥ ७३ ॥

पारा, गंधक, विष, शालिपर्णी और धनिया यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और कालीमिरचोंका चूर्ण पांच भाग लेवे, सबको एकत्र पीसकर चार २ रत्ती परिमाण सहतके साथ सेवन करनेसे कासरोग नष्ट होता है। इसको कासान्तक रस कहते हैं ॥ ७३ ॥

कासकुठार रस।

हिंगुलं मरिचं गन्धं सव्योषं टंकणन्तथा।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैः सन्निपातं सुदारुणम् ॥
कासं नानाविधं हन्ति शिरोरोगं विनाशयेत् ॥७४॥

सिंगरफ, काली मिरच, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल और सुहागा। यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, सबको एकत्र बारीक खरल करके दो रत्ती परिमाण औषधि अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे

दारुण सन्निपातरोग नष्ट होता है । इससे अनेक प्रकारकी खांसी और शिरोरोग नष्ट होते हैं । इसको कासकुठार रस कहते हैं ॥ ७४ ॥

चन्द्रामृत लोह ।

त्रिकटु त्रिफला धान्यं चव्यं जीरकसैन्धवम् ।
दिव्यौषधिहतस्यापि तत्तुल्यमयसो रजः ॥७५॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम् ॥७६॥
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसाप्लुताम् ।
नीलोत्पलरसेनैव कुलत्थस्वरसेन च ॥ ७७ ॥
निहन्ति विविधं कासं दोषत्रयसमुद्भवम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव गरदोषसमुद्भवम् ॥ ७८ ॥
सरक्तमथ नीरक्तं ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
भ्रमतृड्दाहशूलघ्नं रुच्यं वह्निप्रदीपनम् ॥ ७९ ॥
बलवर्णकरं वृष्यं जीर्णज्वरविनाशनम् ।
इदं चन्द्रामृतं लौहं चन्द्रनाथेन निर्मितम् ॥ ८० ॥

त्रिकुटा, त्रिफला, घनिया, चव्य, जीरा और सेंधानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, मैनशिलके द्वारा मारा हुआ लोहा दश भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें खरल करके नौ नौ रत्तीक गोलियां बना लेवे । प्रातःकाल पवित्र होकर अमृतेश्वरीका ध्यान करके एक एक गोली लाल कमोदिनीके रसके द्वारा अथवा नीलोत्पलके रसके द्वारा, अथवा कुलथीके द्वारा सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे अनेक प्रकारकी खाँसी, त्रिदोषज कास, वातज कास, पित्तज कास, विषदोषोद्भव कास, रुधिरयुक्त कास, रक्तरहित कास, श्वासयुक्त ज्वर, भ्रम, तृषा, दाह और शूलरोग शमन होते हैं ।

यह औषधि अतीव रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, बल, वर्ण और वीर्य्यको बढ़ानेवाली तथा जीर्णज्वरको हरनेवाली है। इस चन्द्रामृत लोहको महादेवने कहा है ॥ ७९-८० ॥

श्रीचन्द्रामृत रस।

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं कार्षिकं क्षिपेत्।
टंकणस्य पलं दत्त्वा मरिचस्य पलार्द्धकम् ॥ ८१ ॥
त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरकसैन्धवम्।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥ ८२ ॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम् ॥ ८३ ॥
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसेन च।
नीलोत्पलरसेनापि कुलत्थस्वरसेन च ॥ ८४ ॥
छागीक्षीरेण मण्डेन केशराजरसेन च।
निहन्ति विविधं कासं वातरक्तसमुद्भवम् ॥ ८५ ॥
वातश्लेष्मज्वरं कासं पित्तश्लेष्मज्वरं तथा।
वातिकं पैत्तिकं वापि गरदोषसमन्वितम् ॥ ८६ ॥
वासा गुडूचिका भार्ङ्गी मुस्तकं कण्टकारिका।
समभागकृतं क्वाथं प्रत्यहं भक्षयेदनु ॥ ८७ ॥

पारा, गन्धक और लोहाभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे, सुहागा १ पल, काली मिरच आधा पल, त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, धनिया, जीरा और सेंधानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेवे, सबको एकत्र खरल करके बकरीके दूधमें पीसकर नौ नौ रत्तीकी बराबर गोली बना लेवे। प्रतिदिन प्रातःकाल

मलमूत्रादिसे शुद्ध होकर और अमृतेश्वरी देवीका ध्यान करके एक एक गोली खाये । रक्तोत्पलका रस, नीलोत्पलका रस, कुथलीका क्वाथ, बकरीका दूध, मांड और कुकुरभांगरेका रस इनमेंसे एक किसी अनुपानके साथ सेवन करनेसे अनेक प्रकारकी खाँसी, वातरक्तोत्पन्न खाँसी, वातश्लेष्म ज्वर, पित्तश्लेष्म ज्वर, वातिक ज्वर, पैत्तिक ज्वर और विषदोषसमन्वितज्वर यह सब नष्ट होते हैं । अडूसा, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा और कटेरी इनको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर ऊपरसे पान करे ॥ ८०–८७ ॥

अमृतमञ्जरी ।

हिंगुलञ्च विषञ्चैव कणा मरिचटङ्कणम् ।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥ ८८ ॥
रक्तिमानां वटीं कुर्यादार्द्रकरससंयुताम् ।
वटीद्वयं त्रयं खादेत्सन्निपातं सुदारुणम् ॥ ८९ ॥
अग्निमांद्यमजीर्णश्च सामवातं सुदारुणम् ।
उष्णतोयानुपानेन सर्वं व्याधिं नियच्छति ॥ ९० ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं सर्वाङ्गग्रहमेव च ।
जीर्णज्वरं क्षयं चैव हन्यादमृतमञ्जरी ॥ ९१ ॥

सिंग्रफ, विष, पीपल, काली मिरच, सुहागा और जावित्री इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बनाकर अदरखके रसके साथ दो अथवा तीन गोली सेवन करनेसे दारुण सन्निपात, मन्दाग्नि, अजीर्ण और आमवात रोग नष्ट होते हैं । गरम जलके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके रोग शमन होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे पांच प्रकारकी खांसी, श्वास, सर्वांगपीड़ा, जीर्णज्वर और क्षय दूर होते हैं । इसको अमृतमञ्जरी वटी कहते हैं ॥ ८८–९१ ॥

कासान्तक रस।

त्रिफलाव्योषचूर्णञ्च समभागं प्रकल्पयेत्।
मधुना सह पानात्तु दुष्टकासं नियच्छति ॥ ९२ ॥

त्रिफला और त्रिकुटा समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र चूर्ण करके जलमें पीसकर यथोचित मात्रानुसार सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे दुष्ट खाँसी शांत होती है ॥ ९२ ॥

बृहच्छृङ्गाराभ्र।

पारदं गन्धकश्चैव टंकणं नागकेशरम्।
कर्पूरं जातिकोषञ्च लवंगं तेजपत्रकम् ॥ ९३ ॥
सुवर्णं चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुःकर्षं प्रयोजयेत् ॥ ९४ ॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसीत्वग्धातृपुष्पिका।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ९५ ॥
कर्षयोर्द्वयमेतेषां पिप्पलीक्वाथमर्द्दितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ९६ ॥
अग्निमान्द्यादिकान् रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम्।
औदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ९७ ॥
ग्रहणीं श्वासकासञ्च हन्याद्यक्ष्माणमेव च।
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥ ९८ ॥
बृहच्छृंगाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्तितम्।
एतस्याभ्यासमात्रेण निर्व्याधिर्जायते नरः ॥ ९९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागा, नागकेशर, कपूर, जावित्री, लौंग, तेजपात और सुवर्णकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष, कृष्णाभ्रक भस्म ४ कर्ष, तालीशपत्र, नागरमोथा, कूठ, वालछड़, दारचीनी, धायके फूल, इलायची, त्रिकुटा, त्रिफला और गजपीपल यह प्रत्येक औषधि दो दो कर्ष लेवे । सबको एकत्र पीसकर पीपलके क्वाथमें खरल करके दालचीनीके चूर्ण और सहतके साथ सेवन करनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, पांडु, कामला, उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, संग्रहणी, श्वास, खाँसी और राजयक्ष्मारोग यह सब नष्ट होते हैं । इससे अनेक प्रकारके रोग दूर होकर बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है । प्रतिदिन इस औषधिके सेवन करनेसे मनुष्य रोगरहित हो जाते हैं । इसको बृहच्छृंगाराभ्र कहते हैं ॥ ९३-९९ ॥

नित्योदय रस ।

सुशुद्धं पारदं गन्धं प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मर्दयेच्च पृथकपृथक् ॥१००॥
बिल्वाग्निमन्थश्योनाकं काश्मरी पाटला बला ।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥ १०१ ॥
विदारी बहुपुत्री च एषां कर्षै रसैर्भिषक् ।
सुवर्णं रजतं ताप्यं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ १०२ ॥
पलमात्रं तु कृष्णाभ्रं तदर्द्धन्तु सिताभ्रकम्[1] ।
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवंगकम् ॥१०३॥
प्रत्येकं कोलमात्रन्तु वासानीरैर्विमर्दयेत् ।
शोषयित्वाऽऽतपे पश्चाद्विदार्याः पेषयेद्रसैः ॥१०४॥
द्विगुञ्जां वटिकां कृत्वा पिप्पलीमधुना भजेत् ।
नाम्ना नित्योदयश्चायं रसो विष्णुविनिर्मितः॥१०५॥

---

१ सिताह्वयम्-इत्यपि केचित पठन्ति ।

पञ्च कासान्निहन्त्याशु चिरकालोद्भवानपि।
राजयक्ष्माणमप्युग्रं जीर्णज्वरमरोचकम् ॥१०६॥
धातुस्थं विषमाख्यञ्च तृतीयकचतुर्थकौ।
अर्शांसि कामलां पाण्डुमग्निमान्द्यं प्रमेहकम्।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥१०७॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे कासाधिकारः।

शुद्ध पारा ६ मासे और गन्धक ६ मासे दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर बेलकी जड़, अरणी, सोनापाठा, कुम्भेर, पाढल, खिरैंटी, नागरमोथा, पुनर्नवा, आमले, बड़ी कटेरी, अडूसेके पत्ते, विदारीकंद और सतावर इन प्रत्येकके एक एक कर्ष परिमाण रसके द्वारा अलग अलग खरल करे। पश्चात् इसमें सुवर्णकी भस्म ४ मासे, चांदीकी भस्म ४ मासे, सोनामाखीभस्म ४ मासे, कृष्णाभ्रकभस्म ४ तोले, कपूर २ तोले, जावित्री, जायफल, बालछड़, तालीशपत्र, इलायची और लौंग यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला मिलाकर अडूसेके रसमें खरल करके धूपमें सुखा देवे। फिर दुबारा विदारीकंदके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे पांच प्रकारकी बहुत दिनोंकी पुरानी खाँसी, राजयक्ष्मा, जीर्ण-ज्वर, अरुचि, धातुगत विषमज्वर, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर, बवासीर, कामला, पांडु, मंदाग्नि और प्रमेह रोग नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे मनुष्य कामदेवके समान रूपवान् हो जाता है। यह नित्योदय रस विष्णु भगवान्‌ने कहा है ॥ १००-१०७ ॥

इति कासाधिकार समाप्त।

अथ हिक्काश्वासाधिकार ।

सूर्यावर्त्त रस ।

सूतकं गन्धकं मर्द्यं यामैकं कन्यकाद्रवैः ।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥ १ ॥
दिनैकं हंडिकायन्त्रे पचेच्छीतं समुद्धरेत् ।
सूर्यावर्त्तरसो नाम द्विगुञ्जः श्वासकासनुत् ॥ २ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलं देवदारु कटुत्रयम् ।
शर्करासहितं खादेदूर्ध्वश्वासनिवृत्तये ॥ ३ ॥

प्रथम पारे और गंधक दोनोंको घृतकुमारी (घीकार) के रसमें खरल करे, पश्चात् पारे और गंधक दोनोंकी बराबर तांबेक पत्र लेकर उनपर उक्त गंधक और पारेके कल्कका लेप कर देवे। फिर इन तांबेके पत्तोंको एक हांडीमें रखकर उसको सराव या अभ्रकसे ढककर वालूसे हांडीको भरकर एक दिन तक पकावे। पश्चात् शीतल होनेपर चूर्ण करके दोरत्ती परिमाण औषधि सेवन करनेसे श्वास और खांसी दूर होती है। इसको सूर्यावर्त्त रस कहते हैं। इन्द्रायणकी जड़, देवदारु और त्रिकुटा इन सबको एकत्र पीसकर मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे ऊर्ध्वश्वास दूर हो जाता है ॥ १-३ ॥

विजयवटी ।

सूतकं गन्धकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेला ग्रन्थिककेशरम् ॥ ४ ॥
त्रिकटु त्रिफला ताम्रं शुल्वं जैपालचित्रकम् ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥ ५ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।

सूतायां ग्रहणीदोषे शूले पाण्ड्वामये तथा ।
हस्तपादादिदाहेषु वटिकेयं प्रशस्यते ॥ ६ ॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, विष, अभ्रकभस्म, वायविडंग, रेणुका, नागरमोथा, इलायची, पीपलामूल, नागकेशर, त्रिकुटा, त्रिफला, तांबाभस्म, शुद्ध जमालगोटे और चीतेकी जड़ यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सबसे दोगुणा पुराना गुड़ लेवे । इन सबको एकत्र खरल करके सेवन करनेसे खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिका, संग्रहणी, शूल, पांडु और हाथ पांव आदिकी दाह दूर होती है । इसको विजयवटी कहते हैं ॥ ४-६ ॥

घृतेन पाचयेन्मूलं पत्रञ्च वासकस्य तु ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कासे श्वासे क्षये तथा ॥ ७ ॥

अडूसेकी जड़ और अडूसेके पत्तोंको घृतमें भूनकर प्रातःकाल सेवन करनेसे खाँसी, श्वास और क्षयरोग नष्ट होते हैं ॥ ७ ॥

शुण्ठीचूर्णं समं देयं पिप्पली देवदारु च ।
ऊर्ध्वश्वासं सदा हन्ति पिबेदुष्णजलेन च ॥ ८ ॥

पीपल, देवदारु और सोंठके चूर्णको गरम जलके साथ सेवन करनेसे उर्ध्वश्वास नष्ट होता है ॥ ८ ॥

लोहपर्पटी रस ।

भागौ रसस्य गन्धस्य द्वावेको लौहभस्मतः ।
एतद् घृष्टं द्रवीभूतं मृद्वग्नौ कदलीदले ॥ ९ ॥
पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् ।
ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिः सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ १० ॥
भार्ङ्गी मुण्डी मुनिवरा जया निर्गुण्डिका तथा ।
व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैरेताः पुटे पचेत् ॥ ११ ॥

आगन्धं खर्परे ताम्रे पर्पटाख्यो रसो भवेत् ।
सर्वरोगहरस्तैस्तैरनुपानैर्हि माषकैः ॥ १२ ॥
ताम्बूलीपत्रसहितः श्वासकासहरः परः ।
सकणः सुरसाक्काथोऽनुपानं वासकाजलम् ॥ १३ ॥
अम्लिकातैलवार्त्ताकुकूष्माण्डं कदलीफलम् ।
वर्ज्यं मांसरसं सर्वं पथ्यं दद्याद्विचक्षणः ॥
वर्जयेच्च विशेषेण कफकृत्स्त्रीसुखादिकम् ॥ १४ ॥

पारा दो भाग, गंधक २ भाग और लोहेकी भस्म १ भाग इन सबको एकत्र खरल करके एक लोहेकी करछीमें रखकर उसमें घी मिलाकर मंद मंद अग्निसे पकावे । जब खूब गल जाय तब गोबरके ऊपर एक केलेका पत्ता रखकर उसके ऊपर उक्त औषधि ढाल देवे और ऊपरसे एक केलेका पत्ता रखकर पत्तेके ऊपर गोबर डालकर ढक देवे । और उसको अच्छे प्रकारसे दबाकर पर्पटीके समान बना लेवे । फिर इसका चूर्ण करके भारंगी, गोरखमुंडी, अगस्तियाके पत्ते, त्रिफला, जयंती, सम्हालू, त्रिकुटा, अडूसा, घीक्वार और अदरख इन प्रत्येकके रसके द्वारा सात सात भावना देकर तांबेके पात्रमें जबतक उसकी गंध दूर न होवे तब तक पकावे । इस औषधिमेंसे एक मासा लेकर यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे सब रोग नष्ट होते हैं । पानके साथ इस औषधिके भक्षण करनेसे श्वास और खाँसी दूर होती है, तुलसीके क्काथ और पीपलके चूर्णके साथ अथवा अडूसेके रसके साथ इस औषधिका सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें खट्टे पदार्थ, तेल, बैंगन, पेठा और केलेकी फली भक्षण न करे । कफकारक पदार्थ और स्त्रीसंगका त्याग कर देवे । इसपर सब प्रकारके मांसरस पथ्य देवे। इसको लोहपर्पटी रस कहते हैं ॥ ९-१४ ॥

ताम्रपर्पटी ।

लौहस्थाने ताम्रयोगात्ताम्रपर्पटिका भवेत् ॥ १५ ॥

उक्त लोहपर्पटीमें लोहेके स्थानमें तांबेका प्रयोग करनेसे अर्थात् उपरोक्त विधिसे पर्पटीको बनाकर केवल उसमें लोहेके स्थानमें तांबेको डाले तो ताम्रपर्पटी होती है ॥ १५ ॥

पिप्पल्यादि लोह।

पिप्पल्यामलकी द्राक्षा कोलास्थि मधु शर्करा।
विडङ्गपुष्करैर्युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणम् ॥
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः॥१६॥

पीपल, आमले, दाख, बेरकी मींगी, मुलैठी, मिश्री, वायविडंग और पोहकरमूल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और लोह-भस्म आठ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रासे तीन दिन तक सेवन करनेसे वमन, हिचकी और तृषारोग शांत होते हैं। इसको पिप्पल्यादि लोह कहते हैं ॥ १६ ॥

श्वासकुठार रस।

टङ्कणं पारदं गन्धं विषं शिला कटुत्रिकम्।
निष्पिष्य वटिका कार्या बाणगुञ्जाप्रमाणतः॥१७॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा।
कासं पञ्चविधं हन्ति श्वासं श्लेष्मसमुद्भवम् ॥
शिरोरोगं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥१८॥

सुहागा, शुद्ध पारा, गंधक, विष, मैनशिल और त्रिकुटा यह प्रत्येक औषधि समान लेकर सबको एकत्र पीसकर पांच पांच रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिको गर्म जलके साथ; अथवा कटेरीके क्वाथके साथ सेवन करनेसे खाँसी, कफोत्पन्न श्वास और सब प्रकारका शिरो-रोग इसप्रकार नष्ट होते हैं जिस प्रकार वज्रसे वृक्षोंका ध्वंस होता है। इसको श्वासकुठार रस कहते हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

श्वासकासचिन्तामणि रस ।

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत् ।
पारदार्द्धं मौक्तिकञ्च सूताद्द्विगुणगन्धकम् ॥
अभ्रञ्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम् ॥ १९ ॥
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धैः पृथक् पृथक् ।
मधुयष्टिरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ॥ २० ॥
भावयेत्सप्तवारञ्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ २१ ॥

पारा, सोनामाखीभस्म और सोनाभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, मोती आधा भाग, गंधक २ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग और लोहभस्म ४ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके कटेरीके रस, बकरीके दूध, मुलैठीके रस और पानोंके रसमें अलग अलग सात २ भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। पीपलके चूर्ण और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे खाँसी और श्वास दूर होते हैं। इसको श्वासकासचिन्तामणि रस कहते हैं ॥ १९-२१ ॥

अन्य श्वासकुठार रस ।

रसं गन्धं विषं टङ्कं शिलोषणकटुत्रयम् ।
सर्वं संमर्द्य दातव्यो रसः श्वासकुठारकः ॥
वातश्लेष्मसमुद्भूतं श्वासं कासं क्षयं जयेत् ॥ २२ ॥

पारा, गंधक, विष, सुहागा, मैनशिल, काली मिरच और त्रिकुटा यह सब औषधि समान भाग लेकर पीसकर सेवन करनेसे वात-कफोत्पन्न रोग, श्वास, खाँसी और क्षयरोग नष्ट होते हैं। इसको श्वासकुठार रस कहते हैं ॥ २२ ॥

अन्य श्वासकुठार रस ।

रसं गन्धं विषञ्चैव टङ्कणं समनःशिलम् ।

एतानि समभागानि मरिचं तच्चतुर्गुणम् ॥ २३ ॥
त्रिभागं त्र्यूषणं ज्ञेयं खल्वे सर्वं विचूर्णयेत्।
रसः श्वासकुठारोऽयं द्विगुञ्जः श्वासकासजित् ॥२४॥
गता संज्ञा यदा पुंसां तदा नस्यं प्रदापयेत्।
घ्रापयेन्नासिकारन्ध्रे संज्ञाजननमुत्तमम् ॥ २५ ॥
प्रतिश्यायं क्षयक्षीणमेकादशविधं क्षयम्।
हृद्रोगं श्वासशूलञ्च स्वरभेदं सुदारुणम् ॥
सन्निपातं तथा घोरं तन्द्रामोहान्वितं जयेत् ॥ २६ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे हिक्काश्वासाधिकारः।

शुद्ध पारा, गंधक, विष, सुहागा और मैनशिल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, कालीमिरच ४ भाग और त्रिकुटा ३ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बनाकर सेवन करनेसे श्वास और खांसी दूर होती है। जिस मनुष्यकी संज्ञा नष्ट होजाय उसको यह गोली जलमें पीसकर नासिकाके छिद्रमें नस्य देवे। अथवा नासिकाके छिद्रद्वारा इस औषधिकी गंध देवे, इसके सेवन करनेसे प्रतिश्याय, क्षयक्षीण, एकादश प्रकारका क्षय, हृदयरोग, श्वास, शूल, स्वरभेद, मोह और तन्द्रायुक्त सन्निपात ज्वर दूर होते हैं। इसको श्वासकुठार रस कहते हैं ॥ २३-२६ ॥

इति हिक्काश्वासाधिकार समाप्त।

अथ स्वरभेदचिकित्सा।

भैरव रस।

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव संमर्द्य वटिकां ततः ॥ १ ॥

गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयानुपानतः ।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥ २ ॥

पारा, गंधक, विष, सुहागा, कालीमिरच, चव्य और चित्रककी जड़ इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर अदरखके रसमें खरल करके तीन तीन रत्तीकी गोली बना जलके साथ सेवन करनेसे स्वरभेद, श्वास और कास रोग नष्ट होते हैं । इसको भैरव रस कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

चव्यादि चूर्ण ।

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतिन्तिडीकतालीशजीरक-
तुगादहनैः समांशैः । चूर्णं गुडप्रमृदितं त्रिसुग-
न्धियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥ ३ ॥

चव्य, अम्लवेत, त्रिकुटा, तिन्तिडीक, तालीशपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रककी जड़, दारचीनी, इलायची और तेजपात यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और गुड़ सबकी बराबर लेवे । सबको एकत्र मिलाकर स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि रोगमें प्रयोग करे । इसको चव्यादि चूर्ण कहते हैं ॥ ३ ॥

अनेनैवानुपानेन भस्मसूतं प्रयोजयेत् ।
योगवाहिरसश्चापि योजयन्ति भिषग्वराः ॥ ४ ॥
सशर्करं शुण्ठिचूर्णं क्षौद्रेण सह योजितम् ।
कोकिलस्वर एव स्याद्गुटिकाभुक्तमात्रतः ॥ ५ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे स्वरभेदाधिकारः ।

इसी उपरोक्त चव्यादि चूर्णके साथ रससिन्दूर और योगवाही अन्यान्य समस्त औषधियोंका प्रयोग करे । मिश्री, सोंठका चूर्ण और सहत इनको एकत्र मिलाकर गोली बनाकर सेवन करनेसे स्वर कोकिलके समान हो जाता है ॥ ४॥५॥ इति स्वरभेदाधिकार समाप्त ॥

अथारोचकचिकित्सा ।

सुधानिधि रस ।

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्काथेन भावयेत् ।
जम्बीरस्य रसेनैव आर्द्रकस्य रसेन च ॥ १ ॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जारसेन च ।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांस्तान् टंकणञ्चोपचारयेत् ॥ २ ॥
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं मृतामृतम् ।
माषमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ ३ ॥
सर्वारोचकशूलार्तिसामवातं सुदारुणम् ।
विषूचीञ्चाग्निमान्द्यं च भक्तद्वेषञ्च दारुणम् ॥
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, गंधक १ भाग इन दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर जम्भीरी नींबूका रस, अदरखका रस, बिजोरे नींबूका रस और बिजौरे नींबूकी मज्जाके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर पश्चात् इसमें सुहागा ५ भाग, लौंग ५ भाग और पारेसे चौथाई भाग शुद्ध विष मिला लेवे। इसमेंसे एक मासा औषधि लेकर सोंठके चूर्णके साथ अथवा गुड़के साथ सेवन करनेसे सब प्रकारकी अरुचि, शूल, आमवात, विषूचिका, मंदाग्नि प्रभृति रोग नष्ट होते हैं। इसको सुधानिधि रस कहते हैं ॥ १–४ ॥

सुलोचनाभ्र ।

पलं सुजीर्णं गगनं तु वज्रकं तेजोवती कोलमुशीर-
दाडिमम् । धात्र्यम्लरोलीरुचकं पृथग्दशपलो-
न्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥ ५ ॥ अरोचकं

वातकफत्रिदोषजं पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम् ।
कासं स्वराघातमुरुग्रहं रुजं श्वासं बलासं यकृतं
भगन्दरम् ॥६॥ प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं क्रिमिम् । शूलाम्लपित्त-
क्षयरोगमुद्धतं सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ।
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं बलप्रदं वृष्यतमं
रसायनम् ॥ ७ ॥

वज्राभ्रकभस्म १ पल, चव्य, बेर, खस, अनार, आमले, अम्लनोनिया और सेंधानमक इन सब औषधियोंको १०-१० पल लेकर एकत्र खरल करके सेवन करनेसे वातज, कफज, त्रिदोषज, पित्तज और दुर्गंधजनित अरुचि रोग, खाँसी, स्वरभेद, ऊरुस्तम्भ, यंत्रणा, श्वास, कफ, यकृत्, भगन्दर, प्लीहा, मंदाग्नि, शोथ, वायु, प्रमेह, कुष्ठ, प्रदर, क्रिमि, शूल, अम्लपित्त, क्षयरोग, रक्तपित्त, वमन, दाह, अश्मरी और अर्शरोग प्रभृति नष्ट होते हैं। यह बलको बढ़ानेवाला, वीर्यवर्द्धक और रसायन है ॥ ६-७ ॥

अरुचिघ्न रस ।

सस्रूतमरुचिघ्नं स्यात्तिंतिडीकगुडोषणम् ।
मृद्वीका जीरकं कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम् ॥ ८ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहेऽरोचकाधिकारः ।

रससिन्दूर, पक्क इमली, गुड़, काली मिरच, दाख, जीरा, पीपल, बिजौरानींबू और अमलवेत यह सब औषधियां समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे अरुचि रोग नष्ट होता है ॥ ८ ॥

इति अरोचकाधिकार समाप्त ।

अथ छर्दिरोगचिकित्सा ।

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षुद्राभिः कटुत्रिकैः ।
एभिः सार्द्धं भस्मसूतः सेव्यो वान्तिप्रशान्तये ॥१॥
(हिक्काधिकारोक्तपिप्पल्यादिलौहमत्र विधेयम्)

इति छर्दिरोगचिकित्सा ।

जीरा, धनिया, हरड़, कटेरी, सोंठ, मिर्च, पीपल समानभाग लेकर पारा भस्म या रससिन्दूर सबसे ड्योढ़ा सेवन करनेसे वमनरोग शांत होता है । (वमनरोगमें हिक्काधिकारोक्त पिप्पल्यादि लोह व्यवहार करना चाहिये) । [इस योगमें पारदभस्म अधिक है अतः सब समान भाग लें तो ठीक होगा] ॥ १ ॥

इति छर्द्यधिकार समाप्त ।

अथ तृष्णारोगचिकित्सा ।

महोदधि रस ।

ताम्रं चक्रिकया वङ्गं सूतं तालं सतुत्थकम् ।
वटांकुररसैर्भाव्यं तृष्णाघ्नद्वल्लमात्रतः ॥ १ ॥
सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत्काथं पलोन्मितम् ।
सकृष्णमधुना कुर्याद्गण्डूषं शीतले स्थितः ॥ २ ॥

तांबाभस्म, वंगभस्म, पारा, हरतालभस्म और शुद्ध तूतिया यह सब औषधि समान भाग लेवे, सबको एकत्र पीसकर वड़के अंकुरके रसमें भावना देकर दो दो रत्तीकी गोलियां बनाकर सेवन करनेसे तृषा रोग शांत होता है । इसके सेवन करनेके पश्चात् आम और जामुनकी छालके क्वाथमें सहत डालकर एक पल परिमाण सेवन करे। और जो इस रोगमें शीत अधिक हो अथवा शीत स्थानमें हो तो इसमें पीपलका चूर्ण और सहतके गण्डूष धारण करे ॥ १ ॥ २ ॥

कुमुदेश्वर रस ।

मृतताम्रस्य भागौ द्वौ भागैकं वङ्गभस्मकम् ।
यष्टीमधुरसैर्भाव्यं शुष्कं माषार्द्धकं शुभम् ॥ ३ ॥
सेव्यं चैवानुपानेन वक्ष्यमाणेन बुद्धिमान् ।
चन्दनं शारिवा मुस्तं क्षुद्रैलानागकेशरम् ॥ ४ ॥
सर्वतुल्या तथा लाजा पचेत्षोडशिकैर्जलैः ।
अर्धशेषं हरेत्क्वाथं सिताक्षौद्रयुतं तु तत् ॥
छर्दिं तृष्णां निहन्त्याशु रसोऽयं कुमुदेश्वरः ॥ ५ ॥

इति तृष्णाधिकारः ।

तांबेकी भस्म २ भाग, वंगकी भस्म १ भाग इन दोनोंको एकत्र पीसकर मुलैठीके क्वाथकी सात भावना देवे । पश्चात् आधे आधे मासेकी गोली बनाकर सेवन करे और ऊपरसे चन्दन, अनन्तमूल, नागरमोथा, छोटी इलायची और नागकेशर यह सब समान भाग और सबकी बराबर खीलें लेवे, सबको एकत्र करके सोलह गुने जलमें पकावे । जब पकते पकते जल आधा भाग बाकी रह जाय तब उतार लेवे, फिर उसको शीतल करके मिश्री और सहत डालकर पान करे । यह कुमुदेश्वर रस वमन और तृषाको शांत करता है ॥ ३-५ ॥

इति तृष्णाधिकार समाप्त ।

अथ मूर्च्छारोगचिकित्सा ।

सुधानिधि रस ।

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा शीतलं भजेत् ।
सुधानिधिरसो नाम मदमूर्च्छाविनाशनः ॥ १ ॥

इति मूर्च्छाधिकारः ।

मूर्च्छा रोगमें पीपलके चूर्ण और रससिन्दूरको सहतमें मिलाकर सेवन करे । इस रोगपर शीतल जलका परिषेक (सेचन), शीतल जलमें अवगाहन और अन्यान्य समस्त शीतल वस्तुओंका सेवन करे। इसको सुधानिधि रस कहते हैं। यह औषधि मूर्च्छा रोगको नष्ट करती है ॥ १ ॥

इति मूर्च्छारोगाधिकार समाप्त ।

अथ मदात्ययरोगचिकित्सा ।

सचव्यं हिंगुरुचकं धान्याकं विश्वदीप्यकम् ।
चूर्णं ससूतं मद्येन पीतं पानात्ययं जयेत् ॥ १ ॥

चव्य, हींग, काला नमक, धनिया, सोंठ, अजवायन और रससिन्दूर यह सब औषधि समान भाग लेकर बारीक चूर्ण कर लेवे । इसको मदिराके साथ सेवन करनेसे मदात्यय रोग नष्ट होता है ॥ १ ॥

अष्टाङ्गलवण ।

सौवर्चलमजाज्यश्च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ।
त्वगेला मरिचार्धांशं शर्करामधुयोजितम् ॥ २ ॥
हितं लवणमष्टांगमग्निसन्दीपनं परम् ।
मदात्यये कफप्राये दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥ ३ ॥

इति मदात्ययाधिकारः ।

काला नमक, जीरा, चूका, अमलवेत, दालचीनी, इलायची और काली मिरच यह सब औषधि समान भाग लेकर मिश्री और सहत आधा आधा भाग मिलाकर सेवन करनेसे कफजनित मदात्यय रोग नष्ट होता है । इसको अष्टाङ्गलवण कहते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे रोग नष्ट होकर अग्नि संदीप्त होती है और रुधिरके स्रोत शुद्ध होते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ इति मदात्ययरोगचिकित्सा ॥

अथ दाहचिकित्सा ।

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुशोधनम् ।
जम्बीरस्वरसैर्मर्द्य सूततुल्यञ्च गन्धकम् ॥ १ ॥
नागवल्लीदलैः पिष्ट्वा ताम्रपत्रीं प्रलेपयेत् ।
प्रपुटेद्भूधरे यन्त्रे यावद्भस्मत्वमाप्नुयात् ॥ २ ॥
द्विगुञ्जामार्द्रकद्रावैरूयूषणेन च योजयेत् ।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छां पित्तसमुद्भवाम् ॥ ३ ॥

इति दाहाधिकारः ।

पारा ५ भाग और तांबाभस्म १ भाग इन दोनों औषधियोंको जम्बीरी नींबूके रसमें खरल करे; फिर इसमें पांच भाग गन्धक मिला लेवे और इसको पानोंके रसमें भावना देकर कल्क बनाकर उस कल्कसे तांबेके पत्रमें लेप कर देवे; फिर इसको भूधर यंत्रमें भस्म कर लेवे। दो रत्ती परिमाण इस औषधिको अदरखके रस और त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे दाहजनित सन्ताप और पित्तजानित मूर्च्छा दूर होती है ॥ १–३ ॥

इति दाहचिकित्सा ।

अथ उन्मादरोगचिकित्सा ।

उन्मादगजांकुश रस ।

त्रिदिनं कनकद्रावैर्महाराष्ट्रीद्रवैः पुनः ।
विषमुष्टिजलैः सूतं समुत्थाप्यार्कचक्रिकाम् ॥ १ ॥
कृत्वा तप्तां सगन्धां तां युक्त्या बन्धनमाचरेत् ।
तत्समं कानकं बीजमभ्रकं गन्धकं विषम् ॥ २ ॥

मर्दयेत्त्रिदिनं सर्वं वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ।
दोषोन्मादं द्रुतं हन्ति भूतोन्मादविशेषतः ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध ताम्रको समानभाग लेकर तीन दिन तक धतूरेके पत्तोंके रसमें, तीन दिन तक ब्रह्मदण्डीके रसमें और तीन तक कुचिलेके रसमें भावना देकर चक्रिका बना लेवे । फिर पारेकी बराबर गन्धक लेकर चक्रिकाको गंधकके बीचमें रखकर लघुपुट दे जिससे गंधक जल जाय और पारा न उडे ऐसे ५–७ वार करनेसे ताम्र और पारेका बन्धन होजायगा । इसतरह बन्धन करनेके पश्चात् धतूरेके बीज, अभ्रक, गन्धक और विष यह प्रत्येक उसके समान भाग लेकर एकत्र तीन दिनतक खरल करे । इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधिसे दोषजनित और भूतजनित उन्माद रोग नष्ट होता है । इसको उन्मादगजांकुश रस कहते हैं ॥ १–३ ॥

भूतांकुश रस ।

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्ता चापि समं समम् ।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम् ॥ ४ ॥
तुत्थं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाञ्जनम् ।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥ ५ ॥
भृङ्गराजचित्रवज्रीदुग्धेनापि विमर्दयेत् ।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥ ६ ॥
भूतांकुशो रसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि भूतोन्मादनिवारणम् ॥ ७ ॥
पिप्पल्याक्तं पिबेच्चानु दशमूलकषायकम् ।
स्वेदयेत्कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत् ॥ ८ ॥
माहिषञ्च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत् ।
अभ्यङ्गः कटुतैलेन हितो भूतांकुशे रसे ॥ ९ ॥

पारा, लोहभस्म, तांबाभस्म, अभ्रकभस्म और मोतीभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, हीराभस्म पारेसे चौथाई भाग, मैनशिल, गन्धक, हरितालभस्म, शुद्ध तूतिया, रसौत, समुद्रफेन, काला सुर्म्मा और पांचों लवण यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे । इन सब औषधियोंको भांगरेके रसमें, चित्रककी जड़के रसमें और थूहरके दूधमें एक २ दिन तक खरल करके पिंडाकार बनाकर मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे । इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि अदरखके रसके साथ सेवन करके पश्चात् ऊपरसे पीपलका चूर्ण दशमूलके क्वाथमें डालकर पान करे । तथा इसके ऊपर रोगीको कड़वी तोम्बीसे स्वेद देवे । इसपर तीक्ष्ण और रूक्ष पदार्थोंको त्याग देवे । तथा भैंसका घी, दूध और भारी पदार्थ भक्षण करे।तथा कड़वे तेलका शरीरमें मर्दन करे।इससे भूतोन्माद दूर होता है। इसको भूतांकुश रस कहते हैं ४-९

उन्मादभञ्जिनी रस ।

शुद्धं मनःशिलाचूर्णं सैन्धवं कटुरोहिणी ।
वचा शिरीषबीजञ्च हिंगु च श्वेतसर्षपम् ॥ १० ॥
करंजबीजं त्रिकटु मलं पारावतस्य च ।
एतानि समभागानि गोमूत्रैर्वटिकां कुरु ॥ ११ ॥
गिरिमल्लीबीजसमां छायाशुष्काञ्च कारयेत् ।
प्रातःसन्ध्यानिशाकाले क्षुचषोरंजनं हितम् ॥ १२॥
मधुरादिरसे चाञ्ज्यं रात्रावपि जलेन च ।
वटिकैका समाख्याता नाम्ना चोन्मादभञ्जिनी ॥
चातुर्थिकमपस्मारमुन्मादञ्च विनाशयेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध मैनशिलका चूर्ण, सेंधानमक, कुटकी, वच, सिरसके बीज, हींग,सुफेद सरसों,करंजके बीज, त्रिकुटा,कबूतरकी विष्ठा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर गोमूत्रमें पीसकर कुड़ेके बीज (इंद्रजौ)की

बराबर गोली बनाकर छायामें सुखा लेवे । इस औषधिको प्रातः-काल, संध्याके समय और रात्रिके समय नेत्रोंमें लगावे । दिनमें सहतके साथ और रात्रिमें जलके द्वारा अंजन लगावे । इससे चातुर्थिक ज्वर, अपस्मार और उन्माद ज्वर नष्ट होते हैं । इसको उन्मादभञ्जिनी वटिका कहते हैं ॥ १०–१३ ॥

त्रिकत्रयाद्य लोह ।

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं त्वयः ।
हन्त्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तरम् ॥ १४ ॥

हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रककी जड़, नागरमोथा, वायविडंग, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और लोहा भस्म १८ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके सेवन करनेसे उन्माद रोग, अपस्मार और वातव्याधि रोग नष्ट होते हैं । इसको त्रिकत्रयाद्य लोह कहते हैं ॥ १४ ॥

उन्मादभञ्जन रस ।

त्रिकटु त्रिफला चैव गजपिप्पलिका तथा ।
देवदारु विडङ्गं च किरातं कटुकी तथा ॥ १५ ॥
कण्टकारी च यष्टीन्द्रयवं चित्रकमेव च ।
बला च पिप्पलीमूलं मूलं च वीरणस्य च ॥ १६ ॥
शोभाञ्जनस्य बीजानि त्रिवृता चेन्द्रवारुणी ।
वङ्गं रूप्यकमभ्रं च प्रवालं समभागिकम् ॥ १७ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं सलिलेन विमर्दयेत् ।
उन्मादमपि भूतोत्थमुन्मादं वातजं तथा ॥ १८ ॥

अपस्मारं तथा कार्श्यं रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
नाशयेदविकल्पेन रसश्चोन्मादभञ्जनः ॥ १९ ॥

त्रिकुटा, त्रिफला, गजपीपल, वायविडंग, देवदारु, चिरायता, कुटकी, कटेरी, मुलैठी, इन्द्रजौ, चित्रककी जड़, खिरैंटी, पीपलामूल, खस, सहिंजनेके बीज, निसोथ, इन्द्रायन, वंग भस्म, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म और मूंगा भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और सबकी बराबर लोहा इन सबको एकत्र करके जलमें पीसकर सेवन करनेसे भूतोन्माद, वातोन्माद, अपस्मार, शरीरकी कृशता और रक्तपित्त रोग नष्ट होते हैं । इसको उन्मादभञ्जन रस कहते हैं ॥ १९-१९ ॥

चतुर्भुज रस ।

मृतसूतस्य भागौ द्वौ भागैकं हेमभस्मकम् ।
शिला कस्तूरिका तालं प्रत्येकं हेमतुल्यकम् ॥२०॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यया मर्दयेद्दिनम् ।
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यगर्भे दिनत्रयम् ॥ २१ ॥
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ।
एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुमर्दितम् ॥ २२ ॥
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ।
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये ॥ २३ ॥
हस्तकम्पे शिरःकम्पे गात्रकम्पे विशेषतः ।
वातपित्तसमुत्थांश्च कफजान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २४ ॥
सर्वौषधिप्रयोगैर्ये व्याधयो न प्रसाधिताः ।
कर्मभिः पञ्चभिश्चैव मन्त्रौषधिप्रयोगतः ॥ २५ ॥

सर्वांस्तान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः॥ २६ ॥

रससिन्दूर २ भाग, सोनेकी भस्म १ भाग, मैनशिल १ भाग, कस्तूरी १ भाग और हरिताल १ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके घीकारके रसमें एक दिनतक खरल करे, फिर इसका गोलासा बनाकर एरण्डके पत्तोंमें लपेटकर धानोंके ढेरमें रख देवे; पश्चात् तीन दिनके उपरान्त निकालकर सब रोगोंमें प्रयोग करे। यह उत्तम औषधि यथोचितमात्रानुसार त्रिफलेके क्काथ और सहतके साथ सेवन करनेसे वलीपलित, अपस्मार, ज्वर, खाँसी, शोष, मन्दाग्नि, क्षय, हस्तकम्प, शिरःकम्प और शरीरकम्पप्रभृति रोग नष्ट होते हैं। इसका वातज, पित्तज और सम्पूर्ण कफके रोगोंमें प्रयोग करे। सर्व प्रकारकी वमन विरेचन और मन्त्रौषधिके द्वारा जो रोग शमन नहीं होते वे रोग इस औषधिके भक्षण करनेसे वज्राहत वृक्षके समान अवश्य नष्ट हो जाते हैं। यह चतुर्भुजरस स्वयं महादेवने कहा है॥ २०-२६ ॥

उन्मादपर्पटी रस।

कृष्णधुस्तूरजैर्बीजैः पञ्चभिः पर्पटीरसः।
सम्प्रयोज्यः प्रशान्त्यर्थमुन्मादं भूतसम्भवम् ॥२७॥

इत्युन्मादाधिकारः।

काले धतूरेके पांच बीजोंको पित्तपापड़ेके रसमें पीसकर सेवन करनेसे भूतोन्माद रोग नष्ट होता है। इसको उन्मादपर्पटी रस कहते हैं॥ २७॥

इत्युन्मादाधिकारः।

अथापस्माररोगचिकित्सा ।

भूतभैरव रस ।

मृतसूतार्कलौहानां शिलागन्धकतालकम् ।
रसाञ्जनं च तुल्यांशं नरमूत्रेण मर्दयेत् ॥ १ ॥
तद्गोलं द्विगुणं गन्धं लौहपात्रे क्षणं पचेत् ।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदपस्मारहरं परम् ॥ २ ॥
हिंगु सौवर्च्चलं व्योषं नरमूत्रेण सर्पिषा ।
कर्षमात्रं पिबेच्चानु रसोऽयं भूतभैरवः ॥ ३ ॥

रससिन्दूर, तांबा, लोहा, मैनशिल, गंधक, हरिताल और रसोत इन सब औषधियोंको एकत्र मनुष्यके मूत्रमें पीसकर गोलासा बना लेवे । फिर सब औषधिसे दुगुना गंधक मिलाकर लोहेके पात्रमें क्षणभर पकावे । इस औषधिमेंसे पांच रत्ती परिमाण सेवन करनेसे अपस्मार रोग दूर होता है । और ऊपरसे हींग, काला नमक, त्रिकुटा, इनको नरमूत्र और घृत इनमें पीसकर भक्षण करे । इसको भूतभैरव रस कहते हैं ॥ १-३ ॥

सूतभस्म प्रयोग ।

शङ्खपुष्पी वचा ब्राह्मी कुष्ठमेलारसैः सह ।
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः ॥
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥ ४ ॥

शंखाहुली, वच, ब्राह्मी, कूठ और इलायचीके रसके साथ दो रत्ती परिमाण रससिन्दूरके सेवन करनेसे सर्व प्रकारका अपस्मार नष्ट होता है ॥ ४ ॥

इन्द्रब्रह्मवटी ।

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं तारं ताप्यं विषं समम् ।
पद्मकेशरसंयुक्तं दिनैकं मर्दयेद्द्रवैः ॥ ५ ॥

स्नुह्यग्निविजयैरण्डवचानिष्पावशूरणैः ।
निर्गुण्डयाश्च द्रवैर्मर्द्यं तद्गोलं पाचयेत्पुनः ॥ ६ ॥
कङ्गनीसर्षपोत्थेन तैलेन गन्धसंयुतम् ।
ततः पक्त्वा समुद्धृत्य चणमात्रा वटी कृता ॥ ७ ॥
इन्द्रब्रह्मवटी नाम भक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
दशमूलकषायञ्च कणायुक्तं पिबेदनु ॥
अपस्मारं जयत्याशु यथा सूर्योदये तमः ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, तीक्ष्ण लोहभस्म, रूपाभस्म, सोनामाखी भस्म, विष और कमलकेशर यह सब औषधि समान भाग लेकर थूहरके दूध, चीतेकी जड़के रस, भांगके पत्तोंके रस, एरण्डीकी जड़का रस, वचका रस, सेमका रस, जमीकंदका रस और सम्हालूके पत्तोंका रस इन सबमें एक एक दिन तक खरल करके पिंडाकार बनाकर पुटपाक करे। फिर उसमें १भाग गंधक मिलाकर कंगुनीके तेल और सरसोंके तेलमें पीसकर दुबारा पुटपाक करे। पश्चात् चनेकी बराबर गोली बनाकर अदरखके रसके साथ सेवन करे। इस औषधिके सेवनके अन्तमें पीपलका चूर्ण दशमूलके क्काथमें डालकर पान करे । जिसप्रकार सूर्यके उदय होनेसे अंधकारका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे अपस्माररोग नष्ट होता है ॥ ५-८ ॥

वातकुलान्तक रस ।

मृगनाभिशिवा नागकेशरं कलिवृक्षजम् ।
पारदं गन्धकं जातीफलमेलालवङ्गकम् ॥ ९ ॥
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्याद्द्विरक्तिकाम् ॥ १०॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ।
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥ ११ ॥

वातजान् सर्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात् ।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्त्तते ॥
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ १२॥

कस्तूरी, हरड़, नागकेशर, बहेड़ा, पारा, गंधक, जायफल, इलायची और लौंग यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेकर जलमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे अपस्मार और मूर्च्छारोग नष्ट होते हैं। इस औषधिको थोड़ही दिन सेवन करनेसे सर्व प्रकारका वातरोग नष्ट होता है। अपस्मारको दूर करनेवाली इसकी समान अन्य औषधि नही है। इस वातकुलान्तक रसको स्वयं ब्रह्मदेवने कहा है ॥ ९-१२ ॥

पाषाणवज्र रस ।

रसं वज्रं हेम तारं मौक्तिकं तालमेव च ।
गन्धकं रसभस्मैव खर्परं च मनःशिला ॥ १३ ॥
मृताभ्रकं कान्तभस्म रुधिरं नागभस्मकम् ।
एतेषां तोलकैर्भागैः पुटं दद्याद्गजाह्वके ॥ १४ ॥
पाषाणे विमले पात्रे घर्षयेच्च प्रयत्नतः ।
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी नागवल्ल्या रसैस्तथा॥१५॥
दिनमणिकरजालैः शोषयेच्च पुनः पुनः ।
ततश्च गोलकं कृत्वा स्थापयेत्कदलीदले ॥ १६ ॥
समुद्धृत्यापि गुटिकां नीहारे सूर्यसंकुले ।
एकद्वित्रिचतुर्थं वा स्थापनीयं यथाविधि ॥ १७ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जाफलसंमिता ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकृत् ॥ १८ ॥

बहुदोषान्वितं वातं कामजं चित्तविभ्रमम्।
पित्तकृतञ्च यद्दोषं दग्धञ्चं दृष्टिमागतम्॥
शस्यते सर्वरोगेषु सर्वापस्मारकेषु च॥ १९॥

इति अपस्माररोगचिकित्सा।

पारा, हीरा, सोना, चांदी, मोती, हरिताल, गंधक, रससिन्दूर, खपरिया, मैनशिल, अभ्रक, कान्तलोह, सिंग्रफ और सीसेकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेकर सबको एकत्र पीसकर मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे। फिर पत्थरके पात्रमें डालकर ब्राह्मीके रसमें, जयंतीके रसमें, सम्हालूके रसमें और पानोंके रसमें अलग २ सात सात भावना देकर सुखा लेवे। फिर इसको घोटकर गोलासा बनाकर केलेकी जड़में रखकर एक दिन, दो दिन, तीन दिन अथवा चार दिन पीछे निकालकर उसे रातमें ओस और दिनमें सूर्यकी धूपमें रखे। पश्चात् इसको पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिको प्रातःकाल सेवन करनेसे सर्व प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। इससे अनेक दोषयुक्त वातरोग, कामजव्याधि, चित्तभ्रम, पित्तजव्याधि, दग्धदृष्टि और सर्व प्रकारके अपस्मार रोग नष्ट होते हैं। इसको पाषाणवज्र रस कहते हैं॥ १३-१९॥

इति अपस्माररोगचिकित्सा।

अथ वातव्याधिचिकित्सा।

द्विगुणाख्य रस।

गन्धकाद्द्विगुणं सूतं शुद्धं मृद्वग्निना क्षणम्।
पक्त्वाऽवतार्य संचूर्ण्य तुल्याभयसमन्वितम्॥ १॥
सप्तगुञ्जामितं खादेद्वर्द्धयेच्च दिने दिने।
गुञ्जैकैकक्रमेणैव यावत्स्यादेकविंशतिः॥ २॥

क्षीराज्यशर्कराभिश्च शाल्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
कम्पवातप्रशान्त्यर्थं निर्वाते निवसेत्सदा॥
द्विगुणाख्यरसो नाम त्रिपक्षात्कम्पवातजित्॥ ३॥

गंधक १ भाग और पारा २ भाग इन दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बना लेवे, फिर थोड़ी देरतक मंद मंद अग्निसे पकाकर चूर्ण कर लेवे, पश्चात् पारे और गंधक दोनोंके बराबर हरड़का चूर्ण मिलाकर सात रत्ती परिमाण भक्षण करे। यह सात रत्तीकी पहिले दिनकी मात्रा है। दूसरे दिन आठ रत्ती, तीसरे दिन नौ रत्ती इसी क्रमसे प्रतिदिन एक एक रत्ती बढ़ाकर इसका सेवन करे। जब बढ़कर २१ रत्ती परिमाण हो जाय तब फिर आगेको नहीं बढ़ावे। इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें दूध, घी और मिश्री मिलाकर शालि चावलोंका भात खाय। कम्पवातको दूर करनेके लिये रोगीको सदैव वायुरहित स्थानमें निवास करावे। इसके सेवन करनेसे तीन पक्षमें कम्पवात रोग नष्ट होता है। इसको द्विगुणाख्यरस कहते हैं॥ १-३॥

वातगजाङ्कुश।

मृतं सूतं मृतं लौहं ताप्यं गन्धकतालकम्।
पथ्या भृङ्गी विषं व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कणम्॥ ४॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये॥ ५॥
कणाचूर्णयुतश्चैव जिंगीक्काथं पिबेदनु।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजांकुशः॥ ६॥
सप्ताहाद्गृध्रसीं हन्ति दारुणं सान्निपातिकम्।
कोष्टुशीर्षकवातञ्चाप्यपबाहुकसंज्ञकम्॥ ७॥

मन्यास्तम्भमुरुस्तम्भं हनुस्तम्भं विनाशयेत्।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, लोहा, सोनामाखी, गंधक, हरिताल, हरड़, काकड़ाशिंगी, विष, त्रिकुटा, अरणी और सुहागा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर गोरखमुंडी और सम्हालूके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। सब प्रकारके वातरोगोंको शमन करनेके लिये जो इस औषधिका भक्षण करे तो इसके ऊपर पीपलका चूर्ण डालकर जिंगीके क्वाथका पान करे। इससे साध्यासाध्य वातरोग दूर होते हैं, एक सप्ताहमें गृध्रसी रोग दूर होता है। सन्निपात, क्रोष्टुशीर्ष, वातरोग, अपबाहुक वातरोग, मन्यास्तम्भ, ऊरुस्तम्भ और हनुस्तम्भ रोग नष्ट होते हैं। पक्षाघातादि रोगोंमें यह औषधि अतीव हितकारी है। इसको वातगजांकुश रस कहते हैं ॥ ४-८ ॥

रसो वारिशोषणोऽत्र युक्तोऽन्यो योगवाहिकः ॥ ९ ॥

वातव्याधि रोगमें वारिशोषण रस और अन्यान्य योगवाही रसोंका भी प्रयोग करना चाहिये ॥ ९ ॥

बृहद्वातगजांकुश रस।

सूताभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम्।
स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कट्फलश्चाभया विषम् ॥
पथ्या शृङ्गी पिप्पली च मरिचं टङ्कणं तथा ॥१०॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ॥
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजांकुशः ॥११॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, तीक्ष्ण लोहभस्म, कान्तलोहभस्म, तांबाभस्म, हरितालभस्म, गन्धक, सोनाभस्म, सोंठ, खिरैंटी, धनिया,

कायफल, हरड़, विष, छोटी हरड़, काकड़ाशिंगी, पीपल, काली मिरच और सुहागा यह सब औषधि समान भाग लेकर गोरखमुंडी और सम्हालूके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इससे साध्यासाध्य सब प्रकारका वात रोग नष्ट होता है। इसको बृहद्वातगजांकुश रस कहते हैं ॥ १०-११ ॥

महावातगजांकुश रस ।

मृताभ्रतीक्ष्णताम्रञ्च सूततालकगन्धकम् ।
भार्ङ्गी शुण्ठी बला धान्यं कट्फलश्चाभया विषम् १२
संपिष्य चपलाद्रावैर्निष्कैकां भक्षयेद्वटीम् ।
वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजांकुशः ॥ १३ ॥

अभ्रकभस्म, तीक्ष्ण लोहभस्म, तांबाभस्म, पारा, हरिताल, गंधक, भारंगी, सोंठ, खिरेंटी, धनिया, कायफल, हरड और विष इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र पीपलके क्राथमें खरल करके एक एक निष्क परिमाणकी गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक गोली भक्षण करनेसे वातकफजनित रोग नष्ट होते हैं। इसको महावातगजांकुश रस कहते हैं ॥ १२ ॥ १३ ॥

वातनाशन रस ।

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लोहञ्च माक्षिकम् ।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनं समांशिकम् ॥ १४ ॥
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत् ।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकन्तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत् ॥ १५ ॥
माषैकमार्द्रकद्रावैर्लिह्याद्वातविनाशनम् ।
पिप्पलीमूलकक्काथं सकृष्णमनुपाययेत् ॥
सर्वान्वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥ १६ ॥

रससिन्दूर, सोनाभस्म, हीराभस्म, तांबाभस्म, लोहाभस्म, सोनामाखीभस्म, हरितालभस्म, रसौत, तूतिया, समुद्रफेन और पांचों लवण यह सब औषधि समान भाग लेकर थूहरके दूधमें खरल करके मूषामें रखकर भूधरयन्त्रमें पकावे । इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि लेकर अदरखके रसके साथ सेवन करनेसे वातरोग नष्ट होता है । इसके सेवन करनेके अन्तमें पीपलके क्काथमें पीपलका चूर्ण डालकर पान करे । इससे आक्षेपकादि समस्त वातरोग नष्ट होते हैं ॥ १४-१६ ॥

वातारि रस ।

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः ।
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या चतुर्भागं तु चित्रकम् ॥ १७ ॥
गुग्गुलोः पञ्चभागं चैरण्डतैलेन मर्दयेत् ।
क्षिप्त्वात्र पूर्वकं चूर्णं पुनस्तेनैव मर्दयेत् ॥ १८ ॥
गुटिकां कर्षमात्रान्तु भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
नागरैरण्डमूलानां क्काथं तदनुपाययेत् ॥ १९ ॥
अङ्गमेरण्डतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशतः ।
विरेके तेन सञ्जाते स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥
वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः ॥ २० ॥

पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, त्रिफला ३ भाग, चित्रककी जड़ ४ भाग, गूगल ५ भाग लेवे । प्रथम गूगलको एरण्डीके तेलमें खरल करके पूर्वोक्त पारा आदि औषधियोंको मिलाकर फिर एरण्डीके तेलमें सबको एकत्र घोटे । इसमेंसे प्रतिदिन एक कर्ष परिमाण गोली बनाकर भक्षण करे । ऊपरसे सोंठ और एरण्डीकी जड़का क्काथ पीवे । पृष्ठसे लेकर सम्पूर्ण शरीरमें एरण्डीके तेलका मर्दन करे । जो एरण्डीतेलके मर्दन करनेसे दस्त होने लगे तो स्निग्ध और उष्ण पदार्थ भक्षण करे । वातरहित स्थानमें रहकर इस औषधिका सेवन करे । इसको वातारि रस कहते हैं ॥ १७-२० ॥

अनिलारि रस ।

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य वातारिनिर्गुण्डिरसैर्दिनैकम् । निवेशयेत्ताम्रमये पुटे तत्सर्वं मृदावेष्ट्य च वालुकाख्ये ॥ २१ ॥ यन्त्रे पुटेद्गोमयचूर्णवह्नौ स्वभावशीते तु समुद्धरेत्तत् । निर्गुण्डिकावातहराग्नितोयैः संचूर्ण्य यत्नेन विभावयेत्तत् ॥२२ ॥ रसोऽनिलारिः कथितोऽस्य वल्लमेरण्डतैलेनससैन्धवेन । मरीचचूर्णेन ससर्पिषा वा निर्गुण्डिचित्रैश्च कटुत्रिकैर्वा ॥ २३ ॥

पारा १ भाग और गंधक २ भाग लेवे, दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर एरण्डकी जड़ और सम्हालूके पत्तोंके रसमें एक दिन तक खरल करके तांबेके सम्पुटमें रखकर ऊपरसे कपरौटी करके वालुकायंत्रमें अरने उपलोंकी अग्निसे पकावे । जब अपने आप शीतल होजाय तब औषधिको निकालकर चूर्ण कर ले । फिर इस चूर्णको सम्हालूके पत्तेकी जड़ और चित्रककी जड़के रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर एरण्डीके तेल और सेंधानमक अथवा काली मिरचोंके चूर्ण और घृत अथवा सम्हालूके पत्तोंके रस और त्रिकुटेके चूर्णके साथ इसका सेवन करे ॥ २१-२३ ॥

वातकंटक रस ।

वज्रं मृताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमुण्डं क्रमोत्तरम् ।
मरिचे मर्दयेदम्लवर्गेण दिवसत्रयम् ॥ २४ ॥
द्विक्षारं पञ्चलवणं मर्दितं स्यात्समं समम् ।
ततो निर्गुण्डिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २५ ॥

शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषञ्चास्याष्टमांशतः ।
टङ्कणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ २६ ॥
भावयेद्दिनमेकन्तु रसोऽयं वातकण्टकः ।
दातव्यो वातरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ २७ ॥
द्विगुञ्जामार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणे ।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु महिषाक्षञ्च गुग्गुलुम् ॥ २८ ॥
समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसंमिता ।
अनुयोज्य घृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥२९॥
मण्डलं नाशयेत्सर्वं वातरोगे विशेषतः ।
सन्निपाते पिबेच्चानु तालमूलीकषायकम् ॥ ३० ॥

हीराभस्म १ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग, सोनाभस्म ३ भाग, तांबाभस्म ४ भाग, तीक्ष्णलोहभस्म ५ भाग, मुण्डलोह ६ भाग और काली मिरच ७ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके अम्ल वर्गकी औषधियोंमें तीन दिन तक खरल करके फिर इसके बराबर बराबर सज्जीखार, जवाखार, पांचों लवण मिलाकर सम्हालूके रसमें तीन दिन तक भावना देवे । जब शुष्क हो जाये तब चूर्णका आठवां भाग विष और विषकी बराबर सुहागा मिलाकर जम्भीरी नींबूके रसमें एक दिन तक भावना देवे । इस औषधिका वातरोग और सन्निपात रोगमें प्रयोग करे । इसको दो रत्ती परिमाण अदरखके रसके साथ अथवा घृतके साथ वातरोगीको देवे । इसके सेवन करनेके अन्तमें सम्हालूकी जड़का चूर्ण और गूगल समान भाग लेकर घृतमें मर्दन करके घृतके साथ एक कर्ष परिमाण भक्षण करावे । इसपर स्निग्ध और उष्ण पदार्थ पथ्य देवे । इसके सेवन करनेसे मण्डलरोग और सर्व प्रकारके वातरोग नष्ट होते हैं । सन्निपातरोगमें इस औषधिका सेवन कराकर ऊपरसे मुसलीका क्काथ पान करावे । इसको वातकण्टक रस कहते हैं ॥ २४–३० ॥

लघ्वानन्द रस ।

पारदं गन्धकं लौहमभ्रकं विषमेव च ।
समांशं मरिचस्याष्टौ टङ्कणन्तु चतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
भृङ्गराजरसेनैव दातव्या पञ्च भावना ।
तथा दाडिमतोयेन वटीं कुर्यात्समाहितः ॥
निहन्ति वातजान्रोगान्भ्रमदाहपुरःसरान् ॥ ३२ ॥

पारा, गंधक, लोहाभस्म, अभ्रकभस्म और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, काली मिरच ८ भाग और सुहागा ४ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र भांगरेके रसकी पांच और अनारके रसकी पांच भावना देकर गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे भ्रम और दाहसंयुक्त वातरोग नष्ट होते हैं । इसको लघ्वानन्द रस कहते हैं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

चिन्तामणि रस ।

कर्षैकं रससिन्दूरं तत्समं मृतमभ्रकम् ।
तदर्धं मृतलौहञ्च स्वर्णशाणं क्षिपेद्बुधः ॥ ३३ ॥
कन्यारसेन संमर्द्य गुञ्जामानां वटीञ्चरेत् ।
अनुपानादिकं दद्याद्बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥ ३४ ॥
हन्ति श्लेष्मान्वितं वातं केवलं पित्तसंयुतम् ।
हृल्लासमरुचिं दाहं वान्तिं भ्रान्तिं शिरोग्रहम् ॥३५॥
प्रमेहं कर्णनादञ्च जडगद्गदमूकताम् ।
बाधिर्यं गर्भिणीरोगमश्मरीसूतिकामयम् ॥ ३६ ॥
प्रदरं सोमरोगञ्च यक्ष्माणं ज्वरमेव च ।
बलवर्णाग्निदः सम्यक् कान्तिपुष्टिप्रसाधकः ॥
चिन्तामणिरसश्चायं चिन्तामणिरिवापरः ॥३७॥

रससिन्दूर २ कर्ष, अभ्रकभस्म १ कर्ष, लोहेकी भस्म आधा कर्ष, सोनेकी भस्म चौथाई कर्ष इन सब औषधियोंको एकत्र घीकारके रसमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। दोषोंका बला-बल विचार कर इसके अनुपानोंकी कल्पना कर ले। इस औषधिके सेवन करनेसे कफयुक्त वायु, पित्तयुक्त वायु, हृल्लास, अरुचि, दाह, वमन, भ्रम, मस्तककी पीड़ा, प्रमेह, कर्णनाद, जडता, गद्गदपन, मूकता, बधिरता, गर्भिणीरोग, अश्मरीरोग, सूतिका, प्रदर, सोमरोग, राजयक्ष्मा और ज्वर नष्ट होते हैं। यह बल, वर्ण, अग्नि, कांति और पुष्टिको बढ़ाता है। यह चिन्तामणिरस चिन्तामणिके समानहै॥ ३३–३७॥

चतुर्मुख रस।

रसगन्धकलौहाभ्रं समं सूतांघ्रि हेम च।
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यास्वरसमर्दितम्॥ ३८॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ दिनत्रयम्।
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य त्रिफलारससंयुतम्॥ ३९॥
एतद्रसायनवरं सर्वरोगेषु योजयेत्।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम्॥ ४०॥
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं पुत्रप्रसवकारकम्।
क्षयमेकादशविधं कासं पञ्चविधं तथा॥ ४१॥
कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगान्प्रमेहकान्।
शूलं श्वासञ्च हिक्काञ्च मन्दाग्निञ्चाम्लपित्तकम्॥४२॥
अपस्मारं महोन्मादं सर्वार्शांसि त्वगामयान्।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा॥ ४३॥
जगतां च हितार्थाय चतुर्मुखमुखोदितः।
रसश्चतुर्मुखो नाम चतुर्मुख इवापरः॥ ४४॥

पारा, गंधक, लोहाभस्म, अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और पारेसे चौथाई भाग सोनेकी भस्म लेवे । इन सबको एकत्र पीसकर घीकारके रसमें खरल करके एरण्डके पत्तोंमें लपेटकर तीन दिनतक धानोंके ढेरमें रख देवे । पश्चात् उसको निकालकर त्रिफलेके रसके साथ सर्व रोगोंमें प्रयोग करे । अग्निका बलाबल देखकर इसकी मात्राका निरूपण करे । इसके सेवन करनेसे वली और पलित रोग नष्ट होकर पुष्टि, बल और आयुकी वृद्धि होती है । इसके सेवन करनेसे पुत्ररहित स्त्री पुत्र प्रसव करनेको समर्थ होती है । इससे एकादश प्रकारके क्षय रोग, पांच प्रकारकी खाँसी, अठारह प्रकारके कुष्ठ, पांडु, प्रमेह, शूल, कास, हिचकी, मंदाग्नि, अम्लपित्त, अपस्मार, उन्माद, अर्श और सब प्रकारके चर्मरोग नष्ट होते हैं । जिस प्रकार वज्रसे वृक्षोंका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट होते हैं । पृथिवीकी रक्षाके लिये यह औषधि स्वयं ब्रह्मदेवने कही है । यह औषधि ब्रह्माके समान है इस कारण इसका नाम चतुर्मुख रस है ॥ ३८–४४ ॥

लक्ष्मीविलास रस ।

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ ।
बला नागबला भीरु विदारीकन्दमेव च ॥ ४५ ॥
कृष्णधूस्तूरनिचुलं गोक्षुरवृद्धदारयोः ।
बीजं शक्राशनस्यापि जातीकोषफले तथा ॥ ४६ ॥
कर्पूरश्चैव कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं पृथक्पृथक् ।
गृहीत्वा चाष्टमांशेन स्वर्णं पर्णरसेन च ॥ ४७ ॥
वटिकां स्विन्नचणकंप्रमाणां कारयेद्भिषक् ।
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं पूर्ववद्गुणकारकः ॥४८॥

कृष्णाभ्रकका चूर्ण १ पल, पारा २ तोले, गंधक २ तोले, खिरैंटी १ तोला, गंगेरन १ तोला, सतावर १ तोला, विदारीकंद १ तोला, काले

धतूरेके बीज १ तोला, जलवेंत (समुद्र फल) के बीज १ तोला, गोखुरु १ तोला, विधारेके बीज १ तोला, भांगके बीज १ तोला, जावित्री १ तोला, जायफल १ तोला, कपूर १ तोला और सोनाभस्म आधा तोला लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र करके पानोंके रसमें खरल करके सीजे हुए चनेकी बराबर गोली बना लेवे। यह औषधि चतुर्मुख रसके समान गुणकारक है। इसको महालक्ष्मी-विलास रस कहते हैं॥ ४५–४८॥

रोगेभसिंह।

सूताह्वयो घनवरानलवेल्लभार्ङ्गी तिक्ताकटुत्रयविषैः
सवचैः समांशैः। रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः
सान्द्रोऽयमल्पपटुतो विहितो द्विगुञ्जः॥ ४९॥

रससिन्दूर २ भाग, पारा, नागरमोथा, हरड़, बहेड़ा, आमला, चित्रककी जड़, वायविडंग, भारंगी, कुटकी, सोंठ, पीपल, मरिच, विष और वच यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इसके सेवन करनेसे कफवातज रोग नष्ट होते हैं, इस-लिये इसको रोगेभसिंह कहते हैं॥ ४९॥

श्रीखण्डवटी।

एतैर्गुडप्रमृदितै रसवर्जितैः स्यात्,
श्रीखण्डनामगुटिका विहिता द्विगुञ्जा।
शैत्याद्यजीर्णकफवातभवान् विकारान्,
हन्त्यार्द्रकेण नियुताप्यथ केवला वा॥ ५०॥

पूर्वोक्त रोगेभसिंह रसमें जो औषधि कही हैं उनमेंसे रससिन्दूरको निकालकर उसके स्थानमें गुड़ डालकर दो २ रत्ती परिमाणकी गोली बना लेवे। अदरखके रसके साथ अथवा अनुपानके विना इस औषधिके सेवन करनेसे शीतता, अजीर्ण और कफवातज रोग नष्ट होते हैं। इसको श्रीखण्डवटी कहते हैं॥ ५०॥

पिण्डी रस ।

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुगन्धकम् ।
सूतांशं नागवल्ल्याश्च द्रवैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ॥ ५१ ॥
ताम्रपत्रीं प्रलिप्तां तां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
द्विगुञ्जं त्र्यूषणेनार्द्धवपुर्वातं सकम्पकम् ॥
निहन्ति दाहसन्तापमूर्च्छापित्तसमन्वितम् ॥ ५२ ॥

पारा ५ भाग, तांबाभस्म १ भाग, गंधक पारेसे चौथाई भाग इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके पानोंके रसमें घोटकर तांबेके पत्रोंपर लेप करके मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे । इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर त्रिकुटेके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अर्द्ध-शरीरगत कंपवात, दाह, सन्ताप, मूर्च्छा और पित्तसंयुक्त वातरोग नष्ट होते हैं । इसको पिण्डी रस कहते हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

कुब्जविनोद रस ।

रसगन्धौ समौ शुद्धौ चाभया तालकं तथा ।
विषं कटुकिव्योषञ्च बोलजैपालकौ समौ ॥ ५३ ॥
भृङ्गराजरसैर्मर्द्य स्नुह्यर्कस्वरसैस्तथा ।
गुञ्जाद्वयं भक्षयेच्च हृच्छूलं पार्श्वशूलकम् ॥ ५४ ॥
आमवाताढ्यवातादीन्कटीशूलञ्च नाशयेत् ।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं स्थौल्यञ्चाप्यपकर्षति ॥
रसः कुब्जविनोदोऽयं गहनानन्दभाषितः ॥ ५५ ॥

पारा, गंधक, हरड़, हरिताल, विष, कुटकी, त्रिकुटा, गंधबोल और जमालगोटे इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर भांगरेके रसके द्वारा खरल करके पश्चात् थूहर और आकके दूधमें अलग अलग खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे

हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, ऊरुस्तम्भ और कटिशूल नष्ट होते हैं, जठराग्नि दीपन होती है और मेदरोग शमन होता है। इसको कुब्जविनोद रस कहते हैं ॥ ५३-५५ ॥

अथ शीतवातलक्षण ।

हिमवन्ति हि गात्राणि रोमाणि स्फुरितानि च ।
शिरोक्षिवेदनालस्य शीतवातस्य लक्षणम् ॥ ५६ ॥

जिस रोगमें रोगीका सर्वांग शीतल होजाय, समस्त अंग फड़के, शिर और नेत्रोंमें पीड़ा होय और आलस्य होय उसको शीतवायु रोग कहते हैं ॥ ५६ ॥

शीतारि रस ।

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाग्निस्वरसैर्विभाव्य । पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥५७॥ रसार्द्धभागञ्च विषञ्च दत्त्वा विपाचयेदग्निजले क्षणं तत् । शीतारिसंज्ञस्य रसायनस्य बलञ्च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण ॥ ५८ ॥ मरीचचूर्णेन घृताप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥ ५९ ॥

पारा १ भाग और गन्धक २ भाग दोनोंको एकत्र खरल करके पुनर्नवे और चित्रकके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर पारे और गन्धकसे अठगुने पक्व आकके पत्तोंके रसके द्वारा मूषा अथवा वालुका यन्त्रमें पकावे। फिर पारेसे आधा भाग विष मिलाकर थोड़ेसे चीतेके रसमें दुबारा पकावे। इस औषधिको दो रत्ती लेकर कालीमिरचोंके चूर्ण और अदरखके रसके द्वारा या कालीमिरचोंके चूर्ण और घृतके द्वारा सेवन करे। इस घृतके सेवन करनेपर मांस और घृत पथ्य देवे। इसको शीतारि रस कहते हैं ॥ ५७-५९ ॥

वातविध्वंसन रस ।

सूतमभ्रकसत्त्वं च कांस्यं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्द्धितम् ॥ ६० ॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम् ।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥ ६१ ॥
निम्बुद्रवेण संपीड्य तिलकल्केन लेपयेत् ।
अर्द्धांगुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ ६२ ॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलनिग्रहम् ॥ ६३ ॥
आध्मानक तथानाहं विषूचीं वह्निमान्द्यकम् ।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जराम् ॥ ६४ ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च क्रिमिरोगं विशेषतः ।
हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥ ६५ ॥
ज्वरे चैवातिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे ।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः ॥
श्रीमता नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः ॥ ६६ ॥

पारा १ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग, कांसाभस्म ३ भाग, सोनामाखी भस्म ४ भाग, गंधक ५ भाग और हरिताल ६ भाग लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर एरण्डीके तेलमें सात दिनतक खरल करके पिंडाकार बना लेवे; पश्चात् तिलोंको नीबूके रसमें पीसकर कल्क बनाकर उस गोलेके ऊपर आधा आधा अंगुल ऊंचा लेप कर देवे। फिर इसको सुखाकर वालुकायंत्रमें द्वादश प्रहर तक पकावे। इस औषधिके सेवन करनेसे उदरास्थित सर्वप्रकारकी पीड़ा, मलरोध, आध्मान, आनाह,

विषूचिका, मंदाग्नि, सर्व प्रकारके आमदोष, गुल्म, वमन, संग्रहणी, श्वास, खाँसी, क्रिमि, सर्वांगशूल और मन्यास्तम्भ रोग नष्ट होते हैं। इसको ज्वर, अतिसार, शूल और त्रिदोषज रोगमें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करे। यह वातविध्वंसन रस श्रीमान् महादेवने कहा है ॥ ६०–६६ ॥

पलाशादि वटी।

पलाशबीजोत्थरसेन सूतं गन्धेन युक्तं त्रिदिनं
विमर्द्य श्लक्ष्णीकृतं तद्विषतिन्दुबीजं संयोजयेदस्य
कलाप्रमाणम् ॥ मासद्वयं निष्कमितं प्रयत्ना-
दर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम् ॥ ६७ ॥
वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शाख्यानिलामयम्।
वातवत्पित्तरोगेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत् ॥
पलाशादिवटी ख्याता वातरोगकुलान्तिका ॥६८॥

पारा और गंधक दोनोंको समान भाग लेकर ढाकके बीजोंके रसमें तीन दिनतक अच्छे प्रकारसे खरल करके फिर उसमें पारे और गंधकसे सोलहवां भाग कुचिलेका चूर्ण मिला लेवे। इसमेंसे प्रतिदिन चार मासे परिमाण औषधि लेकर प्रातःकाल भक्षण करे। इस प्रकार दो मास पर्यंत औषधि सेवन करनेसे बवासीर, वातरक्त, शोथ और स्पर्शज्ञानकी हीनता रोग दूर होते हैं। इस औषधिको पित्तके रोगोंमें प्रयुक्त करे तो पांच पित्तोंके द्वारा भावना देवे। इसको वातनाशक-पलाशादि वटी कहते हैं ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

दशसार वटी।

यष्टी धात्री बला द्राक्षा एला चन्दनवालुकम्।
मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम् ॥ ६९ ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्द्धं भक्षयेत्सदा।

दशसारवटी ख्याता सर्ववातविकारनुत् ॥
अथ दाडिममित्यत्र गणमिच्छन्ति चापरे॥७०॥

मुलैठी, आमले, खिरैंटी, दाख, इलायची, लालचंदन, सुगंधवाला, महुवेके फूल, खजूर और अनार यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबकी बराबर मिश्री लेवे। सबको एकत्र मिलाकर प्रतिदिन इसमेंसे दो तोले परिमाण औषधि सेवन करे। और कितनेक वैद्य इसमें दाडिमके स्थानमें दाडिमाद्यगण व्यवहार करते हैं। इसको दशसारवटी कहते हैं ॥ ६९ ॥ ७० ॥

गगनादिवटी।

मृतगगनरसार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं सबलि सममिदं स्याद्यष्टितोयप्रविष्टम्। तदनु सलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभिर्मृदितमनुविदारीवारिणा घस्रमेकम् ॥ ७१ ॥ घृतमधुसहितेयं वल्लमात्रा वटीति क्षपयति गुरुवातं पित्तरोगं क्षयञ्च। भ्रममदकफशोषान् दाहतृष्णासमुत्थान् मलयजमिह पेयं चानुपेयं सचन्द्रम् ॥ ७२ ॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, तांबाभस्म, मुण्डलोहभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, शुद्ध सोनामाखीभस्म और गंधक यह सब औषधि समान भाग लेकर मुलैठीके क्वाथमें मर्दन करके फिर अडूसे और दाखके क्वाथमें घोटे। पश्चात् विदारीकंदके रसमें एक दिन तक खरल करके २-२ रत्तीकी गोली बना लेवे। घी और सहतके साथ इस औषधिके भक्षण करनेसे अत्यंत दुस्तर वातरोग, पित्तरोग, क्षय, भ्रम, मत्तता, कफज शोथ, दाह और तृषारोग नष्ट होते हैं। इसका सेवन करके ऊपरसे सफेद चंदन और कपूरको भक्षण करे। इसको गगनादिवटी कहते हैं ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस ।

शुद्धसूताभ्रताम्रायोहिङ्कुलं कार्षिकं समम् ।
गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ ७३ ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक्क्षीरवासावातारिवारिणा ।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तद्गोलकीकृतम् ॥ ७४ ॥
विपचेद्वालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत् ।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिषूदनः ॥ ७५ ॥

पारा, अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, लोहभस्म, सिंग्रफ और गंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर सतोनेके दूध, आकके दूध, थूहरके दूध, अडूसेके रस और एरंडकी जड़के रसके द्वारा खरल करके उसमें समभाग कुचला मिलावे। फिर खरल करते करते जब खूब गाढ़ा होजाय तब गोलासा बना लेवे। फिर इसको दो प्रहरतक वालुकायंत्रमें पकावे। शीतल होनेपर फिर उसमें पीपलका चूर्ण १ कर्ष और विष १ कर्ष मिलावे। इस औषधिको यथोचित मात्रानुसार यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके वातरोग और सर्व प्रकारके शूल नष्ट होते हैं। इसको सर्वांगसुन्दर रस कहते हैं ॥ ७३-७५ ॥

तालकेश्वर रस ।

एकभागो रसस्य स्याच्छुद्धस्तालैकभागिकः ।
अष्टौ स्युर्विजयायाश्च गुटिकां गुडतश्चरेत् ॥ ७६ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातश्छायायामुपवेशयेत् ।
तालकेश्वरनामायं रोगश्चास्पर्शनाशनः ॥ ७७ ॥

रससिन्दूर १ भाग, हरिताल १ भाग, भांगका चूर्ण ८ भाग लेवे और सब औषधियोंसे दुगुना पुराना गुड़ लेवे। इसकी गोली बना-

कर प्रातःकाल भक्षण करे और छायामें विश्राम करे। इसके सेवन करनेसे स्पर्शज्ञानकी हीनता दूर होती है। इसको तालकेश्वर रस कहते हैं ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

महाराजेश्वर रस।

रसभस्म लौहमभ्रं सिंदूरं स्वर्णभस्मकम्।
प्रवालं रजतं कांस्यं तालकं च समं समम् ॥ ७८॥
आर्द्रकस्वरसेनैव त्रिदिनं मर्दयेद्भिषक्।
ततश्चतुष्टयं यामं पुटं दद्याद्गजाह्वये ॥ ७९ ॥
ततः समुद्धृतं चैतद् वाटचालकरसेन च।
मर्दयित्वा वटी कार्या त्रिगुञ्जाफलसन्निभा ॥ ८० ॥
बहुदोषान्वितं वातं रक्तेन सह मूर्च्छितम्।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वातपित्तकफोत्थितान् ॥ ८१ ॥

रससिन्दूर, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, स्वर्णसिन्दूर, सोनेकी भस्म, मूंगाभस्म, रूपाभस्म, कांसाभस्म और हरिताल यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसमें तीन दिन तक खरल करके चार प्रहरतक गजपुटमें पकावे। जब अपने आप शीतल होजाय तब निकाल कर खिरैंटीके रसमें खरल करके तीन तीन रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे बहुत दोषयुक्त वातरोग, रक्तवात, वातपित्त और कफज रोग नष्ट होते हैं ॥ ७८-८१ ॥

वातकेशरी रस।

शिलायां निगुडं नागं ताप्यं भस्मार्द्धभागिकम्।
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुद्धस्य विमलस्य च ॥ ८२ ॥
कान्ताभ्रसत्त्वयोश्चापि स्फटिकस्य पृथक् पृथक्।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्त्रिफलवारिणा ॥ ८३ ॥

त्रिंशद्वनोपलेनैव त्रिंशद्वारं विचूर्णयेत्।
व्योषवल्कलचूर्णैश्च समांशैः सह लेहयेत् ॥ ८४ ॥
मध्वाज्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया।
अशीतिवातजान्रोगान्धनुर्वातं विशेषतः ॥ ८५ ॥
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः।
कासं श्वासं पाण्डुरोगं श्वयथुं सूतिकामयम् ॥ ८६ ॥
ग्रहणीमामदोषं च वह्निमान्द्यं मृदुज्वरम्।
सर्वान् रोगांश्च दोषांश्च नाशयेदनुपानतः ॥ ८७ ॥

सीसेकी भस्म १ भाग, सोनामाखी आधा भाग, शुद्ध रूपामाखी, कांतलोह, अभ्रक और स्फटिककी भस्म यह प्रत्येक औषधि सीसेसे चौथाई भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र त्रिफलेके रसमें खरल करके पुटमें पकावे। इसप्रकार तीस वार त्रिफलेके रसमें खरल करके तीस वार पुटके द्वारा पकावे। पश्चात् चूर्ण करके दो रत्ती परिमाण लेकर दो रत्ती परिणाम त्रिकुटे और दालचीनीके चूर्णके साथ सेवन करे। सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे अस्सी प्रकारके वातरोग, धनुर्वात, बहुत प्रकारके कफज रोग, सर्व प्रकारके मूत्ररोग, खाँसी, श्वास, क्षय, पांडु, शोथ, सूतिका, संग्रहणी, आमदोष, मंदाग्नि और मन्दज्वर नष्ट होते हैं। इसको भिन्न भिन्न अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकारके रोग और सर्व प्रकारके दोष दूर होते हैं। इसको वातकेशरी रस कहते हैं ॥ ८२-८७ ॥

त्रैलोक्यचिन्तामणि रस।

हीरं सुवर्णं सुमृतञ्च तारमेषां समं तीक्ष्णरजश्चतुर्णाम्। समं मृताभ्रं रससिन्दुरञ्च निष्पिष्टतीक्ष्णस्य तथाश्मनो वा ॥ ८८ ॥ खल्ले द्रवेणैव कुमारिकाया गुञ्जाप्रमाणां वटिकां प्रकुर्यात्। त्रैलोक्यचिन्ता-

मणिरेष नाम्ना संपूज्य सम्यग्गिरिजां दिनेशम् ॥
॥ ८९ ॥ हन्त्यामयान्योगशतैर्विवर्ज्यामयप्रणाशाय मुनिप्रणीतः । अस्य प्रसादेन गदानशेषाञ्जरां विनिर्जित्य सुखं विभाति ॥ ९० ॥

हीराभस्म, सोनाभस्म और चाँदीभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, तीक्ष्ण लोहभस्म ३ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, और रससिन्दूर ६ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र करके लोह अथवा पत्थरके खरलमें घीकारके रसके द्वारा खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । पार्वती और सूर्यदेवकी पूजा करके इस औषधिका सेवन करना आरम्भ करे । जो रोग सैकड़ों औषधियोंके सेवन करनेसे भी शांत नहीं होते उन समस्त रोगोंको शमन करनेके लिये यह औषधि मुनिजनोंने कही है । इस औषधिके प्रभावसे मनुष्योंके समस्त रोग और वृद्धता नष्ट होकर सुखकी वृद्धि होती है ॥ ८८–९० ॥

स्निग्धे श्लेष्मण्यार्द्रकस्य रसेन पाययेत्सुधीः ।
शुष्के च माक्षिकेणैव पित्ते घृतसितायुतम् ॥९१॥
श्लेष्मणि मारुते सम्यग्दुष्टे च समतां गते ।
कणाचूर्णं क्षौद्रयुतं प्रमेहे दुग्धसंयुतम् ॥ ९२ ॥
बलवर्णाग्निजननः कासघ्नः कफवातजित् ।
आयुःपुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोगनिषूदनः ॥ ९३ ॥

इति वातव्याध्यधिकारः ।

जो कफकी स्निग्धता हो तो अदरखके रसके साथ, कफ शुष्क (खुश्क) होय तो सहतके साथ, पित्तयुक्त वातरोगमें घृत और मिश्रीके साथ, कफाश्रित वायुमें और जो वायु अच्छे प्रकारसे दूषित होकर चिकित्सासे शमन नहीं होती ऐसी वायुमें पीपलके चूर्ण और

सहतके साथ और प्रमेह रोगमें दूधके साथ इस औषधिको भक्षण करे। इस औषधिके सेवन करनेसे बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है। कासरोग, कफरोग और सब प्रकारके वायुरोग नष्ट होते हैं। आयु, पुष्टि और शुक्रकी वृद्धि होती है तथा सब प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। इसको त्रैलोक्याचिन्तामणि रस कहते हैं ॥ ९१-९३ ॥

इति वातव्याधिचिकित्सा।

अथ कफरोगाधिकार।

श्लेष्मकालानल रस।

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धकाद्द्विगुणं विषम्।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥ १ ॥
रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतकी।
धात्रीपुष्करमूलञ्च अजमोदाजगन्धिका ॥ २ ॥
विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ३ ॥
भावयेत्सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः ॥ ४ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, विष ४ भाग, त्रिकुटेका चूर्ण ८ भाग, हरड़ १ भाग, बहेड़ा १ भाग, आमला १ भाग, कूठ १ भाग, अजवायन १ भाग, अजमोद १ भाग, वायविडंग १ भाग, कायफल १ भाग, चव्य १ भाग, पांचों लवण ५ भाग, लौंग १ भाग, निसोथ १ भाग और दंती १ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर तुलसीके रसमें सात भावना देवे। इसके सेवन करनेसे समस्त कफज रोग नष्ट होते हैं। इसको श्लेष्मकालानल रस कहते हैं ॥ १-४ ॥

श्लेष्मशैलेन्द्र रस ।

पारदं गन्धकं लौहं त्र्यूषणं जीरकद्वयम् ।
शृङ्गी शटी यमानी च पौष्करश्चार्द्रकन्तथा ॥ ५ ॥
गैरिकं यावशूकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जातीकोषाजमोदा च वरायासलवंगकम् ॥ ६ ॥
कणकारुणबीजानि कट्फलं चव्यकं तथा ।
प्रत्येकं तोलकञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ७ ॥
पाषाणे विमले खल्ले घृष्टं पाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रफलत्रिकाः ॥ ८ ॥
निर्गुण्डी गणिका वासा चेन्द्राशनं प्रचोदनी ।
धुस्तूरं कृष्णजीरञ्च पारिभद्रकपिप्पली ॥ ९ ॥
एतेषाञ्च रसैर्मर्द्यमार्द्रकैश्च विभावयेत् ।
उष्णतोयानुपानेन सर्वं व्याधिं विनाशयेत् ॥ १० ॥
विंशतिं श्लैष्मिकान्रोगान्सन्निपातभवान्गदान् ।
उदराष्टकदुर्नाममामवातञ्च दारुणम् ॥ ११ ॥
पञ्च पाण्ड्वामयान्दोषान्क्रिमिं स्थौल्यमथो नृणाम् ।
यथा शुष्केन्धने वह्निस्तथैवाग्निविवर्द्धनः ॥ १२ ॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, त्रिकुटा, जीरा, काला जीरा, काकड़ाशिंगी, कचूर, अजवायन, कूठ, सोंठ, गेरू, जवाखार, सुहागा, गजपीपल, जावित्री, अजमोद, त्रिफला, धमासा, लौंग, धतूरेके बीज, आकके बीज, कायफल और चव्य यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र करके पत्थरके खरलमें डालकर पत्थरकी मूसलीसे पीसे । फिर बेलको जड़का रस, आककी जड़का रस, चित्रककी जड़का रस, त्रिफलेका रस,

सम्हालके पत्तोंका रस, अरणीकी जड़का रस, अडूसेके पत्तोंका रस, भांगके पत्तोंका रस, कटेरीका रस, धतूरेके पत्तोंका रस, काले जीरेका क्वाथ, फरहदका क्वाथ,पीपलका क्वाथ और अदरखका रस इन प्रत्येकके रसमें अलग २ मर्दन करके सात सात वार भावना देकर गोली बना लेवे। उष्ण जलके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे बीस प्रकारके कफके रोग, त्रिदोष व्याधि, आठ प्रकारके उदररोग, बवासीर, आमवात, पांच प्रकारका पांडु रोग, क्रिमि और मेदरोग नष्ट होते हैं। जिस प्रकार सूखे काष्ठमें अग्नि शीघ्र ही प्रविष्ट होकर प्रचण्ड हो जाती है उसी प्रकार इस औषधिसे जठरानल दीप्त होती है। इसको श्लेष्मशैलेन्द्र रस कहते हैं ॥ ९-१२ ॥

महाश्लेष्मकालानल रस।

हिंगुलसम्भवं सूतं शिलागन्धकटंकणम्।
ताम्रं वङ्गं तथाभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ १३ ॥
धूस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं हिंगु पिप्पलिकट्फलम्।
दन्तीबीजं सोमराजी वनराजफलत्रिवृत् ॥१४॥
वज्रीक्षीरेण संमर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक्।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथाबलम् ॥ १५ ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
मदसिंहो यथारण्ये मृगाणां कुलनाशनः ॥
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥ १६ ॥

सिंग्रफसे निकाला हुआ पारा, मैनशिल, गंधक, सुहागा, तांबाभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, सोनामाखीभस्म, हरिताल, धतूरेके बीज, सेंधानमक, कूठ, हींग, पीपल, कायफल, दंतीके बीज, बावचीके बीज, अमलतासकी फली और निसोतकी जड़ इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर थहरके दूधमें खरल करके मटरकी बरा-

बर गोली बना लेवे । प्रतिदिन एक गोली खानेसे वज्रसे नष्ट हुए वृक्षके समान सन्निपातरोग नष्ट होता है । जिस प्रकार उन्मत्त सिंह वनके बीचमें पशुओंका नाश करता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे रोगोंका समूह नष्ट होता है । इसको महाश्लेष्मकालानल रस कहते हैं ॥ १३-१६ ॥

महालक्ष्मीविलास रस ।

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धं गन्धकं भवेत् ।
तदर्द्धं वङ्गभस्मापि तदर्द्धं पारदं तथा ॥ १७ ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्द्धं ताम्रभस्मकम् ।
रससाम्यञ्च कर्पूरं जातीकोषफले तथा ॥ १८ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणकम् ॥१९॥
निष्पिष्य वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान्घोरान्सुदारुणान् २०॥
गलोत्थानन्त्रवृद्धिञ्च तथातीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्विंशतिन्तथा ॥ २१ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजन्तथा ।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ २२ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत् ।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥२३॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैजाडचमेव च ।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ २४ ॥

वज्राभ्रकका चूर्ण १ पल, गंधक आधा पल, वंगभस्म १ तोला, पारा ६ मासे, हरिताल ६ मासे, तांबेकी भस्म ३ मासे, कपूर, जाय-

फल और जावित्री यह प्रत्येक औषधि छः छः मासे, विधारेके बीज और धतूरेके बीज यह प्रत्येक एक एक तोला और सोनाभस्म ४ मासे लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र मर्दन करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे त्रिदोषज सर्व प्रकारके रोग, गलोत्थ रोग, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, ग्यारह प्रकारके महाकुष्ठ, वीस प्रकारके प्रमेह, कफवातज श्लीपद, चिरकालका श्लीपद, वंशज श्लीपद, नाडीव्रण, व्रण, भगन्दर, खांसी, पीनस, राजयक्ष्मा, बवासीर, मेदरोग, दुर्गंध, रुधिरजनित रोग, सर्व प्रकारका आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कर्ण, नासिका, नेत्र और मुखकी जड़ता, सर्व प्रकारका शूल, शिरःशूल और स्त्रीरोग प्रभृति नष्ट होते हैं॥ १७-२४॥

वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम्।
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयो दधि॥ २५॥
वारिभक्तं सुराशीधुसेवनात्कामरूपधृक्।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत्॥ २६॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्कताम्।
नित्यं गच्छेच्छतं स्त्रीणां मत्तवारणविक्रमः॥ २७॥
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकस्तथा।
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना॥ २८॥
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं वासुदेवो जगत्पतिः।
प्रसादादस्य भगवान् लक्षनारीषु वल्लभः॥ २९॥

प्रतीदिन प्रातःकाल नित्य इसकी एक गोली खाय और इसपर मांस, मिष्टान्न (पक्कान्न) दूध, दही, जलयुक्त भात अथवा मांडयुक्त भात और मदिरा सेवन करे तो कामदेवके समन स्वरूपवान् हो।

जाता है तथा वृद्ध मनुष्य भी युवाके समान स्पर्द्धायुक्त होता है। कदापि शुक्रक्षय नहीं होता, लिंगमें शिथिलता नहीं उत्पन्न होती, बाल सुफेद् नहीं होते, उन्मत्त हाथीके समान प्रतिदिन सैकड़ों स्त्रियोंसे रमण करनेको समर्थ होता है, दो लक्ष योजन तक देखनेको समर्थ हो जाता है और शरीरमें पुष्टिकी वृद्धि होती है । जगत्पति श्रीकृष्ण भगवान् इसी औषधिका सेवन करके लक्ष स्त्रियोंके साथ विषय करनेको समर्थ हुए थे। इस उत्तम औषधिको महात्मा नारद्जीने कहा है । इसको महालक्ष्मीविलास रस कहते हैं ॥ २५-२९ ॥

कफकेतु रस ।

टङ्कणं मागधी शङ्खं वत्सनाभं समं समम् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३० ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै ।
पीनसं श्वासकासं च गलरोगं गलग्रहम् ॥ ३१ ॥
दन्तरोगं कर्णरोगं नेत्ररोगं सुदारुणम् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु कफकेतुरसोत्तमः ॥ ३२ ॥

सुहागा, पीपल, शंखकी भस्म और विष यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसमें तीन भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। अदरखके रसके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे पीनस, श्वास, खाँसी, गलरोग, गलेकी पीड़ा, दन्तरोग, कर्णरोग, नेत्ररोग और सान्निपात रोग नष्ट होते हैं । इसको कफकेतु रस कहते हैं ॥ ३०-३२ ॥

कफचिन्तामणि रस ।

हिंगुलेन्द्रयवं टङ्कं त्रैलोक्यबीजमेव च ।
मरिचञ्च समं सर्वं त्रिभागं रससिन्दुरम् ॥ ३३ ॥

आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेद्याममात्रकम्।
चणकाभा वटी कार्या सर्ववातप्रशान्तये॥
कफरोगं निहंत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥ ३४॥

इति कफरोगाधिकारः।

सिंग्रफ, इन्द्रजौ, सुहागा, भांगके बीज और काली मिरच यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, रससिन्दूर ३ भाग इन सबको एकत्र खरल कर फिर अदरखके रसमें एक प्रहरपर्यन्त खरल करके चनेकी बराबर गोली बना सेवन करनेसे सर्व प्रकारके वातरोग और कफरोग ऐसे नष्ट होते हैं जिस प्रकार सूर्योदयसे अन्धकारका समूह नष्ट होता है। इसे कफचिन्तामणि रस कहते हैं॥ ३३॥ ३४॥

इति कफरोगाधिकार सम्पूर्ण।

अथ पित्तरोगचिकित्सा।

गुडूच्यादिलोह।

गुडूचीसारसंयुक्तं त्रिकत्रययुतन्त्वयः।
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्ववातहरं परम्॥ १॥

गिलोयका सत्त, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रककी जड़, नागरमोथा और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और लोहेकी भस्म १० भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके यथामात्राकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे वातरक्त और सर्व प्रकारके वातरोग नष्ट होते हैं। इसको गुडूच्यादि लोह कहते हैं॥ १॥

धात्रीलोह।

धात्रीचूर्णस्याष्टौ पलानि चत्वारि लौहचूर्णस्य।
यष्टीमधुकरजश्च द्विपलं दद्यात्पुटे घृष्टम्॥ २॥

धात्र्याश्च क्काथेन तच्चूर्णं भाव्यञ्च सप्ताहम् ।
चण्डातपेन संशुष्कं भूयः पिष्टं घटे स्थितम् ॥ ३ ॥
घृतेन मधुना युक्तं भोजनाद्यन्तमध्यतः ।
त्रीन्वारान्भक्षयेन्नित्यं पथ्यं दोषानुबन्धतः ॥ ४ ॥
भुक्तस्यादौ नाशयेच्च दोषान्पित्तकृतानपि ।
मध्ये चानाहविष्टब्धं तथान्ते चाग्निमान्द्यताम् ।
रक्तपित्तसमुद्भूतान् रोगान् हन्ति न संशयः ॥ ५ ॥

आमलोंका चूर्ण ८ पल, लोहेकी भस्म ४ पल और मुलैठीका चूर्ण २ पल इन सब औषधियोंको एकत्र करके आमलोंके क्काथमें सात भावना देकर प्रचण्ड सूर्यकी धूपमें सुखाकर फिर मर्दन करे। पश्चात् इस औषधिको घृत और सहतके साथ भोजनकी आदि, अंत और मध्य अवस्थामें तीन वार सेवन करावे। इस औषधिके सेवनके अन्तमें यथादोषानुसार पथ्य देवे। भोजनकी आदिमें इस औषधिके सेवन करनेसे समस्त पित्तज रोग नष्ट होते हैं, भोजनकी मध्य अवस्थामें इस औषधिके सेवन करनेसे आनाह और विष्टब्धाजीर्ण शमन होते हैं, भोजनके अन्तमें सेवन करनेसे मन्दाग्नि और समस्त रक्तपित्तोत्पन्न रोग दूर होते हैं। इसको धात्रीलोह कहते हैं ॥ २-५ ॥

पित्तान्तक रस ।

जातीकोषफले मांसी कुष्ठं तालीशपत्रकम् ।
माक्षिकं मृतलौहञ्च अभ्रं दिव्यं समांशकम् ॥ ६ ॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा ।
द्विगुञ्जाभा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥ ७ ॥
कोष्ठाश्रितञ्च यत्पित्तं शाखाश्रितमथापि वा ।
शूलञ्चैवाम्लपित्तञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ ८ ॥

दुर्नामभ्रान्तिवान्तिश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत्।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥ ९ ॥

जावित्री, जायफल, वालछड़, कूठ, तालीशपत्र, सोनामाखी, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, लौंग यह सब औषधि समान भाग और चाँदीभस्म सबके बराबर लेकर जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके पित्तरोग, कोष्ठाश्रित पित्त, शाखाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पांडुरोग, हलीमक, बवासीर, भ्रम और वमन शांत होते हैं। इसको काशिराज दिवोदासने कहा है॥६-९॥

महापित्तान्तक रस।

यदात्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते।
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशनः ॥ १० ॥

इति पित्तरोगचिकित्सा।

पित्तान्तक रसमें जो औषधि कही हैं उनमेंसे सोनामाखीको निकालकर उसके स्थानमें सोनेकी भस्म डाले तो इसको महापित्तान्तक रस कहते हैं। इससे सर्व प्रकारके पित्तरोग नष्ट होते हैं ॥ १० ॥

इति पित्तरोगाधिकार सम्पूर्ण।

अथ वातरक्तरोगचिकित्सा।

लाङ्गल्याद्य लोह।

विशुद्धलाङ्गलीमूलत्रिकटुत्रिफलैस्तथा।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत् ॥ १ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद्गुटिकां कोलसम्मिताम्।
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं शृणु कुर्वन्ति यान्गुणान् ॥ २ ॥

आजानुस्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ।
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यासाध्यञ्च शोणितम् ॥३॥

कलिहारीकी जड़, त्रिकुटा, त्रिफला, दाख और गूगल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, लोहाभस्म ९ नव भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर बिजोरे नींबूके रसमें और त्रिफलेके रसमें खरल करके एक एक तोलेकी गोली बना लेवे । सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे जानुपर्यंत स्फुटित वातरक्त, सर्वांग स्फुटित वातरक्त और साध्यासाध्य वातरक्त नष्ट होता है । इसको लाङ्गल्याद्य लोह कहते हैं ॥ १–३ ॥

वातरक्तान्तक रस ।

गन्धकं पारदं लौहं शिलां तालं घनं तथा ।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ४ ॥
श्वेतापराजिता दार्वी वागुची चित्रकं तथा ।
पुनर्नवा देवकाष्ठत्रिफलाव्योषवेल्लकम् ॥ ५ ॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
त्रिफलाभृंगराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा ॥ ६ ॥
भावयेद्भक्षयेत्पश्चाच्चणमात्रं दिने दिने ।
ततोनुपात्रं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥ ७ ॥
शाणमानं घृतैः कुर्यात्सर्ववातविकारनुत् ।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजं च यत् ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्यलम् ॥ ८ ॥

गंधक, पारा, लोहभस्म, मैनशिल, हरिताल, नागरमोथा, शिलाजीत, गूगल, सुफेद कोइलकी जड़, दारुहलदी, बावची, चीतेकी जड़, पुनर्नवा, देवदारु, त्रिफला, त्रिकुटा और वायविडंग इन सब औषधियोंको

समान भाग लेकर त्रिफलेके रसमें तीन और भांगरेके रसमें तीन भावना देवे, पश्चात् चनेकी बराबर प्रतिदिन एक एक गोली सेवन करावे । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें नीमके पत्ते, नीमके फूल और नीमकी छालका चूर्ण बनाकर घृतके द्वारा सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके वातरोग, घोरतर गम्भीर त्रिदोषज, सर्व उपद्रव संयुक्त और साध्यासाध्य वातरक्त नष्ट होता है। इसको वातरक्तान्तक रस कहते हैं ॥ ४-८ ॥

तालभस्म ।

हरितालं पलं शुद्धं तथा कर्षं विषस्य च ।
श्वेताङ्कोठरसेनैव द्वयमेकत्र खल्लयेत् ॥ ९ ॥
पलाशभस्म द्विपलं निधाय स्थालिकोपरि ।
तद्भस्मोपरि तालस्य गोलकं स्थापयेत्सुधीः॥ १० ॥
तस्योपरि अपामार्गभस्म दद्यात्पलत्रयम् ।
स्थालीमुखे शरावञ्च दद्याद्यत्नेन लेपयेत् ॥ ११ ॥
लेपयित्वा ततश्चुल्ल्यामहोरात्रं पचेद्भिषक् ।
ततस्तु जायते भस्म शुद्धकर्पूरसन्निभम् ॥ १२ ॥
गुञ्जात्रयं ततो भक्ष्यमनुपानविशेषतः ।
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुविस्फोटकापचीम् ॥ १३ ॥
विचर्चिकां चर्मदलं वातरक्तञ्च शोणितम् ।
रक्तपित्तं तथा शोथं गलत्कुष्ठं विनाशयेत् ॥
हलीमकं तथा शूलमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥ १४ ॥

शुद्ध हरिताल १ पल और विष १ कर्ष परिमाण लेवे । दोनोंको एकत्र सुफेद अंकोलकी जड़के रसमें खरल करके पिंडसा बना लेवे । फिर एक हांडीमें दो पल परिमाण ढाकका खार बिछाकर

उसपर इस हरितालके गोलेको रख देवे और उसके ऊपर तीन पल परिमाण चिरचिटेका खार डालकर ऊपरसे एक सिकोरेसे हांडीके मुखको बंद करके मट्टीसे उसके जोड़ोंको बंद कर देवे । फिर इस हांडीको चूल्हेपर रखकर एक दिन रात बराबर अग्नि देवे । जब शीतल होजाय तब इसमेंसे कर्पूरकी समान हरितालकी भस्मको लेकर तीन रत्ती परिमाण यथोक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसे वातरक्त, कुष्ठ, दद्रु, विस्फोटक, अपची, विचर्चिका, चर्म्मदल, रक्तपित्त, शोथ, गलत्कुष्ठ, हलीमक, शूल, मंदाग्नि और अरुचिरोग नष्ट होते हैं । इसको तालभस्म कहते हैं ॥ ९-१४ ॥

महातालेश्वर रस ।

तथा सिद्धेन तालेन गन्धतुल्येन मेलयेत् ।
द्वयोस्तुल्यं जीर्णताम्रं वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १५ ॥
अयं तालेश्वरो नाम रसः परमदुर्लभः ।
हन्यात्कुष्ठानि सर्वाणि वातरक्तमथापि च ॥
शूलमष्टविधं श्वित्रं रसस्तालेश्वरो महान् ॥ १६ ॥

पूर्वोक्त हरितालकी भस्म और गंधक दोनोंको समान भाग लेवे और दोनोंकी बराबर जारित तांबा मिलाकर वालुकायंत्रमें पकावे । इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, आठ प्रकारका शूल और श्वित्र रोग नष्ट होते हैं । इसको महातालेश्वर रस कहते हैं ॥ १५ ॥ १६ ॥

विश्वेश्वर रस ।

रसाद्दश विषात्पञ्च गन्धकाद्दश शोधितात् ।
तुत्थाद्दश पलाशस्य बीजेभ्यः पञ्च कारयेत ॥ १७ ॥
क्षुद्राश्वमारधूस्तूर-करहाटकनीलितः ।
दशकं दशकं कुर्याच्छोषयित्वा जटात्वचः ॥ १८ ॥

दशकं दशकं दत्त्वा कुचिलाद्दश नूतनात् ।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक् ततः ॥ १९ ॥
सुदिने च बलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः ।
रक्तिकाद्वितयं दद्यात्सहते यदि वा त्रयम् ॥ २० ॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम् ।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वास्थिनिःसृतम् ॥२१॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥ २२ ॥

पारा १० भाग, विष ९ भाग, गन्धक १० भाग, तूतिया १० भाग, ढाकके बीज ९ भाग, कटेरी १० भाग, कनेर १० भाग, धतूरा १० भाग, कमलकी जड १० भाग और नील वृक्ष दश भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर कटेरी, कनेर, धतूरा, कमल और नील-वृक्ष इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग दश दश भावना देकर पश्चात् कुचिलेके क्वाथमें दश भावना देवे। फिर भिलावेके क्वाथमें दश भावना देवे। पश्चात् चूर्ण करके एक उत्तम वासनमें भरकर रख देवे। अनन्तर शुभ दिनमें देवताका पूजन करके दो रत्ती परिमाण अथवा बलानुसार तीन रत्ती परिमाण औषधि सेवन करावे। इस औषधिके सेवन करनेसे वातरक्त, ज्वर, कुष्ठ, दुःखको देनेवाला खरस्पर्श, जानुपर्य्यंत स्फुटित वातरक्त, विषज रोग, अस्थिगत रोग, अठारह प्रकारके कुष्ठ, मंदाग्नि और अरुचि रोग नष्ट होते हैं। इस विश्वेश्वररसको महादेवने कहा है ॥ १७–२२ ॥

वक्ष्यते कुष्ठरोगे यदौषधं भिषजां वरैः ।
वातरक्ते प्रयुञ्जीत कुर्याच्च रक्तमोक्षणम् ॥ २३ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे वातरक्ताधिकारः ।

कुष्ठ रोगमें जो औषधि कही हैं वह सब औषधि इस वातरक्त रोगमें भी प्रयुक्त करनी चाहिये तथा इस रोगमें रोगीके शरीरमेंसे रुधिर निकलवाना चाहिये ॥ २३ ॥ इति वातरक्ताधिकार संपूर्ण ।

अथ ऊरुस्तम्भरोगचिकित्सा ।

गुञ्जाभद्र रस ।

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादश गन्धकम् ।
गुञ्जाबीजञ्च षड्निष्कं जयन्तीनिम्बबीजकम् ॥ १ ॥
प्रत्येकं निष्कमात्रन्तु निष्कं जैपालबीजकम् ।
जयाजम्बीरधूस्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ २ ॥
भावयित्वा वटीं कुर्याच्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
गुञ्जाभद्ररसो नाम हिंगुसैन्धवसंयुतः ॥
शमयत्युल्बणं दुःखमूरुस्तम्भं सुदारुणम् ॥ ३ ॥

पारा ३ निष्क, गंधक १२ निष्क. सुफेद घुंघुचीके बीज ६ निष्क, जयंतीके बीज, नीमके बीज और जमालगोटे यह प्रत्येक औषधि एक एक निष्क (चार मासे) लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर भांग, जम्भीरी नींबू, धतूरेके पत्ते और मकोय इन प्रत्येकके रसमें एक एक भावना देकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंको हींग और सेंधानमकके साथ सेवन करे तो दारुण ऊरुस्तम्भ रोग दूर होता है । इसको गुञ्जाभद्र रस कहते हैं ॥ १-३ ॥

शिलाजतु गुग्गुलु वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेन वा ॥ ४ ॥
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रवारिशोषणम् ।
ऊरुस्तम्भे प्रयुञ्जीत चान्यद्वा योगवाहिकम् ॥ ५ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे ऊरुस्तम्भाधिकारः ।

अन्य योग–शिलाजीत और गूगल अथवा पीपल और सोंठके चूर्णको गोमूत्रके साथ अथवा दशमूलके काथके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है । प्लीहाधिकारोक्त वारिशोषण रस अथवा अन्यान्य योगवाही रस भी इसमें प्रयुक्त करने चाहिये ॥ ४ ॥ ५ ॥

इति ऊरुस्तम्भचिकित्सा ।

अथ आमवाताधिकार ।

आमवातारि वटिका ।

रसगन्धकलौहाभ्रं तुत्थं टङ्कणसैन्धवम् ।
समभागं विचूर्ण्याथ चूर्णाद्द्विगुणगुग्गुलुः ॥ १ ॥
गुग्गुलोः पादिकं देयं त्रिवृतामूलवल्कलम् ।
तत्समं चित्रकं देयं घृतेन परिमर्दयेत् ॥ २ ॥
खादेन्माषद्वयञ्चास्य त्रिफलाचूर्णयोगतः ।
आमवातारिवटिका पाचिका भेदिका मता ॥ ३ ॥
आमवातं निहन्त्याशु गुल्मशूलोदराणि च ।
यकृत्प्लीहोदराष्ठीलाकामलापाण्डुरोचकान् ॥ ४ ॥
ग्रन्थिशूलं शिरःशूलं वातरोगञ्च गृध्रसीम् ।
गलगण्डं गण्डमालां क्रिमिकुष्ठभगन्दरान् ॥ ५ ॥
विद्रधिमन्त्रवृद्धिञ्च अर्शांसि गुदजानि च ।
आमवातारिवटिका पुरेशानेन चोदिता ॥ ६ ॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, तूतिया, सुहागा और सेंधानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला लेवे, गूगल १४ तोला, निसोथकी जड़की छाल ३॥ तोला, चित्रककी जड़की छाल ३॥ तोला इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके घीमें घोटकर दो मासे

परिमाण औषधियोंको एकत्र त्रिफलेके चूर्णके साथ सेवन करे। यह औषधि पाचक, भेदक तथा आमवात, गुल्म, शूल, उदर, यकृत, प्लीहोदर, अष्ठीला, कामला, पांडु, अरुचि, ग्रंथिशूल, शिरःशूल, वातरोग, गृध्रसी, गलगण्ड, गण्डमाला, क्रिमि, कुष्ठ, भगन्दर, विद्रधि, अन्त्रवृद्धि, बवासीर और समस्त गुदाके रोगोंको नष्ट करती है। इसको आमवातारि वटिका कहते हैं ॥ १–६ ॥

अपर आमवातारि वटिका।

रसगन्धौ वरा वह्निर्गुग्गुलुः क्रमवर्द्धितः।
एतदेरण्डतैलेन मर्दयेदतिचिक्कणम् ॥ ७ ॥
कर्षोऽस्यैरण्डतैलेन हन्त्युष्णजलपायिनः।
आमवातमतीवोग्रं दुग्धं मौद्गादि वर्जयेत् ॥ ८ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, त्रिफला प्रत्येक तीन भाग, चीतेकी जड़ ४ भाग और गूगल ५ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर एरण्डके तेलमें खरल करके १तोला परिमाण औषधि अण्डीके तेलके साथ सेवन करे और ऊपरसे गरम जलका अनुपान करे तो अत्यन्त उग्र आमवात रोग नष्ट होता है। इस औषधिपर दूध और मूंग आदि भक्षण करना त्याग देवे, इसको आमवातारि वटिका कहते हैं ॥७॥८॥

आमवातेश्वर रस।

शुद्धगन्धं पलार्द्धञ्च मृतताम्रञ्च तत्समम्।
ताम्रार्द्धं पारदं शुद्धं रसतुल्यं मृतायसम् ॥ ९ ॥
सर्वं पञ्चांगुलेनैव भावयेच्च पुनः पुनः।
संचूर्ण्य पञ्चकोलोत्थैः क्वाथैः सर्वं विभावयेत् ॥१०॥
रौद्रे विंशतिवारांश्च गुडूचीनां रसैर्दश।
भृष्टटङ्कणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत् ॥ ११ ॥

टङ्कणार्द्धं विडं देयं मरिचं विडतुल्यकम् ।
तिन्तिडी क्षारतुल्यञ्च सूततुल्यञ्च दंतिकम् ॥ १२॥
त्रिकटुत्रिफलञ्चैव लवङ्गञ्चार्द्धभागिकम् ।
आमवातेश्वरो नाम विष्णुना परिकीर्त्तितः ॥ १३ ॥
महाग्निकारको ह्येष आमवातान्तको मतः ।
स्थूलानां कर्षणः श्रेष्ठः कृशानां स्थौल्यकारकः १४
अनुपानविशेषेण सर्वरोगविनाशनः ।
अनेन सदृशो नास्ति वह्निदीप्तिकरो महान् ॥
गुल्मार्शोग्रहणीदोषशोथपाण्डुरुजापहः ॥ १५ ॥

शुद्ध गंधक २ तोले, तांबाभस्म २ तोले, पारा १ तोला, लोहभस्म १ तोला इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर एरंडकी जड़के रसमें सात वार भावना देकर पश्चात् पंचकोलके क्वाथमें बीस वार भावना देवे और गिलोयके रसमें दश वार भावना देवे । पश्चात् इसमें सुहागा ६ तोला, विडनमक ३ तोला, काली मिरच ३ तोला, इमलीका खार ३ तोला, दंतीके बीज १ तोला तथा सोंठ, पीपल, काली मिरच, हरड़, बहेड़ा, आमला और लौंग यह प्रत्येक औषधि छः छः मासे लेकर अच्छे प्रकारसे खरल कर यह औषधि सेवन करनेसे अत्यन्त अग्निको दीप्त करनेवाली, आमवातनाशक, स्थूल मनुष्योंको कृश करनेवाली, कृश मनुष्योंको स्थूल करनेवाली और अनुपान विशेषसे सर्वरोगनाशक है। इसकी समान अग्निको दीप्त करनेवाली अन्य औषधि नहीं है। इससे गुल्म, बवासीर, संग्रहणी, शोथ और पांडुरोग नष्ट होते हैं। इस आमवातेश्वर रसको स्वयं विष्णु भगवान्ने कहा है ॥ ९-१५ ॥

वृद्धदाराद्य लोह ।

वृद्धदारत्रिवृद्दन्तीगजपिप्पलिमानकैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकन्त्वयः ॥
सर्वानेव गदान् हन्ति केशरी करिणो यथा ॥१६॥

विधारेके बीज, निसोथकी जड़, दंतीकी जड़, गजपीपल, मानकंद, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, नागरमोथा और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहभस्म १४ भाग लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके रोग नष्ट होते हैं ॥ १६ ॥

शिवागुग्गुलु ।

शिवाविभीतामलकीफलानां प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च । तोयाढके तत्क्वथितं विधाय पादावशेषे त्ववतारणीयम् ॥१७॥ एरण्डतैलं द्विपलं निधाय पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य।पचेत्पुरस्यात्र पलद्वयञ्च पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात् ॥१८॥ रास्ना विडंगं मरिचं कणा च दन्ती जटा नागरदेवदारु। प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां विचूर्ण्य निःक्षिप्य नियोजयेच्च ॥ १९ ॥ आमवाते कटीशूले गृध्रसीक्रोष्टुशीर्षके । न चान्यदस्ति भैषज्यं यथाऽयं गुग्गुलुः स्मृतः ॥ २० ॥

हरड़ १६ तोले, बहेड़ा १६ तोले, आमले १६ तोले परिमाण लेकर ८ सेर जलमें पकावे, जब पकते पकते जल चौथाई भाग बाकी रह जाय तब उतारकर छान लेवे। फिर इस क्वाथमें दो पल एरंडीका तेल, गंधक ३ तोले और गूगल २ पल डालकर मंद मंद अग्निसे पकावे। जब पाक समाप्त हो जाय तब इसमें रास्नाका चूर्ण, वायविडंगका चूर्ण, काली मिरचोंका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, दंतीमूल, सोंठका चूर्ण और देवदारुका चूर्ण प्रत्येक एक एक तोला डालकर उतार लेवे। आमवात, कटीशूल, गृध्रसी और क्रोष्टुशीर्षक प्रभृति रोगोंका नाशक इसके समान अन्य औषधि नहीं है ॥ १७-२० ॥

आमवातगजसिंह मोदक।

शुण्ठीचूर्णस्य प्रस्थैकं यमान्याश्च पलाष्टकम्।
जीरकस्य पले द्वे च धन्याकञ्च पलद्वयम् ॥ २१ ॥
पलैकं शतपुष्पाया लवङ्गस्य पलं तथा।
टङ्कणस्य पलं भृष्टं मरिचस्य पलत्रयम् ॥ २२ ॥
त्रिवृतात्रिफलाक्षारपिप्पलीनां पलं तथा।
शटचेला तेजपत्रञ्च चविकानां पलन्तथा ॥ २३ ॥
अभ्रं लौहं तथा वंगं प्रत्येकञ्च पलं पलम्।
एतेषां सर्वचूर्णानां खण्डं दद्याद्गुणत्रयम् ॥ २४ ॥
घृतेन मधुना मिश्रं कर्षमात्रन्तु मोदकम्।
एकैकं भक्षयेत्प्रातर्घृतश्चानुपिबेत्पयः ॥ २५ ॥
शूलघ्नो रक्तपित्तघ्नश्चाम्लपित्तविनाशनः।
आमवातकुलध्वंसी केशरी विधिनिर्मितः ॥ २६ ॥

सोंठका चूर्ण १ प्रस्थ, अजवायनका चूर्ण आठ पल, जीरेका चूर्ण २ पल, धनियेका चूर्ण २ पल, सौंफका चूर्ण १ पल, लौंगका चूर्ण १ पल, सुहागा १ पल, काली मिरचोंका चूर्ण ३ पल, निसोथका चूर्ण १ पल, हरड़का चूर्ण १ पल, बहेड़ेका चूर्ण १ पल, आमलेका चूर्ण १ पल, जवाखार १ पल, पीपलका चूर्ण १ पल, कचूर १ पल, इलायचीका चूर्ण १ पल, तेजपातका चूर्ण १ पल, चव्यक चूर्ण १ पल, अभ्रकभस्म १ पल, लोहाभस्म १ पल और वंगभस्म १ पल लेवे और सब औषधिसे तिगुनी स्वच्छ खांड लेवे, सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घृत और सहत मिलाकर एक एक कर्षके मोदक बना लेवे। प्रतिदिन प्रातःकाल इस एक मोदकको भक्षण करे और ऊपरसे घृत और दूधका अनुपान करे। इन मोदकोंके

सेवन करनेसे शूल, रक्तपित्त, अम्लपित्त और आमवात रोग नष्ट होते हैं । इस आमवातगजासिंह मोदकको ब्रह्माने कहा है ॥२१-२६॥

रामबाणो रसो देयो योगवाहिरसेन्द्रकाः ।
आमवाते विधीयन्ते सानुपानैः प्रयत्नतः ॥ २७॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे आमवाताधिकारः ।

आमवात रोगमें रामबाण रस अथवा और भी योगवाही रसोंका उचित अनुपान या आमवातनाशक औषधियोंके क्वाथसे प्रयोग करना चाहिये ॥ २७ ॥

इति आमवातचिकित्सा ।

अथ शूलरोगचिकित्सा ।

सप्तामृत लोह ।

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिहन् ।
मधुसर्पिर्युतं सम्यक् गव्यक्षीरं पिबेदनु ॥ १ ॥
छर्दिं सतिमिरं शूलमम्लपित्तं ज्वरारुचिम् ।
मूत्रकृच्छ्रं तथा मेहं हन्यादेतन्न संशयः ॥ २ ॥

मुलैठी, त्रिफला और लोहभस्मका चूर्ण इन औषधियोंको समान भाग लेकर घृत और सहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे गायका दूध पीवे । इसके सेवन करनेसे वमन, तिमिर रोग, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र और प्रमेह रोग नष्ट होते हैं । इसको सप्तामृत लोह कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

त्रिफला लोह ।

तीक्ष्णायश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।
क्षीरेण पाययेद्धीमान्सद्यः शूलनिवारणम् ॥ ३ ॥

तीक्ष्ण लोहेका चूर्ण और त्रिफलेका चूर्ण दोनोंको खरल करके दूधके साथ सेवन करनेसे शूलरोग शांत होता है । इसको त्रिफला लोह कहते हैं ॥ ३ ॥

चतुःसम लोह।

अभ्रं ताम्रं रसं लौहं गन्धकं संस्कृतं पलम्।
सर्वमेतत्समाहृत्य यत्नतः कुशलो भिषक् ॥ ४ ॥
आज्ये पले द्वादशके दुग्धे वत्सरसंख्यके।
पक्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनवाससा ॥ ५ ॥
विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतानथ संमिश्रितान्नयेत् ॥ ६ ॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेच्च विचक्षणः।
आत्मनः शोभने चाह्नि पूजयित्वा रविं गुरुम्॥७॥
घृतेन मधुनालोड्य भक्षयेन्माषकादिकम्।
अष्टौ माषान् क्रमेणैव वर्द्धयेच्च समाहितः ॥ ८ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं नारिकेलजलं पयः।
जीर्णे लोहितशाल्यन्नं मुद्गमांसरसं तथा ॥ ९ ॥
भक्षयेद् घृतसंयुक्तं सद्यः शूलाद्विमुच्यते।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च आमवातं कटिग्रहम् ॥
गुल्मशूलं शिरःशूलं योगेनानेन नाशयेत् ॥ १० ॥

अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, पाराभस्म, लोहाभस्म और गन्धक यह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र करके बारह पल घृत और बारह पल दूधमें मिलाकर पकावे। जब पाक समाप्त होजाय तब वायविडंग, त्रिफला, चित्रक और त्रिकुटा इन सब द्रव्योंका चूर्ण प्रत्येक ४-४ तोला डालकर उतार लेवे। फिर इसको एक उत्तम चिकने बासनमें भरकर रख देवे। पश्चात् जिस दिन अपनेको चन्द्रमादि उत्तम हों उस दिन सूर्य और बृहस्पतिकी

पूजा करके घृत और सहतमें मिलाकर एक मासे परिमाण इस औषधिको भक्षण करे और फिर प्रतिदिन एक एक मासे बढ़ाता जाय; जब आठ मासे पर्यंत हो जाय तब आगेको मात्रा नहीं बढ़ावे। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें नारियलका जल और गायका दूध पीवे। जब औषधि जीर्ण हो जाय तब लाल रंगके शालि चावलोंका भात, मूंगका यूष और मांसयूष घृतके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे शूलरोग, हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिपीड़ा, गुल्मशूल, और शिरःशूल नष्ट होते हैं। इसको चतुःसम लोह कहते हैं॥४-१०॥

पञ्चात्मक रस।

मृतसूताभ्रकं चाम्लवेतसं ताम्रगन्धकम्।
विषं फलत्रयाच्चूर्णं तुल्यं मर्द्यं दिनावधि॥ ११॥
जयन्ती मुण्डिरी वासा बृहती च गुडूचिका।
महाराष्ट्री जम्बुरसैस्तथा नीलोत्पलस्य च॥१२॥
प्रतिद्रावैर्दिनं भाव्यं ततः संशोष्य यत्नतः।
अर्द्धांशं पञ्चलवणं दत्त्वार्द्रकरसेन च॥ १३॥
दिनं पेष्यं ततः कुर्याद्वटिकां चणसन्निभाम्।
प्रातर्मध्याह्ने रात्रौ च भक्षयेद्वटिकात्रयम्॥१४॥
माषेक्षुपिष्टगुर्वन्नं गोपयश्च हितं तथा।
सेवेत वातशूलार्त्तश्चायं पञ्चात्मकः स्मृतः॥ १५॥

पारेकी भस्म, अभ्रकभस्म, अम्लवेत, तांबेकी भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष और त्रिफला यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर जयंती, गोरखमुण्डी, अडूसा, कटेरी, गिलोय, भारंगी, जामुनकी छाल और नील कमल इन प्रत्येकके रसके द्वारा एक एक भावना देकर और सब औषधियोंसे आधे भाग पांचों लवण

मिलाकर अदरखके रसमें एक दिन खरल करके चनेकी बराबर गोली बना लेवे। प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्याह्नके समय और रात्रिके समय एक एक करके तीन गोली भक्षण करे। ऊपरसे उड़द, इख, पिष्टक (पक्वान्न), भारी पदार्थ और गोदूध सेवन करे। यह औषधि वातशूलसे पीड़ित रोगीके लिये अतीव हितकारी है। इसको पञ्चात्मक रस कहते हैं॥ ११-१५॥

धात्रीलोह।

कुडवं शुद्धमण्डूरं यवञ्च कुडवन्तथा।
पाकार्थञ्च जलं प्रस्थं चतुर्भागावशेषितम्॥ १६॥
शतावरीरसस्याष्टावामलक्या रसस्य च।
तथा दधि पयो भूमिकूष्माण्डस्य चतुःपलम्॥१७॥
चतुःपलमिक्षुरसं दद्यात्तत्र विचक्षणः।
प्रक्षिपेज्जीरकं धान्यं त्रिजातं करिपिप्पली॥ १८॥
मुस्तं हरीतकी चैव अभ्रं लौहं कटुत्रयम्।
रेणुका त्रिफला चैव तालीशं स्वर्णकेशरम्॥ १९॥
कटुकं मधुकं रास्ना चाश्वगन्धा च चन्दनम्।
एतेषां कार्षिकं भाग चूर्णयित्वा विनिःक्षिपेत्॥२०॥

शुद्ध मण्डूर एक कुड़व परिमाण और जौ एक कुड़व परिमाण ले दोनोंको एकत्र कर आठगुने जलमे पकावे। जब पकते पकते जल चौथाई भाग बाकी रहजाय तब उतारकर छान लेवे। फिर इस क्काथमें सतावरका रस आठ पल, आमलोंका रस आठ पल, दही आठ पल, दूध आठ पल, विदारीकंद ४ पल और ईखका रस ४ पल डालकर मंद मंद अग्निसे पकावे। जब पाक होजाय तब जीरा, धनियां, दालचीनी, इलायची, तेजपात, गजपीपल, नागरमोथा, हरड़, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, रेणुका, हरड़, बहेड़ा, आमला,

तालीशपत्र, नागकेशर, कुटकी, मुलैठी, रास्ना, असगंध और लालचंदन इन प्रत्येकका चूर्ण एक एक कर्ष डालकर पकावे ॥ १६-२० ॥

भोजनाद्यवसाने च मध्ये चैव समाहितः ।
तोलैकं भक्षयेन्नित्यमनुपानं पयस्तथा ॥ २१ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥२२॥
परिणामसमुत्थञ्च अन्नद्रवभवं तथा ।
सर्वशूलहरं श्रेष्ठं धात्रीलौहमिदं शुभम् ॥ २३ ॥

इसमेंसे एक तोला औषधि लेकर प्रतिदिन भोजनके आदि, भोजनके अंत और भोजनके मध्यमें सेवन कराकर दूध पान करावे । इस औषधिके सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज, परिणामज, अन्नद्रवप्रभृति आठ प्रकारका शूल, साध्यासाध्य शूल और सब प्रकारके शूलरोग नष्ट होते हैं । इसको धात्रीलोह कहते हैं ॥ २१-२३ ॥

शूलराजलोह ।

कर्षैकं कान्तलौहस्य शुद्धाभ्रस्य पलन्तथा ।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥ २४ ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत् ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ २४ ॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शिशिराम्ब्वनुपानतः ॥ २६ ॥
सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद्भवेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥२७॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विषूचिकाम् ।
शूलराजमिदं लौहं हरेण परिनिर्मितम् ॥ २८ ॥

कान्तलोहभस्म १ कर्ष, अभ्रक १ पल, मिश्री १ पल, सहत १ पल और घृत १ पल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर लोहेके डंडेसे खरल करे। फिर त्रिकुटेका चूर्ण ३ तोले, त्रिफलेका चूर्ण ३ तोले, नागरमोथेका चूर्ण एक तोला, वायविडंगका चूर्ण १ तोला, चव्यका चूर्ण १ तोला और चीतेकी जड़का चूर्ण १ तोला मिलावे। प्रतिदिन प्रातःकाल शीतल जलके साथ भक्षण करनेसे त्रिदोषज शूल, कटिशूल, हृदयशूल, पार्श्वशूल, अम्लपित्त, बवासीर, प्रमेह और विषूचिकारोग नष्ट होते हैं। यह शूलराज लोह महादेवने कहा है ॥ २४-२८ ॥

विद्याधराभ्र रस।

विडङ्गमुस्तत्रिफलागुडूची दन्ती त्रिवृद्वह्निकटुत्रयञ्च। प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वार्ययसो मलस्य ॥ २९ ॥ गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य यद्वायसस्तानिशिवाटिकायाः। कृष्णाभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥ ३० ॥ पादोनकर्षं स्वरसेन खल्ले शिलातले थानकुनीदलस्य। संमर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्धपाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ ३१ ॥ युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात्। निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे ततः प्रयोज्योऽस्य रसायनस्य ॥ ३२ ॥ प्राङ्माषको वाप्यथवा द्वितीयो गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा। पिबेदयं योगवरः प्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकश्च ॥ ३३ ॥

गोरखमुंडीके पत्तोंके रसके द्वारा शुद्ध किया हुआ पारा ९ मासे और शुद्ध गन्धक १ कर्ष लेवे। दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली

बना लेवे, फिर उसमें वायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, गिलोय,दन्ती, निसोथकी जड़, चित्रककी जड़ और त्रिकुटा इन प्रत्येक औषधियोंका चूर्ण एक एक कर्ष परिमाण, गोमूत्रमें शुद्ध किया हुआ पुराना मंडूर भस्म ४ पल, लोहाभस्म ४ पल और कृष्णाभ्रक १ पल इन सब औषधियोंको एकत्र कर सहत और घृतमें मर्दन करके चिकने बासनमें भरकर रख देवे। इस औषधिको एक मासे अथवा दो मासे परिमाण लेकर सेवन करके ऊपरसे गायका दूध अथवा शीतल जलका अनुपान करे। इस औषधिके सेवन करनेसे बहुत कालकी नष्ट हुई अग्नि फिर दीपन हो जाती है ॥२९-३३॥

रोगं निहन्यात्परिणामशूलं शूलं तथान्नद्रवसंज्ञकं च। यक्ष्माम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तकञ्च ॥ नश्यन्ति ते यान्न निहन्ति रोगान् योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥ ३४ ॥

परिणामशूल, अन्नद्रव शूल, राजयक्ष्मा, अम्लपित्त, संग्रहणी, जीर्णज्वर और रक्तपित्त रोग दूर होते हैं। सैकड़ों उत्तम औषधियोंके सेवन करनेसे भी जो रोग नष्ट नहीं होते वह रोग इस औषधिके सेवन करनेसे अवश्य नष्ट हो जाते हैं। इसको विद्याधराभ्र रस कहते हैं ॥ ३४ ॥

बृहद्विद्याधराभ्र ।

शुद्धसूत तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम् ।
विडङ्गमुस्तकञ्चैव त्रिवृतादन्तिचित्रकम् ॥ ३५ ॥
आखुपर्णी ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य मृतायश्च चतुर्गुणम् ॥ ३६ ॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटिकां कोलसम्मिताम् ।
एकैकां वटिकां खादेत्प्रातरुत्थाय नित्यशः ॥ ३७ ॥

अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम्।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वातपित्तभवं तथा ॥ ३८ ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ ३९ ॥
कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्रारुचिविनाशनम्।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ४०

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, त्रिफला, त्रिकुटा, वायविडंग, नागरमोथा, निसोथकी जड़,दन्तीकी जड़,चित्रककी जड, मूसाकानी और पीपलामूल यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण, कृष्णाभ्रकभस्म १ पल और लोहभस्म ४ पल लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र करके घृत और सहतमें खरल करके बेरकी बराबर गोली बना लेवे। प्रतिदिन प्रातःकाल एक गोली खाकर ऊपरसे गायका दूध अथवा नारियलका जल पान करे। इस औषधिके सेवन करनेसे वातपित्तज, एकदोषज, द्विदोषज, त्रिदोषज, परिणामजन्य और आमवातज शूल, कृशता, विवर्णता, आलस्य, तन्द्रा, अरुचि और अन्यान्य समस्त साध्यासाध्य रोग ऐसे नष्ट होते हैं जिसप्रकार सूर्योदयसे अन्धकारका समूह नष्ट होता है। इसको बृहद्विद्याधराभ्र कहते हैं ३९-४०॥

सर्वांगसुन्दर रस।

शुद्धसूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम्।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लौहमभ्रं सनागरम् ॥ ४१ ॥
चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम्।
गन्धकं मिश्रयेत्सर्वं रसैरेषां विभावयेत् ॥ ४२ ॥
शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रिकधूर्त्तजैः।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥ ४३ ॥

खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां माषमात्रं दिने दिने ।
कफवातामयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम् ॥ ४४ ॥
व्योषं सौवर्च्चलं हिंगु करञ्जबीजसंयुतम् ।
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ ४५ ॥

शुद्ध पारा, तांबाभस्म, मैनशिल, सोनामाखीभस्म, हरिताल-भस्म, चांदीकी भस्म, सोनाभस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, सोंठ, पांचों लवण और गंधक यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर सोंठके क्वाथ, जयंतीके पत्तोंका रस और भांगके पत्तोंका रस, भारंगीकी जड़का रस और धतूरेके पत्तोंका रस इनमें अलग अलग सात भावना देकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे। अंडीके तेल और सोंठके चूर्णके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे कफज और वातज व्याधि शमन होती हैं। इसके सेवन करनेके अन्तमें त्रिकुटा, काला नमक, हींग और करंजके बीज इनको बराबर भाग लेकर गरम जलके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकारका शूल नष्ट होता है। इस सर्वांगसुन्दर रसको स्वयं विष्णु भगवान्‌ने कहा है ॥ ४१-४५ ॥

शूलवज्रिणी वटिका ।

रसगन्धकलोहानां पलार्द्धेन समन्वितम् ।
त्रिफला रामठं शुल्वं शटी त्रिकटु टङ्कणम् ॥४६॥
पत्रं त्वगेलातालीशजातीफललवङ्गकम् ।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं तोलकं शुभम् ॥ ४७ ॥
माषैका वटिका कार्या छागीदुग्धेन वा पुनः ।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी ॥ ४८ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।
अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ४९ ॥

शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं सभगन्दरम् ।
वृद्धबालकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ९० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और लोहभस्म यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले; त्रिफला, हींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकुटा, सुहागा, तेजपात, दारचीना, इलायची, तालीशपत्र, जायफल, लौंग, अजवायन, जीरा और धनियां यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र बकरीके दूधमें पीसकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे । बकरीके दूधके साथ इनमेंसे एक एक गोली सेवन करनेसे आठ प्रकारका शूल, प्लीहा, गुल्म, उदर, अम्लपित्त, आमवात, पांडु, कामला, शोथ, गलग्रह, वृद्धि, श्लीपद और भगन्दर रोग नष्ट होते हैं । यह औषधि वृद्धको बालकके समान करनेवाली और मन्दाग्निको दीपन करती है। इसे शूलवज्रिणीवटिका कहते हैं८६-९०॥

त्रिपुरभैरव रस ।

भागो रसस्याश्महेम्नो भागो ग्राह्योऽतियत्नतः ।
तयोर्द्वादश भागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ९१ ॥
पचेच्छूलहरः सूतो भवेत्त्रिपुरभैरवः ।
माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजे ॥
अन्ये त्वेरण्डतैलेन हिंगुत्र्ययुतो रसः ॥ ९२ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और गंधक १ भाग दोनोंकी एकत्र कज्जली बनावे । फिर कज्जलीसे बारह गुने तांबेके पत्र लेकर उन पत्रोंपर उक्त कज्जलीका लेप करके मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे । पश्चात् इसका चूर्ण बनाकर एक मासे परिमाण औषधि घृत और सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे परिणामशूल नष्ट होता है । कोई कोई वैद्य एरण्डीका तेल, हींग और त्रिकुटेके चूर्णके साथ इस औषधिके सेवन करनेकी व्यवस्था करते हैं ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

रसबलिगगनार्कं वेतसाम्लं विषं स्यात्,
सवरमिह पृथक्स्याद्भावयेद्द्रवसमेतैः ।
कनकभुजगवल्लीकण्टकारीजयाद्भिः,
कमलसलिलवासामुष्टिवज्राम्बुपूरैः ॥ ९३ ॥
अरुणसदृशपाकैर्मातुलुङ्गश्च योज्यः,
पटुगण इह तुल्यो भावयेदार्द्रकाद्भिः ।
दहनवदननाम्ना वल्लमात्रो निहन्ति,
प्रबलसकलशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ ९४ ॥

पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, अमलवेत, विष और त्रिफला यह सब औषधि समान भाग लेकर धतूरेके पत्ते, पान, कटेरी, भांग, कमल, सुगंधवाला, अडूसा, कुचिला, थूहर और बिजोरा नींबू इन प्रत्येकके रसके द्वारा एक एक भावना देकर फिर उसमें समान भाग लवणवर्ग मिलाकर अदरखके रसके द्वारा सात सात भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे प्रबल सर्व प्रकारका शूलरोग और शूलजनित अन्यान्य रोग नष्ट होते हैं। इसको अग्निमुख रस कहते हैं ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

श्रीशूलगजकेसरी रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं यामैकं मर्दयेद्दृढम् ।
द्वयोस्तुल्यं शुद्धताम्रं संपुटे सन्निवेशयेत् ॥ ९५ ॥
ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भाण्डे स्थापयद्भिषक् ।
ततो गजपुटं दद्यात्स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ ९६ ॥
संपुटं चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम् ।
भक्षयेत्सर्वशूलार्त्तो हिंगु शुण्ठी च जीरकम् ॥ ९७ ॥

वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत् ।
असाध्यं नाशयेच्छूलं श्रीशूलगजकेसरी ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनोंकी एकत्र कज्जली बना लेवे । पश्चात् तीन भाग तांबा लेकर उसका सम्पुट बनवाकर उसमें इस कज्जलीको भरकर पश्चात् एक हाँडीमें ४ तोले पिसा हुआ नमक बिछाकर उसमें इस मूसाको स्थापित करे और ऊपरसे एक पल परिमाण पिसा हुआ नमक बिछा देवे । पश्चात् गजपुटमें पकावे । जब स्वयं शीतल हो जाय तब मूसाको पीसकर बारीक चूर्ण कर लेवे । इसमेंसे नित्य दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर पानके रसमें मिलाकर खाये । इस औषधिके भक्षण करनेके पश्चात् हींग, सोंठ, जीरा, वच और काली मिरच यह सब समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके एक कर्ष परिमाण गरम जलके साथ सेवन करे । इससे सर्व प्रकारका असाध्य शूलरोग नष्ट होता है । इसको श्रीशूलगजकेसरी रस कहते हैं ॥ ५५-५८ ॥

त्रिगुणाख्य रस ।

टङ्कणं हारिणं शृङ्गं स्वर्णं गन्धं मृतं रसम् ।
दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥ ५९ ॥
त्रिगुणाख्यो रसो ह्यस्य माषैकं मधुसर्पिषा ।
सैन्धवं जीरकं हिंगु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥
पक्तिशूलहरः ख्यातो याममात्रान्न संशयः ॥ ६० ॥

शुद्ध सुहागा, हिरनके सींगकी भस्म, सोनाभस्म, गंधक और रससिन्दूर यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसमें एक दिन तक खरल करके पश्चात् मूसामें रखकर और अच्छे प्रकार कपरौटींसे बंद करके पुटपाक करे । इसमेंसे एक मासे परिमाण औषधि लेकर सहत और घृतमें मिलाकर भक्षण करे । सेंधानमक, जीरा और

हींग इनको समान भाग लेकर सहत और घृतमें मिलाकर इस औषधिके ऊपरसे भक्षण करे । इससे एक प्रहरमें परिणामशूल नष्ट होता है । इसको त्रिगुणाख्य रस कहते हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शूलहरणयोग ।

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला हिंगुसैन्धवम् ।
गन्धकञ्च समं सर्वं वटीं कुर्यात्सुखावहाम् ॥ ६१ ॥
लघुकोलप्रमाणान्तु शस्यते प्रातरेव हि ।
एकैका वटिका ग्राह्या गुल्मशूलविनाशिनी ॥ ६२ ॥
ग्रहण्यामतिसारे च सजीर्णे मन्दपावके ।
योजयेदुष्णपयसा सुखमाप्नोति निश्चितम् ॥
सुवर्णञ्च भवेद्देहं सदोत्साहयुतं नृणाम् ॥ ६३ ॥

हरड़, त्रिकुटा, कुचला, हींग, सेंधानमक और गंधक यह सब औषधि समान भाग लेकर जलमें पीसकर गोली बना लेवे । यह गोली छोटे बेरकी बराबर बनानी चाहिये । गुल्म और शूलरोग नष्ट करनेवाली यह गोली प्रतिदिन प्रातःकाल एक एक गोली खाये । ग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण और मंदाग्नि प्रभृति रोगोंमें इसको गरम जलके साथ सेवन करे तो अवश्य आरोग्यता प्राप्त होती है । इसके सेवन करनेसे शरीरमें सुवर्णकी समान कांति उत्पन्न होती है । बल और उत्साहकी वृद्धि होती है । इसको शूलहरण योग कहते हैं ॥ ६१–६३ ॥

शर्करालोह ।

त्रिफलायास्तथा धात्र्याश्चूर्णं वा काललौहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु योजयेत् ॥ ६४ ॥

त्रिफलेका चूर्ण ३ भाग, आमलेका चूर्ण १ भाग, मिश्री १ भाग और लोहेका चूर्ण ५ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर सर्वप्रकारके शूलरोगोंमें प्रयोग करे । इसको शर्करालोह कहते हैं ॥ ६४ ॥

शंखादि चूर्ण।

शंखचूर्णस्य च पलं पञ्चैव लवणानि च।
क्षारं टंकणकं जाती शतपुष्पा यमानिका॥ ६५॥
हिंगु त्रिकटुकञ्चैव सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
आमवातं यकृच्छूलं परिणामसमुद्भवम्॥
अन्नद्रवकृतं शूलं शूलञ्चैव त्रिदोषजम्॥ ६६॥
इति रसेन्द्रसारसंग्रहे शूलरोगाधिकारः।

शंखका चूर्ण १पल, पांचों लवण ५ भाग, सुहागा १ पल, आमलोंका चूर्ण १ पल, सौंफका चूर्ण १ पल, अजवायनका चूर्ण १ पल, हींग १ पल और त्रिकुटेका चूर्ण ३ पल लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे आमवात, यकृत्, परिणाम शूल, अन्नद्रवशूल और त्रिदोषजशूल रोग नष्ट होते हैं। इसे शंखादि चूर्ण कहते हैं॥६५॥६६॥

इति शूलाधिकार समाप्त।

अथ उदावर्त्तानाहरोगाधिकार।

वैद्यनाथवटी।

पथ्या त्रिकटु सूतञ्च द्विगुणं कनकं तथा।
थानकुनीरसैरम्ललोलिकाया रसैः कृता॥ १॥
गुटिकोदरगुलमादिपाण्ड्वामयविनाशिनी।
क्रिमिकुष्ठगात्रकण्डूपिडिकाश्च निहन्ति च॥
वटी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता॥ २॥

अब उदावर्त और आनाह रोगकी चिकित्सा कहते हैं। हरड़, त्रिकुटा, रससिन्दूर यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और जमालगोटे २ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र गोरखमुण्डीके

पत्तोंके रस और नोनियाके पत्तोंके रसमें खरल करके गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे उदर, गुल्म, पांडु, क्रिमि, कुष्ठ, गात्रकण्डू और पिड़िकारोग प्रभृति नष्ट होते हैं। इस वैद्यनाथवटीको स्वयं महादेवने कहा है॥ १॥ २॥

बृहदिच्छाभेदी रस।

शुद्धं पारदटंकणं समरिचं गन्धाश्मतुल्यं त्रिवृद्,
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत्।
खल्ले दण्डयुगं विमर्द्य विधिना चार्कस्य पत्रे ततः,
स्वेदं गोमयवह्निना च मृदुना स्वेच्छावशाद्भेदकः॥३॥
गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचये-
द्यावन्नोष्णजलं पिबेदपि वरं पथ्यञ्च. दध्योदनम्।
आमं सर्वभवं सुजीर्णमुदरं गुल्मं विशालं हरे-
द्वह्नेर्दीप्तिकरो बलासहरणः सर्वामयध्वंसनः॥ ४॥

शुद्ध पारा, सुहागा, काली मिरच, गन्धक और निसोथकी जड़, यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, सोंठ २ भाग लेवे और जमालगोटेका चूर्ण नव ९ भाग, इन सब औषधियोंको दो दण्ड (एक दण्डके २४ मिनट) पर्य्यंत मर्दन करके आकके पत्तोंमें लपेट मूषामें रखकर जंगली उपलोंकी अग्निसे धीरे २ पकावे। जब अपने आप शीतल होजाय तब एकत्र पीसकर बारीक चूर्ण कर ले। इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि लेकर शीतल जलके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेपर जबतक गरम जल नहीं पीवे तबतक बराबर दस्त होते रहते हैं। इस औषधिको भक्षण करके ऊपरसे दहीके साथ भात खावे। इस औषधिके सेवन करनेसे आमदोष, त्रिदोषज उदररोग और गुल्मरोग नष्ट होते हैं। यह अत्यंत अग्निप्रदीपक, कफनाशक और सर्व रोगोंका हरनेवाला है। इसको बृहत्-इच्छाभेदी रस कहते हैं॥ ३॥ ४॥

योगवाहिरसान्सर्वान् रेचके कथितानपि ।
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रं वारिशोषणम् ।
उदावर्त्ते तथानाहे प्रयुञ्जीतानुपानतः ॥ ५ ॥

रेचनकारक योगवाही संपूर्ण रसोंको तथा प्लीहारोगोक्त वारिशोषण रसको यथायोग्य अनुपानोंके साथ उदावर्त्त और आनाह रोगमें प्रयुक्त करना चाहिये ॥ ५ ॥

पुटितं भावितं लौहं त्रिवृत्क्वाथैरनेकशः ।
उदावर्त्तहरं युंज्यात्ससितं वा यथाबलम् ॥
उदावर्त्ते प्रयोक्तव्या उदरोक्ता रसाः खलु ॥ ६ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे उदावर्त्तानाहाधिकारः ।

निसोथके रसकी भावना देकर भस्म किये हुए लोहेको निसोथकी जड़के क्वाथमें सात वार भावना देकर मिश्रीके साथ उदावर्तरोगमें यथोचित मात्रानुसार सेवन करे। उदावर्त्त रोगमें समस्त उदररोगाधिकारोक्त औषधि प्रयुक्त करनी चाहिये ॥ ६ ॥

इति उदावर्तानाहरोगचिकित्सा ।

अथ गुल्मरोगचिकित्सा ।

महानाराच रस ।

ताम्रं सूतं समं गन्धं जैपालञ्च फलत्रिकम् ।
कटुकं पेषयेत्क्षारैर्निष्कं गुल्महरं पिबेत् ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोऽयं महारसः ॥ १ ॥

तांबेकी भस्म, पारा, गन्धक, जमालगोटा, त्रिफला, कुटकी और क्षारत्रय यह सब औषधि समान भाग लेकर पीसकर तीन तीन मासेकी गोली बना लेवे। एक गोली एक वार खाय तो गुल्मरोग अवश्य नष्ट होजाता है। इसके सेवन करनेके अंतमें गरमजल पान करे। इसको महानाराच रस कहते हैं ॥ १ ॥

पञ्चानन रस ।

पारदं शिखितुत्थञ्च गन्धं जैपालपिप्पली ।
आरग्वधफलान्मज्जा वज्रीक्षीरेण पेषयेत् ॥ २॥
धात्रीरसयुतं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये ।
चिञ्चाफलरसञ्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥ ३ ॥

पारा, तूतिया, गन्धक, जमालगोटे, पीपल और अमलतासका गूदा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर थूहरके दूधमें खरल करके उपरोक्त मात्रानुसार आमलेंाक रसके साथ सेवन करनेसे अंतमें इमलीके रसको पीवे। तथा दहीके साथ भात खावे। इसको पञ्चानन रस कहते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

गुल्मवज्रिणी रस ।

रसगन्धकताम्रञ्च कांस्यं टङ्कणतालकम् ।
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं मर्द्दयेदतियत्नतः ॥ ४ ॥
तद्यथाग्निबलं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये ।
निर्मिता नित्यनाथेन वटिका गुल्मवज्रिणी ॥ ५ ॥
गुल्मप्लीहोदराष्ठीलायकृदानाहनाशिनी ।
कामलापाण्डुरोगघ्नी ज्वरशूलविनाशिनी ॥ ६ ॥

पारा, तांबाभस्म, कांसाभस्म, सुहागा, हरितालभस्म और गन्धक यह प्रत्येक औषाधि एक एक पल लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके अग्निके बलानुसार मात्रा सेवन करनेसे रक्तगुल्मरोग नष्ट होता है। इस औषधिके सेवन करनेसे गुल्म, प्लीहा, उदर, अष्ठीला, यकृत, आनाह, कामला, पांडु, ज्वर और शूलरोग नष्ट होते हैं। श्रीमन्नित्यनाथ सिद्धने इस गुल्मवज्रिणी वटिकाको कहा है ॥ ४-६॥

गुल्मलानल रस ।

सूतकं लौहकं ताम्रं तालकं गन्धकं समम् ।
तोलद्वयमितं भागं यवक्षारञ्च तत्समम् ॥ ७ ॥
मुस्तकं मरिचं शुण्ठी पिप्पली गजपिप्पली ।
हरीतकी वचा कुष्ठं तोलैकं चूर्णयेद् बुधः ॥ ८ ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे क्रियन्ते भावनास्ततः ।
पर्प्पटं मुस्तकं शुंठ्यपामार्गं पापचेलिकम् ॥ ९ ॥
तत्पुनश्चूर्णयेत्पश्चात्सर्वगुल्मनिवारणम् ।
गुञ्जाचतुष्टयं खादेद्धरीतक्यनुपानतः ॥ १० ॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं तथा चैव त्रिदोषजम् ।
द्वन्द्वजं श्लैष्मिकं हन्ति वातगुल्मं विशेषतः ॥
गुल्मकालानलो नाम सर्वगुल्मकुलान्तकृत् ॥ ११ ॥

पारा, लोहभस्म, तांबाभस्म, हरितालभस्म और गन्धक यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले और जौखार १० तोले लेवे । तथा नागरमोथा, कालीमिरच, सोंठ, पीपल, गजपीपल, हरड़, वच और कूठ यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर पित्तपापड़ा, नागरमोथा, सोंठ, चिरचिटा और पाठा इन प्रत्येकके रसकी सात सात भावना देकर चूर्ण कर लेवे । हरड़के चूर्णके साथ अथवा हरड़के क्वाथके साथ चार रत्ती परिमाण औषधिके सेवन करनेसे वातज, पित्तज, त्रिदोषज, द्विदोषज और कफज प्रभृति सर्वगुल्म रोग नष्ट होते हैं । इसको गुल्मकालानल रस कहते हैं ॥ ७-११ ॥

वडवानल रस ।

पारदं गन्धकं ताप्यं यवक्षारार्कमभ्रकम् ।
अग्न्यम्बुनाहिपत्रेण संमर्द्याथ द्विगुञ्जकम् ॥ १२ ॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिंगुसिन्धुसुवर्च्चलैः।
दाडिमञ्च तथा बिल्वं कार्षिकं भृङ्गजैर्द्रवैः॥ १३॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम्।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलञ्च परिणामजम्॥ १४॥

पारा, गन्धक, सोनामाखीभस्म, जवाखार, तांबाभस्म और अभ्रकभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर चीतेकी जड़के क्वाथ और आकके पत्तोंके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे; इसको पानमें रखकर खावे। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें हींग, सेंधानमक, कालानमक, अनार और बेलगिरी इन सबको एक एक कर्ष परिमाण लेकर भांगरेके रसमें खरल करके मदिराके साथ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके गुल्म और परिणामशूल नष्ट होते हैं। इसको वडवानल रस कहते हैं॥ १२-१४॥

महानाराच रस।

सूतटङ्कणतुल्यांशं मरिचं सूततुल्यकम्।
गन्धकं पिप्पली शुण्ठी द्वौ द्वौ भागौ विमिश्रयेत्॥१५
सर्वतुल्यं क्षिपेद्दन्तीबीजं निस्तुषमेव च।
द्विगुञ्जं रेचनं सिद्धं नाराचाख्यो महारसः॥ १६॥

पारा, सुहागा और कालीमिरच यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग; गंधक, पीपल और सोंठ यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग और दंतीके बीज (जमालगोटे) नव ९ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे अच्छे प्रकारसे विरेचन होजाता है। इसको महानाराच रस कहते हैं॥ १५॥ १६॥

विद्याधर रस।

पारदं गन्धकं तालं ताप्यं स्वर्णं मनःशिलाम्।
कृष्णाक्काथैः स्नुहीक्षीरैर्दिनैकं मर्दयेत्सुधीः॥१७॥

निष्कार्द्धं श्लैष्मिकं गुल्मं हन्ति मूत्रानुपानतः ।
रसो विद्याधरो नाम गोदुग्धञ्च पिबेदनु ॥१८॥

पारा, गंधक, हरितालभस्म, सोनामाखीभस्म, सोनाभस्म और मनशिल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर पीपलके क्वाथ और थूहरके दूधमें एक दिनतक खरल करके दो दो मासेकी गोली बनाकर गोमूत्रके साथ सेवन करे और ऊपरसे गायका दूध पीवे तो कफजन्य गुल्म रोग नष्ट होता है । इसे विद्याधररस कहते हैं १७॥१८॥

महागुल्मकालानल रस ।

गन्धकं तालकं ताम्रं तथैव तीक्ष्णलौहकम् ।
समांशं मर्द्दयेद् गाढं कन्यानीरेण यत्नतः ॥ १९ ॥
संपुटं कारयेत्पश्चात्सन्धिलेपञ्च कारयेत् ।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २० ॥
द्विगुञ्जां भक्षयेद् गुल्मी शृंगवेरानुपानतः ।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥२१॥

गंधक, हरितालभस्म, तांबाभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर घीकारके रसमें अच्छे प्रकारसे गोला बना लेवे । पश्चात् इस औषधिके पिंडको मूषामें रखकर उसके जोडोंको अच्छे प्रकारसे बंद करके गजपुटमें पकावे । शीतल होनेपर औषधिको चूर्ण करके दो रत्ती परिमाण लेकर अदरखके रसके साथ सेवन करे । जिस प्रकार सूर्योदयसे अंधकारका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारका गुल्म नष्ट होता है । इसको महागुल्मकालानल रस कहते हैं ॥ १९-२१ ॥

अभया वटी ।

अभया मरिचं कृष्णा टंकणञ्च समांशकम् ।
सर्वचूर्णसमञ्चैव दद्यात्कानकजं फलम् ॥ २२ ॥

स्नुहीक्षीरैर्वटी कार्या यथा स्विन्नकलायवत् ।
वटीद्वयं शिवामेकां पिष्ट्वा चोष्णाम्बुना पिबेत् २३॥
उष्णाद्विरेचयेदेषा शीते स्वास्थ्यमुपैति च ।
जीर्णज्वरं पाण्डुरोगं प्लीहाष्ठीलोदराणि च ॥
रक्तपित्ताम्लपित्तादिसर्वाजीर्णं विनाशयेत् ॥ २४ ॥

हरड़, कालीमिरच, पीपल और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और जमालगोटे ४ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर थूहरके दूधमें खरल करके सीजे हुए मटरके दानेकी बराबर गोली बना लेवे । इन गोलियोंमेंसे दो गोली और एक हरड़को एकत्र पीसकर गरम जलके साथ सेवन करे । इस औषधिका सेवन करके उष्ण क्रिया आचरण करे तो दस्त बराबर होते रहते हैं और शीतल क्रिया व्यवहार करनेसे दस्त बंद होजाते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे जीर्णज्वर, पांडुरोग, प्लीहा, अष्ठीला, उदररोग, रक्तपित्त, अम्लपित्त और सर्व प्रकारके अजीर्णरोग नष्ट होते हैं। इसको अभयावटी कहते हैं ॥ २२-२४ ॥

गोपीजल ।

जैपालाष्टौ द्विको गन्धं शुण्ठी मरिचचित्रकम् ।
एकः सूतः ससौभाग्यो गोपीजल इति स्मृतः २५॥
शूलव्याध्याश्रयान्गुल्मान्कोष्ठादौ दश पैत्तिकान् ।
भगन्दरादिहृद्रोगान्नाशयेदेव भक्षणात् ॥ २६ ॥

जमालगोटे ८ भाग, गंधक २ भाग, सोंठ, मिरच, चित्रककी जड़, पारा और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे शूलाश्रित गुल्म, भगन्दर और हृदयरोग नष्ट होते हैं । इसको गोपीजल कहते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

काङ्कायन गुटिका ।

शटीं पुष्करमूलञ्च दन्तीं चित्रकमाढकीम् ।
शृङ्गवेरं वचाञ्चैव पलिकानि समाहरेत् ॥ २७ ॥
त्रिवृतायाः पलञ्चैकं कुर्यात्त्रीणि च हिंगुनः ।
यवक्षारात्पले द्वे च द्वे पले चाम्लवेतसात् ॥ २८ ॥
यमान्यजाजीमरिचधान्यकञ्च त्रिकार्षिकम् ।
उपकुंच्याजमोदाभ्यां पृथगर्द्धपलं भवेत् ॥ २९ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव गुटिकां कारयेद्भिषक् ।
तासामेकां पिबेद्द्वे वा तिस्रो वाथ सुखाम्बुना॥३०॥
अम्लैर्मद्यैश्च यूषैश्च घृतेन पयसाथवा ।
एषा कांकायनेनोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी ॥ ३१ ॥
अर्शोहृद्रोगशमनी क्रिमीणाञ्च विनाशिनी ।
गोमूत्रयुक्ता शमयेत्कफगुल्मं चिरोत्थितम् ॥ ३२ ॥
क्षीरेण पित्तरोगञ्च मद्यैरम्लैश्च वातिकम् ।
त्रिफलारसमूत्रैश्च नियच्छेत्सान्निपातिकम् ॥
रक्तगुल्मेषु नारीणामुष्ट्रीक्षीरेण पाययेत् ॥ ३३ ॥

कचूर, कूठ, दंतीकी जड़, चीतेकी जड़, अरहर, सोंठ, वच और निसोथकी जड़ यह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे, हींग ३ पल, जवाखार २ पल, अमलवेत २ पल, अजमोद, जीरा, कालीमिरच और धनिया यह प्रत्येक औषधि तीन तीन कर्ष परिणाम लेवे, काला-जीरा और अजवायन यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले इन सब औष-धियोंको एकत्र करके बिजोरे नींबूके रसमें खरल करके गोली बना लेवे । इसमेंसे एक या दो अथवा तीन गोली किंचित् गरम जल, कांजी, मदिरा, यूष, घृत अथवा दूधके साथ सेवन करे तो गुल्म,

बवासीर, हृदयरोग और क्रिमिरोग नष्ट होते हैं । गोमूत्रके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे बहुत दिनोंका कफजनित गुल्म रोग नष्ट होता है। दूधके साथ सेवन करनेसे पित्तरोग, मद्य और अम्लके साथ सेवन करनेसे वातरोग, त्रिफलेके रस और गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज रोग शांत होता है । स्त्रियोंके गुल्मरोगमें इसको ऊंटनीके दूधके साथ सेवन करावे । इसको कांकायन मुनिने कहा है ॥२७-३३॥

गुल्मशार्दूल रस ।

रसं गन्धं शुद्धलौहं गुग्गुलोः पिप्पलं पलम् ।
त्रिवृता पिप्पली शुण्ठी शटी धान्यकजीरकम् ॥३४
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं पलार्द्धं कानकं फलम् ।
संचूर्ण्य वटिका कार्या घृतेन वल्लमानतः ॥ ३५ ॥
वटीद्वयं भक्षयेच्चार्द्रकोष्णाम्बु पिबेदनु ।
हन्ति प्लीहयकृद्गुल्मकामलोदरशोथकम् ॥ ३६ ॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं श्लैष्मिकं रौधिरं तथा ।
गहनानन्दनाथोक्तरसोऽयं गुल्मशार्दुलः ॥ ३७ ॥

पारा, गन्धक, लोहभस्म, गूगल, सुगन्धवाला, निसोथकी जड़, पीपल, सोंठ, कचूर, धनियां और जीरा यह प्रत्येक औषधि एक एक पल, जमालगोटे २ तोले लेवे इन सब औषधियोंको एकत्र करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । घीके साथ इसकी दो गोली खाकर ऊपरसे अदरखका रस और गरम जल पीवे । इसके सेवन करनेसे प्लीहा, यकृत, गुल्म, कामला, उदरशोथ और वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और रक्तज गुल्मरोग नष्ट होते हैं । इस गुल्मशार्दूल रसको श्रीमान् गहनानन्दनाथने कहा है ॥ ३४–३७ ॥

प्राणवल्लभ रस ।

लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिंगु फलत्रिकम् ।
स्नुहीमूलं यवक्षारं जेपालं टङ्कणं त्रिवृत् ॥ ३८ ॥

प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनापि वा॥ ३९॥
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्दभाषितः।
निहन्ति कामलां पाण्डुं मेहं हिक्कां विशेषतः॥४०॥
असाध्यं सन्निपातञ्च गुल्मं रुधिरसम्भवम्।
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च कण्डूविस्फोटकापचीम्॥ ४१॥

लोहाभस्म, तांबाभस्म, कौड़ीकी भस्म, तूतिया, हींग, त्रिफला, थूहरकी मूल, जवाखार, जमालगोटे, सुहागा और निसोथ यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेकर बकरीके दूधमें पीसकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिको सहत अथवा जलके साथ सेवन करनेसे कामला, पांडु, प्रमेह, हिक्का, असाध्य सन्निपात, रक्तज गुल्म, वातरक्त, कुष्ठ, कण्डू, विस्फोटक और अपची रोग नष्ट होते हैं। इस प्राणवल्लभ रसको गहनानन्दनाथने कहा है॥ ३८-४१॥

सर्वेश्वर रस।

ताम्रं दशगुणं स्वार्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम्।
त्रिकटु त्रिफला तुल्या त्रिफलार्द्धमयोरजः॥ ४२॥
अयसोऽर्द्धं विषञ्चैव सर्वं संमर्द्य यत्नतः।
सर्वेश्वररसो नाम रौधिरगुल्मनाशनः॥ ४३॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे गुल्मरोगचिकित्सा।

तांबाभस्म १० भाग, सोनाभस्म १ भाग, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बेहड़ा और आमले यह प्रत्येक औषधि सोनेसे चौथाई भाग, लोहेका चूर्ण त्रिफलेसे आधा भाग और लोहेसे आधा भाग विष लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके सेवन करनेसे रक्तजगुल्म रोग नष्ट होता है। इसको सर्वेश्वर रस कहते हैं॥ ४२॥ ४३॥

इति गुल्मरोगचिकित्सा।

अथ हृद्रोगाधिकार ।

हृदयार्णव रस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्रं तयोः समम् ।
मर्दयेत्त्रिफलाक्वाथैः काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ १ ॥
चणमात्रां वटीं खादेद्रसोऽयं हृदयार्णवः ।
काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलाफलसंयुतम् ॥ २ ॥
द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं क्वाथमष्टावशेषितम् ।
अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगे च कफोत्थिते ॥ ३ ॥

पारा १ भाग, गंधक १ भाग, तांबाभस्म २ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके त्रिफलेके क्वाथमें और मकोयके रसमें एक दिन तक खरल करे। पश्चात् चनेकी बराबर गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् एक तोला मकोय और १ तोले त्रिफलेको बत्तीस तोले जलमें पकावे; जब पकते पकते जल आठवां भाग बाकी रह जाय तब उतारकर छानके पान करे। इस औषधिके सेवन करनेसे कफजन्य हृदयरोग दूर होता है। इसको हृदयार्णव रस कहते हैं ॥ १–३ ॥

नागार्जुनाभ्रक ।

सहस्रपुटनैः शुद्धं वज्राभ्रमर्जुनत्वचः ।
सत्त्वैर्विमर्दितः सप्तदिनं खल्ले विशोषितम् ॥ ४ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या नाम्नेदमर्जुनाह्वयम् ।
हृद्रोगं सर्वशूलार्शोहृल्लासच्छर्द्यरोचकान् ॥ ५ ॥
अतीसारमग्निमान्द्यं रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ।
शोथोदराम्लपित्तञ्च विषमज्वरमेव च ॥
हन्त्यन्यान्यपि रोगाणि बल्यं वृष्यं रसायनम् ॥ ६ ॥

सहस्र पुटसे शुद्ध किया हुआ वज्राभ्रक लेकर अर्जुनकी छालके काथमें सात भावना देकर गोली बनाकर छायामें सुखा लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे हृदयरोग, सर्व प्रकारका शूल, बवासीर, हल्लास, वमन, अरुचि, अतिसार, मंदाग्नि, रक्तपित्त, क्षतक्षय, शोथ, उदररोग, अम्लपित्त और विषमज्वर नष्ट होते हैं। इसके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके रोग नष्ट होकर बल, वीर्य और रसकी वृद्धि होती है । इसको नागार्जुनाभ्रक कहते हैं ॥ ४-६ ॥

पञ्चानन रस ।

सूतगन्धौ द्रवैर्धात्र्या मर्दयेद् गोस्तनीद्रवैः ।
यष्टिखर्जूरसलिलैर्दिनं च परिमर्दयेत् ॥
धात्रीचूर्णं सिताञ्चानु पिबेद्धृद्रोगशान्तये ॥ ७ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे हृद्रोगाधिकार ।

पारे और गंधक दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर आमलोंके रस, दाख, मुलैठीके रस और खजूरके काथमें पृथक् पृथक् खरल करके चूर्ण बनावे, इसको उचित मात्रासे आमलेके चूर्ण और मिसरीके साथ सेवन करे तो हृद्रोग दूर होता है । इसको पञ्चानन रस कहते हैं ॥ ७ ॥

इति हृद्रोगाधिकार संपूर्ण ।

अथ मूत्रकृच्छ्राधिकार ।

त्रिनेत्राख्य रस ।

वङ्गं सूतं गन्धकं भावयित्वा लौहे पात्रे मर्दयेदेक-
घस्रम् । दूर्वायष्टीगोक्षुरैः शाल्मलीभिर्मूषामध्ये
भूधरे पाचयित्वा ॥ १ ॥ तत्तद्द्रावैर्भावयित्वास्य
वल्लं दद्याच्छीतं पायसं वक्ष्यमाणम् । दूर्वायष्टी-
शाल्मलीतोयदुग्धैस्तुल्यैः कुर्यात्पायसं तद्ददीत ।

प्रातःकाले शीतपानीयपानान्मूत्रे जाते स्यात्सुखी च क्रमेण ॥ २ ॥

वंगभस्म, पारा और गंधक इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर लोहेके पात्रमें दूर्वा, मुलैटी, गोखरू और सेमलकी जड़के रसमें अलग अलग खरल करके मूषामें रखकर भूधरयंत्रमें पकावे । पश्चात् उपरोक्त दूब आदिके रसमें सात सात भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । पश्चात् दूब,मुलैठी और सेमलकी जड़का क्काथ और दूध यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर खीर बनाकर औषधि सेवन करनेके पश्चात् सेवन करे और प्रातःकाल शीतल जलको पीवे । इसके सेवन करनेसे अच्छे प्रकारसे खुलकर साफ पेशाब होता है और रोगी अच्छे प्रकारसे चलने फिरनेको समर्थ होता है । इसको त्रिनेत्राख्य रस कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

वरुणाद्य लौह ।

द्विपलं वरुणं धात्र्यास्तदर्द्धं धातृपुष्पकम् ।
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णं तदर्द्धकम् ॥ ३ ॥
कर्षमानञ्च लौहाभ्रं चूर्णमेकत्र कारयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित् ॥ ४ ॥
मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ।
अश्मरीं विनिहंत्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ ५ ॥
बलपुष्टिकरञ्चैव वृष्यमायुष्यमेव च ।
वरुणाद्यमिदं लौहं चरकेण विनिर्मितम् ॥ ६ ॥

बरनेकी छाल २ पल, आमले २ पल, धायके फूल १ पल, हरड़ २ तोले, पृश्निपर्णी, लोहाभस्म और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक कर्ष परिमाण लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके प्रतिदिन प्रातःकाल चार मासे परिमाण भक्षण करे । इस

औषधिके सेवन करनेसे अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्रमेह और विषमज्वर नष्ट होकर बल, पुष्टि, वीर्य और आयुकी वृद्धि होती है । यह वरुणाद्य लोह चरकाचार्यने कहा है ॥ ३-६ ॥

अयोरजः श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजयेत् ।
मूत्राघातं निहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥ ७ ॥

लोहभस्मके चूर्णको अत्यन्त बारीक पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे मूत्राघात और दारुण मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होते हैं ॥ ७ ॥

रसगन्धयवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम् ॥ ८ ॥

पारा और गन्धक, दोनोंको समान भाग लेकर कज्जली बना लेवे । फिर उसमें पारेकी बराबर जवाखार मिलाकर मिश्री और तक्रके साथ सेवन करे तो अनेक प्रकारका मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट होता है ॥८॥

भैषज्यैरश्मरीप्रोक्तैर्मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत् ।
योगवाहिरसैर्वापि चानुपानविशेषतः ॥ ९ ॥

अश्मरी रोगमें जो औषधि कही है वह सब औषधि इस मूत्रकृच्छ्र रोगमें भी प्रयुक्त करनी चाहिये । अथवा समस्त योगवाही रसोंको अनुपान विशेषोंके साथ सेवन करावे ॥ ९ ॥

मूत्रकृच्छ्रान्तक रस ।

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतसूतञ्च तालकम् ।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेद्दृढम् ॥ १० ॥
तद्गोलं सार्षपे तैले पाच्यं यामञ्च चूर्णयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चास्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ ११ ॥
भक्षणान्नात्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम् ।

तुलसीतिलपिण्याकं बिल्वमूलं तुषाम्बुना ॥
कर्षैकं वानुपानेन सुरया वा सुवर्च्चलैः ॥ १२ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे मूत्रकृच्छ्राधिकारः ।

रससिन्दूर और हरिताल इन दोनोंको समान भाग लेकर सतावरके रसमें खरल करके पश्चात् उसमें रससिन्दूरकी बराबर तूतिया मिलाकर एक दिनतक खरल करके गोला बना लेवे । पश्चात् इस गोलेको सरसोंके तेलमें एक प्रहरतक पकाकर चूर्ण कर लेवे । सहतके साथ इस औषधिको चार रत्ती परिमाण लेकर सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्र रोग दूर हो जाता है । इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें तुलसीके पत्ते, तिलकी खली और बेलकी जड़ इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर पीसकर कांजीमें मिलाकर एक कर्ष परिमाण सेवन करे । अथवा काले नमकको मदिराके साथ सेवन करे । इसको मूत्रकृच्छ्रान्तक रस कहते हैं ॥ १०–१२ ॥ इति मूत्रकृच्छ्ररोगाधिकार सम्पूर्ण ।

अथ मूत्राघाताधिकार ।

तारकेश्वर रस ।

मृतसूताभ्रगन्धं च मर्द्दयेन्मधुना दिनम् ।
तारकेश्वरनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये ।
उदुम्बरफलं पक्कं चूर्णितं कर्षमात्रकम् ॥
संलिह्यान्मधुना सार्द्धमनुपानं सुखावहम् ॥ २ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म और गन्धक इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर सहतमें एक दिनतक खरल करके एक मासे परिमाण औषधि सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे मूत्राघातरोग दूर होता है । इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें पक्क गूलरको पीसकर एक तोला सहतमें मिलाकर भक्षण करे ॥ १ ॥ २ ॥

लघुलोकेश्वर रस ।

शुद्धसूतस्य भागैकश्चत्वारः शुद्धकगन्धकात् ।
पिष्ट्वा वराटिका पूर्या रसपादेन टंकणम् ॥ ३ ॥
क्षीरैः पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो मतः ॥ ४ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणन्तु मरिचेन तथैव च ।
जातीमूलफलैर्युक्तमजाक्षीरेण पाययेत् ॥
शर्कराभावितञ्चानु पीत्वा कृच्छ्रहरः परः ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक ४ भाग लेवे, दोनोंको एकत्र खरल करके कौड़ीमें भर देवे, फिर पारेसे चौथाई भाग सुहागा लेकर दूधमें पीसकर उससे कौड़ीके मुखको बन्द कर देवे । फिर उस कौडीको मूषामें रखकर और उसको अच्छे प्रकारसे कपरमिट्टीसे बन्द करके पुटपाकसे पकावे । जब शीतल होजाय तब इसका चूर्ण करके चार रत्ती परिमाण लेकर चार रत्ती काली मिरचोंका चूर्ण, चार रत्ती चमेलीकी जड़का चूर्ण और चार रत्ती जायफलका चूर्ण इन सबको एकत्र करके बकरीके दूध और मिश्रीके साथ पान करे तो मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होता है । इसको लघुलोकेश्वर रस कहते हैं ॥ ३-५ ॥

अन्य योग ।

येनौषधेन मतिमान्मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत् ।
तेनौषधेन श्रेष्ठेन मूत्राघातानुपाचरेत् ॥ ६ ॥

जो औषधि मूत्रकृच्छ्र रोगकी कही हैं वे सब औषधि मूत्राघात रोगमें भी प्रयुक्त करनी चाहिये ॥ ६ ॥

लवणाम्लवरायुक्तं घृतञ्चापि पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥ ७ ॥

सेंधानमक, कांजी और त्रिफलेका चूर्ण इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घृतके साथ सेवन करनेसे त्रयोदश प्रकारका मूत्राघातरोग दूर होता है ॥ ७ ॥

पक्कमिर्वारुबीजानामक्षमात्रं ससैन्धवम् ।
धान्याम्लयुक्तं पीत्वैव मूत्राघाताद्विमुच्यते ॥ ८ ॥

पकी हुई ककड़ीके बीजोंको (अथवा खीरेके बीजोंको) एक तोला परिमाण लेकर सेंधानमक और कांजीके साथ सेवन करनेसे मूत्राघात रोग नष्ट होता है ॥ ८ ॥

गोखरुआदि योग ।

त्रिकण्टकैरण्डशतावरीभिः सिद्धं पयो वा तृणपञ्चमूलैः । गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥ ९ ॥

गोखरू, एरंडकी जड़ और सतावर इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र पीसकर दूधमें पकाकर उस दूधको पान करे। अथवा तृणपंचमूल (कुशा, काँस, रामसर, डाभ और ईख) के द्वारा सिद्ध किये हुए दूधको या गुड़सहित घी मिले हुए दूधको इस मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ९ ॥

इति मूत्राघातरोगचिकित्सा ।

अथ अश्मरीरोगचिकित्सा ।

पाषाणवज्र रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्ले रुद्ध्वा तद्भूधरे पचेत् ॥ १ ॥
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य मर्दयेद् गुडसंयुतम् ।
अश्मरीं बस्तिशूलञ्च हन्ति पाषाणवज्रकः ॥ २ ॥

गोरक्षकर्कटीमूलक्काथं कौलत्थकं तथा।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्धा दोषबलाबलम् ॥ ३ ॥

पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बना लेवे। फिर सुफेद विषखपरेके रसमें एक दिनतक खरल करके मूषामें रखकर संधिस्थानों (जोड़ों) को अच्छे प्रकारसे बंद करके भूधरयंत्रमें एक दिनतक पकावे। फिर इसको चूर्ण करके गुड़के साथ सेवन करनेसे अश्मरी (पथरी) और बस्तिशूल नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें गोरखककडी (एरण्डककडी) का क्काथ; अथवा कुलथीका क्काथ पान करे। अथवा दोषोंका बलाबल विचार कर अनुपानकी कल्पना करे। इसको पाषाणवज्र रस कहते हैं ॥ १-३ ॥

त्रिविक्रमरस।

मृतताम्रमजाक्षीरैः पाच्यं तुल्यं गते द्रवे।
तत्ताम्रं शुद्धसूतञ्च गन्धकञ्च समं समम् ॥ ४ ॥
निर्गुण्डीस्वरसैर्मर्द्यं दिनं तद्गोलकीकृतम्।
यामैकं वालुकायन्त्रे पक्त्वा योज्यं द्विगुञ्जकम् ॥५॥
बीजपूरस्य मूलञ्च सजलञ्चानुपाययेत्।
रसस्त्रिविक्रमो नाम शर्करामश्मरीं जयेत् ॥ ६ ॥

तांबेकी भस्मको बराबरके बकरीके दूधमें पकावे। जब वह पककर गाढा हो जाय तब तांबेकी बराबर पारा और समान गंधक मिलाकर सम्हालूके रसमें एक दिनतक खरल करके गोला बना लेवे। फिर उस गोलेको एक मूषा (घाडिया) में रखकर ऊपरसे कपरौटी करके एक प्रहरतक वालुका यंत्रमें पकावे। इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर बिजौरे नींबूकी जडके चूर्ण और जलके साथ सेवन करे, इससे शर्करा और अश्मरी रोग नष्ट होते हैं। इसको त्रिविक्रम रस कहते हैं ॥ ४-६ ॥

लोहप्रयोग ।

अयोरजः श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम् ।
अश्मरीं विनिहंत्याशु मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ॥ ७ ॥

लोहभस्मको बारीक पीसकर सहतके साथ सेवन करनेसे अश्मरी और मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होते हैं ॥ ७ ॥

अन्य योग ।

इन्द्रवारुणिकामूलं मरिचं क्षीरपाचितम् ।
पर्प्पटीरससंयुक्तं सप्ताहादश्मरीं जयेत् ॥ ८ ॥

इन्द्रायणकी जड़ और काली मिरचोंको दूधमें पकावे । फिर दोनोंको अच्छे प्रकारसे मर्दन करके पित्तपापड़के रसके साथ एक सप्ताह पर्यंत सेवन करनेसे अश्मरी रोग नष्ट होता है ॥ ८ ॥

गंधकादियोग ।

गन्धकं जीरकं क्षुद्राफलं क्षारद्वयं सदा ।
अश्मरीं शर्करां मूत्रकृच्छ्रं क्षपयति ध्रुवम् ॥ ९ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे अश्मर्यधिकारः ।

गंधक, जीरा, कटेरीके फल, सज्जीक्षार और जवाखार इन सबको एकत्र पीसकर भक्षण करनेसे शर्करा और मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होते हैं ॥९॥

इति अश्मरीरोगचिकित्सा ।

अथ प्रमेहाधिकार ।

हरिशंकररस ।

मृतसूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिशाद्रवैः ।
सप्ताहं भावयेत्खल्ले योगोऽयं हरिशंकरः ॥
मांषमात्रां वटीं खादेत्सर्वमेहप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर और अभ्रकभस्म दोनोंको समान भाग लेकर आमला और हल्दीके रसमें सात वार भावना देकर एक एक मासेकी गोली बना

लेवे इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व प्रकारका प्रमेह रोग नष्ट होता है । इसको हरिशंकर रस कहते हैं ॥ १ ॥

इन्द्रवटी ।

मृतं सूतं मृतं वङ्गमर्ज्जुनस्य त्वचान्वितम् ।
तुल्यांशं मर्दयेत्खल्ले शाल्मल्या मूलजैर्द्रवैः ॥ २ ॥
दिनान्ते वटिका कार्या माषमात्रा प्रमेहहा ।
एषा इन्द्रवटी नाम्ना मधुमेहप्रशान्तिकृत् ॥ ३ ॥

रससिन्दूर, वंगभस्म और अर्जुनवृक्षकी छाल समान भाग लेकर सेमलकी जड़के रसमें एक दिनतक खरल करके एक एक मासेकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे सब प्रकारका प्रमेह और मधुमेह नष्ट होता है ॥ २ ॥ ३ ॥

वङ्गावलेह ।

वंगभस्म द्विवल्लञ्च लेहयेन्मधुना सह ।
ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ ४ ॥
गुडूचीसत्त्वमथवा शर्करासहितं तथा ।
सर्वमेहहरो ज्ञेयो वङ्गावलेह उत्तमः ॥ ५ ॥

चार रत्ती परिमाण वंगकी भस्मको सहतमें मिलाकर चाटे और ऊपरसे एक कर्ष परिमाण गुड़ और गंधक भक्षण करे । अथवा एक तोला गिलोयका सत और मिश्री दोनोंको एकत्र मिलाकर भक्षण करे । इसके सेवन करनेसे सब प्रकारका प्रमेहरोग दूर होता है । इसको वंगावलेह कहते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

प्रमेहसेतु ।

सूताभ्रञ्च वटक्षीरैर्मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
विशोष्य पक्कमूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ ६ ॥

विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्यास्य वैद्यराट् ॥ ७ ॥

रससिन्दूर और अभ्रकभस्म दोनोंको समान भाग लेकर वड़के दूधमें दो प्रहरतक खरल करके मूषामें रखकर मंद मंद अग्निसे पकावें । इस औषधिका सब रोगोंमें प्रयोग करना चाहिये । प्रमेह रोगमें इस औषधिको दो रत्ती लेकर त्रिफलेके रसके साथ और सहतके साथ सेवन करे । इसको प्रमेहसेतु रस कहते हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥

विडंगाद्य लोह ।

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतं हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥
लौहं मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥ ८ ॥

वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, जीरा और कालाजीरा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और लोहाभस्म ९ नव भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे प्रमेह और सब प्रकारके मूत्ररोग नष्ट होते हैं । इसको विडंगाद्य लोह कहते हैं ॥ ८ ॥

बृहत् हरिशंकर रस ।

रसगन्धकलौहञ्च स्वर्णं वङ्गञ्च माक्षिकम् ।
समभागं तु संपिष्य वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ९ ॥
सप्ताहमामलद्रावैर्भावितोऽयं रसेश्वरः ।
हरिशङ्करनामायं गहनानन्दभाषितः ॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥१०॥

पारा, गंधक, लोहाभस्म, सोनाभस्म, वंगभस्म और सोनामाखीभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर आमलोंके रसमें

सात भावना देकर गोलियां बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे बीस प्रकारके प्रमेह रोग नष्ट होते हैं। यह बृहत् हरिशंकर रस गहनानन्दने कहा है ॥ ९॥ १०॥

आनन्दभैरव रस ।

वङ्गभस्म मृतं स्वर्णं रसं क्षौद्रैर्विमर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं हन्ति मेहं चिरोद्भवम् ।
गुञ्जामूलं तथा क्षौद्रैरनुपानं प्रशस्यते ॥ ११ ॥

वंगभस्म, सोनाभस्म और रससिन्दूर इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर दो रत्ती परिमाण नित्य खावे । इससे बहुत दिनोंका पुराना प्रमेह नष्ट होजाता है । इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् गुंजाकी जड़को सहतमें मिलाकर भक्षण करे । इसको आनन्दभैरव रस कहते हैं ॥ ११ ॥

विद्यावागीश रस ।

मृतसूताभ्रनागञ्च स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बस्य चूर्णं तु चतुर्भिः सममाहरेत् ॥ १२ ॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये ।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा ॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः ॥ १३ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, सीसाभस्म और सोनाभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, बकायनका चूर्ण ४ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके एक मासे सहतके साथ सेवन करनेसे लालामेह नष्ट होता है । इस औषधिके भक्षण करनेके पश्चात् छः मासे हलदीके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटे । इसके सेवन करनेसे असाध्य प्रमेहरोग भी नष्ट हो जाता है । इसको विद्यावागीश रस कहते हैं ॥१२॥१३॥

मेहमुद्गर रस।

रसाञ्जनं विडं दारु बिल्वगोक्षुरदाडिमम्।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥ १४ ॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लौहचूर्णन्तु तत्समम्।
पलैकं गुग्गुलुं दत्त्वा घृतेन वटिकां कुरु ॥ १५ ॥
माषैका निर्मिता चेयं मेहमुद्गरसंज्ञिनी।
श्रीमद्गहननाथेन लोकनिस्तारकारिणा ॥ १६ ॥
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं छागीदुग्धं जलञ्च वा।
मेहांश्च विंशतिं हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ १७ ॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राघातमरोचकम्।
अर्शांसि व्रणकुष्ठञ्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १८ ॥

रसौत, विरियासंचरनमक, दारुहलदी, बेलकी छाल, गोखुरुके बीज, अनारका बक्कल, चिरायता, पीपलामूल, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल और निसोथ यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे और सबके बराबर लोहेका चूर्ण लेवे, गूगल ४ तोले इन सब औषधियोंको एकत्र करके घृतमें खरल करके एक एक मासेकी गोली बना लेवे। बकरीके दूध अथवा जलके साथ इस औष-धिके सेवन करनेसे बीस प्रकारका प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, मूत्राघात, अरुचि, बवासीर, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त और भगन्दर रोग नष्ट होते हैं। यह मेहमुद्गर रस श्रीमान् गहना-नन्दनाथने कहा है ॥ १४-१८ ॥

मेघनादरस।

भस्म सूतं समं कान्तमभ्रकन्तु शिलाजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषत्रिफलांकोठजीरकम् ॥ १९ ॥

कार्पासबीजं रजनीचूर्णं भाव्यञ्च वह्निना ।
विंशतिधा विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह ॥
माषमात्रं हरेन्मेहं मेघनादरसो महान् ॥ २० ॥

रसासिन्दूर, कान्तलोहभस्म, अभ्रक, शिलाजीत, सोनामाखीभस्म, मैनाशिल, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, हरड़, बहेड़ा, आमला, अंकोलकी जड़, जीरा, कपासके बीज और हलदी इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर चित्रककी जड़के रसमें बीस बार भावना देवे । इसमेंसे एक मासा परिमाण औषधि लेकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे मेहरोग नष्ट होता है । इसको मेघनाद रस कहते हैं ॥ १९ ॥ २० ॥

चन्द्रप्रभा वटी ।

मृतसूताभ्रकं लोहं नागं वङ्गं समं समम् ।
एलाबीजं लवङ्गञ्च जातीकोषफलं तथा ॥ २१ ॥
मधूकं मधुयष्टिश्च धात्री च समशर्करा ।
कर्पूरं खादिरं सारं शताह्वा कण्टकारिका ॥ २२ ॥
अम्लवेतसकं तुल्यं दिनैकं लाङ्गलीद्रवैः ।
भावयेन्मेषदुग्धेन नागवल्ल्या रसैर्दिनम् ॥ २३ ॥
वटिका बदरास्थ्याभा कार्या चन्द्रप्रभा परा ।
भक्षयेद्वटिकामेकां सर्वमेहकुलान्तिकाम् ॥ २४ ॥
धात्रीपटोलपत्रं वा कषायं वामृतायुतम् ।
सक्षौद्रं भक्षयेच्चानु सर्वमेहप्रशान्तये ॥ २५ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लोहाभस्म, सीसाभस्म, वंगभस्म, इलायची, लौंग, जावित्री, जायफल, महुवेके फूल, मुलैठी, आमले, मिश्री, कपूर, खैरसार, सौंफ, कटेरी और अमलवेत इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर कलिहारीकी जड़के रसमें एक दिन, भेड़के

दूधमें एक दिन और पानोंके रसमें एक दिन भावना देकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना ले । इन गोलियोंमेंसे नित्य एक गोली सेवन करनेसे सर्व प्रकारके प्रमेह रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें आमले और पटोलपत्र तथा गिलोयके क्काथमें सहत मिलाकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ २१-२५॥

इक्षुमेहपर वंगेश्वर रस ।

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत् ।
अस्य माषद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितम् ॥ २६ ॥

रससिन्दूर और वंगभस्म इन दोनोंको समान भाग लेकर एकत्र पीसकर दो मासे परिमाण सहतके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके प्रमेहरोग नष्ट होते हैं । इसको वंगेश्वर रस कहते हैं ॥ २६ ॥

बृहद्वङ्गेश्वर रस ।

वंगभस्म रसं गन्धं रौप्यं कर्पूरमभ्रकम् ।
कर्षं कर्षं मानमेषां सूतांघ्रि हेम मौक्तिकम् ॥ २७ ॥
केशराजरसैर्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव साध्यासाध्यमथापि वा ॥ २८ ॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ॥ २९ ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ३० ॥
बृहद्वङ्गेश्वरो नाम सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
बहुमूत्रं बहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम् ॥ ३१ ॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्द्धनः ।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यग्वृषायते ॥ ३२ ॥

बलवर्णकरो रुच्यः शुक्रसञ्जननः परः।
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम्॥३३॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक्।
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम् ॥ ३४ ॥

वंगभस्म, पारा, गन्धक, रूपाभस्म, कपूर और अभ्रकभस्म, यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे। सोनाभस्म और मोती प्रत्येक चार चार मासे; इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके कुकुरभांगरेके रसमें सात भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे साध्य और असाध्य बीस प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पांडु, धातुगत ज्वर, हलीमक, वातपित्त, कफोत्पन्न रक्तपित्त, संग्रहणी, आमदोष, मन्दाग्नि और अरुचि प्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं। तथा सोमरोग, बहुमूत्ररोग, घोरतर मूत्रमेह, मूत्रातिसार और मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट होते हैं। क्षीणमनुष्यको पुष्टि उत्पन्न होती है। ओज और तेजकी वृद्धि होती है। स्त्री प्रसंगमें उत्तम शक्ति उत्पन्न होती है। तथा बल, वर्ण, रुचि और शुक्र उत्पन्न होता है। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें दोषोंका बलाबल विचार कर बकरीका दूध अथवा गायके दूधको पान करे, अथवा स्वच्छ दही पीवे। यह औषधि बालक और प्रौढ मनुष्यको सेवन करानी चाहिये। इसको बृहद्वंगेश्वर रस कहते हैं॥ २७-३४ ॥

वङ्गाभ्रमथ नागाभ्रं नागं वङ्गञ्च केवलम्।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम्॥ ३५॥

अन्य योग- वंग और अभ्रक, अथवा सीसा और अभ्रक, अथवा केवल सीसा या वंगको शिलाजीतके साथ सेवन करनेसे प्रमेहरोग नष्ट होता है॥ ३५ ॥

कस्तूरीमोदक ।

कस्तूरी वनिता क्षुद्रा त्रिफला जीरकद्वयम् ।
एलाबीजं त्वचं यष्टिमधुकं मिषि वालकम् ॥ ३६ ॥
शतपुष्पोत्पलं धात्री मुस्तकं भद्रसंज्ञकम् ॥
कदलीनां फलं पक्वं खर्जूरं कृष्णतिलवकम् ॥ ३७ ॥
कोकिलाख्यस्य बीजञ्च माषमात्रं समं समम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि द्विगुणा सितशर्करा ॥ ३८ ॥
धात्रीरसेन पयसा कूष्माण्डस्वरसेन च ।
विपचेत्पाकविद्वैद्यो मन्दमन्देन वह्निना ॥ ३९ ॥
अवतार्य सुशीते च यथालाभं विनिःक्षिपेत् ।
अक्षमात्रं प्रयुञ्जीत सर्वमेहप्रशान्तये ॥ ४० ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
सोमरोगं बहुविधं मूत्रातीसारमुल्बणम् ॥ ४१ ॥
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्याशु मूत्राघातं तथाश्मरीम् ।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च कामलां कुम्भकामलाम् ॥ ४२ ॥
वृष्यो बलकरो हृद्यः शुक्रवृद्धिकरः परः ।
कस्तूरीमोदकश्चायं चरकेण च भाषितः ॥ ४३ ॥

कस्तूरी, फूलप्रियंगू, कटेरी, हरड़, बहेड़ा, आमला, जीरा, काला जीरा, इलायची, दालचीनी, मुलैठी, सौंफ, सुगन्धवाला, सोयाके बीज, कमल, आमले, नागरमोथा, पकी केलाकी फली, खजूर, काले तिल और तालमखाने यह प्रत्येक औषधि एक एक मासे लेवे और सब औषधियोंसे दुगुनी मिश्री लेवे तथा आमलोंका रस, दूध और पेठेका रस यह तीनों वस्तु सब औषधियोंसे चौगुनी लेवे । इन सब

औषधियोंको एकत्र पीसकर मन्द मन्द अग्निसे पकावे। जब पाक तैयार होजाय तब एक एक तोलेके लड्डू बना लेवे। प्रतिदिन एक मोदक खाय, इससे सब प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं। इसके सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज सब प्रकारका सोमरोग शमन होता है। इससे अनेक प्रकारका मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, संग्रहणी, पाण्डु, कामला और कुम्भकामला रोग दूर होता है। यह अत्यन्त वीर्य्यको बढ़ानेवाला, बलकारक, हृदयको हितकारी और वीर्य्यको बढ़ानेवाला है। यह कस्तूरीमोदक चरक ऋषिने कहा है॥ ३६–४३॥

मेहवज्र।

भस्मसूतं मृतं कान्तलौहभस्म शिलाजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषं त्रिफलाबिल्वजीरकम्॥४४॥
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत्।
त्रिंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह॥४५॥
निष्कमात्रं हरेन्मेहान्मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम्।
महानिम्बस्य बीजञ्च षण्निष्कं पेषितञ्च यत॥४६॥
पलं तण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरोत्थितम्॥४७॥

रससिन्दूर, कान्तलोहभस्म, शिलाजीत, सोनामाखीभस्म, मनशिल, सोंठ, पीपल, काली मिरच हरड़, बहेडा, आमला, बेलकी छाल, जीरा, कैथ और हलदी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर भांगरेके रसमें तीस भावना देकर चार चार मासेकी गोली बना लेवे। सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे प्रमेह और मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें दो तोले बकायनके बीजोंको चार तोले चावलोंके जलमें पीसकर एक तोला घृत मिलाकर सेवन करे, इससे बहुत दिनोंका प्रमेह रोग दूर होता है॥ ४४–४७॥

कुमारी केवला देया चेषल्लवणसंयुता।
प्रमेहं हन्ति सकलं सप्ताहात्परतो नृणाम् ॥ ४८ ॥

अथवा केवल एक घीकारके रसमें किंचित् नमक मिलाकर सेवन करनेसे एक सप्ताहमें सब प्रकारका प्रमेह रोग दूर होता है ॥ ४८ ॥

मेहकेशरी।

मृतवङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलौहञ्च पारदम्।
मुक्ता गुडत्वचश्चैव सूक्ष्मैलापत्रकेशरम् ॥ ४९ ॥
समभागं विचूर्ण्याथ कन्यानीरेण भावयेत्।
द्विमाषां वटिकां खादेद्दुग्धान्नं प्रपिबेत्ततः ॥ ५० ॥
प्रमेहं नाशयत्याशु केसरी करिणं यथा।
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्रान्नात्र संशयः॥
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ ५१ ॥

वंगभस्म, सोनाभस्म, कान्तलोहभस्म, रससिन्दूर, मोती, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात और नागकेशर इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर घीकारके रसमें सात भावना देकर दो दो मासेकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेपर दूधके साथ भात खावे। जिस प्रकार सिंह हस्तियोंके समूहको नष्ट करता है उसी प्रकार यह औषधि भी प्रमेहके समूहको नष्ट करती है। इसके सेवन करनेसे तीन दिनमें शुक्रका बहना बंद हो जाता है तथा बहुत दिनोंका प्रमेह और मधुमेह नष्ट होता है। इसको मेहकेशरी रस कहते हैं ॥४९-५१

योगेश्वर रस।

सूतकं गन्धकं लौहं नागञ्चापि वराटिकाम्।
ताम्रकं वंगभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम् ॥ ५२ ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम्।
रेणुकामलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ ५३ ॥

एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्द्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ ५४ ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुटिकेयं प्रकीर्तिता।
प्रमेहं बहुमूत्रञ्च अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ५५ ॥
व्रणं हन्ति महाकुष्ठमर्शांसि च भगन्दरम्।
योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥ ५६ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे प्रमेहाधिकारः।

पारा, गंधक, लोहभस्म, सीसाभस्म, कौड़ीकी भस्म, तांबाभस्म, वंगभस्म और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग; छोटी इलायची, तेजपात, नागरमोथा, वायविडंग, नागकेशर, रेणुका, आमले और पीपलामूल यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग ले। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर आमलोंके रसकी सात भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना ले। इस औषधिके सेवन करनेसे प्रमेह, बहुमूत्र, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, व्रण, महाकुष्ठ, बवासीर और भगन्दर रोग दूर होते हैं। इस योगेश्वर रसको स्वयं महादेवने कहा है ॥ ५२-५६ ॥

इति प्रमेहाधिकार सम्पूर्ण।

अथ सोमरोगचिकित्सा।

तालकेश्वर रस।

तालं सूतं समं गन्धं मृतलौहाभ्रवङ्गकम्।
मर्दयेन्मधुना चैव रसोऽयं तालकेश्वरः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये।
उदुम्बरफलं पक्कं चूर्णितं कर्षमानतः ॥
संलेह्यं मधुना सार्द्धमनुपानं सुखावहम् ॥ २ ॥

हरिताल, पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और वंगभस्म इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर सहतमें पीसकर एक मासे परिमाण लेकर सहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे एक कर्ष परिमाण गूलरका चूर्ण सहतमें मिलाकर खावे। इसके सेवन करनेसे बहुमूत्र रोग दूर होता है॥ १॥ २॥

गगनादि लोह।

गगनं त्रिफला लौहं कुटजं कटुकत्रयम्।
पारदं गन्धकञ्चैव विषटङ्कणसर्जिकाः ॥ ३॥
त्वगेला तेजपत्रञ्च वङ्गं जीरकयुग्मकम्।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ४॥
तदर्द्धं चित्रकं चूर्णं कर्षैकं मधुना लिहेत्।
अवश्यं विनिहन्त्याशु मूत्रातीसारसोमकम् ॥ ५॥

अभ्रकभस्म, हरड़, बहेड़ा, आमले, लोहभस्म, कुड़ेकी छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, पारा, गंधक, विष, सुहागा, सज्जी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, वंगभस्म, जीरा और काला जीरा इन प्रत्येकका चूर्ण एक एक भाग, चित्रककी जड़का चूर्ण आधा भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर एक कर्ष परिमाण सहतमें मिलाकर सेवन करे तो मूत्रातिसार और सोमरोग नष्ट होते हैं। इसको गगनादिलोह कहते हैं॥ ३-५॥

सोमनाथ रस।

कर्षं जारितलौहञ्च तदर्द्धं रसगन्धकम्।
एलापत्रं निशायुग्मं जम्बुवीरणगोक्षुरम् ॥ ६॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्री दाडिमटंकणम्।
चन्दनं गुग्गुलुं लोध्रशालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ ७॥

छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम् ।
निर्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥ ८ ॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।
योनिशूलं मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम् ॥
बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयं हन्त्यसंशयः ॥ ९ ॥

जारित लोहा १ कर्ष परिमाण, पारा, गन्धक, इलायची, तेजपात, हलदी, दारुहलदी, जामुनकी छाल, खस, गोखुरु, वायविडंग, जीरा, पाढ, आमले, अनार, सुहागा, लालचन्दन, गूगल, लोध, शाल, अर्जुन और रसौत इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर दश दश रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे अनेक प्रकारका सोमरोग, दुर्जय प्रदर रोग, योनिशूल, लिंगशूल, त्रिदोषज शूल, बहुकालजात शूल और घोरतर मूत्ररोग दूर होते हैं। इसको नित्यनाथने कहा है ॥ ६–९ ॥

बृहत्सोमनाथ रस ।

हिंगुलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम् ।
रण्डाशोधितगन्धञ्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥ १० ॥
तद्द्वयोर्द्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम् ।
अभ्रकं वंगकं रौप्यं खर्परं माक्षिकन्तथा ॥ ११ ॥
सुवर्णञ्च समं सर्वं प्रत्येकञ्च रसार्द्धकम् ।
तत्सर्वं कन्यकाद्रावैर्मर्दयेद्द्रावयेत ततः ॥ १२ ॥
भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः ।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ १३ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम् ।
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम् ॥ १४ ॥

बहुदोषं बहुविधं प्रमेहं मधुसंज्ञकम्।
हस्तिमेहमिक्षुमेहं लालामेहं विनाशयेत् ॥ १५ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सोमसंज्ञकम्।
नाशयेद्बहुमूत्रञ्च प्रमेहमविकल्पतः ॥ १६ ॥

सिंग्रफमेंसे निकाला हुआ और फरहदके रसमें शुद्ध किया हुआ पारा १ भाग और मूषाकानीके रसमें शुद्ध किया हुआ गन्धक १ भाग, दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बना लेवे। फिर इस कज्जलीमें घीक्कारके रसमें शुद्ध किया हुआ लोहाभस्म ४ भाग तथा अभ्रकभस्म, वंगभस्म, रूपाभस्म, खपरिया, सोनामाखीभस्म और सोनाभस्म यह प्रत्येक औषधि आधा आधा भाग मिलाकर घृतकुमारीके रसमें खरल करके सात वार भावना देवे। पश्चात् मण्डूकपर्णीके रसमें खरल कर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। सोमरोगको दूर करनेके लिये इन गोलियोंको सहतमें मिलाकर सेवन करे। इस औषधिके भक्षण करनेसे बीस प्रकारके प्रमेह, बहुमूत्र, सोमरोग, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, बहुत दोष, बहुत प्रकारका मधुमेह, हस्तिमेह, इक्षुमेह, लालामेह और अन्यान्य सब प्रकारके प्रमेहरोग नष्ट होते हैं। इसको बृहत्सोमनाथ रस कहते हैं ॥ १०-१६ ॥

सोमेश्वर रस।

शालार्ज्जुनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम्।
अग्निमन्थं निशायुग्मं धात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥ १७ ॥
जम्बुवीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम्।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रं तथाभ्रकम् ॥ १८ ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम्।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥ १९ ॥

घृतेन वटिकां कृत्वा खादेत्षोडशरक्तिकाम् ।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २० ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सन्निपातसमुद्भवम् ॥ २१ ॥
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम् ।
भगन्दरोपदंशौ च विविधान्पिडिकाव्रणान् ।
विस्फोटार्बुदकण्डूं च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २२ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे सोमरोगाधिकारः ।

राल, अर्जुनकी छाल, लोध, कदमकी छाल, अगर, लाल चन्दन, अरणी, हलदी, दारुहलदी, आमले, अनारका बक्कल, गोखुरूके बीज, जामुनकी छाल और खस यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवे । पारा, गन्धक, धनिया, नागरमोथा, इलायची, तेजपात, अभ्रक, लोह-भस्म, रसौंत, पाठ, वायविडंग, सुहागा और जीरा यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेवे और गूगल २ तोले लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र करके घीमें पीसकर सोलह २ रत्तीकी गोली बना लेवे । अत्यंत तेजवाली इस औषधिके सेवन करनेसे एकदोषज, द्विदोषज, त्रिदोषज और सान्निपातज, सोमरोग, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगन्दर, उपदंश, अनेक प्रकारका व्रण और पिडिका, विस्फोटक, अर्बुद, कण्डू और सर्व प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं । इस सोमेश्वर रसको गहनानन्दनाथने कहा है ॥ १७-२२ ॥

इति सोमरोगचिकित्सा ।

अथ स्थौल्याधिकार ।

त्र्यूषणाद्यलोह ।

त्र्यूषणं विजया चव्यं चित्रकं विडमौद्भिदम् ।
वागुजी सैन्धवञ्चैव सौवर्च्चलसमन्वितम् ॥ १ ॥
अयश्चूर्णेन संयुक्तं भक्षयेन्मधुसर्पिषा ।
स्थौल्यापकर्षणं श्रेष्ठं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ २ ॥
मेहघ्नं कुष्ठशमनं सर्वव्याधिहरं परम् ।
नाहारे यन्त्रणा कार्या न विहारे तथैव च ॥
त्र्यूषणाद्यमिदं लौहं रसायनवरोत्तमम् ॥ ३ ॥

त्रिकुटा, भांग, चव्य, चित्रककी जड़, विडनमक, औद्भिदलवण, बावचीके बीज, सेंधानमक और कालानमक यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबकी बराबर लोहभस्म लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घृत और सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे मेदरोग नष्ट होता है । बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है । प्रमेह, कुष्ठ और समस्त रोग नष्ट होते हैं । इस औषधिके सेवन करनेपर यथेष्ट आहार विहार करे ॥ १–३ ॥

वडवाग्निलोह ।

सूतभस्म सतालञ्च लौहं ताम्रं समं समम् ।
मर्दयेत्सूर्यपत्रेण चास्य वल्लं प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥
मधुना स्थूलरोगे च शोथे शूले तथैव च ।
मध्वाज्यमनुपानञ्च देयं वापि कफोल्वणे ॥ ५ ॥

रससिन्दूर, हरितालभस्म, लोहाभस्म और तांबाभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर आकके पत्तोंके रसमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । मेदरोग,शोथ और शूलरोगमें इस औषधिको

सहतमें मिलाकर सेवन करे । तथा कफोल्वण रोगमें सहत और घृतके साथ भक्षण करे । इसको वडवाग्नि लोह कहते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

वडवाग्निरस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं ताम्रं तालं समं समम् ।
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्य क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुञ्जकम् ॥
वडवाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति ॥ ६ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे स्थौल्याधिकारः ।

शुद्ध पारा, गंधक, तांबाभस्म और हरिताल यह सब औषधि समान भाग लेकर आकके दूधमें एक दिनतक खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे स्थूलता शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ॥ ६ ॥

इति स्थौल्याधिकार समाप्त ।

अथ उदररोगाधिकार ।

त्रैलोक्यसुन्दर रस ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं ताम्राभ्रं सैन्धवं विषम् ।
कृष्णजीरं विडङ्गञ्च गुडूचीसत्त्वचित्रकम् ॥ १ ॥
उग्रगन्धा यवक्षारं प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ।
निर्गुण्डिकाद्रवैरग्निबीजपूरद्रवैर्दिनम् ॥ २ ॥
मर्दयेच्छोषयेत्सोऽयं रसस्त्रैलोक्यसुन्दरः ।
गुञ्जाद्वयं घृतैर्लेह्यं वातोदरकुलान्तकम् ॥ ३ ॥
वह्निचूर्णं यवक्षारं प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।
घृतंप्रस्थं विपक्तव्यं गोमूत्रैश्च चतुर्गुणैः ॥
घृतावशेषं कर्त्तव्यं कर्षमात्रं पिबेदनु ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा १ तोले, गंधक २ तोले तथा तांबाभस्म, अभ्रकभस्म, सेंधानमक, विष, काला जीरा, वायविडंग, गिलोयका सत, चित्रककी जड़, वच और जवाखार यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके सम्हालूके पत्तोंके रस, चित्रककी जड़के रस और बिजोरे नींबूके रसमें अलग अलग खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे, इस औषधिको घृतमें मिलाकर चाटनेसे वातोदर रोग नष्ट होता है। चित्रककी जड़का चूर्ण २ पल और जवाखार २ पल, घृत १ प्रस्थ और गोमूत्र ४ प्रस्थ लेवे, सबको एकत्र मिलाकर यथाविधिसे पकावे। जब केवल घृत बाकी रह जाय तब उतार लेवे। इस औषधिक सेवन करनेके पश्चात् इस घृतको पान करे। इसको त्रैलोक्यसुन्दर रस कहते हैं ॥ १-४ ॥

वैश्वानरी वटी ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मृतार्कायःशिलांजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ५ ॥
त्रिकटु चित्रकं वीरा निर्गुण्डी मूसलीरजः ।
अजमोदा विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ६ ॥
निम्बपञ्चांगुलक्काथैर्भावनाश्चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त दत्त्वा क्षौद्रैर्विलोडयेत् ॥ ७ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभां वटिकां तां दिवानिशि ।
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ॥ ८ ॥
देवदारुवह्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ।
भोजनं मेषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ९ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, तांबाभस्म, लोहाभस्म और शिलाजीत यह प्रत्येक एक एक भाग, विष २ भाग, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रककी जड़, क्षीरकाकोली, सम्हालूके पत्ते, मुसली और अजवायन

यह प्रत्येक दो दो भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके नीमके पत्तोंके रसमें इक्कीस २१ वार, एरण्डकी जड़के क्वाथमें २१ वार और भांगरेके रसमें सात भावना देकर बेरकी गुठली बराबर गोली बना लेवे । यह औषधि दिनमें एकवार और रात्रिमें एकवार सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे श्लेष्मोदर रोग नष्ट होता है । इस औषधिके भक्षण करनेके अन्तमें देवदारु और चित्रककी जड़का चूर्ण समान भाग लेकर पीसकर दूधके साथ सेवन करे । इसपर भेड़के दूध और कुलथीके क्वाथके साथ भात खाये । इसको वैश्वानरी वटी कहते हैं ॥ ५–९ ॥

जलोदरारि रस ।

पिप्पली मरिचं ताम्रं रजनीचूर्णसंयुतम् ।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जैपालबीजकम् ॥ १० ॥
निष्कं खादेद्द्विरेकं स्यात्सद्यो हन्ति जलोदरम् ।
रेचनानाञ्च सर्वेषां दध्यन्नं स्तम्भने हितम् ॥
दिनान्ते च प्रदातव्यमन्नं वा मुद्गयूषकम् ॥ ११ ॥

पीपल, कालीमिरच, तांबाभस्म और हलदी इन सब औषधियोंका चूर्ण समान भाग लेकर थूहरके दूधमें एक दिनतक खरल करे । और फिर उसमें सब औषधिकी बराबर शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण मिलाकर एक वार दो मासे परिमाण सेवन करे । इसके सेवन करनेसे विरेचन होकर जलोदर रोग नष्ट होता है । विरेचनको रोकनेके लिये इस पर दहीके साथ भात हितकारी है । अतएव इस औषधिके सेवन करनेपर जब अच्छे प्रकारसे दस्त होजायँ तब संध्याके समय दहीके साथ भात खाय । अथवा मूंगके यूषके साथ भात खाय । इसको जलोदरारि रस कहते हैं ॥ १० ॥ ११ ॥

वह्निरस ।

सूतस्य गन्धकस्याष्टौ रजनीत्रिफलाशिलाः ।
प्रत्येकञ्च द्विभागं स्यात्त्रिवृज्जैपालचित्रकम् ॥ १२ ॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागञ्च व्योषं दन्तिकजीरकम् ।
प्रत्येकं सप्तभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ १३ ॥
जयन्ती स्नुकपयो भृंगवह्निवातारितैलकैः ।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक् पृथक् ॥ १४ ॥
असौ वह्निरसो नाम्ना निष्कमुष्णजलैः पिबेत् ।
विरेचनं भवेत्तेन तक्रभक्तं ससैन्धवम् ॥१५॥
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ।
सर्वोदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मवातहरः परः ॥ १६ ॥

पारा ८ भाग, गंधक ८ भाग, हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला और मैनशिल यह प्रत्येक औषधि दो दो भाग, निसोथकी जड़, जमालगोटे और चित्रककी जड़ यह प्रत्येक औषधि तीन तीन भाग, सोंठ, मरिच, पीपल, दंतीके बीज और जीरा यह प्रत्येक औषधि सात सात भाग लेवे । सबको एकत्र पीसकर जयंतीके पत्तोंके रस, थूहरके दूध, भांगरेके रस, चित्रककी जड़का रस और एरण्डीके तेलमें अलग अलग सात सात भावना देकर ४ मासे परिमाण औषधि गरम जलके साथ सेवन करे । इसके सेवन करनेसे विरेचन होगा । दिनके अंतमें तक्र, भात और सेंधानमक मिलाकर पथ्य देवे । इसके सेवन करनेपर शीतल जलको त्याग देवे । इससे सब प्रकारके उदररोग और वातकफोत्पन्न रोग नष्ट होते हैं । इसको वह्निरस कहते हैं १२-१६॥

त्रैलोक्यडुम्बर रस ।

द्वौ भागौ शिवबीजस्य गन्धकस्य चतुष्टयम् ।
अभ्रवह्निविडङ्गानां गुडूचीसत्त्वनागयोः ॥१७॥

कृष्णजीरकटूनाञ्च लवणक्षारयोरपि ।
प्रत्यकं भागमादाय मर्दयेत्सुरसाद्रवैः ॥ १८ ॥
बीजपूररसैर्भूयो मर्दयित्वा विशोषयेत ।
त्रैलोक्यडुम्बरो नाम वातोदरकुलान्तकः ॥ १९ ॥
गुञ्जाद्वयं ततश्चास्य दद्दीत घृतसंयुतम् ।
भोजयेत्स्निग्धमुष्णञ्च पायसञ्च विवर्जयेत् ॥ २० ॥

पारा २ भाग, गंधक ४ भाग, अभ्रकभस्म, चित्रककी जड़, वायविडंग, गिलोयका सत, सीसाभस्म, काला जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक और जवाखार यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके तुलसीके पत्तोंके रस और बिजौरे नींबूके रसमें मर्दन करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे, घृतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे वातजन्य उदररोग नष्ट होता है । इस औषधिके सेवन करनेपर गरम और स्निग्ध पदार्थ भक्षण करे । किन्तु दूधसम्बन्धी किसी प्रकारका कोई पदार्थ नहीं खावे । इसको त्रैलोक्यडुम्बर रस कहते हैं ॥ १७-२० ॥

महावह्नि रस ।

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनीत्रिफलाशिलाः ।
प्रत्येकन्तु त्रिभागं स्याद्दन्तीत्र्यूषणजीरकम् ॥ २१ ॥
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
जयन्तीस्नुक्पयोभृङ्गवह्निवातारितैलकैः ॥ २२ ॥
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक्पृथक् ।
महावह्निरसो नाम निष्कमुष्णजलैः पिबेत् ॥ २३ ॥
विरेचनं भवेत्तेन तक्रमुष्णं ससैन्धवम् ।
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ॥
सर्वोदरहरः प्रोक्तो मूढवातहरः परः ॥ २४ ॥

पारा ४ भाग, गंधक ८ भाग, हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला और मैनशिल यह प्रत्येक औषधि तीन तीन भाग लेवे । दंतीकी जड़, सोंठ, मिरच, पीपल और जीरा यह प्रत्येक औषधि आठ आठ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर चूर्ण कर लेवे । पश्चात् इस चूर्णको जयंतीके पत्तोंके रसमें, थूहरके दूध, भांगरेके रस, चित्रककी जड़के रस और एरंडीके तेलमें अलग अलग सात सात भावना देवे । इस औषधिमेंसे चार मासे औषधि लेकर गरम जलके साथ सेवन करे । इसके सेवन करनेसे जब अच्छे प्रकारसे दस्त होजायँ तब दिनके अंतमें गरम तक्र और सेंधानमक मिलाकर पथ्य देवे । और शीतल जल त्याग करा देवे । इससे सर्व प्रकारके उदररोग और मूढवात नष्ट होते हैं । इसको महावह्नि रस कहते हैं ॥ २१–२४ ॥

इच्छाभेदी रस ।

शुण्ठीमरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम् ।
जैपालो द्विगुणः प्रोक्तः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २५ ॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात्सितया सह दापयेत् ।
पिबेत्तु चुल्लकान्यावत्तावद्वारान्विरेचयेत् ॥ २६ ॥

सोंठ, मरिच, पारा, गंधक और सुहागा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, जमालगोटे २ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एत्रक करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । मिश्रीके साथ इस औषधिका सेवन करे, इसके ऊपर जितने वार उड़दोंके धोवनका जल पान करे उतने ही वार विरेचन होता है । इसको इच्छाभेदी रस कहते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

पिप्पलीमूलाद्य लोह ।

पिप्पलीमूलचित्राभ्रत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम् ।
सर्वचूर्णसमं लोहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥ २७ ॥

पीपलामूल, चित्रककी जड़, अभ्रकभस्म, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रककी जड़, नागरमोथा, वायविडंग, कपूर और सेंधानमक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर भक्षण करनेसे उदररोग नष्ट होता है। इसको पिप्पलीमूलाद्य लोह कहते हैं ॥ २७ ॥

उदरारि रस।

पारदं शुक्तितुत्थञ्च जैपालं पिप्पलीसमम्।
आरग्वधफलान्मज्जा वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥ २८ ॥
माषमात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां जलोदरं जयेत्।
चिञ्चाफलरसश्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥
दकोदरहरश्चैव तीव्रेण रेचनेन च ॥ २९ ॥

रससिन्दूर, सीपकी भस्म, तूतिया, जमालगोटे, पीपल और अमलतासका गूदा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर थूहरके दूधमें खरल करके एक एक मासेकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे स्त्रियोंका जलोदररोग नष्ट होता है। इसके सेवन करनेके अंतमें इमलीका रस और दहीके साथ भात खाय। इस औषधिसे अच्छे प्रकारसे विरेचन होकर घोरतर जलोदर रोग नष्ट होता है। इसको उदरारि रस कहते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

वङ्गेश्वर रस।

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकं संप्रकल्पयेत्।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुःपलम् ॥ ३० ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम्।
रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटकेन समुद्धरेत् ॥ ३१ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम पीतो गुल्मोदरं जयेत्।

घृतैर्गुञ्जाद्वयं लेह्यं निष्कां श्वेतपुनर्नवाम् ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ ३२ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे उदररोगाधिकारः ।

रससिन्दूर और वंगकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक पल, गन्धक और तांबाभस्म यह प्रत्येक चार चार पल इन सब औषधियोंको एकत्र आकके दूधमें खरल करके गोला बना लेवे । इस गोलेको मूषामें रखकर भूधर यंत्रमें पकावे; जब शीतल हो जाय तब इसको पीसकर चूर्ण करलेवे । इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर घीमें मिलाकर चाटे और ऊपरसे चार मासे सुफेद पुनर्नवा अथवा चार मासे हलदीके चूर्णको गोमूत्रके साथ पान करे । इससे गुल्म और उदररोग नष्ट होता है । इसको वंगेश्वर रस कहते हैं ॥ ३०-३२ ॥

इति उदररोगाधिकार सम्पूर्ण ।

अथ प्लीहरोगचिकित्सा ।

रोहितकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ १ ॥

रोहेड़ा, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रककी जड़, नागरमोथा और बायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहा दश भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करे तो प्लीहा, अग्रमांस और यकृत् रोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

लोकनाथ रस ।

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत् ।
मृताभ्रं रसतुल्यञ्च यत्नतः परिमर्दयेत् ॥ २ ॥

रसाद्द्विगुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च ताम्रकम्।
भस्म वराटिकायाश्च ताम्रतस्त्रिगुणं कुरु ॥ ३ ॥
नागवल्लीदलेनैव मर्दयेद्यत्नतो भिषक्।
पुटेद्गजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ४ ॥
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां सगुडां वा हरीतकीम् ॥
गोमूत्रञ्च पिबेच्चानु गुडं वा जीरकान्वितम् ॥ ५ ॥

पारा, गन्धक और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, लोहभस्म २ भाग, तांबाभस्म २ भाग और कौड़ीकी भस्म ६ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर पानके रसमें खरल करके मूषामें रखकर गजपुटमें पकावे। जब शीतल हो जाय तब चूर्ण कर लेवे। यथोचित मात्रानुसार सेवन करे। इस औषधिके अन्तमें पीपलका चूर्ण और सहत, अथवा हरड़का चूर्ण और गुड़, किंवा गोमूत्र या जीरेका चूर्ण और गुड़ सेवन करे। इसके सेवन करनेसे यकृत्, प्लीहा, उदर, गुल्म और शोथरोग नष्ट होते हैं ॥ २-५ ॥

बृहल्लोकनाथ रस।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले कृत्वा तु कज्जलीम्।
सूततुल्यं जारिताभ्रं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ॥ ६ ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः।
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ ७ ॥
सूताच्च द्विगुणं गन्धं वराटीसम्भवं रजः।
पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥

तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेनच्छादयेद्भिषक्।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः॥ ९॥
शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत्क्षणम्।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद्भाजने शुभे॥ १०॥

शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक २ भाग, दोनोंकी एकत्र कज्जली बना लेवे। फिर इस कज्जलीमें अभ्रककी भस्म १ भाग मिलाकर घीकारके रसमें खरल करके पश्चात् उसमें तांबेकी भस्म २ भाग और लोहेकी भस्म २ भाग मिलावे। फिर मकोयके रसमें खरल करके सुखा लेवे। तदनन्तर उसमें गन्धक २ भाग और कौड़ीकी भस्म २ भाग मिलाकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके गोलासा बना लेवे। फिर इस गोलेके दो भाग करके एक भाग एक सिकोरेमें रखे और दूसरा भाग दूसरे सिकोरेमें रखे। पश्चात् दोनों सिकोरोंके ऊपर दो सिकोरे ढककर दोनोंके संधिस्थानों (जोड़ों) को अच्छे प्रकारसे मृत्तिका, राख और लवण तथा जल इनसे बंद कर देवे, फिर थोड़ी देरतक धूपमें रख देवे जब सूख जाये तब गजपुटमें पकावे। शीतल होनेपर चूर्ण करके उत्तम पात्रमें भरकर रख देवे॥ ६–१०॥

खादेद्वल्लद्वयञ्चास्य मूत्रञ्चानु पिबेन्नरः।
मधुना पिप्पलीचूर्ण सगुडां वा हरीतकीम्॥ ११॥
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत्तुल्ययोगतः।
यकृत्प्लीहोदरोग्रञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत्॥ १२॥
वाताष्ठीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च।
कांस्यक्रोडाग्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम्॥
वह्निमान्द्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः॥ १३॥

इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि लेकर चार रत्ती पीपलके चूर्ण और चार रत्ती सहत, अथवा चार रत्ती हरड़का चूर्ण और चार रत्ती गुड़,अथवा चार रत्ती जीरेका चूर्ण और चार रत्ती गुड़के साथ भक्षण करे और ऊपरसे गोमूत्रको पान करे। इस औषधिके सेवन करनेसे यकृत्, प्लीहा, प्रवृद्ध उदररोग, शोथ, वाताष्ठीला, कमठी, प्रत्यष्ठीला, कांस्यक्रोड, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, मंदाग्नि और कासरोग नष्ट होते हैं। इसको बृहल्लोकनाथ रस कहते हैं॥ ११-१३॥

ताम्रेश्वरवटी।

हिंगु त्रिकटुकञ्चैव अपामार्गस्य पत्रकम्।
अर्कपत्रन्तथा स्नुहीपत्रञ्च समभागकम्॥ १४॥
सैन्धवं तत्समं ग्राह्यं लौहं ताम्रञ्च तत्समम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममामवातं सुदारुणम्॥ १५॥
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम्।
ग्रहणीमतिसारञ्च यक्ष्माणं शोथमेव च॥१६॥

हींग, साठ, पीपल, काली मिरच, चिरचिटेके पत्तोंका खार, मदार और थूहरके पीले पत्ते समान भाग और इन सबके बराबर सेंधानमक, लोहा और तांबाभस्म लेकर खरल करके यथोचित मात्रानुसार भक्षण करनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, आमवात, अर्श, उदररोग, मूर्च्छा, पांडु, हलीमक, संग्रहणी, अतिसार, राजयक्ष्मा और शोथरोग नष्ट होते हैं। इसको ताम्रेश्वरवटी कहते हैं॥ १४-१६॥

अग्निकुमार लोह।

तुत्थरामठटङ्कानि सैन्धवं धान्यजीरकम्।
यमानी मरिचं शुण्ठी लवङ्गैला विडङ्गकम्॥ १७॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं लौहचूर्णन्तु तत्समम्।
रसस्य गन्धकस्यापि पलैकं कज्जलीकृतम्॥ १८॥

घृतेन मधुना खाद्यं लौहमग्निकुमारकम् ।
यकृत्प्लीहोदरहरं गुल्मञ्चापि हलीकम् ॥ १९ ॥
बलवर्णाग्निजननं कान्तिपुष्टिविवर्द्धनम् ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितं विश्वसम्पदे ॥ २० ॥

तूतिया, हींग, सुहागा, सेंधानमक, धनिया, जीरा, अजवायन, काली मिरच, सोंठ, लौंग, इलायची और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण और लोहेका चूर्ण सब औषधिकी बराबर लेवे । पारा १ पल और गंधक १ पल लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घी और सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे यकृत, प्लीहा, उदररोग, गुल्म और हलीमक रोग दूर होते हैं । तथा बल, वर्ण, अग्नि, कान्ति और पुष्टिकी वृद्धि होती है । संसारकी रक्षा करनेके लिये इस अग्निकुमार लोहेको श्रीमान् गहनानन्दनाथने कहा है ॥ १७-२० ॥

प्राणवल्लभ रस ।

लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिंगु फलत्रिकम् ।
स्नुहीमूलं यवक्षारं जैपालं टंकणं त्रिकम् ॥ २१ ॥
प्रत्येकञ्च पलं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषितम् ।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनापि वा ॥ २२ ॥
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्द-भाषितः ।
दोषं रोगञ्च संवीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥२३॥
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदार्बुदम् ।
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ॥२४॥
अपचीं वातरक्तञ्च कण्डूं विस्फोटकुष्ठकम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठः कामलार्त्तिभयेष्वपि ॥ २५ ॥

लोहा, तांबा, कौड़ी इनकी भस्म, तूतिया, हींग, हरड़, बहेडे, आमले, थूहरकी जड़, जवाखार, जमालगोटे, सुहागा और निसोथ यह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे. इन सब औषधियोंको एकत्र बकरीके दूधमें पीसकर चार चार रत्तीकी गोली बनाकर सहत अथवा जलके साथ सेवन करे । दोषोंका बलाबल और रोगका बलाबल विचारकर;अथवा और किसी युक्तिसे चार रत्ती या अधिक बढाकर देवे । इस औषधिके सेवन करनेसे कामला, पांडु, आनाह, श्लीपद, अर्बुद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, अपची, वातरक्त, कण्डू, विस्फोटक और कुष्ठरोग नष्ट होते हैं । कामला रोगको दूर करनेवाली इससे उत्तम अन्य औषधि नहीं है ॥ २१-२५ ॥

यकृदरि लोह ।

द्विकर्षं लौहचूर्णस्य चाभ्रकस्य पलार्द्धकम् ।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकांघ्रित्वचं पलम् ॥२६॥
मृगाजिनभस्मपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २७ ॥
यकृत्प्लीहोदरञ्चैव कामलाञ्च हलीमकम् ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्बलवर्णाग्निकारकम् ॥
यकृदरि त्विदं लौहं वातगुल्मविनाशकम् ॥ २८ ॥

लोहभस्मका चूर्ण २ कर्ष, अभ्रकभस्म २ तोले, शुद्ध तांबाभस्म १ कर्ष, कागजी नींबूकी छाल १ पल और हिरनके चर्मकी भस्म १ पल लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जलमें खरल करके नौ नौ रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे यकृत्, प्लीहोदर, कामला, हलीमक, खाँसी, श्वास और ज्वर नष्ट होते हैं । यह बल, वर्ण और अग्निको दीपन करता है तथा वातगुल्मनाशक है । इसको यकृदरि लोह कहते हैं ॥ २३-२८ ॥

मृत्युञ्जय रस ।

शुद्धसूतं समं गन्ध जारिताभ्रं समं समम् ।
गन्धकाद्विगुणं लौहं मृतताम्रञ्चतुर्गुणम् ॥ २९ ॥
द्विक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शंखकम् ।
चित्रकं कुनटीतालकटुकीरामठन्तथा ॥ ३० ॥
रोहितकं त्रिवृच्चिञ्चा विशालाधवमङ्कोठम् ।
अपामार्गं तालमूलं मल्लिका च निशायुगम् ॥ ३१ ॥
कानकं तुत्थकञ्चैव यकृन्मर्दं रसाञ्जनम् ।
एतानि समभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३२ ॥
आर्द्रकस्वरसेनव गुडूच्याः स्वरसेन च ।
मधुनः कुडवैर्भाव्यं वटिका माषमात्रतः ॥ ३३ ॥

शुद्ध पारा, गन्धक और अभ्रकभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, लोहाभस्म २ भाग, तांबाभस्म ४ भाग, जवाखार, सज्जी, सुहागा, विडनमक, कौड़ीकी भस्म, शंखकी भस्म, चित्रककी जड़ मैनशिल, हरिताल, कुटकी, हींग, रोहिड़ा, निसोथकी जड़, इमलीका खार, इन्द्रायनकी जड़, धावेके फूल, अंकोल, चिरचिटेका खार, ताड़की जड़की राख, हलदी, दारुहलदी, धतूरेके बीज, तूतिया, जमालगोटे और रसौंत यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे, सबको एकत्र पीसकर अदरख और गिलोयके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर सुखा लेवे। फिर एक कुडव परिमाण सहतमें भावना देकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे ॥ २९-३३ ॥

अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषानुसारतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३४ ॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम् ।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३५ ॥

रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा ।
मृत्युञ्जयमिदं लोहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३६ ॥

यथादोषानुसार इसके अनुपानकी कल्पना करे । सम्पूर्ण रोग-नाशक इस औषधिको प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करे तो प्लीहा, ज्वर, खाँसी, विषमज्वर, बहुत पुराना और वंशज श्लीपद रोग नष्ट होता है । समस्त रोगोंको दूर करनेके लिये पूर्वकालमें मनुष्योंको सिद्धि देनेवाली और मंगल कामनाओंको देनेवाली यह औषधि धन्वन्तरि भगवान्ने कही है ॥ ३४-३६ ॥

प्लीहार्णव रस ।

हिंगुलं गन्धकं टङ्कमभ्रकं विषमेव च ।
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥ ३७ ॥
पिप्पली मरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम् ।
मर्दयित्वा वटीं कुर्याद्वल्लमात्रां प्रयत्नतः ॥ ३८ ॥
सेव्या शेफालिदलजैर्वटी माक्षिकसंयुता ।
प्लीहानं षट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥ ३९ ॥
ज्वरं मन्दानलञ्चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमिम् ।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः ॥ ४० ॥

सिंग्रफ, गन्धक, सुहागा, अभ्रकभस्म और विष इन प्रत्येकका बारीक चूर्ण एक २ पल, पीपल और काली मिरचोंका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोले, इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । हरसिंगारके पत्तोंके रस और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे छः प्रकारकी प्लीहा, ज्वर, मंदाग्नि, खाँसी, श्वास, वमन और भ्रमरोग नष्ट होते हैं । इस प्लीहार्णव रसको श्रीमान् गहनानन्दनाथने कहा है ॥ ३७-४० ॥

प्लीहशार्दूल रस ।

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक्पृथक् ।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेद्वैद्यबुद्धिमान् ॥ ४१ ॥
मनःशिला वराटञ्च तुत्थं रामठलौहकम् ।
जयन्ती रोहितश्चैव क्षारटङ्कणसैन्धवम् ॥ ४२ ॥
विडं चित्रं कानकञ्च रसतुल्यं पृथक्पृथक् ।
भावयेत्त्रिदिनं यावत्त्रिवृच्चित्रकणार्द्रकैः ॥ ४३ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्सद्यः प्लीहविनाशनम् ।
मधुपिप्पलिसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत् ॥ ४४ ॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृद्गुल्मं सुदुस्तरम् ।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ ॥ ४५ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव प्लीह्नि सर्वज्वरेषु च ।
रसोऽयं प्लीहशार्दूलो गहनानन्दभाषितः ॥ ४६ ॥

शुद्ध पारा, गन्धक, सोंठ, मिरच, पीपल यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, तांबेकी भस्म ९ भाग, मैनशिल, कौड़ीकी भस्म, शुद्ध तूतिया, हींग, लोहभस्म, जयंतीके पत्ते, रोहिड़ेकी छाल, जवाखार, सुहागा, सेंधानमक, विडनमक, चित्रककी जड़ और जमालगोटे यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर निसोथकी जड़के रस, चित्रक रस, पीपलका क्काथ और अदरखके रसके साथ अलग अलग तीन तीन भावना देकर एक रत्ती अथवा दो रत्ती भरकी गोली बना लेवे । पीपलके चूर्ण और सहतके साथ इस औषधिका सेवन करे । प्लीहा, अग्रमांस, यकृत् और गुल्मरोग, आमाशयके रोग, उदररोग, शोथरोग, विद्रधि, मन्दाग्नि, ज्वर, प्लीहा और सर्व प्रकारके ज्वरोंको हरनेवाली यह औषधि गहनानन्द-नाथने कही है । इसको प्लीहशार्दूल रस कहते हैं ॥ ४१-४६ ॥

प्लीहारि रस ।

द्विकर्षं लौहभस्मापि कर्षं ताम्रं प्रदापयेत् ।
शुद्धसूतं तथा गन्धं कर्षमानं भिषग्वरः ॥ ४७ ॥
मृगाजिनं पलं भस्म लिम्पाकांघ्रित्वचः पलम् ।
एवं भागक्रमेणैव कुर्यात्प्लीहारिकां वटीम् ॥ ४८ ॥
नवगुञ्जामितां खादेच्चाथ नित्यं हि पूतवान् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ४९ ॥

लोहकी भस्म २ कर्ष, तांवा, शुद्ध पारा और गन्धक प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे, हिरनके चमड़ेकी भस्म और कागजी नींबूकी जड़की छाल प्रत्येक चार चार तोले लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर नौ नौ रत्तीकी गोली बना लेवे । प्रतिदिन इन गोलियोंमेंसे एक एक गोली सेवन करनेसे प्लीहा, यकृत् और गुल्मरोग नष्ट होते हैं ॥ ४७–४९ ॥

अपर प्लीहारि रस ।

कर्षैकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम् ।
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ ५० ॥
मृगाजिनस्य भस्मापि कर्षमत्र प्रदापयेत् ।
लिम्पाकांघ्रित्वचस्तद्वत्सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ५१ ॥
रसगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः ।
मधुना वह्निचूर्णेन खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ ५२ ॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्यवश्यं न संशयः ।
यकृतं पाण्डुरोगं च गुल्मादिकभगन्दरान् ॥ ५३ ॥

हरिताल १ तोला, सोना ३ मासे, तांबा और अभ्रक प्रत्येक दो दो तोले, हिरनके चमड़ेकी भस्म और कागजी नींबूकी जड़की छाल प्रत्येक एक एक कर्ष परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र

पीसकर छः छः रत्तीकी गोली बना लेवे । चित्रककी जड़के चूर्ण और सहतके साथ प्रतिदिन इस औषधिके सेवन करनेसे असाध्य प्लीहारोग, यकृत्, पाण्डु, गुल्म और भगन्दररोग नष्ट होते हैं ॥ ९०-९३ ॥

लोहमृत्युञ्जय रस ।

रसगन्धकलोहाभ्रं कुनटी मृतताम्रकम् ।
विषमुष्टिवराटञ्च तुत्थं शङ्खरसाञ्जनम् ॥ ९४ ॥
जातीफलञ्च कटुकी द्विक्षारं कानकन्तथा ।
व्योषं हिङ्गु सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ ९५ ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र भावयेत्ततः ।
सूर्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च ॥ ९६ ॥
सूर्यावर्त्तेन मातिमान्वटिकां कारयेत्ततः ।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत् ॥ ९७ ॥
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च ।
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च ॥ ९८ ॥

पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मैनशिल, तांबाभस्म, कुचला, कौड़ीकी भस्म, तूतिया, शंखकी भस्म, रसौत, जायफल, कुटकी, जवाखार, सज्जी, जमालगोटे, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग और सेंधानमक यह सब औषधि समान भाग लेकर सबका एकत्र बारीक चूर्ण करके हुलहुलके रसमें सात भावना देवे; फिर बेलके पत्तोंके रसमें सात भावना देवे । फिर हुलहुलके पत्तोंके रसमें खरल करके गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमांस, शोथ, सर्व प्रकारके उदररोग, वातरक्त, कमठी और अन्तर्विद्रधि रोग नष्ट होते हैं । इसको लोहमृत्युञ्जय रस कहते हैं ९४-९८॥

महामृत्युञ्जय रस ।

रसगन्धकलोहाभ्रं कुनटीतुत्थताम्रकम् ।
सैन्धवञ्च वराटञ्च वागुजीविडशङ्खकम् ॥ ९९ ॥

चित्रकं हिंगु कटुकी द्विक्षारं कट्फलन्तथा ।
रसाञ्जनं जयन्ती च टङ्कणं समभागिकम् ॥ ६० ॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ दिनमेकं विभावयेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ॥ ६१ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुना सह ।
नानारोगप्रशमनो यकृद्गुल्मोदराणि च ॥ ६२ ॥
अग्रमांसं तथा प्लीहमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
महामृत्युञ्जयो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ६३ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मैनशिल, तूतिया, तांबाभस्म, सेंधानमक, कौड़ीकी भस्म, बावचीके बीज, बिडनमक, शंखकी भस्म, चित्रककी जड़, हींग, कुटकी, जवाखार, सज्जी, कायफल, रसौत, जयंती और सुहागा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर गिलोयके रस और अदरखके रसमें एक दिनतक भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे यकृत्, गुल्म, उदररोग, अग्रमांस, प्लीहा, मंदाग्नि और अरुचि आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं । इस महामृत्युञ्जय रसको स्वयं महादेवने कहा है ॥ ५९-६३ ॥

बृहद् गुडापिप्पली ।

विडङ्गं त्र्यूषणं हिंगु कुष्ठं लवणपञ्चकम् ।
त्रिक्षारं फेनकं चव्यं श्रेयसी कृष्णजीरकम् ॥ ६४ ॥
तालपुष्पोद्भवं क्षारं नाड्याः कूष्माण्डकस्य च ।
अपामार्गोद्भवं क्षारं चिञ्चायाश्चित्रकं तथा ॥ ६५ ॥
एतानि समभागानि पुराणो द्विगुणो गुडः ।
गुडतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्चैव कणोद्भवम् ॥ ६६ ॥

मर्दयित्वा दृढे पात्रे मोदकानुपकल्पयेत् ।
भक्षयेद्वर्द्धयेन्नित्यं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम् ॥ ६७ ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगं च कामलां वह्निमान्द्यकम् ।
यकृतं पञ्चगुल्मं च तूदरं सर्वरूपकम् ॥ ६८ ॥
जीर्णज्वरं तथा शोथं कासं पञ्चविधं तथा ।
अश्विभ्यां निर्मिता ह्येषा सुबृहद्गुडपिप्पली ॥ ६९ ॥

वायविडंग, त्रिकुटा, हींग, कूठ, पांचों लवण, जवाखार, सज्जी, सुहागा, समुद्रफेन, चव्य, हरड़, कालाजीरा, ताड़की जड़का खार, पेठेका खार, चिरचिटेका खार, इमलीका खार और चित्रककी जड़ यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और सबसे दुगुना पुराना गुड़ लेवे तथा पीपलका चूर्ण गुड़की बराबर लेवे, इन सब पदार्थोंको एकत्र मर्दन करके मोदक बना लेवे । इनमेंसे प्रतिदिन एक मोदक बढ़ाकर सेवन करनेसे प्लीहा, प्रमेह, पांडु, कामला, मंदाग्नि, यकृत, पांच प्रकारका गुल्म, सर्व उपद्रवयुक्त उदररोग, जीर्णज्वर, शोथ और पांचों प्रकारकी खाँसी दूर होती है । यह बृहद्गुडपिप्पली महात्मा अश्विनीकुमारोंने कही है ॥ ६४–६९ ॥

ताम्रकल्प ।

अक्षपारदगन्धं च कर्षद्वयमितं पृथक् ।
सर्वैः समं भवेत्ताम्रं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ ७० ॥
सूर्यावर्त्तरसैः पश्चात्कणामोचरसेन च ।
योजयेत्तीव्रघर्मे तु यावत्सर्वन्तु जीर्यति ॥ ७१ ॥
जम्बीरस्य रसैर्भूयो रसं दण्डेन चालयेत् ।
दृढे शिलामये पात्रे चूर्णयेदतिशोभनम् ॥ ७२ ॥

रक्तिद्वयक्रमेणैव योज्यं माषद्वयावधि।
ह्रासयेच्च क्रमेणैव तथा चैव विवर्द्धयेत् ॥ ७३ ॥

काला नमक, पारा और गंधक यह प्रत्येक औषधि दो दो कर्ष और तांबेकी भस्म ६ कर्ष इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके हुलहुलके रस, पीपलके क्वाथ और मोचरसके क्वाथमें मर्दन करे। फिर इसको सूर्यकी तीक्ष्ण धूपमें सुखाकर फिर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करे। जबतक यह औषधि अच्छे प्रकारसे जीर्ण न होजाय तबतक मर्दन करे। पश्चात् सूख जाय तब उत्तम शुभ्र खरलमें पीसकर बारीक चूर्ण कर लेवे। प्रथम दिन दो रत्ती, दूसरे दिन चार रत्ती, इस प्रकार प्रतिदिन दो दो रत्ती बढ़ाकर सेवन करे। जब बढ़ते बढ़ते दो मासे पर्यंत होजाय तब घटाने लगे ॥ ७०-७३ ॥

जीर्णे भुञ्जीत शाल्यन्नं क्षीरं घृतसमन्वितम्।
हन्त्यम्लपित्तं विविधं ग्रहणीं विषमज्वरम् ॥ ७४ ॥
चिरज्वरं प्लीहगदं यकृद्रोगं सुदुस्तरम्।
अग्रमांसं तथा शोथं कांस्यक्रोडं सुदुर्जयम् ॥ ७५ ॥
कमठं च तथा शोथमुदरं च सुदारुणम्।
धातुवृद्धिकरं वृष्यं बलवर्णकरं शुभम् ॥ ७६ ॥
सद्यो वह्निकरं चैव सर्वरोगहरं परम्।
मुखशुद्धिर्विधातव्या पर्णैश्चूर्णसमन्वितैः॥
ताम्रकल्पमिदं नाम्ना सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ७७ ॥

इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें औषधिके जीर्ण होनेपर शालि चावलोंका भात, दूध और घृत भक्षण करे। इस औषधिके सेवन करनेसे विविध प्रकारका अम्लपित्त, संग्रहणी, विषमज्वर, चिरज्वर, प्लीहा, यकृत्, अग्रमांस, शोथ, कांस्यक्रोड, कमठ, शोथ और

उदररोग नष्ट होते हैं । यह अत्यंत धातुको बढ़ानेवाली, वृष्यकारक, बल और वर्णको बढ़ानेवाली, अग्निजनक और सर्वरोगनाशक है । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें चूनेके साथ पानको भक्षण करके मुखको शुद्ध करे । सर्व रोगोंको हरनेके लिये यह औषधि सेवन करानी चाहिये । इसको ताम्रकल्प कहते हैं ॥ ७५-७७ ॥

दारुभस्म ।

दारुसैन्धवगन्धं च भस्मीकृत्य प्रयत्नतः ।
प्लीहानमग्रमांसं च यकृतं च विनाशयेत् ॥ ७८ ॥

दारुमूष, सेंधानमक और गंधक इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र खरलकर मूषामें रखकर पुटमें पकाकर सेवन करे तो प्लीहा, अग्रमांस और यकृत्‌रोग दूर होते हैं । (दारुमूषसे कुछ वैद्य संखिया लेते हैं) ॥ ७८ ॥

वज्रक्षार ।

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्च्चलम् ।
टंकणं स्वर्जिकाक्षारस्तुल्यं सर्वं विचूर्णयेत् ॥ ७९ ॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैरातपे भावयेत् त्र्यहम् ।
तेन लिप्तार्कपत्रं च रुद्ध्वा चान्तःपुटे पचेत् ॥ ८० ॥
तत्क्षारं चूर्णयेत्पश्चात् त्र्यूषणं त्रिफलारजः ।
जीरकं रजनीवह्निनवभागं समं समम् ॥ ८१ ॥
क्षारार्द्धमेव सर्वं च एकीकृत्य प्रयोजयेत् ।
वज्रक्षारमिदं सिद्धं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ ८२ ॥
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलदोषेषु योजयेत् ।
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णेऽपि भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् ॥ ८३ ॥

वाताधिके जलं कोष्णं घृतं वा पैत्तिके हितम् ।
कफे गोमूत्रसंयुक्तमारनालं त्रिदोषजे ॥ ८४ ॥

सामुद्रिक लवण, सेंधानमक, काचलवण, जवाखार, काला नमक, सुहागा और सज्जी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर आकके दूध और थूहरके दूधमें धूपमें रखकर अलग अलग तीन तीन भावना देकर गोला बनाकर उस गोलेको आकके पत्तोंमें लपेटकर एक हाण्डी में रख सांधि बन्द करके गजपुट में फूंकदे; फिर आकके भस्म हुए पत्तों सहित चूर्ण करके उसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, जीरा, हल्दी और चित्रककी जड़ इन सबका चूर्ण उपरोक्त चूर्णसे आधा भाग लेवे । सबको एकत्र मिलाकर एक उत्तम चिकने बासनमें भरकर रख देवे । प्रतिदिन इस औषधिमेंसे आठ मासे लेकर वाताधिक रोगमें किंचित् गरम जलके साथ, पित्तजरोगमें घृत, कफज रोगमें गोमूत्र और त्रिदोषज रोगमें कांजीके साथ सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे सर्वप्रकारके उदररोग, गुल्म, मन्दाग्नि, अजीर्ण और शूल-रोग नष्ट होते हैं । इसको वज्रक्षार कहते हैं ॥ ७९-८४ ॥

उदरामयकुम्भिकेसरी रस ।

रसगन्धकभस्मताम्रकं कटुकक्षारयुगं सटङ्कणम् ।
कणमूलकचव्यचित्रकं लवणानि यमानि रामठम् ८५
समभागमिदं विभावयेत्खरघर्मे त्वथ जम्बुवारिणा ।
उदरामयकुम्भिकेशरी रस एषप्रथितोऽस्य माषकः ८६
सुखवार्यनुदापयेद्भिषक् प्रसभं हन्ति व्रणजं गदम् ।
यकृतं क्रिमिमग्रमांसकं कमठं प्लीहजलोदराह्वयम् ॥
जठरानलसार्द्धगुल्मकं परमंसाममथाम्लपित्तकम् ८७

पारा, गन्धक, तांबा, सोंठ, पीपल, मरिच, जवाखार, सज्जी, सुहागा, पीपलामूल, चव्य, चित्रककी जड़, सेंधानमक, विडनमक, कालानमक,

औद्भिद्लवण, सामुद्रिक लवण, अजवायन और हींग सब यह औषधि समान भाग लेकर जामुनकी छालके क्वाथमें या रसके द्वारा सूर्यकी प्रचण्ड धूपमें सात भावना देकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक गोली खावे। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात मदिरा और जलको पान करे। इसके सेवन करनेसे व्रणज रोग, यकृत्, क्रिमि, अग्रमांस, कमठ, प्लीहा, जलोदर, मन्दाग्नि, गुल्म, अत्यंत आमदोष और अम्लपित्त रोग नष्ट होते हैं। इसको उदरामय कुम्भिकेसरी रस कहते हैं ॥ ८९-८७ ॥

वारिशोषण रस ।

चतुर्विंशतिभागाः स्युर्गन्धाद्वङ्ग तदर्द्धकम् ।
वङ्गभागाद्भवेदर्द्धः पारदः कृष्णमभ्रकम् ॥ ८८ ॥
चतुर्दशविभागं स्यान्मृतं तद्दीयते पुनः ।
मृतलौहमष्टभागं मृतताम्रं नवात्र तत ॥ ८९ ॥
मृतहेमद्वयं तेषां मृतरूप्यं च सप्तकम् ।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं त्रयोदश ॥ ९० ॥
भागा ग्राह्या माक्षिकस्य विशुद्धस्यात्र षोडश ।
अष्टादशमितं ग्राह्यं नव काशीशकं पुनः ॥ ९१ ॥
तुत्थकञ्च षडेवात्र नवीनं ग्राह्यमेव च ।
तालकञ्च चतुर्भागं शिला योज्यास्त्रयो बुधैः ॥९२॥
शैलेयं पञ्च दातव्यं सर्वमेकत्र नूतनम् ।
मृतमौक्तिकभागैकं सौभाग्यं द्वयमेव च ॥ ९३ ॥
कुट्टयित्वा विचूर्ण्याथ जम्बीरस्य रसेन वै ।
भावयेत्सप्तधा गाढं गुटिकां तस्य कारयेत् ॥ ९४ ॥

गन्धक २४ भाग, वंगभस्म १२ भाग, पारा ६ भाग, कृष्णाभ्रक भस्म १४ भाग, लोहाभस्म ८ भाग, तांबाभस्म ९ भाग, सोनाभस्म २ भाग, रूपाभस्म ७ भाग, हीराभस्म १२ भाग, सोनामाखीभस्म १६ भाग, हीराकसीस १८ भाग, तूतिया ६ भाग, हरिताल ४ भाग, मैनशिल ३ भाग, शिलाजीत (शिलारस) ९ भाग, मोती १ भाग और सुहागा २ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें सात भावना देकर पश्चात् खरल करके गोली बना लेवे ॥ ८८-९४ ॥

पानकद्वितये कृत्वा मुद्रयेत्पानकद्वयम् ।
घटमध्ये निवेश्याथ दत्त्वा पूर्वञ्च वालुकाम् ॥९५॥
ऊर्ध्वञ्च तां पुनर्दत्त्वा वालुकां मुद्रयेन्मुखम् ।
अहोरात्रं दहेदग्नौ स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ ९६ ॥
बकुलस्य च बीजेन कण्टकारिद्वयेन च ।
गुडूचीत्रिफलावारा भावयेत्सप्तसप्ततः ॥ ९७ ॥
वृद्धदाररसेनापि तथा देयास्तु भावनाः ।
गिरिकर्ण्या रसेनापि रोहितमत्स्यपित्ततः ॥ ९८ ॥
एवं सिद्धो भवेत्सम्यक् रसोऽसौ वारिशोषणः ।
देवान्गुरून्समभ्यर्च्य यतिनो ब्राह्मणांस्तथा ॥९९॥
रक्तिकाद्वितयं देयं सन्निपाते समुच्छ्रये ।
मरिचेन समं देयं तेन जागर्ति मानवः ॥ १०० ॥
श्लैष्मिके च गदे देयं ग्रहण्यामग्निमान्द्यके ।
प्लीह्नि पाण्डौ प्रयोक्तव्यं त्रिकटुत्रिफलाम्भसा१०१॥
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुदावर्त्ते विशेषतः ।
कुष्ठे सुदुष्टे देयोऽयं काकोदुम्बरिकाम्भसा ॥१०२॥

अतिवह्निकरः श्रीदो बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्यो रसः परमदुर्लभः ।
सर्वरोगे प्रयोक्तव्यो निःसंदेहं भिषग्वरैः ॥ १०३ ॥

फिर इन गोलियोंको शराव सम्पुटमें रखकर कपरमिट्टी कर देवे । फिर इस सम्पुटको एक हांडीमें रख वालूसे भर देवे । फिर इस हांडीके मुखको कपरमिट्टीसे बंद करके एक दिनरात पकावे । शीतल होनेपर उतारकर उसका चूर्ण कर लेवे, फिर इस चूर्णको मौलसिरीके बीजोंके क्वाथ, कटेरीके क्वाथ, बड़ीकटेरीके क्वाथ, गिलोयके क्वाथ, त्रिफलेके क्वाथ, विधारेके बीजोंके क्वाथ, अपराजिताकी जड़के रस और मछलीके पित्तमें अलग अलग सात सात भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । पश्चात् देवता, गुरु, साधु और ब्राह्मणोंकी पूजा करके इस औषधिका सेवन करना आरम्भ करे। संज्ञाहीन सन्निपातग्रसित रोगीको मारिचोंके चूर्णके साथ इस औषधिका सेवन करावे तो संज्ञा प्राप्त होजाती है । कफज रोग, संग्रहणी, मंदाग्नि, प्लीहा, पाण्डु, शूल और उदावर्त रोगमें इस औषधिको त्रिकुटे और त्रिफलेके क्वाथके साथ और कुष्ठरोगमें कठूमरके रसके साथ इसका प्रयोग करे । यह अत्यंत अग्निको दीपन करनेवाली, लक्ष्मीजनक, बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाली है । भिषक्गण निश्चय चित्तसे सब रोगोंमें इस औषधिका प्रयोग करें । इस वारिशोषण रसको स्वयं धन्वन्तरि भगवान्‌ने कहा है ॥ ९९–१०३ ॥

सर्वतोभद्र रस ।

सूतं गन्धं तपनगगनं कान्तलौहस्य चूर्णं,
कृत्वैकस्मिन्दृषदि पिषितं शृङ्गवेरस्य वारा ।
युञ्ज्याद्रोगे यकृति गुदजे प्लीह्नि सर्वज्वरेषु,
शोथे पाण्डौ क्रिमिकृतगदे सर्वतः कामलायाम् १०४॥

कासे श्वासे च मेहे जठरजलगदे सर्वदोषप्रभूते, ख्यातो
योगःसुराणामधिपतिविहितः सर्वतोभद्र एषः १०५॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे प्लीहाधिकारः।

शुद्ध पारा, गंधक, तांबाभस्म, अभ्रकभस्म और कान्तलोहभस्म इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर अदरखके रसमें खरल करके यकृत्, अर्श, प्लीहा, सब प्रकारके ज्वर, शोथ, पांडु, क्रिमिजन्य रोग, कामला, खांसी, श्वास, प्रमेह और त्रिदोषज जलोदररोगमें यथोचित मात्रानुसार सेवन करे। इस सर्वतोभद्र रसको महात्मा इन्द्रदेवने कहा है॥ १०४॥ १०५॥ इति प्लीहरोगचिकित्सा समाप्त।

अथ शोथरोगचिकित्सा।

त्रिकट्वाद्यलोह।

त्रिकटु त्रिफला दन्ती मार्गत्रिमदशुण्ठकैः।
पुनर्नवासमायुक्तं शोथं हन्ति सुदुस्तरम्॥
लौहं शोथोदरस्थौल्यं जलोदरनिवारणम्॥ १॥

सोंठ, पीपल, काली मिरच, हरड, बहेडा, आमला, दंतीकी जड़, चिरचिटेकी जड़, चित्रक, नागरमोथा, वायविडंग, सोंठ और पुनर्नवा यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहा १३ भाग लेवे इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार यथोक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसे दुर्निवार शोथरोग, उदररोग, मेदरोग और जलोदररोग नष्ट होते हैं। इसको त्रिकट्वाद्यलोह कहते हैं॥ १॥

कटुकाद्यलोह।

कटुकी त्र्यूषणं दंती विडंगं त्रिफला तथा।
चित्रको देवकाष्ठञ्च त्रिवृद्दारणपिप्पली॥ २॥
तुल्यान्येतानि चूर्णानि द्विगुणं स्यादयोरजः।
क्षीरेण पीतमेतत्तु श्रेष्ठं श्वयथुनाशनम्॥ ३॥

कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल, दंती, वायविडंग, हरड, बहेडा, आमला, चित्रककी जड, देवदारु, निसोथकी जड और गजपीपल इन सब औषधियोंका चूर्ण प्रत्येक एक एक भाग और लोहभस्मका चूर्ण सब औषधिसे दुगुना लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके यथोचित मात्रासे दूधके साथ सेवन करनेसे शोथरोग नष्ट होता है । इसको कटुकाद्यलोह कहते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

त्र्यूषणाद्यलोह ।

अयोरजस्त्र्यूषणयावशूकं चूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन । शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य यथाऽशनिर्वृक्षमुदीर्णवेगः ॥ ४ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल और जवाखार यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, लोहभस्मका चूर्ण ४ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र करके त्रिफलेके क्वाथके साथ यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे शोथरोग नष्ट होता है । इसको त्र्यूषणाद्यलोह कहते हैं ॥ ४ ॥

सुवर्चलाद्यलोह ।

सुवर्च्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चव्यञ्च देवकाष्ठञ्च दीप्यकं लोहमेव च ॥
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च ॥ ५ ॥

काला नमक, नखी, चित्रककी जड, कुटकी, देवदारु और अजवायन यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और लोहभस्म ७ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे शोथ, पाण्डु, खांसी और सब प्रकारके उदररोग नष्ट होते हैं । इसको सुवर्च्चलाद्यलोह कहते हैं ॥ ५ ॥

क्षारगुटिका ।

क्षारद्वयं स्याल्लवणानि पञ्च अयश्चतुष्कं त्रिफला च व्योषम् । सपिप्पलीमूलविडङ्गसारं मुस्ताजमोदा-

ऽमरदारु बिल्वम् ॥ ६ ॥ कलिंगकश्चित्रकमूल-पाठा यष्ट्याह्वयं सातिविषं पलाशम् । सहिंगुकर्षं त्वतिसूक्ष्मचूर्णं द्रोणं तथा मूलकशुण्ठिकानाम् ॥ ७ ॥ स्याद्भस्मनस्तत्सलिलेन साध्यमालोक्य यावद्घनमप्यदग्धम् । स्त्यानं ततः कोलसमां च मात्रां कृत्वा तु शुष्कां विधिना प्रयुंज्यात् ॥ ८ ॥ प्लीहोदरं श्वित्रहलीमकार्शःपाण्ड्वामयारोचकशोथ-शोषान् । विषूचिकागुल्मगराश्मरीश्च सश्वास-कासान् प्रणुदेत् सकुष्ठान् ॥ ९ ॥

जवाखार, सज्जी, *पांचों लवण, कान्तलोह, तीक्ष्णलोह, मुण्डलोह, मण्डूर, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपलामूल, वायविडंग, नागरमोथा, अजवायन, देवदारु, बेलकी जड़की छाल, इन्द्रजौ, चित्रककी जड़, पाढ, मुलैठी, अतीस, ढाकके बीज और हींग इन प्रत्येक औषधियोंका चूर्ण एक एक कर्ष परिमाण लेकर सबको एकत्र पीसकर एक उत्तम बासनमें भरकर रख देवे । फिर सूखी मूलीकी भस्म एक द्रोण परिमाण लेकर आठगुने जलमें पकावे; जब पककर आधा जल बाकी रह जाय तब उतारकर छान लेवे । फिर इसको २१ वार टपकावे और जो क्षार इकट्ठा होय उसको उतारकर एक बर्त्तनमें करलेवे । फिर इस क्षारजलमें उपरोक्त यवक्षारादिके चूर्णसे चौगुना जल डालकर पकावे । जब पकते पकते गाढा होजाय तब उसमें उक्त जवाखारादिका चूर्ण डालकर खूब करछीसे घोटकर एक एक तोलेकी गोली बना लेवे । जब यह सूख जाय तब विधि

---

* "सौवर्चलं सैन्धवञ्च विडमौद्भिदमेव च ।
सामुद्रलवणश्चात्र जलमष्टगुणं भवेत् ॥"

पूर्वक इसका सेवन करे । इससे प्लीहोदर, श्वित्र, हलीमक, बवासीर, पाण्डुरोग, अरुचि, शोथ, शोष, विसूचिका, गुल्म, विषदोष, अश्मरी, श्वास, खाँसी और कुष्ठरोग नष्ट होते हैं ॥ ६-९ ॥

वंगेश्वर रस ।

सूतभस्म वंगभस्म भागैकैकं प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुर्गुणम् ॥ १० ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम् ।
रुद्ध्वा तु भूधरे पक्त्वा पुटकेन समुद्धरेत् ॥ ११ ॥
एष वंगेश्वरो नाम्ना प्लीहगुल्मोदराञ्जयेत् ।
घृतैर्गुञ्जाद्वयं लिह्यान्निष्कां श्वेतपुनर्नवाम् ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ १२ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे शोथाधिकारः ।

रससिन्दूर और वंगभस्म यह प्रत्येक दोनों एक एक भाग लेवे, गन्धक और तांबाभस्म यह प्रत्येक चार चार भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर आकके दूधमें खरल करके गोला बना लेवे। फिर इस गोलेको मूषामें रखकर और उस मूषाको बन्द करके भूधरयन्त्रमें पकावे। जब पाक समाप्त होजाय तब उतारकर चूर्ण कर लेवे। इसमेंसे दो रत्ती परिमाण औषधि लेकर घृतमें मिलाकर चाटनेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोग नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवन करनेसे अन्तमें चार मासे परिमाण श्वेतपुनर्नवाके चूर्ण अथवा चार मासे हलदीके चूर्णको गोमूत्रके साथ पान करे। इसको वंगेश्वर रस कहते हैं ॥ १०-१२ ॥

इति शोथरोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ अर्बुदरोगचिकित्सा ।

रौद्ररस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मर्द्यं यामचतुष्टयम् ।
नागवल्लीरसैर्युक्तं मेघनादपुनर्नवैः ॥ १ ॥
गोमूत्रपिप्पलीयुक्तं मर्द्यं रुद्ध्वा पुटेल्लघु ।
लिह्यात्क्षौद्रे रसो रौद्रो गुञ्जामात्रोऽर्बुदं जयेत् ॥२॥

शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक १ भाग, दोनोंको एकत्र पीसकर चार प्रहरतक पानाके रस, चौलाईके रस, पुनर्नवेके रस, गोमूत्र और पीपलके क्राथमें अलग अलग खरल करके मूषामें रखकर लघुपुटमें पकावे । पश्चात् शीतल होनेपर इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि लेकर सहतमें मिलाकर सेवन करावे । इसके सेवन करनेसे अर्बुदरोग नष्ट होता है । इसको रौद्ररस कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

रामबाणादिकान्योगवाहिनोऽत्र प्रयोजयेत् ॥ ३ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे अर्बुदाधिकारः ।

रामबाण प्रभृति समस्त योगवाही औषधि इस अर्बुदरोगमें प्रयुक्त करनी चाहिये ॥ ३ ॥ इति अर्बुदरोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ श्लीपदरोगचिकित्सा ।

नित्यानन्द रस ।

हिंगुलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
वङ्गं तालञ्च तुत्थञ्च शंखं कांस्यं वराटकम् ॥ १ ॥
त्रिकटुत्रिफलालौहं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ।
चविका पिप्पलीमूलं हवुषा च वचा तथा ॥ २ ॥
शटी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम् ।
एतानि समभागानि वटिकां कुरु यत्नतः ॥ ३ ॥

हरीतकीरसं दत्त्वा पञ्चगुञ्जामितां शुभाम् ।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं शीतं वारि पिबेदनु ॥ ४ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसगतञ्च यत् ।
मेदोगतं धातुगतं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ५ ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो विश्वसम्पदे ।
नित्यानन्दकरश्चायं यत्नतः श्लीपदे गदे ॥ ६ ॥

सिंग्रफमेंसे निकाला हुआ पारा, गंधक, तांबाभस्म, वंगभस्म, हरितालभस्म, तूतिया, शंखकी भस्म, काँसाभस्म, कौड़ीकी भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, लोहा, वायविडंग, पांचों लवण, चव्य, पीपलामूल, हाऊबेर, वच, कचूर, पाढ, देवदारु, इलायची और विधारेके बीज इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर हरड़के रसमें खरल करके पांच पांच रत्तीकी गोली बना लेवे । प्रतिदिन एक एक गोली सेवन करे और ऊपरसे शीतल जलको पान करे । इस औषधिके सेवन करनेसे कफवातजनित श्लीपद रोग, रुधिरगत, मांसगत, मेदोगत और धातुगत श्लीपदरोग नष्ट होता है । श्रीमान् गहनानन्दनाथने संसारकी रक्षाके लिये सदैव आनन्दजनक ऐसी यह औषधि कही है । इसको नित्यानन्द रस कहते हैं ॥ १–६ ॥

कणादि वटी ।

कणावचादारुपुनर्नवानां चूर्णं सबिल्वं समवृद्धदारकम् ।
संमर्द्य चैतस्य निहन्ति वह्लः सकाञ्जिकः श्लीपदमुग्रवेगम् ७

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे श्लीपदाधिकारः ।

पीपल, वच, देवदारु, पुनर्नवा, बेलगिरी और विधारेके बीज इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एकत्र जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । कांजीके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे प्रबल श्लीपदरोग नष्ट होता है ॥ ७ ॥ इति श्लीपदरोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ भगन्दररोगचिकित्सा।

वारिताण्डव रस।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम्।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ १ ॥
द्वयोः समं ताम्रपत्रं हण्डिकान्तर्निवेशयेत्।
तद्भाण्डं भस्मनापूर्य चुल्ल्यां तीव्राग्निना पचेत्॥२॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम्।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सप्तपुटे पचेत् ॥ ३ ॥
गुञ्जैकं मधुनाज्येन लेह्याद्धन्ति भगन्दरम्।
मूसली लवणश्चानु आरनालयुतं पिबेत् ॥ ४ ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवा स्वप्नञ्च मैथुनम्।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन्वारिताण्डवे ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग, दोनोंकी एकत्र कज्जली बनाकर घीकारके रसमें तीन दिन तक खरल करके कल्कसा बना लेवे. फिर बराबर भाग पारे और गंधकके तांबेके पत्रोंको लेकर उनके ऊपर इसका लेप कर देवे। फिर उपरोक्त ताम्रपत्रोंको एक हांडीमें रखकर उसके ऊपर एक छोटासा सिकोरा ढक देवे और उसके ऊपरके भागको राखसे भर देवे। फिर तीव्र अग्निसे दो प्रहरतक पकावे, जब अपने आप शीतल होजाय तब उसका चूर्ण कर लेवे। पश्चात् जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके सुखा लेवे। फिर इसको मूषामें रखकर पुटपाककी विधिसे पकावे। इस प्रकार सात वार जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके सात वार पुट देवे। इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि लेकर सहत और घीमें मिला करके चाटे तो भगन्दर रोग नष्ट होता है। इसके भक्षण करनेके बाद मुसली, सेंधानमक और कांजी इनको एकत्र मिलाकर पान करे। इसके सेवन

करनेपर मधुर रसवाले पदार्थ भक्षण करे और दिनमें सोना, मैथुन और शीतल वस्तुओंका आहार यह सब त्याग देवे । इसको वारि-ताण्डव रस कहते हैं ॥ १-५ ॥

भगन्दरहर रस ।

सूतस्य द्विगुणेन शुद्धवलिना कन्यापयोभिस्त्र्यहं,
शुद्धं ताम्रमयः समस्ततुलितं पात्रं निधायोपरि ।
स्वेद्यं यामयुगञ्च भस्म पिठरे निम्बूजलैः सप्तधा,
पाकं तत्पुटयेद्भगन्दरहरो गुञ्जोन्मितः स्यादिति॥६॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे भगन्दराधिकारः ।

पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बना लेवे । इस कज्जलीको घीकारके रसमें तीन दिनतक खरल करे। फिर इसमें तांबा और लोहभस्म समान भाग मिलावे । फिर एक हांडीमें इसको रखकर और ऊपरसे एक छोटासा सिकोरा ढककर उसके ऊपर राख भरकर विधिपूर्वक दो प्रहरतक पकावे । जब स्वयं शीतल होजाय तब इसका चूर्ण बनाकर नींबके रसमें सात भावना देकर पुटपाकमें पकावे। इसमेंसे एक रत्ती परिमाण औषधि सेवन करनेसे भगन्दर रोग नष्ट होता है ॥ ६ ॥ इति भगन्दररोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ उपदंशचिकित्सा ।

योगवाहिरसान् सर्वान्सर्वरोगोदितानपि ।
उपदंशे प्रयुञ्जीत ध्वजमध्ये शिराव्यधः ॥ १ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे उपदंशाधिकारः ।

सम्पूर्ण रोगोंमें जो योगवाही रस कहे हैं उन सबका इस उपदंश रोगमें अनुपान विशेषोंके साथ प्रयोग करना चाहिये । तथा लिंगके मध्यकी शिराको छिदवाना चाहिये ॥ १ ॥

इति उपदंशरोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ कुष्ठरोगचिकित्सा।

कन्याकोटिप्रदानेन गङ्गायां पितृतर्पणे।
विश्वेश्वरपुरीवासे तत्फलं कुष्ठनाशने ॥ १ ॥
गवां कोटिप्रदानेन अश्वमेधशतेन च।
वृषोत्सर्गे च यत्पुण्यं तत्पुण्यं कुष्ठनाशने ॥ २ ॥

जो फल करोड़ कन्या प्रदान करनेसे होता है, जो फल गंगामें पितृतर्पण करनेसे होता है, जो फल काशीमें निवास करनेसे होता है, जो फल करोड़ गोदान करनेसे होता है, जो फल सौ अश्वमेध यज्ञ करनेसे होता है तथा जो पुण्य वृषोत्सर्ग करनेसे संचय होता है वही फल केवल एक कुष्ठरोगीको आरोग्य करनेमें होता है ॥ १ ॥ २ ॥

गलत्कुष्ठारि रस।

रसो वलिस्ताम्रमयः पुरोऽग्निशिलाजतु स्याद्विषतिन्दुकोग्रे । सर्वञ्च तुल्यं गगनं करञ्जबीजं तथा भागचतुष्टयञ्च ॥ ३ ॥ संमर्द्य गाढं मधुना घृतेन वल्लद्वयञ्चास्य निहन्त्यवश्यम् । कुष्ठं किलाशं ह्यपि वातरक्तं जलोदरं वाथ विबद्धमूलम् । विशीर्णकर्णाङ्गुलिनासिकोऽपि भवेत्प्रसादात्स्मरतुल्यमूर्तिः॥४॥

पारा, गन्धक, तांबाभस्म, लोहभस्म, गूगल, चित्रककी जड़, शिलाजीत, शुद्ध कुचले और वच यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, अभ्रक और करंजके बीज यह प्रत्येक चार चार भाग, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर थोड़ेसे घी और सहतमें सानकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे कुष्ठ, किलास, वातरक्त और बँधी हुई जड़वाला जलोदर रोग नष्ट हो जाता है। कुष्ठरोगमें जिस मनुष्यके कान,अंगुली और नासिका गल गई वह इस औषधिके प्रभावसे कामदेवके समान स्वरूपवान् होजाता है। इसको गलत्कुष्ठारि रस कहते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

उदयभास्कर ।

गन्धकेन मृतं ताम्रं दशभागं समुद्धरेत् ।
ऊषणं पञ्चभागं स्यादमृतञ्च द्विभागिकम् ॥ ५ ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं रक्तिकैकप्रमाणतः ।
दातव्यं कुष्ठिने सम्यगनुपानस्य योगतः ॥ ६ ॥
गलिते स्फुटिते चैव विषूच्यां मण्डले तथा ।
विचर्चिकादद्रुपामाकुष्ठरोगप्रशान्तये ॥ ७ ॥

गंधकसे मारा हुआ तांबा १० भाग, काली मिरच ५ भाग, विष २ भाग, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जलमें खरल करके एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इसको यथोचित अनुपानके साथ कुष्ठरोगीको देवे । गला हुआ और फूटा हुआ ऐसे कुष्ठरोगमें, विषूचिकामें, मण्डलरोगमें और विचर्चिका, दद्रु, पामा इत्यादि कुष्ठ रोगोंमें इस औषधिका प्रयोग करे । इसको उदयभास्कर रस कहते हैं॥५-७॥

तालकेश्वर रस ।

धात्रीटंकणतालानां दशभागं समुद्धरेत् ।
धात्र्या रसैर्मर्दयित्वा शिखरीमूलवारिणा ॥
सर्वकुष्ठहरः सेव्यः सर्वदा भोजनप्रियः ॥ ८ ॥

आमला, सुहागा और हरिताल यह प्रत्येक औषधि दश तोले लेकर सबको एकत्र पीसकर आमले और चिरचिटेके रसमें खरल करके गोली बना लेवे । इसके सेवन करनेसे कुष्ठ रोग नष्ट होता है ॥८॥

ब्रह्म रस ।

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं त्वग्निवागुजी ।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥ ९ ॥
त्रिंशद्भागं गुडस्यापि क्षौद्रेण गुटिका कृता ।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्यादिनाशनः ॥ १० ॥

द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम्।
पातालगरुडीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिबेदनु॥ ११॥

मूर्छित पारा १ भाग, गंधक, चित्रककी जड़, बावचीके बीज और ढाकके बीज यह प्रत्येक द्वादश (बारह १२) भाग और पुराना गुड़ ३० भाग, इन सब औषधियोंको एकत्र सहतमें पीसकर आठ आठ मासेकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे ब्रह्महत्यादिजन्य प्रसुप्तिरोग और मण्डल कुष्ठ नष्ट होते हैं। इस औषधिके सेवन करनेके बाद पातालगरुडी (छिरहिटा) की जड़को जलमें पीसकर सेवन करे। इसको ब्रह्मरस कहते हैं॥ ९-११॥

चन्द्रानन रस।

सूतव्योमाग्नयस्तुल्यास्त्रिभागो गन्धकस्य च।
काठोदुम्बरिकाक्षीरैः सर्वमेकत्र मर्दयेत्॥ १२॥
माषमात्रां गुटीं कृत्वा कुष्ठरोगे प्रयोजयेत्।
देहशुद्धिं पुरा कृत्वा सर्वकुष्ठानि नाशयेत्॥
एष चन्द्राननो नाम साक्षाच्छ्रीभैरवोदितः॥ १३॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म और चित्रक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और गन्धक ३ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र कठूमरके दूधमें पीसकर एक एक मासेकी गोली बना लेवे। प्रथम वमन और विरेचनके द्वारा शरीरको शुद्ध करके कुष्ठरोगमें इस औषधिका प्रयोग करे। इससे सब प्रकारके कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं। इस चन्द्रानन रसको श्रीभैरवजीने कहा है॥ १२॥ १३॥

कुष्ठकालानल रस।

गन्धं रसं टङ्कणताम्रलोहं भस्मीकृतं मागधिकासमेतम्।
पञ्चाङ्गनिम्बेन फलत्रिकेन विभावितं राजतरोस्तथैव॥
नियोजयेद्वल्लकयुग्ममानं कुष्ठेषु सर्वेषु च रोगसंघे॥१४॥

गंधक, पारा, सुहागा, तांबाभस्म, लोहभस्म और पीपल इन सबको समान भाग लेकर नींबके पञ्चांगके रसमें सात वार, त्रिफलेके रसमें सात वार और अमलतासके क्वाथमें सात वार भावना देकर चार चार रत्ती परिमाण औषधिका कुष्ठरोग और अन्यान्य समस्त रोगोंमें प्रयोग करे। इसको कुष्ठकालानल रस कहते हैं ॥ १४ ॥

वज्रवटी ।

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद्द्विगुणगन्धकम् ।
काठोदुम्बरिकाक्षीरैर्दिनं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥ १५ ॥
वराव्योषकषायेण वटीश्चास्य समाचरेत् ।
लिह्याद्वज्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी ॥ १६ ॥

शुद्ध पारा और चित्रककी जड़, मरिच यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, गंधक २ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके कठूमरके दूधमें एक दिनतक खरल करे। पश्चात् त्रिफला और त्रिकुटेके क्वाथमें खरल करके यथोचित मात्रानुसार गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे पामा रोग नष्ट होता है। इसको वज्रवटी कहते हैं ॥१५॥१६॥

चन्द्रकान्त रस ।

पलत्रयं मृतं ताम्रं सूतमेकं द्विगन्धकम् ।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥ १७ ॥
निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकद्रावैर्वह्निद्रावैर्विमर्दयेत् ।
दिनैकं तद्विशोष्याथ तुषाग्नौ स्वेदयेद्दिनम् ॥ १८ ॥
समुद्धृत्य विचूर्ण्याथ वागुजीतैलमर्दितम् ।
त्रिदिनं भावयेत्तेन निष्कैकं भक्षयेत्सदा ॥ १९ ॥
चन्द्रकान्तरसो नाम्ना कुष्ठं हन्ति न संशयः ।
तैलं करञ्जबीजोत्थं वह्निगन्धकसैन्धवैः ॥
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं कल्कं वा वागुजीभवम् ॥ २० ॥

तांबेकी भस्म ३ पल, पारा १ पल, गंधक २ पल, त्रिकुटा ३ पल और त्रिफला ३ पल लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र करके सम्हालूके पत्तोंके रस, अदरखके रस और चित्रककी जड़के रसमें खरल करके सूर्यकी धूपमें एक दिन सुखाकर मूषामें रखे, पश्चात् तुषोंकी अग्निमें मूषाको रखकर पकावे । जब अपने आप शीतल होजाय तब बारीक पीसकर चूर्ण कर लेवे । फिर उस चूर्णको बावचीके तेलमें खरल करके उसी तेलमें ३ दिन भावना देवे । इसमेंसे प्रतिदिन चार मासे औषधि सेवन करनेसे अवश्य कुष्ठ रोग नष्ट होता है । इसके सेवन करनेके पश्चात् करंजके तेलमें पिसी हुई चित्रककी जड़, गन्धक और सेंधानमक अथवा बावचीके कल्कको भक्षण करे । इसको चन्द्रकान्त रस कहते हैं ॥ १७-२० ॥

सङ्कोच रस ।

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतश्चतुर्गुणम् ।
शुद्धं तन्मर्द्दयेत्खल्वे गोलकं कारयेत्ततः ॥ २१ ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रे क्षणं पचेत् ।
तन्मध्ये गोलकं पाच्यं यावज्जीर्णं तु गन्धकम् ॥ २२ ॥
एतन्मृद्वग्निना तावत्समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
गुग्गुलुर्निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफला चामृता विषम् ॥ २३ ॥
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः संकोचनामायं कुष्ठे परमदुर्लभः ॥ २४ ॥

तांबेकी भस्म १ भाग, अभ्रककी भस्म १ भाग, शुद्ध पारा ८ भाग इन तीनों औषधियोंको एकत्र पीसकर गोलासा बना लेवे । फिर उसमें दश भाग गन्धक मिलाकर लोहेके पात्रमें डालकर पकावे । जबतक गन्धक जीर्ण न होजाय तबतक इसको मन्द मन्द अग्निसे

पकावे । फिर शीतल होनेपर इसका चूर्ण करके फिर इसमें एक भाग गूगल, नीमके पत्तोंका चूर्ण १ भाग, नीमकी छालका चूर्ण १ भाग, नीमके फूलोंका चूर्ण १ भाग, नीमके बीजोंका तेल, नीमकी जड़का चूर्ण १ भाग, त्रिफलेका चूर्ण ३ भाग, गिलोयका चूर्ण १ भाग, विषका चूर्ण १ भाग, पटोलपत्रका चूर्ण १ भाग, खैरसारका चूर्ण १ भाग और अमलतासका चूर्ण १ भाग मिलाकर एक उत्तम पात्रमें भरकर रख देवे । इसमेंसे चार मासे औषधि सहतमें मिलाकर सेवन करे तो उदुम्बरकुष्ठ नष्ट होता है । यह संकोचरस कुष्ठ रोगमें अतीव हितकारी है ॥ २१-२४ ॥

अमृतांकुर लोह ।

हुताशमुखसंशुद्धं पलमेकं रसस्य वै ।
पलं लौहस्य ताम्रस्य पलं भल्लातकस्य च ॥ २५ ॥
अभ्रकस्य पलञ्चैकं गन्धकस्य चतुःपलम् ।
हरीतकीविभीतक्योश्चूर्णं कर्षद्वयं द्वयोः ॥ २६ ॥
अष्टमात्राधिकं तत्र धात्र्याः पाणितलानि षट् ।
घृतं चाष्टगुणं लौहाद्द्वात्रिंशत्त्रिफलाजलम् ॥ २७ ॥
एकीकृत्य पचेत्पात्रे लौहे च विधिपूर्वकम् ।
पाकमेवास्य जानीयाच्छास्त्रज्ञो लौहपाकवित् ॥ २८ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
रक्तिकादिक्रमेणैव घृतभ्रामरमर्द्दितम् ॥
लौहे च लौहदण्डेन कुर्यादेतद्रसायनम् ॥ २९ ॥

भिलावेसे शुद्ध किया रससिन्दूर १ पल, लोहभस्म १ पल, तांबाभस्म १ पल, भिलावेका चूर्ण १ पल, अभ्रकभस्म १ पल, गन्धक ४ पल, हरड़का चूर्ण २ कर्ष, बहेड़ेका चूर्ण २ कर्ष, आमले ६ तोले ८ मासे, घी ८ पल, त्रिफलेका क्वाथ ३२ पल, इनको एकत्र करके

पकावे । जब केवल ३२ पल जल बाकी रह जाय तब लोहपाकको जाननेवाला शास्त्रज्ञ वैद्य प्रथम रससिन्दूरसे लेकर गन्धक पर्यंत औषधियोंको त्रिफलेके क्वाथ और घृतके साथ लोहेके पात्रमें उत्तम रीतिसे पकावे । जब पाक समाप्त होजाय तब शीतल होनेपर त्रिफलेका चूर्ण डालकर उतार लेवे । पश्चात् रोगी गुरु, देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा करके प्रतिदिन प्रातःकाल शय्यासे उठकर एक एक रत्ती प्रतिदिन बढाकर घृत और सहतमें लोहेके डंडेसे लोहेके पात्रमें पीसकर सेवन करे ॥ २५-२९ ॥

अनुपानञ्च कुर्वीत नारिकेलजलं पयः ।
सर्वकुष्ठहरं श्रेष्ठं वलीपलितनाशनम् ।
अग्निदीप्तिकरं हृद्यं कान्त्यायुर्बलवर्द्धनम् ॥ ३० ॥
सेव्यो रसो जांगललावकानां विवर्ज्य शाकाम्लमपि स्त्रियश्च । शाल्योदनं षष्टिकमाज्यमुद्गं क्षौद्रं गुडं क्षीरमिह क्रियायाम् ॥ ३१ ॥

इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें नारियलका जल और दूधको पीवे । यह उत्तम औषधि सब प्रकारके कुष्ठरोग और वली तथा पलित रोगोंको नष्ट करती है । अग्निको दीपन करती है, हृदयको हितकारी और शरीरमें कांति, आयु और बलको बढ़ानेवाली है । इसके सेवन करनेपर जांगल प्रदेशके जीवोंका मांस, लवा पक्षीका मांस, शालि चावल और साठीके चावल, घी, मूंग, सहत, गुड़ और दूधका पथ्य देवे । तथा शाक, खटाई और स्त्रीसेवन इनको त्याग देवे । इसको अमृतांकुर लोह कहते हैं ॥ ३० ॥ ३१ ॥

माणिक्यरस ।

पलं तालं पलं गन्धं शिलायाश्च पलार्द्धकम् ।
चपलः शुद्धसीसञ्च ताम्रमभ्रमयोरजः ॥ ३२ ॥

एतेषां कोलभागञ्च वटक्षीरेण मर्दयेत् ।
ततो दिनत्रयं घर्मे निम्बक्काथेन भावयेत् ॥ ३३ ॥
गुडूचीवालहिन्तालवानरीनीलझिण्टिकाः ।
शोभाञ्जनमुराजाजीनिर्गुण्डीहयमारकम् ॥ ३४ ॥
एषां शाणमितं चूर्णमेकीकृत्य सरित्तटे ।
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृदम्बरयुते दृढे ॥ ३५ ॥
एकाकी पाकविद्वैद्यो नग्नः शिथिलकुन्तलः ।
पचेदवहितो रात्रौ यत्नात्संयतमानसः ॥ ३६ ॥

शुद्ध हरिताल १ पल, शुद्ध गंधक १ पल, मैनशिल २ तोले, शुद्ध पारा, सीसाभस्म, तांबाभस्म, अभ्रकभस्म और लोहभस्म यह प्रत्येक औषधि आधा आधा तोला लेकर इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर वडके दूधमें खरल करके नीमके क्काथमें तीन दिनतक खरल करे । फिर उसमें गिलोय, सुगंधवाला, हिंताल, कौंचके बीज, नीली, कटसरैया, सहँजनेके बीज, कपूरकचरी, जीरा, सम्हालू और कनेर इन प्रत्येक औषधिका चूर्ण चार चार मासे लेकर चूर्ण बनाकर नदीके तीरपर जाकर वहांसे कठिन मृत्तिका लेकर उसकी घडिया बनाकर उसमें इस औषधिको रखे और उसके ऊपर एक दूसरी घड़िया ढक देवे । दोनोंकी कपरौटी करके धूपमें सुखावे । इसके उपरान्त पाकको जाननेवाला विद्वान् वैद्य बालोंको और वस्त्रोंको खोल कर नग्न होकर रात्रिके समय चित्तको एकाग्र करके पकावे ॥ ३२–३६ ॥

तद्विजानीहि भैषज्यं सर्वकुष्ठविनाशनम् ।
सर्पिषा मधुना लौहपात्रे तद्दण्डमर्दितम् ॥ ३७ ॥
द्विगुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम् ।
शीतलं सारसं तोयं दुग्धं वा पाकशीतलम् ॥३८॥

आनीतं तत्क्षणादाजमनुपानं सुखावहम् ।
वातरक्तं शीतपित्तं हिक्कां च दारुणां जयेत् ॥ ३९ ॥
ज्वरान्सर्वान्वातरोगान्पाण्डुं कण्डूंश्च कामलाम् ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो बहुयत्नतः ॥ ४० ॥

जबतक कि पात्रकी तली अच्छे प्रकारसे लाल न होजाय तब-तक पकावे । जब पाक समाप्त होजाय तब शीतल होनेपर इसका चूर्ण करके दो रत्ती परिमाण लेकर घृत और सहतमें मिलाकर लोहेकी खरलमें डालकर लोहेके डंडेसे खरल करे । इसको नित्य भक्षण करे । इससे सब प्रकारके कुष्ठ रोग नष्ट होकर बलकी वृद्धि होती है । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें सरोवरका शीतल जल, अथवा शृत शीतल दूधको पीवे । अथवा तत्काल बनाया हुआ बकरेका मांस भक्षण करे । इस औषधिके सेवन करनेसे वातरक्त, शीत-पित्त, दारुण हिक्का, सब प्रकारका ज्वर, वातरोग, पाण्डुरोग, कण्डूरोग और कामलारोग नष्ट होते हैं । इस माणिक्य रसको श्रीमान् गहनानन्दनाथने कहा है ॥ ३७-४० ॥

कुष्ठकुठार रस ।

भस्मसूतसमो गन्धो मृतायस्ताम्रगुग्गुलुः ।
त्रिफला च महानिम्बश्चित्रकश्च शिलाजतु ॥ ४१ ॥
इत्येतच्चूर्णितं कुर्यात्प्रत्येकं भागषोडशम् ।
चतुःषष्टिकरञ्जस्य बीजचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ४२ ॥
चतुःषष्टिमृतश्चाभ्रं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत् ।
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेद्द्विनिष्कं सर्वकुष्ठनुत ॥
रसः कुष्ठकुठारोऽयं गलत्कुष्ठविनाशनः ॥ ४३ ॥

रससिन्दूर या पारदभस्म, गन्धक, लोहेकी भस्म, तांबेकी भस्म, गूगल, हरड़, बहेड़ा, आमला, बकायन, चित्रककी जड़ और शिलाजीत इन

प्रत्येक औषधियोंका चूर्ण सोलह सोलह भाग, करंजके बीजोंका चूर्ण ६४ भाग और अभ्रक भस्म ६४ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर सहत और घृतमें मर्दन करके घीके चिकने बासनमें भरकर रख देवे । इसमेंसे प्रतिदिन २ निष्क परिमाण औषधि सेवन करे । इससे सब प्रकारके कुष्ठ और विशेष करके गलत्कुष्ठ नष्ट होते हैं। इसको कुष्ठकुठार रस कहते हैं। (इस रसकी२ निष्ककी खुराक अधिक है; अधिकसे अधिक १।। मासे तककी खुराक देनी चाहिये)४१-४३॥

रसतालेश्वर रस ।

गुञ्जाशङ्खकरञ्जचूर्णरजनीभल्लातकाग्नेः शिखा,
कन्यासूर्यपयः पुनर्नवरजो गन्धं तथा सूतकम् ।
गोमूत्रे पचितं विडङ्गमरिचैः क्षौद्रञ्च तत्तुल्यकं,
हन्यादाशु विचर्चिकारुजमिदं कण्डूं तथाकैटिभम्॥४४

घुंघुचीके बीज, शंखकी भस्म, करंजके बीज, हलदी, भिलावे, कलिहारी, घीकारका रस, आकका दूध, पुनर्नवा, गन्धक, पारा, वायविडंग और काली मिरच इन सब औषधियोंको एकत्र करके अठगुने गोमूत्रमें पकावे । पकनेपर सबके बराबर मधु मिलाकर रख दे । इसको प्रतिदिन यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे विचर्चिका, कण्डू और कैटिभ रोग नष्ट होते हैं ॥ ४४ ॥

राजतालेश्वर रस।

नागस्य भस्म शाणैकं तोलकं गन्धकस्य[1] च ।
द्विनिष्कं शुद्धतालस्य समुद्धृतं गवां जलैः ॥ ४५ ॥
विपचेत्षोडशगुणैः पात्रे ताम्रमये शनैः ।
घर्मे द्विघस्रं जम्बीरकुमारीवज्रकन्दजैः ॥ ४६ ॥
रसैर्भृङ्गस्य चाम्भोभिर्युतं वल्लद्वयं भजेत् ।

---

१ 'पारदस्य' इत्यपि पाठोऽन्यत्रोपलभ्यते ।

कुष्ठे चास्थिगते चापि शाखानासाविभुग्नके ॥
स्वरभंगे क्षतक्षीणे मण्डलेषु महत्स्वपि ॥४७॥

सीसेकी भस्म ४ मासे, गंधक १ तोला और शुद्ध हरिताल ८ मासे लेवे, सबको एकत्र करके सोलह गुने गोमूत्रमें तांबेके पात्रमें डाल मंद मंद अग्निसे पकावे। पश्चात् जम्भीरी नींबूका रस, घीकारका रस और थूहरकी जड़के रसमें दो दिन तक खरल करके धूपमें सुखावे। इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि लेकर अस्थिगतकुष्ठ, हस्त, नासा-भंगरोग, स्वरभंग, क्षतक्षीण और मण्डलकुष्ठमें भांगरेके रसके द्वारा सेवन करे ॥ ४५–४७ ॥

औदुम्बरं हन्ति शिवामधुभ्यां कृच्छ्रञ्च कुष्ठं
त्रिफलाजलेन। गुडार्द्रकाभ्यां गजचर्मसिध्म-
विचर्चिकास्फोटविसर्पकण्डूम् ॥ ४८ ॥ निह-
न्ति पाण्डुं विविधां विपादीं सरक्तपित्तं कटु-
कासिताभ्याम् । खादेद्विजीरं ह्यमृतायुतञ्च
समुद्गयूषं सघृतञ्च दद्यात् ॥ ४९ ॥
रोहितकजटाक्काथमनुपानं प्रयच्छति ।
चतुर्दशदिनस्यान्ते कुष्ठं शुष्यति यत्नतः ॥ ५० ॥
क्षुद्बोधो जायतेऽत्यर्थमत्यर्थं सुभगं वपुः।
वर्जयेत्सततं कुष्ठी मत्स्यमांसादिभोजनम् ॥ ५१ ॥

हरड़ और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे उदुम्बर-कुष्ठ, त्रिफलेके क्काथके साथ इसके सेवन करनेसे कष्टसाध्य कुष्ठरोग, गुड़ और अदरखके रसके साथ भक्षण करनेसे गजचर्म, सिध्म, विचर्चिका, विस्फोटक, विसर्प और कण्डू ये रोग नष्ट होते हैं। कुट-कीके चूर्ण और मिश्रीके साथ भक्षण करनेसे पाण्डु, विपादिका और रक्तपित्तरोग नष्ट होता है। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें जीरा

और काला जीरा डालकर गिलोयका काथ, घृतमिश्रित मूंगका यूष और रोहिड़ेकी जड़के काथको पीवे । चौदह दिनतक इस औषधिके सेवन करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होता है । अत्यन्त क्षुधा लगती है और शरीर अत्यन्त सुन्दर हो जाता है । इसपर कुष्ठरोगी सदैव मछली और मांस आदिके भोजनको त्याग देवे ॥ ४८–५१ ॥

कुष्ठहरितालेश्वर रस ।

हरितालं भवेद्भागं द्वादशात्र विशुद्धिमत् ।
गन्धकोऽपि तथा ग्राह्यो रसः सप्तात्र दीयते ॥ ५२ ॥
कृष्णाभ्रकमपि श्लक्ष्णं खल्ले कृत्वा विमर्दयेत् ।
अंकोलमूलनीरेण सेहुण्डीपयसाथवा ॥ ५३ ॥
अर्कदुग्धेन संपिष्य करवीरजलेन च ॥
काठोदुम्बरनीरेण पेषणीयो रसो भृशम् ॥ ५४ ॥
शुद्धताम्रकटोरे च क्षेपणीयो रसेश्वरः ।
पञ्चगुञ्जाप्रमाणेन काठोदुम्बरवारिणा ॥ ५५ ॥
कुष्ठाष्टादशसंख्येषु देय एष भिषग्वरैः ।
अचिरेणैव कालेन विनाशं यान्ति निश्चयात् ५६॥
पथ्यसेवा विधातव्या प्रणतिः सूर्यपादयोः ।
साधकेन तथा सेव्यो रसो रोगौघनाशनः ॥
पिप्पलीभिः समं दद्यात्कुष्ठरोगे रसेश्वरम् ॥ ५७ ॥

शुद्ध हरिताल १२ भाग, गन्धक १२ भाग, शुद्ध पारा ७ भाग और कृष्णाभ्रकभस्म ७ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर अंकोलकी जड़के रस, थूहरके दूध, आकके दूध, कनेरके रस और कठूमरके रसमें अलग २ भावना देकर और अच्छे प्रकारसे खरल करके गोलासा बना लेवे । पश्चात् शुद्ध तांबेकी एक उत्तम घाड़िया बनवाकर उस घड़ियामें इस गोलेको रखकर छः प्रहरतक

पुटपाककी विधिसे पकावे। जब शीतल होजाय तब इसका चूर्ण करले। इसमेंसे पांच रत्ती परिमाण औषधि लेकर कठूमरके रसमें मिलाकर अष्टादश प्रकारके कुष्ठ रोगोंमें प्रयोग करे। इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ अल्पकालमें ही नष्ट होते हैं। सूर्यकी उपासना करनेवाला मनुष्य सूर्यकी वन्दना करके कुष्ठकुलनाशक इस औषधिका सेवन करे। इसको पीपलके चूर्णके साथ कुष्ठरोगमें प्रयुक्त करे। इसको कुष्ठहरितालेश्वर रस कहते हैं ॥ ५२-५७ ॥

राजराजेश्वर रस।

त्रिफला खादिरं सारममृता वागुजीफलम् ।
आतपे मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ॥ ५८ ॥
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ।
भृंगराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ॥ ५९ ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमर्दयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षाभ्यां भक्षयेत्ततः ॥६०॥
दद्रूकिटिभकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जोऽपि निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥ ६१॥

शुद्ध पारा, गन्धक, तांबेकी भस्म और हरितालभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर धूपमें रखकर भांगरेके रसमें एक दिनतक खरल करे। पश्चात् त्रिफला, खैरसार, गिलोय और बावचीके बीज इन प्रत्येक औषधियोंको पारेकी बराबर लेकर एकत्र मिला लेवे। एक कर्ष परिमाण घृत और सहतके साथ इस औषधिमेंसे दो रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें मिलाकर सेवन करनेसे दद्रु, किटिभकुष्ठ और मण्डलकुष्ठ नष्ट होते हैं। इसको राजराजेश्वर रस कहते हैं ॥ ५८-६१ ॥

पारिभद्र रस ।

मूर्छितं सूतकं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ।
तुल्यांशं खदिरक्वाथैर्दिनं मर्द्यञ्च भक्षयेत् ॥
निष्कैकं दद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयो रसः ॥ ६२ ॥

रससिन्दूर, आमले और नीमके फलकी मींगी इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर खैरके क्वाथमें एक दिनतक खरल करके चार मासे परिमाण औषधि सेवन करनेसे दद्रु और कुष्ठरोग नष्ट होते हैं। इसको पारिभद्र रस कहते हैं ॥ ६२ ॥

सिध्महर लेप ।

गन्धकं मूलकक्षारमार्द्रकस्य रसैर्दिनम् ।
मर्दितं हन्ति लेपेन सिध्मन्तु दिनमेकतः ॥ ६३ ॥

गन्धक और मूलीके खारको समान भाग लेकर अदरखके रसमें एक दिनतक खरल करके सिध्मके ऊपर प्रलेप करनेसे एक दिनमें सिध्मकुष्ठ नष्ट होता है ॥ ६३ ॥

कृष्णधुस्तूरजं मूलं गन्धतुल्यं विचूर्णयेत् ।
मर्द्यं जम्बीरनीरेण लेपनं सिध्मनाशनम् ॥ ६४ ॥

काले धतूरेकी जड़का चूर्ण और गन्धकका चूर्ण दोनोंको बराबर भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करके प्रलेप करनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होता है ॥ ६४ ॥

अपामार्गस्य पञ्चाङ्गं कदलीद्रवसंयुतम् ।
पुटदग्धञ्च गोमूत्रैर्लेपनं दद्रुनाशनम् ॥ ६५ ॥

चिराचिटेके पञ्चांगको समान भाग लेकर केलेकी जड़के रसमें पासकर मूषामें रखे, फिर उसको बंद करके पुटपाकमें पकावे; पश्चात् गोमूत्रमें पीसकर प्रलेप करनेसे दद्रु रोग नष्ट होता है ॥ ६५ ॥

चक्रमर्दादि लेप ।

चक्रमर्द्दस्य बीजञ्च दुग्धे पिष्ट्वा विमर्दयेत् ।
गन्धर्वतैलसंयुक्तं मर्दनात्सर्वकुष्ठजित् ॥ ६६ ॥

पनवाड़के बीजोंको दूधमें पीसकर अरंडीके तेलमें मिलाकर कुष्ठ स्थानोंपर लेप करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ॥ ६६ ॥

लङ्केश्वर रस ।

भस्मसूताभ्रशुल्वानि गन्धं तालं शिलाजतु ।
अम्लवेतस्य तुल्यांशं त्र्यहं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥६७॥
मध्वाज्याभ्यां वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जां भक्षयेत्सदा ।
कुष्ठं हन्ति गजं सिंहो रसो लंकेश्वरो महान् ॥ ६८ ॥
त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठावचापाटलमूलकम् ।
कटुकारजनीक्वाथं चानुपानं प्रयोजयेत् ॥ ६९ ॥

रससिन्दूर या पारदभस्म, अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, गंधक, हरिताल और शिलाजीत तथा अमलवेत इन सब औषधियोंको बराबर भाग लेकर घृत और सहतमें तीन दिनतक खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बनाकर सेवन करे । बड़े बड़े हस्तियोंके समान कुष्ठको दूर करनेके लिये यह औषधि सिंहके समान है । इसके सेवन करनेके पीछे त्रिफला, नीमकी छाल, मँजीठ, वच, पाढलकी जड़, कुटकी और हलदीके क्वाथको पान करे । इसको लंकेश्वर रस कहते हैं ॥६७-६९॥

भूतभैरव रस ।

शुद्धं पञ्चदशात्रतालकमितं शुद्धश्च यद्गन्धकः,
सप्ताष्टौ नव तिन्तिडीयकफलात्काठिल्लकानां दश ।
सेहुण्डचर्कपयोभिरेव सततं संचूर्ण्य तद्भाव्यते,
रोहीतस्य जटारसेन मृदितं श्लक्ष्णं ततः खल्लितम् ७०

एकीकृत्य समस्तमेतदपि तट्टंकैकमेतज्जयेत्,
पश्चाद्वासविशुद्धवारिसहितं किञ्चिच्च तत्पीयते ।
ताम्बूलं शशिखण्डमण्डितवटीमिश्रं ततः स्वापये-
च्छय्यायांशुभकर्मधर्मसहितः कर्माणिसम्पादयेत्॥७१

शुद्ध हरिताल १९ भाग, शुद्ध गन्धक १९ भाग, नवीन इमली ९ भाग और कैथ १० भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर थूहरके दूध और आकके दूधमें अलग अलग खरल करके भावना देवे । फिर उसे रोहिड़ेकी जड़के क्राथमें मर्दन करके सबको एकत्र खरलकर वस्त्रसे छानकर रख लेवे और वस्त्रसे छने हुए स्वच्छ जलके साथ इस औषधिको यथायोग्य मात्रासे सेवन करे । इस औषधिके भक्षण करनेके पश्चात् कपूर मिलाकर पान खाय और बिछाई हुई उत्तम शय्यापर शयन करे और शुद्ध धर्म कर्म सेवन करे ॥ ७० ॥ ७१ ॥

देहं वीक्ष्य सुखं मुखं न विरसं विज्ञाय सम्यक् सुधी-
श्छागीदुग्धमिहैतदेवमुदितं तक्रञ्च तत्पाययेत् ।
नित्यं शान्तमिदं करोति नियतं सर्वौषधैर्वर्जितं;
सामग्रामसमग्रमग्निमतरं नीलञ्च पीतारुणम् ॥७२॥
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशमतिप्रायः क्रिमिव्याकुलं,
गन्धालिप्रमितं स्फटीकसदृशं कुष्ठञ्च चोत्साधनम् ।
कुष्ठाष्टादश भूतभैरव इति ख्यातः क्षितौ हन्ति च,
वातव्याधिनिकृन्तनः कफकृतान्कुष्ठान्विशेषानयम्॥
हन्तीति ज्वरमुग्ररूपमधिकं दाहाभिधानामयं,
कुर्याद्रूपमनङ्गरङ्गगुणभृद्भृङ्गास्पदं विग्रहम् ॥ ७३ ॥

तथा देहबलादि देखकर बकरीका दूध और तक्रादि सेवन करे । इसके सेवनसे सब प्रकारके बढ़े हुए नील, पीत, रक्त, श्वेत आदि कुष्ठ

गलितकुष्ठ, कृमियोंसे व्याप्त और दुर्गन्धयुक्त कुष्ठ शांत होते हैं। तथा यह भूतभैरव रस अठारह प्रकारके कुष्ठ, वातरक्तादि वातव्याधि, कफजनित कुष्ठ और दाहयुक्त उग्ररूपवाले ज्वरोंको दूर करता है। इसके सेवनसे कामदेवके समान रूप और हाथीके समान बल उत्पन्न होता है और शरीर निरोग होता है॥ ७२॥ ७३॥

एवं समासात्कुरुते समानं पथ्यञ्च तथ्यं सकलं करोति।
भुञ्जीत भुक्तं सततं प्रदिष्टं घृतं घृतं वा विकृतं तदेव॥७४
स्वच्छन्ददुग्धेन सुखेन जग्धं पथ्यं तदैतत्प्रवदन्ति सन्तः।
कुष्ठस्यदुष्टस्यनिराकरोति गात्रञ्च कुर्याच्छुभगन्धयुक्तम्

इसके सेवन करते समय घृतका और घृतयुक्त पदार्थोंका विशेष सेवन करना चाहिये, अथवा निरन्तर दुग्धका सेवन करना चाहिये। यह रस दुष्ट कुष्ठको दूर करके शरीरको सुन्दर और सुगन्धयुक्त करता है॥ ७४॥ ७५॥

अर्केश्वर रस।

पलानीशस्य चत्वारि बलेर्द्वादश तावती।
ताम्रस्य चक्रिका देया रसस्योर्ध्वं शरावकम्॥ ७६॥
दत्त्वा विबद्धभाण्डस्थं पूरयेद्भस्मना दृढम्।
अग्निं प्रज्वालयेद्यामद्वयं शीतं विचूर्णयेत्॥ ७७॥
पुटेद् द्वादशधा सूर्यदुग्धेनालोडितं पुनः।
वरापावकभृङ्गानां द्रवैस्त्रिभिर्विभावयेत्॥
अयमर्केश्वरो नाम्ना रक्तमण्डलकुष्ठजित्॥ ७८॥

शुद्ध पारा ४ पल, गन्धक १२ पल लेकर कज्जली करके एक हाँड़ीमें यह कज्जली आधी नीचे बिछाकर ताम्रपत्र १२ पल उसके ऊपर रखकर बाकी बची हुई आधी कज्जलीको ताम्रपत्रोंके ऊपर डालकर

औषधिके ऊपर हांडीके भीतर एक सिकोरा ढककर राखसे हांडीको भर देवे; फिर दो प्रहरतक अग्निसे पकावे । जब अपने आप शीतल होजावे तो इसका चूर्ण कर लेवे । फिर आकके दूधमें इसको पीसकर पुटमें पकावे । इस प्रकार बारह बार पुट करके त्रिफला, चित्रक और भांगरेके रसमें अलग अलग तीन तीन भावना दे । यथोचित मात्रानुसार यथोचित अनुपानके साथ इसके सेवन करनेसे वातरक्त और मण्डलकुष्ठ नष्ट होता है । इसको अर्केश्वर रस कहते हैं ॥ ७६–७८ ॥

महातालेश्वर रस ।

तालताप्यशिलासूतं शुद्धटङ्कणसैन्धवम् ।
समं संचूर्णयेत्खल्वे सूताद्द्विगुणगन्धकम् ॥ ७९ ॥
गन्धतुल्यं मृतं ताम्रं लौहभस्म चतुःपलम् ।
जंबीराम्लेन तत्सर्वं दिनं मर्द्यं पुटेल्लघु ॥ ८० ॥
त्रिंशदंशं विषञ्चात्र क्षिप्त्वा सर्वं विचूर्णयेत् ।
माहिषाज्येन संमिश्रं निष्कार्द्धं भक्षयेत्सदा ॥ ८१ ॥
मध्वाज्यैर्वागुजीचूर्णं कर्षमात्रं लिहेदनु ।
सर्वान्कुष्ठान्निहन्त्याशु महातालेश्वरो रसः ॥ ८२ ॥

हरितालभस्म, सोनामाखीभस्म, मैनशिल, पारा, सेंधानमक और सुहागा यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेवे, गन्धक ८ तोले, ताम्रभस्म ८ तोले और लोहेका चूर्ण १६ तोले लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर जम्भीरी नींबूके रसमें एक दिनतक खरल करके लघुपुटमें पकावे । पश्चात् समस्त औषधियोंका ३० तीसवां भाग विष मिलाकर सबको एकत्र पीसकर चूर्ण कर लेवे । इसमेंसे दो मासे औषधि लेकर भैंसके घीके साथ सेवन करे । इसके सेवन करनेके अन्तमें बावचीका चूर्ण १ कर्ष परिमाण लेकर सहत और घृतमें मिलाकर चाटे । इसके सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होते हैं । इसको महातालेश्वर रस कहते हैं ॥ ७९–८२ ॥

विजयभैरव रस ।

सप्तकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्द्धलग्नं रसेन्द्रकम् ।
मृत्कटाहान्तरे तत्र स्थापयेच्च समन्त्रकम् ॥ ८३ ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम् ।
दोलायन्त्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥ ८४॥
दत्त्वा प्लुवैर्द्रवैर्झिण्टयाः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तितः ।
तयोर्द्विगुणितं भस्म पलाशस्योपरि क्षिपेत् ॥८५॥
पुनार्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नतः ।
खाखशाकरसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥ ८६ ॥
पचेदवहितो वैद्यः सालाङ्गारेण यत्नतः ।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ॥
अवतार्य काचपात्रे निधाय तदनन्तरम् ॥ ८७ ॥

सप्तकंचुकीरहित पारेको लेकर ऊर्ध्व पातनयंत्रमें पातन करके अघोर मंत्रको पढ़कर मिट्टीकी हांडीमें स्थापन करे । पश्चात् पेठेका रस, कांजी, तिलोंका तेल और त्रिफलेके रसके द्वारा दोलायंत्रमें सात वार शुद्ध की हुई हरिताल पारेसे दुगुनी लेकर उपरोक्त हांडीमें स्थापन करे । फिर केवटीमोथेका रस और कटसरैयाका रस, हरिताल और पारेके बीचमें डालकर और उसके ऊपर हरिताल और पारेसे दोगुना ढाकका खार डालकर फिर दुबारा कटसरैया(पियावांसा) के रस और अफीमके बीजों (पोस्त) के रसमें डुबोकर पाकको जाननेवाला वैद्य चौबीस प्रहरतक शालकी लकड़ीकी अग्निसे पकावे । शीतल होनेपर चूर्ण करके कांचकी शीशीमें भरके रख देवे ॥ ८३-८७ ॥

प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोधितदेहकः ।
सिताहरीतकीयुक्तं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ ८८ ॥

रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ।
मधूदकं पिबेच्चानु नारिकेलजलञ्च वा ॥ ८९ ॥
जिङ्गिनीसम्भवं क्राथमथवा क्षौद्रनागरम् ।
सुगन्धितैलैरभ्यङ्गं कुर्यात्तांबूलचर्वणम् ॥ ९० ॥
पवनानलसूर्यांशुमत्स्यमांसदधीनि च ।
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमान्नरः ॥ ९१ ॥
वातरक्तमाममिश्रमामञ्चापि सुदारुणम् ।
सर्वकुष्ठञ्चाम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम् ॥
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसृग्दरान् ॥ ९२ ॥

पश्चात् यत्नपूर्वक प्रायश्चित्त करके और वमन विरेचनादिके द्वारा शरीरको शुद्ध करके मिश्री और हरड़के साथ इस औषधिको चार रत्ती परिमाण सेवन करे । यह औषधि पहिले दिन चार रत्ती और दूसरे दिन पांच रत्ती, इस प्रकार प्रतिदिन एक एक रत्ती बढ़ाकर सात दिन-तक सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेके पीछे सहत मिला हुआ जल, नारियलका जल, जिंगिनीका क्राथ, सहत समेत सोंठका चूर्ण इनमेंसे एक किसी अनुपानका सेवन करे । तथा शरीरमें सुगंधित तेलकी मालिश और पानको भक्षण करे । इसपर पवन, अग्नि और सूर्यकी धूपको नहीं सेवन करे । मछली, मांस, दही, शाक और सम्पूर्ण ककारादिनामवाले पदार्थोंको त्याग देवे । इस औषधिके सेवन करनेसे आमसहित दारुण वातरक्त, आमजनित रोग, सर्व प्रकारके कुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका और रक्तप्रदररोग नष्ट होते हैं । इसको विजयभैरव रस कहते हैं ॥ ८८-९२ ॥

कुष्ठारि रस ।

काठोदुम्बरिकाचूर्णं ब्रह्मदन्तीबलात्रयम् ।
प्रत्यहं मधुना लीढं वातरक्तं निहन्ति च ॥ ९३ ॥

क्षरद्रक्तश्चरन्मांसं मासमात्रेण सर्वथा ।
गलत्पूयं पतत्कीटं त्रिटङ्कं सेव्यमीरितम् ॥ ९४ ॥

कठूमरका चूर्ण, भारंगीका चूर्ण, दन्ती, खिरैंटीका चूर्ण, कंघीका चूर्ण और गंगेरनका चूर्ण यह प्रत्येक औषधि समान भाग लेकर सबको सहतमें मिलाकर एक तोला परिमाण सेवन करे तो चालितरक्त और पतितमांसयुक्त वातरक्त और गलित पूय तथा पतित कृमियुक्त कुष्ठरोग एक महीनेमें नष्ट होते हैं ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

षडाननगुटिका ।

विषोषणं टङ्कणपारदञ्च सगन्धचूर्णञ्च समांशयुक्तम् ।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडान्वितं संमर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥९५॥ विरेचनी सर्वविकारनाशिनी लध्वी हिता दीपनपाचनीयम् । कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले चामाशये चर्मगते विकारे । संशोधनी शीतजलेन सम्यक्संग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता॥९६॥

विष, काली मिरच, सुहागा, शुद्ध पारा, गंधक यह प्रत्येक औषधि समान भाग और सबसे दुगुना जमालगोटा लेवे और दुगना ही गुड़ लेकर एकत्र पीसकर गोली बना लेवे। यह औषधि विरेचन करनेवाली, सब रोगाको हरनेवाली, हलकी, हितकारी, अग्निप्रदीपक, पाचक और कुष्ठरोगनाशक है। अत्यन्त बढ़े हुए शूल, आमाशयगत रोग और चर्मगतरोगमें अत्यन्त हितकारी है। शीतल जलके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे विरेचन होकर शरीर शुद्ध होजाता है। और गरम जलके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे मलका अवरोध होता है। इसको षडाननगुटिका कहते हैं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

कुष्ठनाशन रस ।

चिरिबिल्वपत्रपथ्याशिरीषञ्च विभीतकम् ।
काठोदुम्बरिकामूलं मूत्रैरालोड्य फेणितम् ॥ ९७ ॥

कर्षमात्रं पिबेद्रोगी गोस्तन्या सह टङ्कणम् ।
सप्तसप्तकपर्यन्तं सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥ ९८ ॥

करंजके पत्ते, हरड़, सिरसके बीज, बहेड़ा और कठूमरकी जड़ इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गोमूत्रमें डालकर खूब झकोले; जब झाग उठने लगे तब इसमें बराबर भाग दाख और सुहागा मिलाकर एक तोला परिमाण सेवन करे । सात सप्ताह पर्यंत इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ॥ ९७ ॥ ९८ ॥

विजयानन्द रस ।

अथ श्वित्रस्य वक्ष्यामि नाशनोपायमुत्तमम् ।
शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धतालकम् ॥९९॥
मृत्कटाहान्तरे पूर्वं स्थापयेच्च समन्त्रकम् ।
द्वयोः समं पलाशस्य भस्म तस्योपरि क्षिपेत् १००
वक्त्रं मृत्कर्पटे लिप्त्वा शोषयेच्च खरातपे ।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ॥१०१॥
अवतार्य काचपात्रे स्थापयेदतियत्नतः ।
विधिवत्सेवितश्चासौ हन्ति श्वित्रं चिरंतनम् ॥१०२॥
सर्वकुष्ठं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
रसोऽयं श्वित्रनाशाय ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ॥
विजयानन्दनामायं निगूढः क्षितिमण्डले ॥१०३॥

अब श्वित्रकुष्ठको नष्ट करनेवाला उत्तम उपाय कहता हूं—शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध हरिताल २ भाग दोनोंको एकत्र पीसकर एक हांडीमें रखे और रखते समय अघोरमंत्रका पाठ करे । पश्चात् पारे और हरितालकी बराबर ढाकका खार लेकर उसके ऊपर हांडीमें भर देवे और ऊपरसे एक नवीन सिकोरेसे हांडीके मुखको बंद कर देवे । ऊपरसे

अच्छे प्रकार कपरमिट्टी करके प्रचण्ड सूर्यकी धूपमें सुखावे । पश्चात् इसको चौबीस प्रहरतक अग्निके संयोगसे पकावे । जब अपने आप शीतल होजाय तब पीसकर चूर्ण बना लेवे । इसको उत्तम शीशीमें भरकर रख देवे । इस औषधिको विधिपूर्वक सेवन करनेसे बहुत दिनोंका पुराना श्वित्ररोग नष्ट होता है । जिसप्रकार सूर्योदयसे अंधकारका समूह नष्ट होता है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होते हैं । पूर्वकालमें ब्रह्माजीने श्वित्रकुष्ठको दूर करनेके लिये यह औषधि कही है । इसको विजयानन्द रस कहते हैं ॥९९-१०२

श्वित्रदद्रुपाटला लेप ।

अश्वहा रजिनीहेम प्रत्यक्पुष्पीं प्रदह्य च ।
चूर्णश्च स्वर्जिकाक्षारं नीरं दत्त्वा प्रपेषयेत् ॥ १०४ ॥
प्रस्थयित्वा ततः स्थानं मण्डलाग्रेण लिम्पति ।
पाटलानि पतन्त्यङ्गे विफोटाश्चातिदारुणाः ॥१०५॥
सम्भवंति तिला रक्ताः कृष्णवर्णा भवन्ति ते ।
मिलन्ति स्वशरीरे च दिव्यरूपो भवेन्नरः ॥ १०६॥

कनेर, हलदी, धतूरेके पत्ते और चिरचिटा इन सबकी भस्म या खार, तथा चूना (कलई) और सज्जी यह सब औषधि समान भाग लेकर जलमें पीसकर श्वित्र स्थानोंमें प्रलेप करे । प्रलेप करते समय श्वित्र-कुष्ठके दागोंको नखादिसे खुरच देवे । प्रथम यह औषधि श्वित्रस्थानके पाटलवर्णको दूर करती है, पश्चात् श्वित्रस्थानोंमें दारुण विस्फोटकोंको उत्पन्न करके फिर उन लाल रंगके चित्रविचित्रित छोटे तिलकी बराबर दागोंको उत्पन्न करती है, फिर धीरे धीरे श्वित्रका स्थान काला होकर शरीरके वर्णकी माफिक वर्णवाला होजाता है ॥ १०४-१०६॥

श्वित्रहर लेप ।

सैन्धवं रविदुग्धेन पेषयित्वाथ मण्डलम् ।
प्रस्थयित्वा प्रलेपोऽयं श्वित्रकुष्ठविनाशनः ॥१०७॥

सेंधेनमकको आकके दूधमें पीसकर श्वित्रके स्थानोंको नखादिसे खुरचकर इस औषधिका प्रलेप कर देवे । इससे श्वित्र कुष्ठ और कुष्ठ रोग नष्ट होता है । इसको श्वित्रहर लेप कहते हैं ॥ १०७ ॥

ओष्ठश्वित्रनाशन लेप ।

मुखे श्वेते च संजातेत्त्विमां कुर्यात्प्रतिक्रियाम् ।
गन्धकं चित्रकाशीशं हरितालं फलत्रयम् ॥
मुखे लिम्पेद्दिनैकेन वर्णनाशो भविष्यति ॥ १०८ ॥

जो मुख अथवा ओष्ठपर श्वित्ररोग उत्पन्न होवे तो उसकी इस प्रकार चिकित्सा करे । गंधक, चित्रककी जड़, हीराकसीस, हरिताल, हरड़, बहेड़ा और आमला इन सबको एकत्र चूर्ण बनाकर जलमें पीसकर मुखपर लेप करे तो मुखके ऊपरके सुफेद दाग एक दिनमें नष्ट हो जाते हैं ॥ १०८ ॥

गुञ्जाफलाग्निचूर्णश्च लेपनं श्वेतकुष्ठजित् ।
शिलापामार्गभस्मापि लिप्त्वा श्वित्रं विनाशयेत् ॥ १०९ ॥

घुंघुचीका चूर्ण और चित्रककी जड़के चूर्णको कुष्ठस्थानपर लेप करनेसे श्वेतकुष्ठरोग नष्ट होता है । अथवा मैनशिलके चूर्ण और चिरचिटेके खार को एकत्र मिलाकर श्वित्रके स्थानोंपर लेप करनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्ट होता है ॥ १०९ ॥

रसमाणिक्य ।

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वापि दध्नाम्लेन च वा पुनः ॥ ११० ॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥ १११ ॥

बदरीपत्रकल्केन सन्धिलेपञ्च कारयेत्।
अरुणाभमधःपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ ११२ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभो भवेद्रसः।
तद्रक्तिद्वितयं खादेद् घृतभ्रामरमर्दितम् ॥११३॥
संपूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ ११४ ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम्।
नासास्यसंभवान्रोगान्क्षतान्हन्ति सुदारुणान् ॥
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ ११५ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे कुष्ठाधिकारः।

वर्की हरितालको पेठेके रसमें, दहीमें और कांजीमें सात सात वार; अथवा तीन तीन वार दोलायंत्रमें पकाकर उत्तम विधिसे सुखा लेवे। फिर चावलोंके समान चूर्ण करके एक शराव सिकोरेमें रखकर ऊपरसे एक दूसरे सिकोरेसे ढककर उसके जोड़ोंको अच्छे प्रकारसे बेरीके पत्तोंके कल्कसे बंद कर देवे। पश्चात् आरने उपलोंकी अग्निमें इसको पकावे। जबतक पात्रका रंग अच्छे प्रकारसे लाल न हो जाय तबतक पकावे। शीतल होनेपर इस माणिक्यकी समान औषधिको लेकर भक्तिपूर्वक महादेवकी पूजा करके दो रत्ती परिमाण औषधि सहत और घृतमें मिलाकर सेवन करे। इससे अवश्य कुष्ठरोग नष्ट होता है। इसके सेवन करनेसे फटा हुआ और गलता हुआ कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, उपदंश, विचर्चिका, मुख और नासिकागत दारुण क्षतरोग, पुण्डरीक, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ नष्ट होते हैं। इसको माणिक्य रस कहते हैं॥ ११०-११५॥

इति कुष्ठाधिकार समाप्त।

अथ शीतपित्तोदर्दकोष्ठाधिकारः ।

यमानीगुडसंमिश्रः सूतभस्मद्विवल्लकः ।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलविलेपनम् ॥ १ ॥

चार रत्ती रससिन्दूरको अजवायन और गुड़के साथ सेवन करे और शरीरपर कड़वे तेलकी मालिश करे तो शीतपित्तरोग नष्ट होता है ॥१॥

सिद्धार्थरजनीकल्कं प्रपुन्नाडतिलैः सह ।
कटुतैलेन संमिश्रमेतदुद्वर्त्तनं हितम् ॥ २ ॥

सरसों, हलदी, चकवड़ और तिल इन सबको एकत्र पीसकर कड़वे तेलमें मिलाकर शरीरपर मर्दन करे तो शीतपित्तरोग नष्ट होते हैं ॥२॥

दूर्वानिशायुतो लेपः कण्डूपामाविनाशनः ।
क्रिमिदद्रुहरश्चैव शीतपित्तहरः परः ॥ ३ ॥

दूबकी जड़ और हलदी इन दोनोंको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे कण्डू, पामा, क्रिमि, दद्रू और शीतपित्तरोग नष्ट होता है ॥ ३ ॥

कुष्ठोक्ताश्च क्रियां कुर्यात्सर्वां युक्त्या चिकित्सकः ।
शीतपित्ते तथोदर्दे कोष्ठे चैव समासतः ॥ ४ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे शीतपित्तोदर्दकोष्ठाधिकारः ।

जो चिकित्सा कुष्ठरोगकी कही है वही सब चिकित्सा युक्ति-पूर्वक संक्षेपसे शीतपित्त, उदर्द और कोठरोगमें भी प्रयुक्त करनी चाहिये ॥ ४ ॥

इति शीतपित्तोदर्दकोष्ठचिकित्सा समाप्त ।

अथ अम्लपित्तरोगचिकित्सा।

अम्लपित्तान्तक रस।

मृतसूताभ्रलौहानां तुल्यां पथ्यां विमर्दयेत।
माषमात्रं लिहेत्क्षौद्रैरम्लपित्तप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर या पारदभस्म, अभ्रकभस्म और लोहभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और हरड़ ३ भाग लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके एक एक मासे सहतके साथ खावे तो अम्लपित्त-रोग नष्ट होता है। इसको अम्लपित्तान्तक रस कहते हैं ॥ १ ॥

लीलाविलास रस।

रसो बलिर्व्योम रविश्च लौहं धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य।
तदल्पघृष्टं मृदुमार्कवेण संमर्दयेदस्य च वल्लयुग्मम् ॥२॥
हन्त्यम्लपित्तं मधुनावलीढं लीलाविलासो रसराज एषः।
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ३

शुद्ध पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म और लोहभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर आमलोंके और बहेड़ेके क्वाथमें तीन दिन-तक भावना देवे। फिर कोमल भांगरेके रसमें दुबारा खरल करके चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। सहतके साथ इन गोलियोंके सेवन करनेसे अम्लपित्त, वमन, शूल और हृदयकी दाह दूर होती है। इसको लीलाविलास रस कहते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

पानीयभक्तवटिका।

त्रिवृता मुस्तकं चैव त्रिफला त्र्यूषणन्तथा।
प्रत्येकन्तु पलं भागं तदर्द्धौ रसगन्धकौ ॥ ४ ॥
लौहाभ्रकविडङ्गानां प्रत्येकं च पलद्वयम्।
एतत्सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षणः ॥ ५ ॥

त्रिफलायाः कषायेण वटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तक्रञ्चापि पिबेदनु ॥ ६ ॥
हन्ति शूलं पार्श्वशूलं कुक्षिबस्तिगुदे रुजम् ।
श्वासं कासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥ ७ ॥

निसोथकी जड़, नागरमोथा, त्रिफला और त्रिकुटा यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले, पारा और गंधक प्रत्येक दो दो तोले, लोहाभस्म, अभ्रकभस्म और वायविडंग यह प्रत्येक औषधि आठ आठ तोले इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर त्रिफलेके क्वाथमें मर्दन करके गोली बना लेवे । प्रतिदिन प्रातःकाल एक गोली खावे और ऊपरसे तक्रको पीवे । इससे शूल, पार्श्वशूल, कुक्षि, बस्ति और गुदजशूल, श्वास, खाँसी, कुष्ठ और संग्रहणी रोग नष्ट होते हैं । इसको पानीयभक्त वटिका कहते हैं ॥ ४–७ ॥

क्षुधावती गुटिका ।

आशुभक्तोदकैः पिष्टमभ्रकं तत्र संस्थितम् ।
कन्दमाणास्थिसंहारखण्डकर्णरसैरथ ॥ ८ ॥
तण्डुलीयकशालिञ्चकालमारिषजेन च ।
वृश्चीरबृहतीभृङ्गलक्ष्मणाकेशराजकैः ॥ ९ ॥
पेषणं भावनं कुर्यात्पुटञ्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रकं तत्स्याच्छुद्धिरेवं विहायसः ॥ १० ॥
स्वर्णमाक्षिकशालिञ्चे ध्मातं निर्वापितं जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैवं लौहं कान्तादिकं पुनः ॥११॥
बृहत्पत्रकरीकर्णत्रिफलावृद्धदारजैः ।
माणकन्दास्थिसंहारशृङ्गवेरभवै रसैः ॥ १२ ॥

दशमूलीमुण्डितिकातालमूलीसमुद्भवैः ।
पुटितं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥ १३ ॥

उत्तम लक्षणोंवाला कृष्णाभ्रक लेकर उसका चूर्ण करके आशु नामवाले धानोंकी कांजीमें एक दिन रात भिगोकर रख देवे। फिर इसको सुखाकर उपरोक्त कांजीमें पीसकर जमीकंद, मानकंद, आस्थिसंहार (हडफोडी) खण्डकर्ण, चौलाई, शालिंचशाक, मरसा, सुफेद पुनर्नवा, कटेरी, भांगरा, लक्ष्मणा और कुकुरभांगरा, इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग और मिलाकर वारंवार भावना देवे तथा वारंवार पुटमें पकावे। इस प्रकार वारंवार भावना देकर और वारंवार खरल करके पकावे; जबतक अभ्रक निश्चन्द्र अर्थात् चंद्रिका रहित न हो जावे तबतक पुट देवे। फिर सोनामाखी और शालिंचके पत्तोंका शाक इन दोनोंको एकत्र पीसकर उससे कान्तलोहेके ऊपर लेप करके भस्त्राग्निमें पकाकर त्रिफलेके क्वाथमें छोड़ देवे। इस प्रकार वारंवार दग्ध करके वारंवार त्रिफलेके क्वाथमें बुझावे। पश्चात् इसका चूर्णकर देवे। इस प्रकार निरुत्थित मारित लोहेको जलमें धोकर सूर्यकी धूपमें सुखाकर बड़े पत्तोंके हस्तिकर्ण पलाश, त्रिफलेके, विधारेके, मानकंदके, जमीकंदके, हड़फोड़ीके, सोंठके, दशमूलके, मुण्डीके और मुसलीके क्वाथमें या रसमें अलग अलग खरल करके यत्नपूर्वक पुटपाकमें पकावे। इस प्रकार करनेसे लोहा शुद्ध हो जाता है ॥ ८-१३ ॥

वशिरं श्वेतवाट्टचालं मधुपर्णी मयूरकम् ।
तण्डुलीयञ्च वर्षाभ्वं दत्त्वाऽधश्चोर्ध्वमेव च ॥ १४ ॥
पाक्यं सुजीर्णमण्डूरं गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।
अन्तर्बाष्पमदग्धञ्च तथा स्थाप्यं दिनत्रयम् ॥१५॥
विचूर्णितं शुद्धिरियं लोहकिट्टस्य दर्शिता ।
जयन्त्या वर्द्धमानस्य आर्द्रकस्य रसेन तु ॥ १६ ॥

वायस्याश्चानुपूर्व्यैवं मर्दनं रसशोधनम् ।
गन्धकं नवनीताख्यं क्षुद्रितं लौहभाजने ॥ १७ ॥
त्रिधा चण्डातपे शुष्कं भृङ्गराजरसाप्लुतम् ।
ततो वह्नौ द्रवीभूतं त्वरितं वस्त्रगालितम् ॥
यत्नाद्भृङ्गरसे क्षिप्तं पुनः शुष्कं विशुद्ध्यति॥१८॥

पश्चात् चव्य, सफेद फूलकी खिरैंटी, गिलोय, चिरचिटा, चौलाई और पुनर्नवा (विषखपरा) इन सब औषधियोंकी जड़, छाल और पत्ते लेकर एक हांडीमें रखे और उसके ऊपर पुराना जीर्ण मण्डूर स्थापन करके प्रथम कही हुई औषधियोंकी जड़, छाल और पत्तोंसे आच्छादन करके उसमें गोमूत्र डालकर हांडीके मुखको अच्छे प्रकारसे बंद करके तीन दिन तक पकावे । और सुखाकर चूर्ण कर लेवे । इसप्रकार करनेसे मण्डूर शुद्ध होजाता है । जयंतीके पत्ते, एरण्डकी जड़, अदरख और मकोय इन प्रत्येकके रसके द्वारा अलग अलग खरल करके पारेको शुद्ध करे । इसके उपरांत नवनीताख्य अर्थात् नवनीत घृतके समान गंधकको लेकर चावलोंके समान उसके छोटे छोटे टुकड़े करके भांगरेके रसके द्वारा लोहेके पात्रमें भिगोकर प्रचण्ड सूर्यकी धूपमें सुखावे । इस प्रकार तीन वार भांगरेके रसमें डुबोकर तीन वार सूर्यकी तेज धूपमें सुखा लेवे । फिर गंधकको लोहेके पात्रमें डालकर बेरीके दीप्त अंगारोंपर स्थापन कर लोहेके डंडेसे या करछीसे चलाता जाय । अच्छे प्रकारसे गंधक गलकर तेलके समान हो जाय तब भांगरेके रससे भरी हुई हांडीके मुँहपर घृतमें भीगा वस्त्र लपेटकर उस वस्त्रमें गंधकको छोड़ देवे । फिर गंधकको भांगरेके रसमेंसे निकालकर जलमें धोकर सुखा लेवे और फिर पीछे उसका चूर्ण कर लेवे ॥ १४-१८ ॥

गगनाद्द्विपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम् ।
लोहकिट्टपलार्द्धं च सर्वमेकत्र संस्थितम् ॥ १९ ॥

मण्डूकपर्णीवशिरतालमूलीरसैः पुनः ।
वरीभृङ्गकेशराजकालमारिषजैरथ ॥ २० ॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम् ।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ॥ २१ ॥
तन्मसृणशिलाखण्डे यत्नतः कज्जलीकृतम् ।
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका ॥ २२ ॥
व्योषं मुस्तं विडङ्गञ्च ग्रन्थिकं खरमञ्जरी ।
त्रिवृता चित्रको दन्ती सूर्यावर्त्तः सितस्तथा ॥ २३॥
भृङ्गमाणककन्दाश्च खण्डकर्णक एव च ।
दण्डोत्पला केशराजकालावकरकोऽपि च ॥ २४ ॥
एषामर्द्धपलं ग्राह्यं पटघृष्टं सुचूर्णितम् ।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्द्धं पलमेव च ॥ २५ ॥
एतत्सर्वं समालोड्य लोहपात्रे तु भावयेत् ।
आतपे दण्डसंघृष्टमार्द्रकस्य रसैस्त्रिधा ॥ २६ ॥
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकां कारयेद्भिषक् ।
बदरास्थिनिभां शुष्कां स्विन्नगुप्तां निधापयेत् ॥२७॥

पश्चात् पूर्वोक्त शोधित अभ्रक २ पल, लोहेका चूर्ण १ पल, और मण्डूर २ तोले, इन सबको एकत्र एक हांडीमें रखकर मंडूकपर्णी, गजपीपल और मुसली इन सबका रस डालकर अग्निके संयोगसे प्रथम स्थालीपाक करे । फिर सतावर, भांगरा, कुकुरभांगरा और चौलाई इन सबका रस डालकर दूसरा स्थालीपाक करे । तथा त्रिफला और नागरमोथेका रस डालकर तीसरा स्थालीपाक करे । तदुपरान्त इसका चूर्ण कर लेवे । पश्चात् पूर्वोक्त शोधित पारा १ तोला और गन्धक

१ तोला दोनोंको एक उत्तम शुभ्र खरलमें डालकर कज्जली बना लेवे। फिर वच, चव्य, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, सौंफ, त्रिकुटा, नागरमोथा, वायविडंग, पीपलामूल, चिरचिटा, निसोथकी जड़, चीतेकी जड़, दंतीकी जड, सुफेद हुलहुल, भांगरा, मानकंद, जमीकंद, खण्डकर्ण, दंडोत्पल, कुकुरभांगरा, काला अंकोल और त्रिफला इन सबको अत्यंत बारीक चूर्णकर प्रत्येक दो दो तोले और पूर्वोक्त अभ्रकसे त्रिफला तक सब औषधियोंको लोहेके पात्रमें डालकर अदरखके रसकी तीन भावना देकर फिर अदरखके रसमें खरल करके बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना लेवे और सूख जानेपर किसी शीशीमें रख देवे ॥ १९–२७ ॥

तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकात्रयम् ।
अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ॥
दुग्धञ्च नारिकेलञ्च वर्जनीयं विशेषतः ॥ २८ ॥
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च वारिभक्ताम्लकाञ्जिकम् ।
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ॥ २९ ॥
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ।
यक्ष्माणं पञ्चकासांश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ३० ॥
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ।
गुटी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥ ३१ ॥

और प्रतिदिन प्रातःकाल भोजनके आदिमें ३ गोली खावे। इसके सेवन करनेके बाद कांजीका अनुपान करे। मधुर रसवाले पदार्थ, दूध और नारियलका भक्षण करना त्याग देवे। तथा अन्यान्य वांछित खाद्य, जलसमेत भात और खट्टी कांजीको भक्षण करे। इसके सेवन करनेसे विविध प्रकारका अम्लपित्त, परिणामशूल, पाण्डुरोग, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदजरोग, राजयक्ष्मा, पांच प्रकारकी

खांसी, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह और दारुण आमवात रोग नष्ट होते हैं। इसको क्षुधावती वटिका या गुटिका कहते हैं ॥२८-३१॥

अविपत्तिकर चूर्ण।

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं बीजञ्चैव विडङ्गकम्।
एलापत्रञ्च सर्वञ्च समभागं विचूर्णयेत् ॥ ३२ ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि लवङ्गं तत्समं भवेत्।
सर्वचूर्णद्विगुणितं त्रिवृच्चूर्णञ्च दापयेत् ॥ ३३ ॥
सर्वमेकीकृतं यावत्तावच्छर्करयान्वितम्।
सर्वमेकीकृतं पात्रे स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥ ३४ ॥
भोजनादौ ततोऽन्ते च मध्वाज्याभ्यामिदं शुभम्।
शीततोयानुपानञ्च नारिकेलोदकं तथा ॥ ३५ ॥
ततो यथेष्टमाहारं कुर्यात्क्षीररसाशनः।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु विबद्धमलमूत्रकम् ॥ ३६ ॥
अग्निमान्द्यभवान् रोगान्नाशयेच्चाविकल्पतः।
बलपुष्टिकरञ्चैव शूलदुर्नामनाशनम् ॥ ३७ ॥
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव मूत्राघातांस्तथाश्मरीम्।
अविपत्तिकरं चूर्णमगस्त्यमुनिभाषितम् ॥ ३८ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे अम्लपित्ताधिकारः।

त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, इलायची और तेजपात यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और इनके चूर्णके बराबर लौंगका चूर्ण लेवे और सब चूर्णसे दुगुना निसोथका चूर्ण लेवे और सबकी बराबर उत्तम स्वच्छ खांड मिलावे। सबको एकत्र पीसकर एक उत्तम घीके चिकने बासनमें भरकर रख देवे। पश्चात् भोजनकी

आदिमें, भोजनके अन्तमें घी और सहतके साथ इस औषधिको यथोक्तमात्रासे सेवन करे और ऊपरसे शीतल जल तथा नारियलका जल पान करे । इसपर दूध और मांसादि पदार्थोंका यथेष्ट भोजन करे । इसके सेवन करनेसे अम्लपित्त, मलमूत्रका विबन्ध और मंदाग्निजनित समस्त रोग नष्ट होते हैं । बल और पुष्टिकी वृद्धि होती है । शूल, बवासीर, बीस प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात और अश्मरीरोग नष्ट होते हैं । इस अविपत्तिकर चूर्णको अगस्त्य मुनिने कहा है ॥ ३२–३८ ॥

इति अम्लपित्ताधिकार सम्पूर्ण ।

अथ विसर्प-विस्फोट-तन्तुक-रोगचिकित्सा ।

कालाग्निरुद्ररस ।

सूताभ्रकान्तलौहानां भस्मगन्धकमाक्षिकम् ।
वन्यकर्कोटकद्रावैस्तुल्यं मर्द्यं दिनावधि ॥ १ ॥
वन्यकर्कोटिकाकन्दे क्षिप्त्वा लिप्त्वा मृदा बहिः ।
भूधराख्ये पुटे पश्चाद्दिनैकं तद्विपाचयेत् ॥ २ ॥
दशमांशं विषं योज्य माषमात्रन्तु भक्षयेत् ।
रसः कालाग्निरुद्रोऽयं दशाहेन विसर्पनुत् ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तमनुपानं प्रकल्पयेत ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, कान्तलोहभस्म, गंधक और सोनामाखीभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर वनककोड़ेकी जड़के रसमें एक दिनतक खरल करके वनककोड़ेकी जड़के कल्कमें इस औषधिको रखे और ऊपरसे मिट्टी आदिसे लेप कर देवे । पश्चात् भूधर यंत्रमें इसको पकाकर समस्त औषधियोंका दशवां भाग विष मिलाकर एक मासे परिमाण लेकर पीपलके चूर्ण और सहतमें मिलाकर सेवन करे तो दश दिनमें विसर्परोग दूर हो जाता है । इसको कालाग्नि रुद्र रस कहते हैं ॥ १–३ ॥

पित्तनाशकभैषज्यं योगवाहिरसं सुधीः ।
कुष्ठोद्दिष्टक्रियां सर्वामपि कुर्याद्भिषग्वरः ॥ ४ ॥

इस विसर्प रोगमें समस्त पित्तनाशक औषधि और योगवाही औषधियोंका प्रयोग करे । तथा कुष्ठरोगोक्त समस्त चिकित्सा करे ॥ ४ ॥

गुडूचीनिम्बजक्काथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना ।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विवल्लकम् ॥
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥ ५ ॥

गिलोय और नीमकी छालके काथमें; अथवा खैर और इन्द्रजौके काथमें कपूर, दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण डालकर इसके साथ चार रत्ती परिमाण रससिन्दूरके सेवन करनेसे शीघ्र ही विस्फोटकरोग ऐसे नष्ट होता है, जिसप्रकार वायुसे मेघोंके समूह नष्ट हो जाते हैं ॥ ५ ॥

गव्यं सर्पिस्त्र्यहं पीत्वा निर्गुण्डीस्वरसं त्र्यहम् ।
विविधं स्नायुकं चोग्रं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥६॥

तीन दिन गायके घृतको पीकर पश्चात् तीन दिनतक सम्हालूके काथको पान करे तो स्नायुगत रोग नष्ट होता है ॥ ६ ॥

सप्तपर्णशिफाकल्कपानाद्वा लेपनात्तथा ।
मूसलीमूलपानाच्च तन्तुकाख्यो विनश्यति ॥ ७ ॥

इति विसर्पविस्फोटकतन्तुकरोगचिकित्सा ।

सतोनेकी जड़को पीसकर जलके साथ पान करे अथवा लेप करे तथा मुसलीके कल्कको जलके साथ पान करनेसे तन्तुक (नहरुवा) रोग नष्ट होता है ॥ ७ ॥ इति विसर्प–विस्फोटक–तन्तुकरोगचिकित्सा ।

अथ मसूरिकाचिकित्सा ।

पापरोगांतक रस ।

अथ शुद्धस्य सूतस्य मूर्च्छितस्य मृतस्य च ।
द्विबलापिप्पलीधात्रीरुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥
पापरोगान्तको योगः पृथिव्यामेव दुर्लभः ॥ १ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे मसूरिकाचिकित्सा ।

रससिन्दूर, खिरैंटी, कंघी, पीपल, आमले और रुद्राक्ष इन सबका चूर्ण तथा घी और सहत सबको मिलाकर सेवन करनेसे मसूरिका रोग नष्ट होता है । यह औषधि पृथिवीमें दुर्लभ है । इसको पापरोगान्तक रस कहते हैं ॥ १ ॥ इति मसूरिकाचिकित्सा ।

अथ क्षुद्ररोगचिकित्सा ।

क्षुद्ररोगेषु मतिमांस्तत्तदौषधयोगतः ।
भस्मसूतं प्रयुञ्जीत तथात्र योगवाहिकम् ॥ १ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे क्षुद्ररोगचिकित्सा ।

बुद्धिमान् वैद्य क्षुद्र रोगोंमें उन्हीं उन्हीं क्षुद्ररोगनाशक औषधियोंके अनुपानके साथ रससिन्दूरका प्रयोग करे तथा अन्यान्य योगवाही औषधियोंका भी प्रयोग करे ॥ १ ॥ इति क्षुद्ररोगचिकित्सा ।

अथ मुखरोगचिकित्सा ।

चतुर्मुख रस ।

मृतं सूतं मृतं स्वर्णं द्वाभ्यां तुल्यां मनःशिलाम् ।
विमर्दयेच्च तैलेन अतसीसम्भवेन च ॥ १ ॥
तद्गोलं वस्त्रतो बद्ध्वा लेपयेच्च समन्ततः ।
अतसीफलकल्केन दोलायन्त्रे त्र्यहं पचेत् ॥
उद्धृत्य धारयेद्वक्रे जिह्वादन्तास्यरोगनुत् ॥ २ ॥

रससिन्दूर और सोनाभस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग, मैनशिल दो भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके अलसीके तेलमें पीसकर गोलासा बना लेवे। फिर इस औषधिके गोलेको वस्त्रमें बांधकर अलसीके कल्कमें लेप करके तीन दिनतक दोलायंत्रमें पकावे। इस औषधिको मुखमें धारण करनेसे जिह्वारोग दन्तरोग, और सकल मुखके रोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

पार्वती रस।

पार्वतीकाशिसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम्।
गुडूची शाल्मली द्राक्षा धान्यभूनिम्बमार्कवम् ॥३॥
तिलमुद्गपटोलञ्च कूष्माण्डलवणद्वयम्।
यष्टिका धान्यकं भस्म चान्तर्दग्धं समं समम्॥४॥
मुखरोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः।
पित्तज्वरं चिरं हन्ति तिमिरञ्च तृषामपि ॥ ५ ॥

गंधक, पारा, सिंग्रफ, महुवेके फूल, गिलोय, सेमलकी छाल, दाख, धनिया, चिरायता, कुकुरभांगरा, तिल, मूंग, पटोल, पेठा, कालानमक, सैंधानमक, मुलैठी और धनिया इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर एक हांडीमें रखकर और उसका मुख अच्छे प्रकारसे बन्द करके अन्तर्धूमरीतिसे दग्ध करे। इसके सेवन करनेसे बहुत दिनोंका पित्तज्वर, मुखरोग, तिमिररोग और तृषारोग नष्ट होते हैं। इसको पार्वतीरस कहते हैं ॥ ३-५ ॥

मुखरोगहरी।

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु।
गोमूत्रेण विमर्द्याथ सप्तधार्द्रद्रवेण च ॥ ६ ॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्रीरसैः सिद्ध्यति पाकहा।
कणामधुयुतं हन्ति मुखरोगं सुदारुणम् ॥ ७ ॥

गुञ्जाष्टकमिदं तालुगलौष्ठदन्तरोगनुत् ।
महाराष्ट्र्यश्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥
धारणात्सेवनाच्चैव हन्ति सर्वान्मुखामयान् ॥ ८ ॥

पारा १ भाग, गन्धक १ भाग और शिलाजीत ४ भाग, इन तीनों औषधियोंको एकत्र गोमूत्रमें पीसकर अदरखके रसमें सात, मालतीके पत्तोंके रसमें सात, नीमके रसमें सात और महाराष्ट्री (मरेठी, पनिसिगा, गजपीपल,) के रसमें सात भावना देकर आठ आठ रत्तीकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे मुखपाक दूर होता है । पीपलके चूर्ण और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे दारुण मुखरोग, तालु, गल, ओष्ठ और दन्तसम्बन्धी समस्त रोग नष्ट होते हैं । महाराष्ट्री और असगन्धके क्काथसे मुखको धोकर इस औषधिको मुखमें धारण अथवा सेवन करनेसे सब प्रकारके मुखरोग नष्ट होते हैं ॥ ६–८ ॥

सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ ९ ॥

पित्तपापड़के रस और सहतको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके मुखरोग नष्ट होते हैं । अथवा पर्पटीरसको २ रत्ती प्रमाण सहतमें मिलाकर खानेसे मुखरोग नष्ट होता है ॥ ९ ॥

पथ्या बालककुष्ठञ्च गोमूत्रेण प्रसाधयेत् ।
एषा च वटिका हन्ति मुखदौर्गन्ध्यसन्ततिम् ॥ १० ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे मुखरोगाधिकारः ।

हरड़, सुगन्धवाला और कूठ इन सब औषधियोंका चूर्ण समान भाग लेकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । जब पककर खूब गाढा हो जाय तब यथोचित मात्राकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे मुखदौर्गन्ध्यादि समस्त विकार दूर होते हैं ॥ १० ॥

इति मुखरोगाधिकार सम्पूर्ण ।

अथ कर्णरोगाधिकार।

कफकेतु रस।

व्योषहिज्जलबीजञ्च शंखभस्म विषान्वितम्।
मरिचं सदृशं खादेत्कफकेतुमहारसम् ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हिज्जलबीज, शंखकी भस्म, विष इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर जलमें पीसकर कालीमिर्च बराबर सेवन करनेसे कर्णरोग नष्ट होता है। इसको कफकेतु रस कहते हैं ॥ १ ॥

सूतं गन्धं विषञ्चैव टङ्कणं सकपर्दकम्।
मरिचेन समायुक्तमार्द्रतोयेन भावितम् ॥ २ ॥
वह्निमान्द्यञ्चामरोगं श्लेष्माणं ग्रहणीगदम्।
सन्निपातं तथा शोथं हन्ति श्रोत्रोद्भवं गदम् ॥ ३ ॥

पारा, गंधक, विष, सुहागा, कौड़ीकी भस्म और कालीमिरच इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर अदरखके रसमें सातवार भावना देकर उपयुक्त मात्रानुसार सेवन करनेसे मंदाग्नि, आमरोग, श्लेष्मा, संग्रहणी, सन्निपात, शोथ और कर्णगत अनेक रोग नष्ट होते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

योगवाहिरसाः सर्वे प्रयोक्तव्या भिषग्वरैः।
कर्णरोगेषु सर्वेषु पीनसादिषु नित्यशः ॥ ४ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे कर्णरोगाधिकारः।

बुद्धिमान् वैद्य समस्त योगवाही रसोंको यथायोग्य अनुपानोंके साथ कर्णरोगमें प्रयुक्त करे। तथा पीनसादिरोगोंमें भी प्रयोग करे ॥ ४ ॥

इति कर्णरोगचिकित्सा समाप्त।

अथ नासारोगाधिकार ।

पञ्चामृत रस ।

शुद्धसूतं समादाय गन्धभागद्वयं ततः ।
त्रिभागं टङ्कणञ्चापि विषं भागचतुष्टयम् ॥ १ ॥
पञ्चभागं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः ।
शृङ्गवेररसैः पिष्ट्वा गुटिका पञ्चरक्तिका ॥ २ ॥
अनुपानं हितं योज्यं सर्वरोगप्रशान्तये ।
जलदोषोद्भवे रोगे महत्युग्रे जलोदरे ॥ ३ ॥
सन्निपातेषु रोगेषु नासाव्याधौ सपीनसे ।
व्रणशोथे व्रणे चैव उपदंशे भगन्दरे ॥ ४ ॥
नाडीव्रणे ज्वरे चैव नखदन्तविघातके ।
पञ्चामृतरसो योज्यः सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ५ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे नासारोगाधिकारः ।

शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, सुहागा ३ भाग, विष ४ भाग और कालीमिरच ५ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके अदरखके रसमें खरल करके पांच पांच रत्तीकी गोली बना लेवे । सर्व रोगोंको दूर करनेके लिये यथोचित अनुपानोंके साथ इस औषधिका सेवन करना चाहिये । इस औषधिको जलदोषजनितरोग, उग्र उदररोग, सन्निपात, नासारोग, पीनस, व्रण, व्रणशोथ, उपदंश, भगंदर, नाडीव्रण, ज्वर और नख तथा दंताभिघात रोगोंमें प्रयुक्त करे । इसको पञ्चामृत रस कहते हैं ॥ १–५ ॥

इति नासारोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ नेत्ररोगचिकित्सा ।

नेत्राशनि रस ।

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं माक्षिकञ्च रसाञ्जनम् ।
पातनायन्त्रसंशुद्धं गन्धकं नवनीतकम् ॥ १ ॥
पलप्रमाणं प्रत्येकं गृह्णीयाच्च विधानवित् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वैद्यैः कुशलकर्मभिः ॥ २ ॥
ततस्तु भावना कार्या त्रिफलाभृङ्गराजकैः ।
ततः प्रक्षेपचूर्णञ्च पिप्पलीमूलयष्टिका ॥ ३ ॥
एला पुनर्नवा दारु पाठा भृङ्गः शटी वचा ।
नीलोत्पलं चन्दनञ्च श्लक्ष्णचूर्णञ्च दापयेत् ॥ ४ ॥
माषमेकं प्रदातव्यं घृतश्रीमधुमर्द्दितम् ।
मर्द्दनं लौहदण्डेन पात्रे लौहमये दृढे ॥ ५ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यमुष्णेन वारिणा तथा ।
यावतो नेत्ररोगांश्च पानादेव विनाशयेत् ॥ ६ ॥
सरक्ते रक्तपित्ते च रक्ते चक्षुःस्रुतेऽपि च ।
नक्तान्धे तिमिरे काचे नीलिकापटलार्बुदे ॥ ७ ॥
अभिष्यन्देऽधिमन्थे च पिष्टे चैव चिरन्तने ।
नेत्ररोगेषु सर्वेषु वातपित्तकफेषु च ॥
सर्वनेत्रामयं हन्याद् वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ८ ॥

अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, लोहाभस्म, सोनामाखीभस्म, रसौत और पातनायंत्रमें शोधित आमलासारगंधक यह प्रत्येक औषधि एक एक पल लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर त्रिफलेके रस और भांगरेके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर पीपलामूल,मुलैठी,

इलायची, पुनर्नवा, देवदारु, पाठ, भांगरा, कचूर, वच, नीलोत्पल और लालचंदन यह प्रत्येक औषधि एक एक मासे लेकर बारीक चूर्ण करके मिला देवे । पश्चात् इसको लोहेके पात्रमें डालकर लोहेकी करछीसे पीसकर घृत और सहतमें मिलाकर गोली बना लेवे । गरम जलके साथ इन गोलियोंके सेवन करनेसे सब प्रकारके नेत्ररोग दूर होते हैं। रक्तजनेत्ररोग, रक्तपित्त, नेत्रोंसे रुधिरका गिरना, रात्र्यन्धरोग (रतौंधी), तिमिररोग, काच, नीलिका, पटल, अर्बुद, नेत्राभिष्यन्दरोग, अधिमन्थ, बहुत दिनोंका फूलारोग और वात-पित्त कफजनित नेत्ररोग ये सब निश्चय दूर होजाते हैं । इस औषधिके सेवन करनेसे वज्राहत वृक्षके समान समस्त नेत्ररोग दूर होजाते हैं ॥ १–८ ॥

नयनामृत लोह ।

त्रिकटु त्रिफला शृंगी शटी रास्ना महौषधम् ।
द्राक्षा नीलोत्पलश्चैव काकोली मधुयष्टिकम् ॥ ९ ॥
वाटयालं केशराजश्च कण्टकारीद्वयं पलम् ।
लौहाभ्रयोः पलं दत्त्वा भावयेद्वक्ष्यमाणजैः ॥ १० ॥
त्रिफलायाश्च तोयेन भृङ्गराजरसेन वा ।
भावयित्वा वटी कार्या बदरास्थिनिभा शुभा ॥
यावतो नेत्ररोगांश्च निहन्यान्नात्र संशयः ॥ ११ ॥

त्रिकुटा, त्रिफला, काकड़ाशिंगी, कचूर, रास्ना, सोंठ, दाख, नीलोत्पल, कालोली, मुलैठी, खिरैंटी, कुकुरभांगरा, कटेरी, बडीकटेरी, लोहाभस्म और अभ्रकभस्म, इन प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले लेकर त्रिफलेके और भांगरेके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करनेसे सब प्रकारके नेत्ररोग दूर होते हैं। इसको नयनामृत लोह कहते हैं ॥ ९–११ ॥

क्षतशुक्रहर गुग्गुल ।

अयःसयष्टित्रिफलाकणानां चूर्णानि तुल्यानि पुरेण नित्यम् । सर्पिर्मधुभ्यां सह भक्षितानि शुक्लानि काचानि निहन्ति शीघ्रम् ॥ १२ ॥

लोहाभस्म, मुलैठी, त्रिफला और पीपल इन प्रत्येकका चूर्ण एक एक भाग और गूगल छः भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर यथोक्त मात्रानुसार सहत और घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे नेत्रशुक्लगतरोग और काचरोग शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं । इसको क्षत-शुक्लहर गूगल कहते हैं ॥ १२ ॥

त्रिफलापद्मयष्ट्याह्वयुक्तं सायं निषेवितम् ।
लौहं तिमिरकं हन्ति सुधांशुस्तिमिरं यथा ॥ १३ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे नेत्ररोगचिकित्सा ।

त्रिफला, पद्माख और मुलैठी इन प्रत्येकका चूर्ण और लोह-भस्मका चूर्ण ९ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र करके यथोचित मात्रानुसार संध्याके समय सेवन करनेसे तिमिररोग ऐसे नष्ट होता है जिसप्रकार चन्द्रमासे अंधकारका समूह दूर होता है ॥ १३ ॥

इति नेत्ररोगचिकित्सा समाप्त ।

अथ शिरोरोगाधिकार ।

रसचन्द्रिका वटी ।

त्रैलोक्यविजयाबीजं बीजमुन्मत्तकस्य च ।
कण्टकारीबीजकञ्च हिज्जलं बीजमेव च ॥ १ ॥
बीजञ्च वृद्धदारस्य समौ गन्धकपारदौ ।
आर्द्रकैर्वटिका कार्या कलायपरिमाणतः ॥ २ ॥

एषा तोयानुपानेन प्रातः खाद्या हिताशिना ।
चिरजं सर्वरोगञ्च सन्निपातं सुदारुणम् ॥ ३ ॥
आमवातं शिरोरोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ।
ग्रहणीं श्लीपदं हन्ति त्वन्त्रवृद्धिं भगन्दरम् ॥ ४ ॥
कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसार्शोगुदामयान् ।
वटिका चन्द्रिका नाम वासुदेवेन भाषिता ॥ ५ ॥

भांगके बीज, धतूरेके बीज, कटेलीके बीज, हिज्जल (समुद्रफल) के बीज, विधारेके बीज, पारा और गंधक यह सब औषधि समान भाग लेकर अदरखके रसमें खरल करके मटरकी बराबर गोली बना लेवे। प्रतिदिन प्रातःकाल जलके साथ इस औषधिका सेवन करे। इससे बहुत पुराने रोग, घोरतर सन्निपात, आमवात, शिरोरोग, मन्यास्तम्भ, गलेकी पीड़ा, संग्रहणी, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पांडु, पीनस, बवासीर और गुदजरोग नष्ट होते हैं। इस रसचन्द्रिका वटिकाको श्रीकृष्णने कहा है ॥ १-५ ॥

शिरोवज्र रस ।

पलं सूतं पलं गन्धं पलं लौहं पलं रवेः ।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्द्धं त्रिफलारजः ॥ ६ ॥
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरक्रिमिनाशनम् ।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ७ ॥
क्राथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत् ।
घृतयोगेन कर्त्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥ ८ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाथवा ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ ९ ॥

शिरोर्त्तिं नाशयत्याशु वज्रमुक्तमिवासुरम् ।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥ १० ॥

पारा १ पल, गंधक १ पल, लोहाभस्म १ पल, तांबाभस्म १ पल, गूगल ४ पल,त्रिफलेकी तीनों औषधियोंका मिला हुआ चूर्ण २ पल, मुलैठी, पीपल, सोंठ, गोखुरु, वायविडंग, बेलगिरी, सोनापाठा,कुंभेर-पाढल, अरणी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कटेरी, बडीकटेरी और गोखुरु यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर दशमूलके क्वाथमें सात भावना देवे । पश्चात् घृतमें मर्दन करके एक एक मासेकी गोली बना लेवे । इस औषधिको बकरीके दूध,सहत अथवा जलके साथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और सान्निपातज शिरोरोग दूर होते हैं । इस शिरोवज्र रसको महादेवने कहा है ॥ ९–१० ॥

चन्द्रकान्त रस ।

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं ताम्रं गन्धं समं समम् ।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं भक्षयेन्माषमात्रकम् ॥ ११ ॥
मधुना मर्दितं सेव्यं लौहपात्रे दिने दिने ।
सप्ताहात्सूर्यवर्त्तादीञ्छिरोरोगान्विनाशयेत् ॥ १२ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, तांबाभस्म और गन्धक इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर थूहरके दूधमें खरल करके प्रतिदिन एक मासे औषधि लेकर लोहेके पात्रमें सहतके द्वारा पीसकर भक्षण करे । इसके सेवन करनेसे एक सप्ताहमें सूर्यावर्त्तादि शिरोरोग नष्ट होते हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥

महालक्ष्मीविलास रस ।

लौहमभ्रं विषं मुस्तं फलत्रयकटुत्रयम् ।
धूस्तूरं वृद्धदारञ्च बीजमिन्द्राशनस्य च ॥ १३ ॥

गोक्षुरकद्वयश्चैव पिप्पलीमूलमेव च।
एतत्सर्वं समं ग्राह्यं रसे धूस्तूरकस्य च॥ १४॥
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनिवारकः॥ १५॥

इति शिरोरोगाधिकारः।

लोहाभस्म, अभ्रकभस्म, विष, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकुटा, धतूरेके बीज, विधारेके बीज, भांगके बीज, छोटे गोखरूके बीज, बड़े गोखरूके बीज और पीपलामूल यह सब औषधि समान भाग लेकर धतूरेके पत्तोंके रसमें सात भावना देकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इसके सेवन करनेसे सन्निपातज व्याधि नष्ट होती है॥ १३-१५॥

इति शिरोरोगचिकित्सा।

अथ प्रदररोगचिकित्सा।

प्रदरान्तक लोह।

लौहं ताम्रं वंगमभ्रं हरितालं वराटिका।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम्॥ १॥
चविका पिप्पली शंखं वचा हबुषपाकलम्।
शटी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम्॥ २॥
एतानि समभागानि संचूर्ण्य वटिकां कुरु।
शर्करामधुसंयुक्तां घृतेन भक्षयेत्पुनः॥ ३॥
रक्तं श्वेतं तथा पीतं नीलं प्रदरदुस्तरम्।
कुक्षिशूलं कटीशूलं योनिशूलञ्च सर्वगम्॥ ४॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासनुत्।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं बलवर्णप्रसादनम्॥५॥

लोहा, तांबा, हरिताल, वंग, अभ्रक, कौड़ी इन सबकी भस्म, त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रककी जड़, वायविडंग, पांचों लवण, चव्य, पीपल, शंखनाभि, वच, हाऊबेर, कूठ, कचूर, पाढ, देवदारु, इलायची और विधारेके बीज इन सबको समान भाग लेकर एकत्र पीसकर यथोचित मात्राकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंको सहत, मिश्री और घृतमें मिलाकर सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे रक्त, श्वेत, पीत और नीले रंगका प्रदर, कुक्षिशूल, कटिशूल, योनिशूल, सर्वांग-गतशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पांडु, कष्टसाध्य श्वास और कासरोग नष्ट होते हैं तथा आयु, पुष्टि, बल और वर्णकी वृद्धि होती है ॥ १-५ ॥

प्रदरान्तक रस ।

शुद्धसूतं तथा गन्धं गन्धतुल्यञ्च रूप्यकम् ।
खर्परञ्च वराटञ्च शाणमानं पृथक्पृथक् ॥ ६ ॥
तृतीयं तोलकं चैव लोहचूर्णं क्षिपेत्सुधीः ।
कन्यानीरेणैकदिनं मर्दयेच्च भिषग्वरः ॥
असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणान्नात्र संशयः ॥ ७ ॥

शुद्धपारा, गंधक, रूपाभस्म, खपरियाभस्म और कौड़ी यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे और लोहभस्मका चूर्ण ३ तोले लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घीक्कारके रसमें एक दिन तक खरल करके यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे असाध्य प्रदर रोग नष्ट होता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

मधुयष्टिनिशाचूर्णं तोलकेन समन्वितम् ।
वङ्गभस्मार्कपत्रस्य रसेनाप्लाव्य पीयते ॥
प्रातःप्रातः प्रतिदिनं प्रदरं हन्ति दुस्तरम् ॥ ८ ॥

मुलैठीका चूर्ण, हलदीका चूर्ण और वंगकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक तोले परिमाण लेकर आकके पत्तोंके रसमें खरल करके प्रतिदिन प्रातःकाल भक्षण करे तो दुर्जय प्रदररोग नष्ट होता है ॥ ८ ॥

पुष्कर लेह।

रसाञ्जनं शुभां शृङ्गीं चित्रकं मधुयष्टिकम्।
धान्यतालीशगायत्री द्विजीरं त्रिवृता बला ॥ ९ ॥
दन्तीत्र्यूषणकञ्चापि पलार्द्धञ्च पृथक् पृथक्।
चतुःपलं माक्षिकस्यामलस्य च क्षिपेत्ततः ॥ १० ॥
जातीकोषं लवगं च कंकोलं मृद्विकापि च।
चातुर्जातकखर्जूरं कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ ११ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयित्वा च स्निग्धभाण्डे निधापयेत्।
एष लेहवरः श्रीदः सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १२ ॥
यत्र यत्र प्रयोज्यः स्यात्तदामयविनाशनः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं देशकालानुसारतः ॥ १३ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं प्रदरं सर्वसम्भवम्।
द्वन्द्वजं चिरजञ्चैव रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥ १४ ॥
कासश्वासाम्लपित्तञ्च क्षयरोगमथापि वा।
सर्वरोगप्रशमनो बलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥
पुष्कराख्यो लेहवरः सर्वत्रैवोपयुज्यते ॥ १५ ॥

रसौत, वंशलोचन, काकड़ाशिंगी, चित्रककी जड़, मुलैठी, धनिया, तालीशपत्र, खैर, जीरा, कालाजीरा, निसोतकी जड़, खिरैंटी, दंतीकी जड़ और त्रिकुटा यह भत्येक औषधि दो दो तोले, शुद्ध सहत १६ तोले, जायफल, लौंग, कंकोल, दाख, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर और छुहारा यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर चिकने बासनमें भरकर रख देवे। यथायोग्य मात्रा इसमेंसे सेवन करे। यह लक्ष्मीजनक और सब रोगनाशक है। जिस जिस रोगमें इस औषधिका

प्रयोग किया जाता है वह सब रोग नष्ट होजाते हैं। देश और कालको विचार कर इसके अनुपानकी कल्पना करे। इससे सर्व उपद्रवयुक्त त्रिदोषज प्रदर, द्विदोषज प्रदर, बहुत दिनोंका प्रदर, रक्तपित्त, खाँसी, श्वास, अम्लपित्त, क्षय और सब प्रकारके प्रदररोग दूर होते हैं। बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है। इस औषधिका सर्व प्रकारके रोगोंमें प्रयोग करे। इसको पुष्करलेह कहते हैं ॥ ९-१५ ॥

धात्री च पथ्या च रसाञ्जनञ्च विचूर्ण्य सर्वं सजलं निपीतम्
अनन्तरक्तस्रवमुग्रवेगं निवारयेत्सेतुरिवाम्बुवेगम् ॥ १६ ॥

आमले, हरड़ और रसौत इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर जलमें पीसकर पान करे तो अत्यंत बहता हुआ भी प्रदररोग दूर होताहै १६

रक्तपित्तहरं सर्वं प्रदरे नूतने तथा।
रक्तातिसारे कथितं सर्वमेतत्प्रयोजयेत् ॥ १७ ॥

इति प्रदरचिकित्सा।

नवीन प्रदररोगमें सर्व रक्तपित्तनाशक और रक्तातिसारोक्त चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १७ ॥ इति प्रदरचिकित्सा समाप्त।

अथ योनिव्यापच्चिकित्सा।

समस्तं वातजित्कर्म योनिव्यापत्सु शस्यते।
क्षालनस्वेदलेपांश्च वरानीरेण कारयेत् ॥ १ ॥
प्रक्षालयेद्भगं नित्यं पथ्यामलकवल्कलैः।
वृद्धापि कामिनी क्वापि बालावत्कुरुते रतिम् ॥ २ ॥

इति योनिव्यापच्चिकित्सा।

योनिव्यापत्रोगमें समस्त वातनाशक चिकित्सा करनी चाहिये। त्रिफलेके क्वाथसे योनिको धोवे, स्वेद देवे और लेपन कर्म करे। प्रतिदिन हरड़ और आमलोंके क्वाथसे योनिको धोवे तो वृद्धा स्त्री भी बालाकी समान रति करती है ॥ १ ॥ २ ॥ इति योनिव्यापच्चिकित्सा।

अथ सूतिकारोगचिकित्सा ।

सूतिकारि रस ।

रसगन्धककृष्णाभ्रं तदर्द्धं मृतताम्रकम् ।
चूर्णितं मर्दयेद्यत्नाद्भेकपर्णीरसेन च ॥ १ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
क्षीरत्रिकटुना युक्ता सूतिकातङ्कनाशिनी ॥
ज्वरं तृष्णां रुचिं श्वासं शोथं हन्ति न संशयः ॥२॥

पारा, गन्धक और कृष्णाभ्रकभस्म यह प्रत्येक एक एक भाग, तांबाभस्म आधा भाग इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर मण्डूकपर्णीके रसमें मर्दन करके दो दो रत्तीकी गोली बनाकर छायामें सुखा लेवे । दूध और त्रिकुटेके चूर्णके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे सूतिकारोग, ज्वर, तृषा, अरुचि, श्वास और शोथरोग दूर होतेहैं ॥ १॥२॥

सूतिकाविनोद रस ।

रसगन्धकतुत्थञ्च त्र्यहं जम्बीरमर्दितम् ।
त्रिभावितं त्रिकटुना देयं गुञ्जाचतुष्टयम् ॥
गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वराजीर्णेषु योजयेत् ॥ ३ ॥

पारा, गन्धक, तूतिया इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें तीन दिनतक खरल करके त्रिकुटेके क्वाथमें तीन भावना देवे । इसकी चार चार रत्तीकी गोली गर्भवती स्त्रीको सेवन करावे तो शूल, विष्टम्भ, ज्वर और अजीर्णरोग दूर होते हैं । इसको सूतिकाविनोद रस कहते हैं ॥ ३ ॥

गर्भचिन्तामणि रस ।

तुत्थस्थाने हेम देयं चिन्तामणिरसे तथा ॥ ४ ॥

इस सूतिकाविनोद रसमें तूतियाकी जगह जो सोना मिला लिया जाय तो गर्भचिन्तामणि रस तैयार होता है ॥ ४ ॥

बृहत्सूतिकाविनोद रस ।

शुण्ठ्या भागो भवेदेको द्वौ भागौ मरिचस्य च ।
पिप्पल्याश्च त्रिभागं स्यादर्द्धभागश्च व्योमकम् ॥५॥
जातीकोषस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ तुत्थकस्य च ।
सिन्धुवारजलेनैव मर्दयेदेकयामतः ॥
मधुना सह भोक्तव्यः सूतिकातङ्कनाशनः ॥ ६ ॥

सोंठ १ भाग, मरिच २ भाग, पीपल ३ भाग, अभ्रकभस्म आधा भाग, जायफल २ भाग और तूतिया २ भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर सम्हालूके पत्तोंके रसमें एक प्रहरतक खरल करके सहतके साथ भक्षण करे तो सूतिकारोग नष्ट होता है । इसको बृहत्सूतिकाविनोद रस कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

सूतिकारि रस ।

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं हेम तारकम् ।
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गैला च धातकी ॥ ७ ॥
वत्सकेन्द्रयवं पाठा शृङ्गीविश्वाजमोदिका ।
गुटी प्रसारिणीरसैश्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥ ८ ॥
भावयेत्तद्रसैः प्रातः सूतिकातङ्कशान्तये ।
जीर्णज्वरं तथा शोथं ग्रहणीप्लीहकासनुत् ॥ ९ ॥

सुहागा, रससिन्दूर, गंधक, सोनाभस्म, चांदीभस्म, जायफल, जावित्री, लौंग, इलायची, धायके फूल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पाढ, काकड़ासिंगी, सोंठ और अजवायन इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर प्रसारणीके रसमें खरल करके चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे । प्रतिदिन प्रातःकाल प्रसारणीके रसके साथ एक गोली खाय तो अवश्य प्रसूताके रोग नष्ट होते हैं । इससे जीर्णज्वर, शोथ, संग्रहणी, प्लीहा और कासरोग नष्ट होते हैं ॥ ७-९ ॥

सूतिकाघ्न रस ।

रसगन्धकलौहाभ्र जातीकोषं सुवर्च्चलम् ।
समांशं मर्द्दयेत्खल्ले छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥ १० ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन सूतिकातंकनाशनः ।
ज्वरातीसाररोगघ्नः सूतिकासुखदायकः ॥
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्त्तितः ॥ ११ ॥

पारा, गंधक, लोहा, अभ्रकभस्म, जायफल और कालानमक यह सब औषधि समान भाग लेकर बकरीके दूधमें खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे ज्वर, अतिसार और सूतिकारोग नष्ट होते हैं । इसको स्वयं ब्रह्मदेवने कहा है ॥ १० ॥ ११ ॥

सूतिकान्तक रस ।

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ १२ ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यञ्च नाशयेत् ।
अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ॥
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ १३ ॥

पारा, अभ्रकभस्म, गंधक, त्रिकुटा, सोनामाखीभस्म और विष यह सब औषधि समान भाग लेकर इसमेंसे चार रत्ती परिमाण औषधि सेवन करे। इसके सेवन करनेसे सूतिकारोग, संग्रहणी, मंदाग्नि, वैद्यों करके त्यागा हुआ अतिसार, श्वास, खाँसी और अतिसार रोग नष्ट होते हैं और यह उत्तम वाजीकरण है ॥ १२ ॥ १३ ॥

गर्भचिन्तामणि रस ।

जातीफलं टंकणञ्च व्योषं दैत्येन्द्ररक्तकम् ।
तच्चूर्णं समभागेन मर्दितं प्रहरद्वयम् ॥ १४ ॥

जम्बीररसयोगेन वटीं कुर्याद्विचक्षणः।
गुञ्जाद्वयप्रमाणान्तु खलु वैद्यः प्रयत्नतः॥ १५॥
आर्द्रकस्य रसेनैव भक्षयेदुष्णवारिणा।
निहन्ति सर्वरोगांश्च भास्करस्तिमिरं यथा॥ १६॥

जायफल, सुहागा, त्रिकुटा और सिंग्रफ इन सब औषधियोंका चूर्ण प्रत्येक एक एक भाग लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें दो प्रहरतक खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको अदरखके रस और गरम जलके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकारके स्त्रियोंके रोग ऐसे नष्ट होते हैं जैसे सूर्यके द्वारा अन्धकार॥ १४-१६॥

दूसरा गर्भचिंतामणि रस।

रसं तारं तथा लौहं प्रत्येकं कर्षमानतः।
कर्षत्रयं तथा चाभ्रं कर्पूरं वङ्गताम्रकम्॥ १७॥
जातीफलं तथा कोषं गोक्षुरञ्च शतावरी।
बलातिबलयोर्मूलं प्रत्येकं तोलकं शुभम्॥ १८॥
वारिणा वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
सन्निपातं निहन्त्याशु स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः॥
गर्भिण्या ज्वरदाहञ्च प्रदरं सूतिकामयम्॥ १९॥

शुद्ध पारा, रूपाभस्म, लोहभस्म यह प्रत्येक एक एक कर्ष परिमाण, अभ्रकभस्म ३ कर्ष, कपूर, वंगभस्म, तांबाभस्म, जायफल, जावित्री, गोखुरू, सतावर, खिरैंटीकी जड़ और कंघीकी जड़ यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे सन्निपात, स्त्रीरोग, गर्भिणीज्वर, दाह, सूतिका और प्रदररोग नष्ट होते हैं॥ १७-१९॥

बृहत् गर्भचिंतामणि रस।

सूतं गन्धं तथा स्वर्णं लौहं रजतमाक्षिके।
हरितालं वङ्गभस्माप्यभ्रकं समभागिकम् ॥ २० ॥
भावना खलु दातव्या रसैरेषां पृथक् पृथक्।
ब्राह्मीवासाभृङ्गराजपर्पटीदशमूलकैः ॥ २१ ॥
सप्तधा भावयेद्वैद्यो गुञ्जामानां वटीञ्चरेत्।
गर्भचिन्तामणिरयं पूर्ववद्गुणकारकः ॥ २२ ॥

पारा, गंधक, सोना, लोहा, रूपा, सोनामाखी, हरिताल, वंग और अभ्रककी भस्म इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर ब्राह्मी, अड़ूसा, भांगरा, पित्तपापड़ा और दशमूलके क्काथमें अलग अलग सात सात भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करे। यह औषधि गर्भचिंतामणि रसकी समान हितकारी है ॥ २०–२२ ॥

गर्भविनोद रस।

देयं त्रिभागं त्रिकटु चतुर्भागञ्च हिंगुलम्।
जातीकोषं लवङ्गञ्च प्रत्येकं च त्रिकार्षिकम् ॥ २३ ॥
सुवर्णमाक्षिकस्यापि पलार्द्धं प्रक्षिपेद्बुधः।
जलेन मर्दयित्वाथ चणमात्रा वटी कृता ॥
निहन्ति गर्भिणीरोगं भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४ ॥

त्रिकुटेका चूर्ण ३ कर्ष, सिंग्रफ४कर्ष, जावित्री और लौंग यह प्रत्येक औषधि तीन तीन कर्ष परिमाण लेवे, सोनामाखी २ तोले इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे गर्भिणीके समस्त रोग नष्ट होते हैं ॥ २३ ॥ २४ ॥

सूतिकाहर रस ।

लवङ्गं रसगन्धौ च यवक्षारं तथाऽभ्रकम् ।
लौहं ताम्रं सीसकञ्च पलमानं समाहरेत् ॥ २५ ॥
जातीफलं केशराजं वराभृङ्गैलमुस्तकम् ।
धातकीन्द्रयवं पाठा शृङ्गी बिल्वञ्च वालकम् ॥ २६ ॥
कर्षमानञ्च संचूर्ण्य सर्वमेकत्र कारयेत् ।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २७ ॥
गन्धालिकापत्ररसैरनुपानं प्रदापयेत् ।
सर्वातीसारशमनः सर्वशूलनिवारणः ॥
सूतिकाहरनामाऽयं रसः परमदुर्लभः ॥ २८ ॥

लौंग, पारा, गंधक, जवाखार, अभ्रकभस्म, लोहाभस्म, तांबाभस्म और सीसाभस्म यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले, जायफल, कुकुर-भांगरा, त्रिफला, भांगरा, इलायची, नागरमोथा, धायके फूल, इन्द्रजौ, पाढ, काकड़ासिंगी, बेलकी छाल और सुगंधवाला यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेकर अच्छे प्रकारसे पीसकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बना लेवे। इन गोलियोंको प्रसारणीके रसके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके अतिसार और सर्व प्रकारके शूल रोग नष्ट होते हैं। इसको सूतिकाहर रस कहते हैं ॥ २५-२८ ॥

महाभ्र वटी ।

अभ्रकं पुटितं ताम्रं लौहं गन्धकपारदम् ।
कुनटी टङ्कणं क्षारं त्रिफला च पलं पलम् ॥ २९ ॥
गरलञ्च तथा माषचतुष्कञ्चैव चूर्णितम् ।
तत्सर्वं भावयेदेषां रसैः प्रत्येकशः पलैः ॥ ३० ॥

ग्रीष्मसुन्दरकस्याटरूषकस्य क्रमेण तु ।
रसैस्ताम्बूलवल्ल्याश्च दलोत्थैर्भावितं पृथक् ॥ ३१ ॥
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
सर्वातीसारशमनं सर्वशूलनिवारणम् ॥ ३२ ॥
सूतिकाशोथपाण्डुत्वं सर्वज्वरविनाशनम् ।
नाशयेत्सूतिकातङ्कं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ३३ ॥

अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, लोहाभस्म, गंधक, पारा, मैनशिल, सुहागा, जवाखार और त्रिफला प्रत्येक एक एक पल और विष चार मासे लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर ग्रीष्मसुन्दर (गीमा यह किसी देशकी भाषा), अडूसेके पत्ते और पान इन प्रत्येकके एक एक पल रसके द्वारा अलग अलग भावना देवे। जब यह भीग जाय तब इसमें काली-मिरचोंका चूर्ण मिला देवे। फिर कुछ समयतक मर्दन करके यथोचित मात्राकी गोली बना लेवे। इस औषधिके भक्षण करनेसे सब प्रकारका अतिसार, सब प्रकारका शूल, सूतिका रोग, शोथ, पांडु और सर्व प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं। जिसप्रकार वज्रसे वृक्षोंका नाश होता है उसी प्रकार इससे सूतिकारोग नष्ट होता है ॥ २९-३३ ॥

मृतमभ्रञ्च लौहञ्च कुनटी ताम्रकं तथा ।
रसगन्धकटंकञ्च यवक्षारफलत्रिकम् ॥ ३४ ॥
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यमूषणं पञ्चतोलकम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्येकेन विभावयेत् ॥ ३५ ॥
ग्रीष्मसुन्दरसिंहस्य नागवल्ल्या रसेन च ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
योजयेत्सर्वथा वैद्यः सूतिकारोगशान्तये ॥ ३६ ॥

दूसरी महाभ्र वटी—अभ्रककी भस्म, लोहभस्म, मैनशिल, तांवाभस्म, पारा, गंधक, सुहागा, जवाखार और त्रिफला यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला और त्रिकुटा पांच तोले लेवे। इन सबको एकत्र पीसकर चूर्ण बनाकर गीमाका शाक, अडूसा और पानोंके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर चार चार रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंको सूतिकारोगको दूर करनेके लिये प्रयुक्त करे॥ ३४-३६॥

रसशार्दूल रस।

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं राजपट्टं रसं तथा।
गन्धटंकमरीचञ्च यवक्षारं समांशकम्॥ ३७॥
तथाऽत्र तालकञ्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम्।
तोलकञ्चामृतञ्चैव षड्गुञ्जाप्रमिता वटी॥ ३८॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्यापि नागवल्लीरसेन च।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरकासाङ्गसंग्रहम्॥
सूतिकातङ्कशोथादिस्त्रीरोगञ्च विनाशयेत्॥ ३९॥

अभ्रकभस्म, तांबाभस्म, लोहाभस्म, राजपट्ट, पारा, गंधक, सुहागा, मरिच, जवाखार, हरताल, त्रिफला और विष यह प्रत्येक औषधि एक एक तोला परिमाण लेवे। सबको एकत्र पीसकर गीमाके शाक और पानोंके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर छः छः रत्तीकी गोली बना लेवे। इन गोलियोंके सेवन करनेसे ज्वर, खाँसी, शरीरकी पीड़ा और सूतिकादि स्त्रीरोग नष्ट होते हैं॥ ३७-३९॥

महाशार्दूल रस।

अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धञ्च पारदम्।
शिला टङ्कं यवक्षारं त्रिफायाः पलं पलम्॥ ४०॥

गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धतोलकसम्मितम् ।
त्वगेलापत्रकञ्चैव जातीकोषलवङ्गकम् ॥ ४१ ॥
मांसी तालीशपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाञ्जनम् ।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयञ्चापि विचक्षणैः ॥ ४२ ॥
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च ॥४३॥
निहन्ति विविधान्रोगाञ्ज्वरान्दाहान्वमिं भ्रमिम् ।
तथातिसारकञ्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम् ॥
विशेषाद्गार्भणीरोगं नाशयेदचिरेण च ॥ ४४ ॥

अभ्रक, तांबा, सोना इन सबकी भस्म, गंधक, पारा, मैनशिल, सुहागा, जवाखार और त्रिफला यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले परिमाण, विष ६ मासे, दालचीनी, इलायची, तेजपात, जावित्री, लौंग, बालछड़, तालीशपत्र, सोनामाखीभस्म और रसौत यह प्रत्येक औषधि दो दो कर्ष परिमाण लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गीमेका शाक और पानोंके रसमें अलग अलग सात सात भावना देवे। जब कुछ पतला होजावे तब इसमें चार तोले कालीमिरचोंका चूर्ण डालकर गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेसे ज्वर, दाह, वमन, भ्रम, अतिसार, मन्दाग्नि और अरुचिप्रभृति समस्त रोग नष्ट होते हैं तथा थोड़े ही दिनोंमें गर्भवतीके समस्त रोग दूर हो जाते हैं ॥ ४०-४४ ॥

बृहद्रसशार्दूल रस।

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं संमर्दयेद्दिनम् ।
प्रतिलौहं सूततुल्यमष्टलौहं मृतं क्षिपेत् ॥ ४५ ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी मधुयष्टिः पुनर्नवा ।
नलिकागिरिकर्ण्यर्कक्रूषणधूर्त्तदुरालभाः ॥ ४६ ॥

अष्टरूपं काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत्।
गुञ्जात्रयं चतुर्थं वा सर्वरोगेषु योजयेत्॥
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिबेत्॥ ४७॥

पारा १ भाग और गंधक २ भाग लेवे, दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बनावे, फिर इसमें अष्टधातुओंकी भस्म प्रत्येक एक एक भाग मिलावे। पश्चात् ब्राह्मी, जयंतीके पत्ते, सम्हालू, मुलैठी, पुनर्नवा, नाड़ीशाक, कोयल, आककी जड़, काले धतूरेके पत्ते, धमासा, अडूसा और मकोय इन प्रत्यकके रसके द्वारा पीसकर चार चार रत्तीकी गोली बनावे। इन गोलियोंको यथोचित अनुपानके साथ सब रोगोंमें प्रयोग करे। इस औषधिके सेवन करनेके अन्तमें रोगोंके अनुसार अनुपान अथवा मंदोष्ण जलपान करे॥ ४९–४७॥

अष्टधातु।

सुवर्णं रजतं ताम्रं कांस्यं पित्तलमेव च।
नागं वंगं तथा लौहं धातवोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः॥ ४८॥

इति सूतिकारोगचिकित्सा।

इसमें जो अष्टधातु कही हैं सो उनके नाम इस प्रकार हैं–सोना १, चांदी २, तांबा ३, कांसा ४, पित्तल ५, सीसा ६, वंग ७ और लोहा ८ यह आठ धातु जाननी॥४८॥ इति सूतिकारोगचिकित्सा समाप्त।

अथ बालरोगचिकित्सा।

बालरस।

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य पलं तथा।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि भागार्द्धं सम्प्रकल्पयेत्॥ १॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा लौहपात्रमये दृढे।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्डयाः स्वरसेन च॥ २॥
शुभे शिलामये पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत्।
राजिकासदृशीश्चैव वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ३॥

एकैकां वटिकां खादेन्नागवल्लीदलद्रवैः ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ ४ ॥
चिरज्वरञ्च कासञ्च शूलं सर्वभवं तथा ।
शिशूनां रोगनाशाय शिवेन परिकीर्तितः ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक यह प्रत्येक चार चार तोले और सोनामाखी २ तोले लेवे, इन तीनों औषधियोंको एकत्र पीसकर दृढ लोहेके पात्रमें कुकुरभांगरेके रसमें, भांगरेके रसमें और सम्हालूके रसमें अलग अलग भावना देकर उत्तम पत्थरके खरलमें लोहेके डंडेसे खरल करे । पश्चात् इसकी सरसोंकी बराबर गोली बना लेवे । पानके रसके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे बालकोंका दारुण सन्निपातज्वर, बहुत दिनोंका पुराना ज्वर, खाँसी और त्रिदोषजशूल नष्ट होते हैं । यह बालरस नामक औषधि बालकोंके रोगोंको दूर करनेके लिये स्वयं महादेवने कही है ॥ १–५ ॥

अपर बालरस ।

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि चार्द्धभागं नियोजयेत् ॥६॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्डचाः पर्णसम्भवम् ॥७॥
स्वरसं काकमाच्याश्च ग्रीष्मसुन्दरकस्य च ।
सूर्यावर्त्तकवर्षाभूभेकपर्णीरसैस्तथा ॥ ८ ॥
श्वेतापराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ ९ ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्द्दयेत् ।
शुष्कमातपसंयोगाद्वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १० ॥

प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रयोजयेत् ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥
कासञ्च विविधं चैव सर्वरोगं निहन्ति च ॥ ११ ॥

इति बालरोगचिकित्सा ।

शुद्ध पारा १ पल, गंधक १ पल और सोनामाखी २ तोले इन तीनों औषधियोंको एकत्र पीसकर लोहेके दृढ पात्रमें कुकुरभांगरा, भांगरा, सम्हालू, पान, मकोय, गीमा, हुलहुल, पुनर्नवा, मण्डूकपर्णी और श्वेत कोइल इन प्रत्येकके रसके द्वारा अलग अलग खरल करके पश्चात् पारेसे आधा भाग कालीमिरचोंका चूर्ण मिलाकर उत्तम पत्थरके पात्रमें एक प्रहरतक खरल करके सरसोंकी बराबर गोली बना लेवे और फिर उनको धूपमें सुखा देवे । इस औषधिके सेवन करनेसे बालकोंका त्रिदोषज ज्वर, विविध प्रकारका कास और सर्व प्रकारके रोग नष्ट होते हैं ॥ ६-११ ॥ इदि बालरोगाधिकार संपूर्ण ।

अथ विषाधिकार ।

विषवज्रपात रस ।

निशां सटङ्कञ्च सजातिकोषं तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः । रसेन पिष्ट्वा विषवज्रपातो रसो भवेत् सर्वविषापहन्ता ॥ १ ॥ निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम् । जटाविषेणाकुलितं तथान्यैर्विषैर्नरञ्चाशु तथातुरं च ॥ २ ॥

हलदी, सुहागा, जावित्री और तूतिया इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बंदालके रसमें खरल करके चार मासे परिमाण औषधि मनुष्यके मूत्रमें मिलाकर सेवन करे । सर्व प्रकारके विषोंको नष्ट करनेवाली इस औषधिके सेवन करनेसे कालदष्ट मनुष्य भी जीजाता है । मूलविष (काष्ठविष) से व्याकुल और अन्यान्य

खनिजपाषाण, विष प्रभृति अथवा कृत्रिमविष और सर्पादिक जंगम विषसे पीड़ित मनुष्य भी इस औषधिके प्रभावसे शीघ्र ही आरोग्य होजाता है ॥ १ ॥ २ ॥

भीमरुद्र रस ।

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च ।
अभ्रात्कर्षं ततो देयं तोलैकं कान्तलौहकम् ॥ ३ ॥
परोक्तेनौषधेनैव भावयेच्च पृथक् पृथक् ।
विशाला बृहती ब्राह्मी सौगन्धिकसुदाडिमैः ॥ ४ ॥
मर्कटचाश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक् पृथक् ।
एतद्रक्तिकमानेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ५ ॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतजलं ततः ।
भीमरुद्रो रसो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ६ ॥

इति श्रीगोपालकृष्णसूरिविरचिते रसेन्द्रसारसंग्रहे
उत्तरखण्डः समाप्तः ॥ २ ॥

पारा १ तोला, गंधक १ तोला, अभ्रकभस्म १ कर्ष और कान्त लोहाभस्म १ तोला परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर, इन्द्रायनकी जड़, कटेरी, ब्राह्मी, नीलकमल, अनार, चिरचिरा और कौंच इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग सात सात भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । औषधिके सेवन करनेके पश्चात् शीतल जलको पीवे । इसके सेवन करनेसे असाध्य विषरोग तथा कुत्ते एवं गीदड़का अत्यंत दुस्तर विष भी दूर होता है ॥ ३–६ ॥ इति विषचिकित्सा समाप्त ।

दूर होहिं जिन रसनसे, ज्वर आदिक सब रोग ।
द्वितिय खण्डमें सो लिखे, सिद्ध सिद्ध सब योग ॥

इति पटियालाराज्यस्थवैद्यरत्नरामप्रसादराजवैद्यवैद्योपाध्यायकृत-
भाषाटीकायामुत्तरखण्डः समाप्तः ॥ २ ॥

अथ तृतीय खण्ड ।

अथ रसायनवाजीकरणाधिकार ।

रसायनके लक्षण ।

सुस्थस्यौजस्करं किञ्चित्किञ्चिदार्त्तस्य रोगनुत् ।
यज्जराव्याधिविध्वंसि भेषजं तद्रसायनम् ॥ १ ॥

जिस औषधिके सेवन करनेसे स्वस्थ मनुष्यके ओजकी वृद्धि होती है और रोगी मनुष्यके रोगोंकी निवृत्ति होती है तथा जो जरा और व्याधियोंको दूर करती है उस औषधिको रसायन कहते हैं ॥ १ ॥

श्रीमन्मथ रस ।

रसगन्धकयोर्ग्राह्य कर्षमेकं सुशोधितम् ।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धं सुविचक्षणः ॥ २ ॥
कर्पूरं शाणकं दद्याद्वङ्गञ्च कोलसम्मितम् ।
ताम्रं कोलार्द्धकं तत्र निःशेषमारितं क्षिपेत् ॥ ३ ॥
लौहं कर्षं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकबीजकम् ।
विदारी शतमूली च क्षुरबीजं बला तथा ॥ ४ ॥
मर्कटचतिबला चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जं यमानिका ॥ ५ ॥
एतेषां चूर्णमादाय प्रक्षिपेच्छाणसम्मितम् ।
गुञ्जाद्वयञ्च भोक्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥ ६ ॥
गृहे यस्य शतं स्त्रीणां विद्यतेऽतिव्यवायिनः ।
न तस्य लिंगशैथिल्यमौषधस्यास्य सेवनात् ॥ ७ ॥
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ।
कामरूपी भवेद्दिव्यो वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ ८ ॥
रसायनवरो बल्यो वाजीकरण उत्तमः ।
रसः श्रीमन्मथो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ९ ॥

पारा, १ कर्ष, गंधक १ कर्ष, अभ्रकभस्म २ तोले, कपूर ४ मासे, वंगभस्म आधा तोला, तांबाभस्म ३ मासे, लोहभस्म १ कर्ष, विधारेके बीज, विदारीकंद, सतावर, तालमखाने, खिरैंटी, कौंच, कंघी, जावित्री, जायफल, लौंग, भांगके बीज, राल और अजवायन इन प्रत्येकका चूर्ण चार चार मासे इन सबको एकत्र खरल करके दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् किंचित् गरम दूध पान करे। जो मनुष्य अत्यंत मैथुन करते हैं, जिनके घर सैकड़ो स्त्री हैं वह मनुष्य इस औषधिका सेवन करके सौ स्त्रियोंके साथ संसर्ग करे तो भी लिंग शिथिल, शुक्रक्षय और बलकी हानि नहीं होती है। इस औषधिके प्रभावसे वृद्ध मनुष्य भी सोलह वर्षके युवाके समान कामरूपी और दिव्य शरीरवाला हो जाता है। यह उत्तम औषधि बलकारक और अतीव वाजीकरण है। यह श्रीमन्मथ रस महादेवजीने प्रकाश किया है ॥ २-९ ॥

महेश्वर रस।

रसभस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम्।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ १० ॥
सुवर्णं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणः।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रचूर्णकम् ॥ ११ ॥
श्यामाबीजं वरीञ्चैव बलामतिबलां तथा।
एलाञ्च शंखपुष्पञ्च शाणमानं विनिःक्षिपेत् ॥ १२ ॥
जलेन वटिकां कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत्।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ १३ ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः।
नित्यं स्त्रीसेवनाद्यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ १४ ॥

महाशुक्री भवेत्सोऽपि सेवनादस्य नान्यथा ।
महाबलो मदाबुद्धिर्जायते नात्र संशयः ॥ १५ ॥
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
रसो विनाशयेद्रोगान्सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥ १६ ॥

रससिंदूर आधा तोला, शुद्धगंधक आधा तोला, लोहभस्म २ कर्ष, तांबाभस्म २ मासे, सोनाभस्म २ मासे, अभ्रकभस्म २ कर्ष, कपूर २ मासे, विधारेके बीज, सतावर, खिरैंटी, कंघी, इलायची और शंखाहुली यह प्रत्येक औषधि चार चार मासे इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे मनुष्य कामदेवके समान हो जाता है तथा हजारों स्त्रियोंसे प्रसंग करनेका उत्साह उत्पन्न होता है । सदैव स्त्री प्रसंग करनेसे जिनका वीर्य क्षय होगया है उनके अधिकतर प्रसंग करनेपर भी अत्यन्त शुक्रकी वृद्धि होती है । यह औषधि स्थूल मनुष्यको कृश और कृश मनुष्यको स्थूल बनाती है । इससे अत्यंत बुद्धि और अतिशय बलकी वृद्धि होती है । सात सप्ताहतक इस औषधिके सेवन करनेसे सब प्रकारके रोग नष्ट होते हैं । इसको महेश्वररस कहते हैं ॥ १०–१६ ॥

पूर्णचन्द्र रस ।

सूताभ्रलौहं सशिलाजतु स्याद्विडङ्गताप्यं मधुना घृतेन ।
संमर्द्य सर्वं खलु पूर्णचन्द्रो माषोऽस्य वृष्यो भवति प्रयुक्तः ॥

रससिंदूर, अभ्रकभस्म, लोहाभस्म, शिलाजीत, वायविडंग और सोनामाखीभस्म यह सब औषधि समान भाग लेकर एकत्र पीसकर घृत और सहतमें खरल करके एक एक मासेकी गोली बना लेवे । इस औषधिके सेवन करनेसे वीर्यकी वृद्धि होती है ॥ १७ ॥

कार्श्यहर लौह ।

श्वेता पुनर्नवा दन्ती वाजिगन्धात्रिकत्रयैः ।
शतमूलीबलायुक्तैरेभिर्लोहं प्रसाधितम् ॥ १७ ॥
निहन्ति नियतं कार्श्यमपि भृङ्गरसैः सह ।
नास्त्यनेन समं लौहं सर्वरोगान्तकं मतम् ॥
दीपनं बलवर्णाग्निर्वृष्यदश्चोत्तमोत्तमम् ॥ १९ ॥

श्वेतपुनर्नवा, दन्तीकी जड़, असगंध, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, दारचीनी, इलायची, तेजपात, सतावर और खिरैंटी इन सब औषधियोंका चूर्ण बनाकर और सब चूर्णकी बराबर लोहा-भस्म मिलावे । इसको अच्छे प्रकारसे खरल करके गोली बना लेवे । इन गोलियोंको भांगरेके रसके साथ सेवन करनेसे कृशता नष्ट होती है । सर्व रोगोंको हरनेवाली इसकी समान अन्य श्रेष्ठ औषधि नहीं है । सम्पूर्ण रसायन औषधियोंमें यह उत्तम रसायन है । इसको कार्श्यहर लौह कहते हैं ॥ १८ ॥ १९ ॥

लक्ष्मीविलास रस ।

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ ।
कर्पूरस्य तदर्द्धञ्च जातीकोषफले तथा ॥ २० ॥
वृद्धदारकबीजं च बीजमुन्मत्तकस्य च ।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥ २१ ॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा ।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीजमेव च ॥ २२ ॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसेन च ।
निष्पिष्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥ २३ ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान्घोरान्सुदारुणान् ।
वातोत्थानपि पित्तोत्थान्नास्त्यत्र नियमः क्वचित् २४ ॥

कुष्ठमष्टादशाख्यञ्च प्रमेहान्विंशतिं तथा ।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ २५ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलसम्भवम् ।
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम् ॥ २६ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शः स्थौल्यं दौर्गन्ध्यमेव च ।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥२७॥
अर्दितं गलगण्डञ्च वातशोणितमेव च ।
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरस्यमेव च ॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिषूदनम् ॥ २८ ॥

कृष्णाभ्रकभस्मका चूर्ण १ पल, पारा २ तोले, गंधक २ तोले, कपूर, जावित्री, जायफल, विधारेके बीज, धतूरेके बीज, भांगके बीज, विदारीकंद, सतावर, गंगेरन, कंघी, गोखुरुके बीज और हिज्जल (समुद्रफल) के बीज इन प्रत्येकका चूर्ण एक एक कर्ष परिमाण लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर पानोंके रसमें खरल करके तीन तीन रत्तीकी गोली बनाकर भक्षण करे । इस औषधिके सेवन करनेसे घोरतर त्रिदोषज रोग, वातज और पित्तज रोग, अठारह प्रकारके कुष्ठ, बीस प्रकारका प्रमेह, नाडीव्रण, गुदजरोग, भगन्दर, कफवातज श्लीपद, बहुत दिनोंका और वंशसे उत्पन्न हुआ श्लीपदरोग, गलशोथ, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, खांसी, पीनस, राजयक्ष्मा, बवासीर, मेद, शरीरकी दुर्गंध, सब प्रकारके रूपवाला आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलेकी पीड़ा, आर्दित, गलगण्ड, वातरक्त, उदररोग, कान-नाक-आंखके रोग और मुँहका विगाड़, सब प्रकारका शूल, शिरःशूल और स्त्रीरोग नष्ट होते हैं ॥ २०-२८ ॥

वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयो दधि ॥ २९ ॥

वारिभक्तसुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः ॥३०॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्कताम् ।
नित्यं स्त्रीणां शतं गच्छेन्मत्तवारणविक्रमः ॥३१॥
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकः परः ।
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना ॥३२॥
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं वासुदेवो जगत्पतिः ।
अभ्यासादस्य भगवाँल्लक्षनारीषु वल्लभः ॥३३॥

प्रतिदिन प्रातःकाल इनमेंसे एक गोली खाकर मांस, पक्कान्न, मिष्टान्न, दूध, दही, मांडसमेत भात, मदिरा और सीधुनामवाली मदिराका सेवन करे। इससे कामदेवके समान स्वरूप होजाता है; वृद्ध मनुष्य भी युवाके समान कामनाओंवाला होता है। मैथुनके सिवाय कदापि वीर्यक्षय नहीं होता। लिंगमें शिथिलता उत्पन्न नहीं होती। बाल कदापि नहीं पकते। मदोन्मत्त हाथीके समान उन्मत्त होकर सैकडों स्त्रियोंसे विषय करनेको समर्थ होता है। उसकी दृष्टिशक्ति दो लक्ष योजनकी हो जाती है। यह औषधि अतीव पुष्टिकारक है। महात्मा नारदजीने यह श्रेष्ठ औषधि कही है। श्रीकृष्ण भगवान् इसी औषधिका सेवन करके लक्ष स्त्रियोंके प्रिय हुए थे ॥ २९-३३॥

श्रीकामदेव रस ।

कामदेवमथो सूतं कामिनां कामदं सदा ।
यस्य प्रसादतो बल्यो रम्यश्च रमते स्त्रियम् ॥ ३४ ॥
पारदं पलमेकं स्याद्द्विपलं शुद्धगन्धकम् ।
रक्तकार्पासतोयेन घृष्ट्वा काचस्य कुप्यतः ॥ ३५ ॥
निक्षिप्य टंकणेनैव मुखं तस्य निरोधयेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं कुप्यञ्च कुरुते दृढम् ॥ ३६ ॥

अहोरात्रं पचेदग्नौ शास्त्रवित्कुशलो भिषक् ।
शीते चादाय पात्रस्थं कुपिकान्तरलम्बितम् ॥३७॥
दरदेन समं रक्तं सोज्ज्वलं भस्म यद्भवेत् ।
भक्षयेन्मासमेकञ्च घृतेन मधुना सह ॥ ३८ ॥
पश्चाद्दुग्धं गुडं चाज्यं कृष्णेक्षुमपि शर्कराम् ।
द्राक्षाखर्जूरमधुकप्रभृतीनथ भक्षयेत् ॥ ३९ ॥
त्रिफला मधुना शान्तिं याति पित्तं चिरोद्भवम् ।
निर्गुंडिकारसेनात्र दुर्वारवातवेदनाम् ॥ ४० ॥
प्रशमं याति वेगेन नूतनश्च वपुर्भवेत् ।
अर्द्धावर्तितदुग्धेन गृह्यते यद्ययं रसः ॥
वन्ध्यापि च भवत्येव जीववत्सा सपुत्रिका ॥ ४१ ॥

अब कामदेव रसको कहते हैं-यह कामदेव रस कामी मनुष्योंके कामको दीपन करनेवाला है । इसके प्रसादसे मनुष्य बलवान् और रमणीयकांतियुक्त होकर अनेक स्त्रियोंमें गमन कर सकता है । शुद्ध पारा ४ तोले और शुद्ध गन्धक ८ तोले लेवे । इन दोनोंको एकत्र पीसकर कज्जली बनाकर, लाल कपासके फूलोंके रसमें पीसकर धूपमें सुखा लेवे । पश्चात् कपरौटी की हुई और धूपमें सुखाई हुई कांचकी सीसी (आतसी सीसी) में उक्त कज्जलीको रखकर सुहागेसे मुखको बन्द करके वालुकायन्त्रमें एक दिनरात पकावे । जब अपने आप शीतल होजाय तब शीशीमें लगे हुए सिंग्रफके समान लाल रंगके पदार्थको ग्रहण करके एक मासे परिमाण घी और सहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे दूधको पान करे । तथा गुड़, घी, काले रंगकी ईख, मिश्री, दाख, खजूर और मुलैठी इत्यादि भक्षण करे । त्रिफलेके रस और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे बहुत कालसे उत्पन्न हुआ कुपित पित्त शान्त होता है और सम्हालूके रसके साथ सेवन करनेसे

कष्टसाध्य वायुकी पीड़ा दूर होकर शरीर नवीन होजाता है। अधौटे दूधके साथ इसके सेवन करनेसे वंध्या स्त्रियोंके भी पुत्र उत्पन्न होता है ॥ ३४-४१ ॥

अनंगसुन्दर रस ।

शुद्धसूतं समं गन्धं त्र्यहं कह्लारजैर्द्रवैः ।
मर्दितं वालुकायन्त्रे यामं संपुटके पचेत् ॥ ४२ ॥
रक्तागस्त्यद्रवैर्भाव्यं दिनमेकं सिताम्बुजैः ।
यथेष्टं भक्षयेच्चानु कामयेत्कामिनीशतम् ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा और गन्धक दोनोंको समान भाग लेकर एकत्र खरल करके कज्जली बना लेवे। फिर इस कज्जलीको कुमुदपुष्पके रसमें पीसकर गोलासा बना लेवे। फिर इस गोलेको मूषामें रखकर वालुकायंत्रमें एक प्रहरतक पकावे। पश्चात् लाल अगस्तियाके पत्तोंके रसमें और सुफेद कमलके रसमें एक दिनतक खरल करके यथोचित मात्रासे इसका सेवन करे। इस औषधिके सेवन करनेपर यथेष्ट आहार करे। इसके भक्षण करनेसे मनुष्य अधिक शुक्रवान् होकर सौ स्त्रियोंमें गमन करनेकी इच्छा करता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

हेमसुन्दर रस ।

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत् ।
क्षीराज्यदधिसंमिश्रं माषैकं कांस्यपात्रके ॥ ४४ ॥
लेहयेन्मासषट्कन्तु जरामरणनाशनम् ।
वागुजीचूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसाप्लुतम् ॥
अनुपानं पिबेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ ४५ ॥

रससिन्दूर ४ भाग और सोनेकी भस्म १ भाग लेवे। इन दोनों औषधियोंको एकत्र पीसकर दूध, घी और दही मिलाकर कांसेके पात्रमें घिसकर प्रतिदिन एक मासे पारमीण सेवन करे। छः महीने तक यह

औषधि सेवन करनेसे वृद्धता और अकालमृत्यु दूर होती है । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें आमलोंके रसमें एक तोला बावचीका चूर्ण मिलाकर पान करे ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अमृतार्णव रस ।

सूतभस्म चतुर्भागं लौहभस्म तथाऽष्टकम् ।
अभ्रभस्म च षड्भागं गन्धकस्य च पञ्चमम् ॥४६॥
भावयेत् त्रिफलाक्वाथैस्तत्सर्वं भृङ्गजद्रवैः ।
शिग्रुवह्निकटुक्काथैर्भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥ ४७ ॥
सर्वतुल्या कणा योज्या गुडैर्मिश्रं पुरातनैः ।
निष्कमात्रं सदा खादेज्जरामृत्युनिवारणम् ॥ ४८ ॥
ब्रह्मायुः स्याच्चतुर्मासे रसोऽयममृतार्णवः ।
कौरण्टकस्य पत्राणि गुडेन भक्षयेदनु ॥ ४९ ॥

रससिन्दूर ४ भाग, लोहेकी भस्म ८ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग और गंधक ५ भाग लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर त्रिफलेके क्वाथ, भांगरेके रस, सुहांजनेकी छाल, चित्रककी जड़ और कुटकी इनके क्वाथमें अलग अलग सात सात भावना देवे, फिर सबकी बराबर पीपलका चूर्ण मिलावे, इसमेंसे प्रतिदिन चार मासे औषधि पुराने गुड़में मिलाकर खावे । इसके सेवन करनेसे वृद्धता और अकालमृत्यु दूर होती है । इस औषधिको चार मास पर्यंत सेवन करनेसे मनुष्य ब्रह्माकी समान आयुको प्राप्त होता है । इस औषधिके सेवन करनेके अंतमें पीले पियेवाँसेके पत्तोंको गुड़के साथ भक्षण करे ॥ ४६–४९ ॥

बृहत्पूर्णचन्द्र रस ।

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकस्य द्विकार्षिकम् ।
लौहभस्म पलञ्चाभ्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥ ५० ॥

द्वितोलं रजतञ्चैव वंगभस्म द्विकार्षिकम् ।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ५१ ॥
जातीफलञ्चैन्द्रपुष्पमेलाभृङ्गञ्च जीरकम् ।
कर्पूरं वनितामुस्तं कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥ ५२ ॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वा वरातोयैः केवुकानां रसेन च ॥ ५३ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम् ।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥ ५४ ॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ५५ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
बल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥ ५६ ॥
अयमष्ठीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ५७ ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।
आमवाताम्लपित्तं च भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ५८ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यते वाजिकर्मणि ॥ ५९ ॥

शुद्ध पारा २ कर्ष, गंधक २ कर्ष, लोहाभस्म ४ तोले, अभ्रकभस्म ४ तोले, चांदी २ तोले, वंग २ कर्ष, सोना १ तोला, तांबा १ तोला, कांसा एक तोला इन सबकी भस्म; जायफल, लौंग, इलायची, भांगरा, जीरा, कपूर, फूलप्रियंगु और नागरमोथा यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र खरल करके

घीकारके रसमें घोटकर त्रिफलेके रसमें सात भावना देवे। तथा केवुक (केउँआ) के रसकी सात भावना देवे। फिर इसको एरंडके पत्तोंमें लपेटकर एक दिन रात धानोंके ढेरमें रख देवे। पश्चात् निकाल पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे। पानके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे सर्व रोग नष्ट होते हैं। सब रोगोंको दूर करनेके लिये महादेवने यह औषधि कही है। यह औषधि बलको बढ़ानेवाली, रसायन और वीर्यको बढ़ाती है। उत्तम वाजीकरण है। इससे अष्ठीला, खांसी, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटिशूल, हृदयशूल, पित्तशूल, मंदाग्नि, अजीर्ण, बहुत दिनोंकी पुरानी संग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगंदर, कामला, पांडुरोग, प्रमेह और वातरक्तरोग नष्ट होते हैं। वाजीकरण औषधियोंमें इसकी समान अन्य औषधि नहीं है॥५०-५९॥

रसस्यास्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः।
मेधाञ्च लभते वाग्मी सर्वशास्त्रसमन्वितः॥ ६०॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम्।
गीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः॥ ६१॥
स्त्रीणान्तथानपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम्।
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम्॥६२॥
ओजस्तेजस्करश्चायं स्त्रीषु कामविवर्द्धनः॥ ६३॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसनो,
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गना–सङ्गमे।
नित्यानन्दकरः सुखातिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते,
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः॥६४॥

इस औषधिके प्रभावसे मनुष्य रोगरहित हो जाता है। मेधाकी वृद्धि होती है। वक्ता और सर्व शास्त्रोंको जाननेवाला होता है। इससे कामदेवकी समान कांति, बल, गायनशक्ति और कामदेवके समान

शरीर हो जाता है। इस औषधिके सेवन करनेसे अपुत्रा स्त्री पुत्रवती होती है। दुर्बल मनुष्य, क्षीण व्यक्ति, वृद्ध मनुष्य और वायुसे दूषित वीर्यवाले मनुष्योंको ओज और तेजको बढ़ानेवाली है। स्त्रीगमनमें इच्छा बढ़ाती है। प्रौढ़ा स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे वृद्ध मनुष्योंको भी कामदेवको बढ़ानेवाली है। नित्य आनन्द जनक और अतिशय सुखको देनेवाली है। इस औषधिके अभ्याससे मनुष्य मृत्यु पलित और सर्व रोगोंसे रहित हो जाता है। यह बृहत्पूर्णचन्द्ररस राजाओंके योग्य तत्काल फलप्रद और सिद्धिदायक है ॥६०-६४॥

चन्द्रोदय रस ।

पलं मृदुस्वर्णदलं रसेन्द्रात्पलाष्टकं षोडश गन्धकस्य । शोणैः सुकार्पासभवप्रसूनैः सर्वं विमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः ॥ ६५ ॥ तत्काचकुम्भे निहितं प्रगाढं मृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च । पचेत् क्रमाग्नौ सिकताख्ययन्त्रे ततो रजः पल्लवरागरम्यम् ॥ ६६ ॥ संगृह्य चैतस्य पलञ्च सम्यक् पलञ्च कर्पूररजस्तथैव । जातीफलं शोषणमिन्द्रपुष्पं कस्तूरिकाया इह शाण एकः ॥ ६७ ॥ चंद्रोदयोऽयं कथितोऽस्य वल्लो भुक्तोऽहिवल्लीदलमध्यवर्त्ती।मदोन्मदानां प्रमदाशतानां गर्वाधिकत्वं श्लथयत्यकुण्ठात् ॥६८॥ घृतं घनीभूतमतीव दुग्धं मृदूनि मांसानि च मुस्तकानि । माषाणि पिष्टानि भवन्ति पथ्यान्यानन्ददायीन्यपराणि चात्र॥६९॥

कोमल सुवर्णके पत्र (वरक) ४ तोले, पारा ८ पल और गंधक १६ पल इन तीनों औषधियोंको एकत्र पीसकर लाल कपासके फूलोंके

रसके द्वारा और घीकारके रसमें अच्छे प्रकारसे खूब खरल करके सुखा लेवे। फिर उसको आतसी शीशीमें रख देवे और उसके ऊपर कपरौटी करके सूर्यकी धूपमें सुखा देवे। फिर खाड़िया मिट्टीसे उसके मुखको बंद करके वालुकायंत्रमें तीन दिनतक पकावे। जब शीतल होजाय नवीन पल्लवके समान लाल रंगके रससिंदूरको ग्रहण करलेवे। इस प्रकार बनाथा हुआ स्वर्णसिंदूर ४ तोले, कपूर ४ तोले, जायफल ४ तोले, पीपल ४ तोले, लौंग ४ तोले और कस्तूरी ४ मासे लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे, प्रतिदिन एक गोली पानमें रखकर खाय। इस औषधिके भक्षण करनेसे मनुष्य कामदेवसे उन्मत्त होकर सैकडों स्त्रियोंसे रमण करके उनके गर्वको भञ्जन करता है। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् घृत, गाढ़ा दूध (या रबड़ी), कोमल मांस, नागरमोथा, पिष्टकपदार्थ और अन्याय आनन्दजनक पथ्य सेवन करे ॥ ६५-६९ ॥

रतिकाले रतान्ते वा सेवितोऽयं रसेश्वरः।
मानहानिं करोत्येष प्रमादानां सुनिश्चितम् ॥ ७० ॥
कृत्रिमं स्थावरञ्चैव जङ्गमञ्चैव यद्विषम्।
न विकाराय भवति साधकेन्द्रस्य वत्सरात् ॥७१॥
यथा मृत्युञ्जयोऽभ्यासान्मृत्युं जयति देहिनाम्।
तथायं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ॥ ७२ ॥
इन्द्रपुष्पं लवंगं स्यात्कार्पासकुसुमद्रवैः।
तन्त्रान्तरे प्रसिद्धोऽयं मकरध्वजनामतः ॥ ७३ ॥

मैथुनके समय अथवा मैथुनके अंतमें इस औषधिके सेवन करनेसे कामिनियोंके मानकी हानि होती है। इसको एक वर्षतक सेवन करनेसे कृत्रिमविष, स्थावर और जंगमविष और किसी प्रकारका विकार भी शरीरमें कुछ हानि नहीं कर सकता। जिस प्रकार मृत्युञ्जय

औषधिके सेवन करनेसे मनुष्योंकी मृत्यु दूर हो जाती है उसी प्रकार इस औषधिके सेवन करनेसे जरा और मृत्यु दूर होती है। इस चंद्रोदयको तन्त्रान्तरोंमें मकरध्वज कहते हैं ॥ ७०–७२ ॥

मकरध्वज रस ।

स्वर्णस्य भागो वंगश्च मौक्तिकं कान्तलोहकम् ।
जातीकोषफले रूप्यं कांस्यकं रससिन्दुरम् ॥ ७४॥
प्रवालं कस्तुरीचन्द्रमभ्रकश्चैकभागिकम् ।
स्वर्णसिन्दूरतो भागाश्चत्वारः कल्पयेद्बुधः ॥ ७५ ॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिषूदनः ।
सवलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्तितः ॥ ७६ ॥

सोना २ भाग, वंग, मोती, कान्तलोह, जावित्री, जायफल, रूपा, कांसा, रससिंदूर, मूंगा, कस्तूरी, कपूर और अभ्रक यह प्रत्येक औषधि एक एक भाग और स्वर्णसिंदूर ४ भाग इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर अच्छे प्रकारसे खरल करके यथामात्राकी वटी बनाकर यथोचित अनुपानके साथ सेवन करे तो सब प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। यह मकरध्वज रस समस्त प्राणियोंके हितके लिये महादेवने कहा है ॥ ७४–७६ ॥

वसन्ततिलक रस ।

हेम्नो भस्मकतोलकं घनयुगं लौहात्त्रयः पारदा-
श्चत्वारो नियतन्तु वङ्गयुगलश्चैकीकृतं मर्दयेत् ।
मुक्ताविद्रुमयो रसेन समता गोक्षूरवासेक्षुणा,
सर्वं वन्यकरीषकेण सुदृढं तत्तत्पचेत्सप्तधा ॥
॥७७॥ कस्तूरीघनसारमर्दितरसः पश्चात्सुसिद्धो
भवेत्, कासश्वाससपित्तवातकफजित् पाण्डु-

क्षयादीन्हरेत् । शूलादिग्रहणीं विषादिहरणो मेहांस्तथा विंशतिं, हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्द्धनः ॥ श्रेष्ठः पुष्टिकरो वसन्ततिलको मृत्युञ्जयेनोदितः ॥ ७८ ॥

सोनेकी भस्म १ तोला, अभ्रककी भस्म २ तोले, लोहेकी भस्म ३ तोले, रससिन्दूर ४ तोले, वंगभस्म २ तोले, मोतीभस्म ४ तोले और मूंगाभस्म ४ तोले लेवे। इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गोखरु, अडूसा और ईखके रसमें खरल करके अरने उपलोंकी अग्निसे पुट देवे। इस प्रकार गोखरूआदिके रसमें सात वार भावना देकर सात वार पुट देवे। फिर कस्तूरी ४ तोले और कपूर ४ तोले मिलाकर यथोचित मात्राकी गोली बना लेवे । इन गोलियोंके सेवन करने खांसी, श्वास, वात, पित्त, कफ, पाण्डुरोग, क्षय, शूल, संग्रहणी, अनेक प्रकारका विष, बीस प्रकारके प्रमेह, हृद्रोग और ज्वर रोगादि समस्त नष्ट होते हैं। यह औषधि वीर्य और आयुको बढ़ानेवाली है। यह अतीव पुष्टिकारक वसन्ततिलक नामक रस स्वयं महादेवने कहा है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

वसन्तकुसुमाकर रस ।

द्विभागं हाटकं चन्द्रं त्रयो वङ्गाहिकान्तकाः ।
चतुर्भागं शुद्धमभ्रं प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥७९॥
भावयेद्गव्यदुग्धेन भावनेक्षुरसेन च ।
वासालाक्षारसोदीच्यरम्भाकन्दप्रसूनकैः ॥ ८० ॥
शतपुत्रीरसेनैव मालत्याः कुंकुमोदकैः ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यं सुगन्धिरससम्भवम् ॥ ८१ ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ।
गुञ्जाद्वयेन संसेव्यः सितामध्वाज्यसंयुतः ॥ ८२ ॥

मेहघ्नः कान्तिदश्चैव कामदः पुष्टिदस्तथा ।
वलीपलितनाशश्च श्रुतिभ्रंशं विनाशयेत् ॥ ८३ ॥
पुष्टिदो बल्यमायुष्यं पुत्रप्रसवकारणः ।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव क्षयमेकादशं तथा ॥
तथा सोमरुजं हन्ति साध्यासाध्यमथापिवा ॥८४॥

सोनाभस्म २ भाग, चान्दीभस्म २ भाग, वंगभस्म ३ भाग, सीसाभस्म ३ भाग, कान्तलोह भस्म, ३ भाग, अभ्रकभस्म, मूंगाभस्म और मोती यह प्रत्येक औषधि चार चार भाग लेवे । इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गायके दूध, ईखके रस, अडूसेके पत्तोंके रस, लाखके क्वाथ, सुगंधवालेका रस, केलेकी जडका रस, केलेके फूलोंका रस, सतावरका रस और मालतीके फूलोंके रसमें अलग अलग सात सात भावना देवे, फिर सुगंधिके लिये कस्तूरीके क्वाथकी भावना देवे । फिर इसकी दो दो रत्तीकी गोली बनाकर मिश्री, सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे प्रमेह रोग नष्ट होता है। इससे कान्ति, काम और पुष्टिकी वृद्धि होती है । वली, पलित और श्रुतिभ्रंश नष्ट होता है। यह पुष्टि, बल और आयुवर्द्धक है तथा पुत्रको उत्पन्न करनेवाली है । इससे बीस प्रकारके प्रमेह, ग्यारह प्रकारके क्षय और साध्यासाध्य सोमरोग नष्ट होते हैं । इसको वसन्तकुसुमाकर रस कहते हैं ॥ ७९-८४ ॥

नीलकण्ठ रस ।

सूतकं गन्धकं लोहं विषं चित्रकपद्मकम् ।
वरांगरेणुकामुस्ताग्रन्थैला नागकेशरम् ॥ ८५ ॥
त्रिकत्रयञ्च त्रिफला शुल्वभस्म तथैव च ।
एतानि समभागानि द्विगुणो गुड उच्यते ॥ ८६ ॥
संमर्द्य वटकं कृत्वा भक्षयेच्चणकोन्मितम् ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ ८७ ॥

हिक्कायां ग्रहणीदोषे शोथे पाण्ड्वामये तथा ।
मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे ॥ ८८ ॥
नीलकण्ठो रसो नाम ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरो भवेत् ॥ ८९ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, लोहाभस्म, विष, चित्रककी जड़, पद्माख, दालचीनी, रेणुका, नागरमोथा, पीपलामूल, इलायची, नागकेशर, त्रिकुटा, त्रिफला और तांबाभस्म यह सब औषधि समान भाग लेवे और सबसे दुगुना पुराना गुड़ लेवे । सबको एकत्र मिलाकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे । इस औषधिको खाँसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, हिचकी, संग्रहणी, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, मूढगर्भ और दारुण वातरोगमें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करे । अनुपानविशेषके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे सब रोग नष्ट होते हैं । इस नीलकण्ठ रसको स्वयं ब्रह्माजीने कहा है ॥ ८५-८९ ॥

महानीलकण्ठ रस ।

पलैकं नागभस्माथ भावयेत्तिमिपित्ततः ।
तन्नागं सुसृतं स्वर्णं तोलैकं वापि मिश्रयेत् ॥ ९० ॥
द्विपलं भस्म सूतस्य त्रिपलं मृतमभ्रकम् ।
त्रिपलं लौहभस्माथ सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ९१ ॥
भावयेच्च पृथक्कन्या ब्राह्मी निर्गुंडिका शमी ।
मुण्डी शतावरी छिन्ना कोकिलाक्षस्य बीजकैः॥९२॥
मूसली वृद्धदारोऽग्निद्रवैरेभिर्भिषग्वरः ।
ततः संचूर्णयेत्सर्वं तुल्यमेकादशाभिधम् ॥ ९३ ॥
वराव्योषाब्दवह्न्येला जातीफललवङ्गकम् ।
पूजयेद्वृषपुष्पाद्यैर्नीलकण्ठं महेश्वरम् ॥ ९४ ॥

द्विगुञ्जं भक्षयेदस्य मृत्युञ्जयमनुस्मरन् ।
क्षयमेकादशविधं ग्रहणीं रक्तपित्तकम् ॥ ९५ ॥
विविधान्वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
हन्ति सर्वामयानेव कामिनीनां शतं व्रजेत् ॥ ९६॥
एकविंशतिरात्रार्द्ध परिहार्यं त्यजेदिह ।
यथेष्टाहारचेष्टो हि कन्दर्पसदृशो नरः ॥ ९७ ॥
मेधावी बलवान्प्राज्ञो बह्वाशी भीमविक्रमः ।
पुत्रार्थिनी तथा नारी सैव पुत्रं प्रसूयते ॥
अस्य सूतस्य माहात्म्यं वेत्ति शंभुर्नचापरः ॥९८॥

तिमि मत्स्यके पित्तके द्वारा भावना दिया हुआ सीसेका चूर्ण १ पल, सोनेकी भस्म १ तोला, रससिन्दूर २ पल, अभ्रकभस्म ३ पल और लोहाभस्म ३ पल इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घीकारके रस, ब्राह्मी, सम्हालू, शमी (छोंकर), गोरखमुंडी, सतावर, गिलोय, तालमखाना, मुसली, विधारेके बीज और चित्रककी जड़ इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग सात सात भावना देवे । पश्चात् त्रिफला, त्रिकुटा, नागरमोथा, चित्रककी जड़, इलायची, जायफल और लौंग इन प्रत्येकका चूर्ण रससिन्दूरकी बराबर मिलाकर दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे । प्रथम अडूसेके फूलोंसे महादेवकी पूजा करके इस औषधिका सेवन करे । इस औषधिके सेवन करनेसे ग्यारह प्रकारके क्षय, संग्रहणी, रक्तपित्त, अनेक प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग और इसके अतिरिक्त अन्यान्य सब प्रकारके रोग नष्ट होते हैं । सैकड़ों स्त्रियोंसे मैथुन करनेकी शक्ति उत्पन्न होती है, इसपर यथेच्छ आहार और विहार करे । इस औषधिके प्रभावसे मनुष्य कामदेवके समान शरीरवाला, मेधायुक्त, बलवान्, प्राज्ञ, बह्वाशी और

अतिशय पराक्रमी हो जाता है। पुत्रकी इच्छा करनेवाली स्त्रियोंके उत्तम पुत्र उत्पन्न होते हैं। इस औषधिके गुण महादेवके सिवाय अन्य कोई नहीं जान सकता है ॥ ९०-९८ ॥

बृहच्छृङ्गाराभ्र।

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेशरम्।
कर्पूरं जातिकोषञ्च लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ ९९ ॥
एतेषां कर्षभागानि सुवर्णं तत्समं भवेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णञ्च चतुष्कं पिचुभागिकम् ॥१००॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसी पुष्पवरांगकम्।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ १ ॥
एषां कर्षद्वयञ्चैव पिप्पलीक्काथभावितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ २ ॥
नानारोगप्रशमनं विशेषात्कासरोगनुत्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ ३ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च शिरःशूलं विशेषतः।
स्वरामयं क्षयं कुष्ठं श्लेष्माणं वातशोणितम् ॥ ४ ॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
रक्तपित्तञ्च कासञ्च नाशयेन्नात्र संशयः ॥१०५॥

इति श्रीगोपालकृष्णसूरिप्रणीते रसेन्द्रसारसंग्रहे रसायनाधिकारो वाजीकरणाध्यायश्च समाप्तः।

पारा, गन्धक, सुहागा, नागकेशर, कपूर, जावित्री, लौंग, तेजपात और सोनेकी भस्म यह प्रत्येक औषधि एक एक कर्ष परिमाण लेवे; कृष्णाभ्रकभस्म ४ तोले, तालीशपत्र, नागरमोथा, कूठ, बालछड, लौंग, दालचीनी, इलायची, त्रिकुटा, त्रिफला और गजपीपल यह प्रत्येक औषधि दो दो कर्ष परिमाण लेवे, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर पीपलके क्काथमें सात भावना देकर यथोचित मात्राकी गोली बना लेवे। दालचीनीके चूर्ण और सहतके साथ इस औषधिके सेवन करनेसे अनेक प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। विशेष करके यह खांसीको दूर करता है। इससे वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज रोग, हृदयशूल, पार्श्वशूल, शिरःशूल, स्वरभेद, क्षय, कुष्ठ, कफ, वातरक्त, रक्तपित्त और कासरोग नष्ट होते हैं। यह बृहच्छृङ्गाराभ्र श्रीकृष्णने कहा है॥ ९९-१०५॥

इति रसायनाधिकार वाजीकरणाध्याय समाप्त।

इति पटियालाराज्यस्थवैद्यरत्न पं० रामप्रसादराजवैद्यकृतभाषाटीकायां

तृतीयखण्डः समाप्तः॥ ३॥



परिशिष्ट भाग ।

पुटके गुण ।

रसादिद्रव्यपाकानां प्रमाणज्ञापनं पुटम् ।
नेष्टो न्यूनाधिकः पाकः सुपाकं हितमौषधम् ॥ १ ॥
लोहादेरपुनर्भावो गुणाधिक्यं तथोग्रता ।
अनप्सु मज्जनं रेखापूर्णता पुटतो भवेत् ॥ २ ॥
पुटाद् ग्राव्णो लघुत्वं च शीघ्रव्याप्तिश्च दीपनम् ।
जारितादपि सूतेन्द्राल्लोहानामधिको गुणः ॥ ३ ॥
यथाश्मनि विशेद्वह्निर्बहिस्थपुटयोगतः ।
चूर्णत्वाद्विगुणावाप्तिस्तथा लोहेषु निश्चितम् ॥ ४ ॥

जिससे पारद आदि द्रव्योंके पाकका प्रमाण जाना जाय उसे पुट कहते हैं । क्योंकि प्रमाणसे न्यून अथवा अधिक पाक होनेसे द्रव्य (रस धातु आदि) का गुण नष्ट होजाता है। अच्छे प्रमाणसे पाक किया जानेसे द्रव्यमें उत्तम गुण होजाता है और प्रमाणपूर्वक पुट देनेसे ही लोहादि धातुओंकी निरुत्थ भस्म होती है । उनमें गुणोंकी उत्तस प्रकारसे अधिकता आजाती है, वह अधिक तीक्ष्ण अर्थात् तेज (शीघ्र लाभकारी) होजाते हैं, एवं जलपर तैरनेवाली तथा मलनेसे हाथकी रेखाओंमें भर जानेवाली उत्तम भस्म होजाती है इसलिये विधिवत् पुट देकर ही धातुओंकी भस्म बनानी चाहिये । पुट देनेसे ही अत्यंत भारी द्रव्यमें हलकापन उत्पन्न होता है । एवं पुटसे ही शीघ्रव्यापित्व और दीपनादि गुण उत्पन्न होते हैं तथा जारण किये हुए पारेसे भी अधिक गुण लोहादिकोंमें उत्पन्न

होजाते हैं । जैसे पत्थरको आगमें रख देनेसे बाहरकी अग्नि पत्थरके भीतर प्रवेश कर जाती है उसी प्रकार पुटद्वारा भस्म किये जानेसे लोहादि भस्ममें अनेक गुण आजाते हैं, इसलिये पुटविधानसे ही धात्वादिकोंकी भस्म करनी चाहिये ॥ १-४ ॥

१-महापुट ।

निम्ने विस्तरतः कुण्डे द्विहस्ते चतुरस्रके ।
वनोत्पलसहस्रेण पूरिते पुटनौषधम् ॥ ५ ॥
क्रौंच्यां रुद्धं प्रयत्नेन पिष्टिकोपरि विन्यसेत् ।
वनोत्पलसहस्रार्द्धं क्रौंचिकोपरि निक्षिपेत् ॥
वह्निं प्रज्वालयेत्तत्र महापुटमिदं स्मृतम् ॥ ६ ॥

दो हाथ गहरा दो हाथ लम्बा चौड़ा चौरस गढ़ा खोदकर साफ करे, उसमें एक सहस्र जंगली उपले भरकर लोहादि द्रव्यको पुट देवे । पुट देनेका क्रम यह है कि पहले इस गढ़ेमें पांचसौ (आधे) जंगली उपले डालकर आधे भाग तक भरदेवे । फिर जिस द्रव्यको पुट देना हो उसको मूषामें रख दूसरी मूषासे बन्द कर कपड़मिट्टी-करके सुखाया हुआ सम्पुट उस आधे भागतक भरे हुए गढ़ेमें उपलोंके ऊपर मध्यमें रखदेवे, इस सम्पुटके ऊपर बाकी आधे जंगली उपले भरकर अग्नि लगादेवे, (स्वांग शीतल होनेपर उस संपुटको निकाल उसमेंसे औषधि निकाल ले) इसको महापुट कहते हैं, (यदि उपले सहस्रसे न्यून या अधिक डालनेसे यह गढ़ा भरे तो उपरोक्त संख्याकी आवश्यकता नहीं) ॥ ५ ॥ ६ ॥

२-गजपुट ।

राजहस्तप्रमाणेन चतुरस्रं च निम्नकम् ॥ ७ ॥
पूर्णं चोपलसाठीभिः कंठावध्यथ विन्यसेत् ।
विन्यसेत्कुमुदीं तत्र पुटनद्रव्यपूरिताम् ॥ ८ ॥

पूर्वाच्छगणतोऽर्धानि गिरिण्डानि विनिःक्षिपेत् ।
एतद्गजपुटं प्रोक्तं महागुणविधायकम् ॥ ९ ॥

सवा हाथ गहरा, सवा हाथ चारों ओरसे लंबा चौड़ा, ऐसा एक गढ़ा खोदकर उसमें आधे भाग पर्यन्त जंगली उपले भरे, फिर जिस द्रव्यको पुट देना हो उस द्रव्यसे भरी हुई मूषा (विधिवत् संपुट किये शराव संपुट या गोले आदिको भी) ठीक मध्यमें रख शेष आधे उपले उसके ऊपर भरकर अग्नि देवे, इसको गजपुट कहते हैं, यह द्रव्यमें अतीव गुण उत्पन्न करनेवाली है ॥ ७-९ ॥

३-वाराहपुट ।

इत्थं चारत्निके कुण्डे पुटं वाराहमुच्यते ॥ १० ॥

एकहाथ (मुष्टिबद्धहस्त) गहरा लंबा चौड़ा गढा खोदकर उसमें गजपुटके विधानसे पुट देनेको वाराहपुट कहते हैं ॥ १० ॥

४-कुक्कुट पुट ।

पुटं भूमितले यत्तद्वितस्तिद्वितयोच्छ्रयम् ।
तावच्च तलविस्तीर्णं तत्स्यात्कुक्कुटकं पुटम् ॥ ११ ॥

जो गढ़ा दो बालिस्त गहरा, लम्बा, चौड़ा हो उसमें जंगली उपलोंसे पुट देनेको कुक्कुट पुट कहते हैं ॥ ११ ॥

५-कपोत पुट ।

यत्पुटं दीयते भूमावष्टसंख्यैर्वनोपलैः ।
बद्ध्वा सूतकभस्मार्थं कपोतपुटमुच्यते ॥ १२ ॥

विना गढ़ा खोदे ही साफ भूमिपर आठ उपलोंके छोटे छोटे टुकड़े कर उनकी विधिवत् आवाँसी लगावे, बीचमें पारेकी गोली आदिको तांबेके संपुट या अन्य संपुटमें विधिवत् रख संपुट कर रख दे, फिर

---

१ ग्रन्थान्तरमें " वितस्तिमात्रे गर्ते यत्पुटयेत्तत्तु कौक्कुटम् " एक बालिस्त गहरा चौड़ा विस्तारके गढ़में जो पुट दीजाय उसको कुक्कुट पुट कहते हैं।

क्रमसे उपलोंके टुकड़े लगाकर अग्नि दे, इसको कपोतपुट कहते हैं। यह पारद भस्म करनेके लिये कही है ॥ १२ ॥

६–गोवर पुट ।

गोष्ठांतगोखुरक्षुण्णं शुष्कं चूर्णितगोमयम् ।
गोवरं तत्समाख्यातं वरिष्ठं रससाधने ॥ १३ ॥
गोवरैर्वा तुषैर्वापि पुटं यत्र प्रदीयते ।
तद्गोवरपुटं प्रोक्तं सिद्धये रसभस्मनः ॥ १४ ॥

जिस स्थानमें गौवोंका गोमय गौवोंके खुरोंसे कुचला गया हो वह सूखा गोमय लेकर चूर्ण करले (अथवा साधारण गोमय सुखाकर चूर्ण करले) इस चूर्णको गोबर कहते हैं, यह गोबर पारेके साधनमें अतिश्रेष्ठ मानागया है। इस गोबरके चूर्णमें औषधिका संपुट रख पुट देनेको गोबरपुट कहते हैं, अथवा तुषोंमें पुट देना भी गोबर पुट कहा जाता है ॥ १३ ॥ १४ ॥

७–भाण्ड पुट ।

स्थूलभाण्डे तुषापूर्णे मध्ये मूषासमन्विते ।
वह्निना विहिते पाके तद्भाण्डपुटमुच्यते ॥ १५ ॥

एक बड़े पात्रमें तुषभर कर उन तुषोंके मध्यमें मूषा (या संपुट) रख ऊपर तुषोंसे भरकर हाथसे खूब दबा दे; फिर इस पात्रको चूल्हेपर चढ़ा नीचे अग्नि जलावे, इसको भाण्डपुट कहते हैं ॥ १५ ॥

८–वालुका पुट ।

अधस्तादुपरिष्टाच्च क्रौञ्चिकाऽऽच्छद्यते खलु ।
वालुकाभिः प्रतप्ताभिर्यत्र तद्वालुकापुटम् ॥१६॥

एक बड़े पात्रमें आधा वालु रेत भरकर उसमें औषधिका सम्पुट रख ऊपरसे और वालु रेत डालकर भर दे, फिर इस पात्रको चूलहेपर चढ़ा नीचे तीक्ष्णाग्नि जलावे। अग्निके तापसे वालूकी गर्माईमें औषधि पकनेको वालुकापुट कहते हैं ॥ १६ ॥

९-भूधर पुट।

वह्निमित्रां क्षितौ सम्यङ्निखन्याद्द्व्यङ्गुलादधः।
उपरिष्टात्पुटं यत्र पुटं तद्भूधराह्वयम् ॥ १७ ॥

प्रथम पृथ्वीमें एक हाथ (मुकस्सर) गहरा और चारों ओरसे एकसा गजपुटके गढ़े समान गढ़ा बना ले, उस गढेके भीतर मध्यमें एक और दो अंगुल या चार अथवा छः अंगुलका गढा खोद ले, उसमें औषधीका संपुट रख ऊपरसे मट्टी डालकर दबाकर बंद करदे, फिर उसमें जंगली उपले डालकर अग्नि लगा दे; स्वांगशीतल होनेपर औषधि निकाल ले, इसे भूधरपुट कहते हैं। कोई ऐसा मानते हैं कि साफ भूमिमें दो या चार अंगुलका गढा खोदकर उसमें औषधीका संपुट रख ऊपरसे थोडेसे उपलोंकी पुट देवे इसको भूधरपुट कहते हैं॥ १७॥

१०-लावपुट।

ऊर्ध्वं षोडशिकामात्रैस्तुषैर्वा गोवरैः पुटम्।
यत्र तल्लावकाख्यं स्यात्सुमृदुद्रव्यसाधने ॥ १८ ॥

(यदि अत्यंत मृदु द्रव्यको अति मृदु अग्नि देनी हो तो) एक पात्रमें द्रव्यको रखकर उस पात्रमें तुष अथवा गोबरके दो तोले चूर्ण डाल अग्नि लगा दे, शीतल होनेपर द्रव्य निकाल ले, इसको लावपुट कहते हैं ॥ १८ ॥

अनुक्तपुटमाने तु साध्यद्रव्यबलाबलम्।
पुटं विज्ञाय दातव्यमूहापोहविचक्षणैः ॥ १९ ॥

तर्क वितर्क द्वारा गहरे विचारको समझनेवाले वैद्यको चाहिये कि जिस द्रव्यके मारणमें पुटका नाम नहीं लिखा उस स्थानमें द्रव्यके कठोर या मृदु आदि बलाबलको विचार कर कठोर (देरमें भस्म होनेवाले) द्रव्यको महापुट या गजपुटमें फूंके। मृदु द्रव्यको कुक्कुटादि पुट देना चाहिये ॥ १९ ॥

उपलोंके पर्याय नाम ।

पिष्टकं छगणं छाणमुत्पलं चोपलं तथा ।
गिरिण्डोपलसाठी च वराटी छगणाह्वयम् ॥ २० ॥

पिष्टक, छगण, छाण, उत्पल, उपल, गिरिण्ड, उत्पलसाठी और वराटी यह सब नाम सूखी हुई गोबरी कंडोंके हैं ॥ २० ॥

इति पुटविधान ।

अथ अञ्जनविधान ।

निम्बबीजं शिलाजाजीधूमसारं समांशकम् ।
कारवेल्लरसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ १ ॥
यत्पार्श्वतोऽञ्जिते नेत्रे तत्पार्श्वञ्च ज्वरं जयेत् ।
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसकौतुककारकम् ॥ २ ॥

१–नीमकी गिरी, मैनशिल, जीरा और धूमसार (गृहधूम) इन सबको पीसकर करेलेके रसमें २१ वार भावना देवे फिर मटरके समान बत्ती बनाकर रक्खे, इस बत्तीको (स्त्रीके दूध या पानी) में घिसकर जिस नेत्रमें आंजे उस भागके आधे शरीरका ज्वर उतर जाता है (दूसरे नेत्रमें आंजनेसे सब ज्वर उतर जाता है), इस कौतुक करनेवाले रसका नाम अर्द्धनारीनटेश्वर है ॥ १ ॥ २ ॥

ऊर्णाया नाभिजालेन वर्त्तिं कृत्वा प्रयत्नतः ।
ज्वालयेत्तिलतैलेन कज्जलं प्रहरेच्छनैः ।
अञ्जयेन्नेत्रयुगलं त्र्याहिकं तु ज्वरं जयेत् ॥ ३ ॥

२–मकड़ीके जालेकी बत्ती बनाकर तिलोंके तेलमें भिगोकर युक्तिसे जलावे, इसकी लोइ (स्याही) को यत्नपूर्वक उतार ले, इसको दोनों नेत्रोंमें आंजनेसे तृतीयकज्वर दूर होता है ॥ ३ ॥

व्योषञ्च त्रिफलासूतं लौहं वङ्गञ्च ताम्रकम् ।
पुत्रमातृपयश्चैव कारयेद्वटिकां बुधैः ॥ ४ ॥
दुग्धेन चाञ्जनं कृत्वा एकाङ्गज्वरनाशनम् ।
द्वितीये चाञ्जनं कृत्वा सर्वांगज्वरनाशनम् ॥ ५ ॥

३-त्रिकुटा, त्रिफला, मृत पारद, लोहभस्म, वंगभस्म और ताम्र-भस्म इन सबको बांझककौडेकी जड़के रसमें अथवा स्त्रीके दूधमें खरल कर गोली बना ले। इस गोलीको स्त्रीके दूधमें घिसकर एक नेत्रमें अञ्जन करनेसे आधे शरीरका ज्वर नष्ट हो जाता है; दूसरे नेत्रमें आँजनेसे सारे शरीरका ज्वर दूर होता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

रसगन्धं शिलातुत्थं तालकं मृतटङ्कणम् ।
नवसादरकर्षैकमर्कदुग्धेन मर्दयेत् ॥ ६ ॥
चुल्लिकायामथारोप्य पचेद्यामचतुर्दश ।
स्वांगशीतलमादाय खल्ले तं कज्जलीकृतम् ॥ ७ ॥
अञ्जनं वामनेत्रस्य दक्षिणे कौतुकं भवेत् ।
दक्षिणे चाञ्जनश्चैव आरोग्यं भवति क्षणात् ॥ ८ ॥

४-शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, मैनाशिल, नीलाथोथा, शुद्ध हरिताल, मरा हुआ सुहागा और नौसादर इनको एक एक तोला लेकर आकके दूधमें खरल करे, फिर इसको संपुटमें रख एक हांडीमें वह सम्पुट रख दे। फिर उस हांड़ीको वालुरेतसे भर चूल्हेपर चढ़ावे और चौदह पहरतक नीचे अग्नि जलावे। फिर स्वांगशीतल होनेपर खरलमें डाल पीसकर कज्जली बनावे। यदि इस अञ्जनको वाम नेत्रमें डाले तो दहनी ओर आधे शरीरका ज्वर दूर होता है और दहने नेत्रमें डाले तो सब शरीरका ज्वर उतर जाता है ॥ ६-८ ॥

ज्वरनाशक नस्य ।

शुद्धतुत्थं पलैकं च भावयेज्जालिनीरसैः ।
सप्तविंशतिवारांश्च निम्बनीरे तथैव च ॥ ९ ॥
शुष्कनस्यं प्रदातव्यं सर्वज्वरविनाशनम् ।
यस्मिन्नासापुटे दत्तं ह्यर्धाङ्गज्वरनाशनम् ॥१०॥

शुद्ध तूतियेको कड़वी तोरीके रसमें सत्ताईस २७ वार भावना देवे, फिर नींबूके रसमें २७ भावना देकर सुखा ले और पीसकर रक्खे; इसकी नस्य देनेसे सब प्रकारके ज्वर दूर होते हैं। कौतुक यह है जिस ओरकी नासापुटमें नस्य दे उसी ओरके आधे अंगका ज्वर दूर होता है ॥ ९ ॥ १० ॥

अर्द्धाङ्गज्वरनाशक लेप ।

पौष्करं कट्फलं शुण्ठी मुस्तं जातीफलं समम् ।
शतपुष्पा शटी चैव छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥
कोष्णं कृत्वा ततश्चार्धं ज्वराणां नाशनं परम् ॥११॥

पोहकरमूल, कायफल, सोंठ, नागरमोथा, जायफल, सौंफ और कचूर इनको बकरीके दूधमें रगडकर लेप करनेसे आधे अंगमें होनेवाला ज्वर नष्ट होता है ॥ ११ ॥

सर्वज्वरनाशक धूलन ।

भूनिम्बकटुकाव्योषं त्रिफलामरदारु च ।
प्रियंगुहिंगुमंजिष्ठाः शतपुष्पा च कारवी ॥१२॥
अजमोदाजमानी च कचूरमधुकं तथा ।
कुलत्थं त्रायमाणा च कट्फलातिविषा तथा ॥१३॥

चव्यं कुष्ठं दुरालंभा भाङ्गीं रास्ना च रेणुका।
सर्षपा राजिका चैव सिंधुं सर्जरसं तथा॥ १४॥
समभागं विचूर्ण्यैतद्भावयेत् शिग्रुजे द्रवे।
शुष्कं विचूर्ण्य तच्चूर्णमातुराङ्गे च मर्दयेत्॥
ज्वरमष्टविधं हन्यात्सन्निपातं च दारुणम्॥ १५॥

चिरायता, कटुकी, त्रिकुटा, त्रिफला, देवदारु, फूलप्रियंगु, हींग, मंजीठ, सौंफ, सोरा, अजमोद, अजवायन, कचूर, मुलैठी, कुलथी, त्रायमाण, कायफल, अतीस, चव्य, कूठ, जवासा, भारंगी, रास्ना, रेणुका, सरसों, राई, सेंधानमक, राल इन सबको सम भाग लेकर सुहांजनेके रसमें भावना दे, सूखनेपर बारीक पीसकर ज्वरवालेके शरीर-पर इस चूर्णको मर्दन करे तो आठ प्रकारके ज्वर और तेरह प्रकारके सन्निपात दूर होते हैं॥ १२-१५॥

तीव्रज्वरनाशक धूलन।

हरिप्रियबलभद्रामाधवीशृङ्गवेरं कवचजलजवीरं
बालकं भद्रकन्दम्। दलरजसमभागं धूलनं यस्य
गात्रे शमयति ज्वरतीव्रं सर्वदाहं निहन्ति॥ १६॥

अगरु, त्रायमाण, सौंफ, सोंठ, भोजपत्र, कमल, पोहकरमूल, नेत्र-वाला, नागरमोथे और तेजपत्र इन सबका चूर्ण कर शरीरपर मलेनेसे तीव्रज्वर और दाह दूर होती है॥ १६॥

ज्वरनाशक धूप।

पलोन्मितं निम्बपटोलपत्रं कुष्ठं वचागुग्गुलुसर्षपानाम्।
हरीतकीसर्पिरितं च धूपं विनाशनं वै विषमज्वराणाम् १७

इति श्रीगोपालकृष्णसूरिविरचिते रसेन्द्रसारसंग्रहे
परिशिष्टभागः समाप्तः।

निंबके पत्र, पटोलपत्र, कूठ, वच, गूगल, पीली सरसों, हरड़का छिलका इन सबको पीसकर घी मिलाकर धूप देनेसे विषम ज्वर दूर होता है ॥ १७ ॥

इति पटियालाराज्यस्थवैद्यरत्नपं० रामप्रसादराजवैद्यवैद्योपाध्यायकृतभाषा-टीकायां परिशिष्टभागः समाप्तः ॥

ऊनविंशशते वर्षे सप्तत्या ह्यधिके शुभे ।
पौषशुक्लदशम्यां वै टीका पूर्तिमगादियम् ॥
सेयं रामप्रसादेन कृता लोकहितेच्छुना ।
कृपया शोधनीयं तत् त्रुटितं चात्र यत्कचित् ॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः ।



खेमराज श्रीकृष्णदास

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई